श्री

जैनकथारत्नकोष

भाग पहेलो

आ पुस्तकमां

सिंदूरप्रकर मूल, टीका, भाषा, बालावबोध अने कथाओ सहित

तथा

श्री मन्हेमचंद्राचार्यकृत श्रीवीतरागस्तव

संक्षिप्त अर्थ सहित

अने

श्रीगौतमपृच्छा मूल बालावबोध तथा दृष्टांतिक

कथासहित छे.

तेने

श्रावक, भीमसिंह माणके

श्रीमुंबापुरीमध्ये

निर्णयसागर छापखानामां छापवी प्रसिद्ध करयुं छे.

संवत [illegible] सने [illegible]

श्री जैनकथारत्नकोष.

प्रस्तावना.

श्रीजैनकथा रत्नकोष नामना पुस्तकना पन्नर भाग मांहेलो आ प्रथम भाग मुंबई बाहेर पड्यो छे, तेमां प्रथम बाळ जीवोने नीति तथा वैराग्यादि सन्मार्गोनो बोध थवा माटे "सिंदूरप्रकर" नामा ग्रंथ मूळ तथा तेनी टीका, भाषा, बाळावबोध अने कथाउ सहित दाखल करेलो छे. आ ग्रंथमां नीति वगेरे विषयोनुं एवी रीतें यथातथ्य निरूपण करेलुं छे, के वांचनारा साहेबोने हाबेहूब ते वात तेवाज स्वरूपें परिणम्यां विना रहेज नहि. वळी एवी रीतें ए ग्रंथ मांहेला विषयो हृदयमां प्रवेश थया पछी वांचनार जनोमां तेवी रीतनी प्रवृत्ति पण अवश्य थवी जोइये, के जेथी ते वांचनारा श्रीवीतराग परमात्मानी भक्ति करवाने योग्य थाय, माटे ते पछी तुरत बीजो ग्रंथ श्रीमन्महापंडित श्रीहेमाचार्यजी विरचित श्रीवीतरागस्तव अर्थ सहित आ ग्रंथमां दाखल करेलो छे. आ ग्रंथ वांच्या भण्या पछी संसारमां प्राणी मात्रने सुख दुःखनी प्राप्तिना हेतुभूत एवां जे शुभाशुभ कर्म छे तेनुं स्वरूप जाणीनें तेथी विरक्त थवानो उद्यम करवो जोइयें. ते समजवा माटे श्रीगौतमपृच्छा नामा ग्रंथने मूळ, बाळावबोध तथा कथाउ सहित आ भागमां छाप्यो छे. आ ग्रंथमां श्रीगौतमस्वामीयें जीवने सुख दुखनी प्राप्तिनां जूदां जूदां अडतालीश प्रश्न पूछवाथी श्रीमहावीर स्वामीयें शुभाशुभ कर्मोनां फळ दृष्टांतिक कथाउ सहित कही देखाड्यां छे. जे वांचवाथी वांचनारा साहेबो संसारथी भय पामता थका मनुष्यभव पामीने धर्म मार्गमां प्रवर्त्तवाने उजमाळ थाय. अने ते पछी वळी संसारना विकटपणानी दर्शावनारी एवी एक न्हानी हरियाळी अर्थ सहित छापी छे. ते

पण तेज विषयने पुष्ट करनारी ले. एवी रीतें म्हामी महोटा चार ग्रंथे क रीने आ प्रथम नाग समाप्त कर्यो ले. आ नाग वांचनाराउने अवश्य गु ण करनारोज थाशे एवी ममे आशा ले.

जेम आ प्रथम नाग संपूर्ण लपाइ तैयार थयो ले तेम बीजो नाग त था त्रीजो नाग पण संपूर्ण लपाइ तैयार थइ गयेलो.ले. अने चोथो नाग पण अडधो अडध लपाइ गयेलो ले. तोपण हजी आ ग्रंथना पूर्वे थयेला ग्राहकोनां नाम में दाखल करेलां नथी तेनुं कारण ए ले जे. प्रथमतो आ ज दिवसपर्यंत मात्र आ ग्रंथने आश्रय देनारा सज्जननी १७५ ने आशरे सहीयो आवी ले, तेमां घणी खरी सहीयो तो बाहिर देशावरथीज आवे ली ले, पण महोटा इव्यवान् धनाढ्यो तरफथी जे महोटी मदत मलवा नी आशा ले, तेवा साहेबोनी पासे माराथी हजी जइ शकायुं नथी, तेथी हवे हुं चार आठ दीवस म्हारुं लखवानुं तथा लापवानुं काम बंध राखी ने तेमनी पासें जइ विनंती करीने संख्याबंध पुस्तकोनी मदत लइने पली आ पुस्तकना चोथा अथवा पांचमा नागमां समस्त उदारता दर्शावनारा महान् जनोनां नाम दाखल करी महारा मनने आनंद पमाडीश.

उपर लख्या प्रमाणे महोटा धनाढ्यो पासे सहीयो लेवा जवानुं हाल मोकुफ राखी कदाचित् पोणाबशे पुस्तकोना आश्रय आपनारा देशावर वाला साहेबोनांज नाम आ त्रण नागमां दाखल करुं तो कदाच कोइ अज्ञ जनना मनमां एवीज शंका उत्पन्न थाय के जैन दर्शनमां पुस्तको ना वांचनारा तथा आवा पुस्तकोने लापी प्रसिद्ध करनारने आश्रय आप नारा अने शास्त्रना रहस्य समजनारा परीक्षक लोकोनी घणीज न्यूनता ले, एवी लघुता थवाना नयथी आश्रय आपनारा स्वल्प संख्यावाला सा हेबोनां नाम आ पुस्तकमां दाखल करवानी मारी हिम्मत चाली नहि.

वली आ जैनकथा रत्नकोष नामे पुस्तकना आगलथी ग्राहक थयेला त था थनारा साहेबोने विनंति करवामां आवे ले के आ पुस्तकना अगाउ थी ग्राहक थनारा साहेबोनी सहिउं लेवाना लिष्टमां एम लख्युं ले के आ ग्रंथना ल नाग करवा तेमां सवालक्ष श्लोक संख्यानो समावेश करवो अ ने जो आ ग्रंथना बे हजार पुस्तकनां आगलथी ग्राहक थाय तो वली एक वीश हजार श्लोक संख्यानो एक सातमो नाग पण लापीने अगाउथी

ग्राहक थनारा साहेबोने एकेक भाग बक्षीस दाखल आपवो, एवी रीते प्रसिद्धता करी छे परंतु आज दिवस सुधी सुमारें पोणाबसो पुस्तकोना ग्राहक थया छे,अने हजी म्होटा म्होटा द्रव्यवान श्रीमंत श्रावको पासेंथी सहीयो आवी नथी तेथी तेउ साहेबो पासें जतां जे सहित मळशे ते एकठी करतां पण एकहजारें पुस्तकना ग्राहक थाय एवी आशा राखी शकाती नथी तो वळी बे हजारें पुस्तकना ग्राहक थवानी वात तो स्वप्नांतरमां पण केम रखाय ? आवा कारणथी प्रथम छपायेला लीष्टमां लखवा प्रमाणे सातमो भाग बक्षीस आपवाथी हुं मोकळो थइ शकुं छुं.

तथापि ते वात उपर लक्ष न आपतां मात्र म्हारी श्रीजिनधर्म संबंधि पुस्तकोनो उद्धार थवानी अभिलाषा पूर्ण थवामाटे ए पुस्तकमां जो पण म्हारी गरीब अवस्थाने लीधे मनें घणुंज संकट वेठवुं पडशे ते संबंधि दरकार न करतां प्रथम लखेला छ भाग मध्ये १२५००० श्लोक तथा बक्षीसना भागमांहेला २१००० श्लोक अने वळी श्राद्धविधि ग्रंथ वधारे दाखल करवानो निरधार कर्यो छे, तेमज बीजा ग्रंथोमां पण हाथनी लखेली प्रतो करतां फरीथी हुं ज्यारे आजनी रुढी प्रमाणें बे.वात खुलासा पूर्वक म्हारे हाथें लखुं छुं तेवारे पूर्वें लखेली संख्यामां वधारो थतो जाय छे. एवीरीतें वधवाथी आ पुस्तकमां लगभग एक लाख ने सीतेर हजार श्लोक संख्याना ग्रंथोनो समावेश करीने तेना पूर्वे लीष्टामां लखेला छ भाग तथा बक्षीसनो एक भाग मळी सात भागने बदले हवेथी जूदा जूदा पन्नर अथवा सोळ भाग करवानो निर्धार कर्यो छे. ते मांहेलो आ प्रथम भाग छपाइ बाहेर पड्यो छे, अने धारवा प्रमाणे आ चालु सालमां एटले १९४६ नी शालनी आखर सुधी अथवा १९४७ ना नवा वर्षनी सरुआत थता सुधीमां जोकोइ विघ्न नहि पडशे तो लगभग बधा मळी छ भाग छापीने बाहेर पाडीश एवी हुं उमेद राखु छुं.

ए पन्नरे भाग अथवा शोळ भागमां जे जे ग्रंथो आवशे ते, तथा ते सर्वे भागनी अनुक्रमणिका, प्रस्तावना, टाइटलपेज आदिक जे जे बाबतो आवशे ते सर्व बाबतोना मळीने जेवा आ भागमां ३०० पृष्टनो छेहेलो आंक छे, तेना सुपररायल आठ पेजी ३८॥ फरमा थया छे, तेवा अंधारे भागमां आठसो फरमांना ६४०० पेजनी संख्यामां जेटला ग्रंथ आवशे तेट

ला ग्रंथ अवश्य छपाशे, ए वात निःसंशय जाणवी, एवी कबुलात हुं आ गलथी ग्राहकथनारा साहेबोने आपुछुं, तेमांपण महाराथी बनशे त्यांसुधी बे फारम वधारे छापीश पण तेथी उछां छापीश नही. माटे सर्व सुज्ञ ज नोने विज्ञप्ति करुंछुं के आवा उत्तम कार्यमां जो प्रतिदिन मदद करशो तो हुं निरंतर तेवा कार्यो करवामां उत्सुक रहीश. इत्यलम्.

क्षमापना.

वांचनारा साहेबाने अरज करुंछुं के श्रीसिंदूरप्रकरनी कथावाली एकज प्रत महारी पासे हती, तेपण एटली अशुद्ध अने यद्वातद्वा लखेली हती के तेनो खुलासो आहीं लख्यो जाय नहीं पण हरहमेश जे साहेबो पासें हाथनां लखेला ग्रंथो वांचवामां आवे छे. ते साहेबो ते ग्रंथोविषे सहरीपेठे जाणताज हशे. तेमज टीकावाली प्रत कोइ कथा सहित न होवाथी क थाउनां लखाण पण यथातथ्य थयेलां न हतां.

तथा श्रीवीतरागस्तवनी अवचूरी उपरथी बालावबोध कर्यो छे अने ते ग्रंथ श्रीमत्हेमचंद्राचार्यविरचित कठणविषयवालो होवाथी संपूर्ण महोटी टीकाना अजावथी खरेखरो जाषांतर थयेलो गणाय नही. वली श्रीगौतम पृछा ग्रंथ महोटी कथाउवालो महारीपासें मोजुद हतो परंतु तेनी कथा उ घणीखरी मागधी जाषामांज लखेली होवाथी तेनुं जाषांतर संपूर्ण मा गधीजाषाना जाणकार विना थवुं अशक्य जाणीने मात्र सारजूत न्हानी कथाउ वालो सुमारे बावीसो श्लोकनो ग्रंथज आ पुस्तकमां दाखल कर्यो छे. ते ग्रंथनी प्रतो पण सर्व एकज पद्धतिनी असलना लखाणनी होवाथी शो धन करवामांटे निराधार थवुं पड्युं तेथी मात्र जाषामांज सुधारो करीने सर्व ग्रंथो छप्या छे, तेमां जे कांइ महाराथी न्यूनाधिक वचन सिद्धांत विरोध लखायुं होय ते संबंधि महारी जूलनुं सर्व वांचनार श्रीसंघनी सम क्ष हुं मिछामिदुक्कड देउंछुं.

श्रावक. जीमसिंह माणक.

अस्य पुस्तकस्यानुक्रमणिका.

तिहां प्रथम सिंदूरप्रकराख्यग्रंथनी अनुक्रमणिका.

श्रीहेमचंद्राचार्यकृत श्रीवीतराग स्तवनी अनुक्रमणिका.

गौतमपृछानी अनुक्रमणिका.

अथ

॥ श्री सिंदूरप्रकरः प्रारभ्यते ॥

प्रथम ग्रंथना प्रारंभमां ग्रंथकर्त्ता पोताना जे इष्टदेव तेना चरण स्मरण रूप मंगलाचरण पूर्वक आ ग्रंथ सांभलनाराउने आशीर्वाद कहे छे.

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तछन्दम् ॥

॥ सिंदूरप्रकरस्तपःकरिशिरःक्रोडे कषायाटवी, दा
वार्चिर्निचयः प्रबोधदिवसप्रारंभसूर्योदयः ॥ मुक्ति
स्त्री कुचकुंभ (वदनैक) कुंकुमरसःश्रेयस्तरोः पल्लव,
प्रोल्लासः क्रमयोर्नखद्युतिभरः पार्श्वप्रभोः पातु वः॥१॥

अर्थः—(पार्श्वप्रभोः के०) श्रीपार्श्वनाथ प्रभुना (क्रमयोः के०) चरण जे तेमना (नख के०) नख, तेनी (द्युति के०) कांति, तेनो (भरः के०) समूह, ते (वः के०) तमोने (पातु के०) रक्षण करो. हवे ते नखकांतिसमूह केहवो छे? तो के (तपः के०) तपरूप (करि के०) हस्ती, तेना (शिरः के०) मस्तक,तेनो (क्रोडे के०) मध्यभाग जे कुंभस्थल तेने विषे (सिंदूरप्रकरः के०) सिंदूरना पुंज समान छे, वली (कषाय के०) क्रोध, मान, माया, लोभ, ते रूप (अटवी के०) वन, तेने बालवा माटे (दावार्चिर्निचयः के०) वनना अग्निनी ज्वालाना समूहनी तुल्य छे. वली (प्रबोध के०) ज्ञान ते रूप जे (दिवस के०) दिवस तेनो (प्रारंभ के०) उदय, तेने विषे (सूर्योदयः के०) सूर्योदय सदृश छे, वली (मुक्तिस्त्री के०) मुक्तिरूप जे स्त्री, तेना (कुचकुंभ के०) स्तनकुंभ, तेने विषे (कुंकुमरसः के०) कुंकुमरसना लेपन समान छे, तथा (श्रेयस्तरोः के०) कल्याणरूप जे वृक्ष तेना (पल्लव के०) नवांकुर तेनो छे (प्रोल्लासः के०) उत्पत्ति जे थकी, एवो छे. आ श्लोकमां नखकांतिसमूहनी रक्तता छे, माटें सिंदूरप्रकरनी उपमा आपी छे. तथा वली आ श्लोकमां कोइ ठेकाणें (मुक्तिस्त्रीवदनैककुंकुमरसः) एवो पण पाठ छे. तेनो अर्थ एवी रीतें छे के मुक्तिरूप स्त्रीनुं शोभायमान जे मुख ते मुखकमल रंगवाने विषे कुंकुमरस लेपन

संरखो नखकांतिसमूह डे, तेवो अर्थ जाणवो. माटें हे जव्यजनो! ए प्रकारें जाणी मनमां विवेक लावीने श्रीपार्श्वनाथनां चरणकमलज सेवन करवां, ते सेवनार सुजनने जे पुण्य उत्पन्न थाय डे, ते पुण्यना प्रसादें करीने उत्तरोत्तर मांगलिक्यमाला विस्तार पामो ॥ १ ॥

॥ टीका ॥ श्रीमत्पार्श्वजिनं नत्वा,स्तोतॄणां सुखकारकम् ॥ सद्यः संस्मृतिमात्रेण, प्रत्यूहव्यूहवारकम् ॥ १ ॥ श्रीचंद्रकीर्त्तिसूरीणां,सद्गुरूणां प्रसादतः ॥ सिंदूरप्रकरव्याख्या; क्रियते हर्षकीर्त्तिना ॥ २ ॥ युग्मं ॥ ग्रंथकर्त्ता आदौ इष्टदेवताचरणस्मरणरूपं मंगलाचरणपूर्वकं श्रोतॄन् प्रति आशीर्वादवृत्तमाह ॥ व्याख्या ॥ पार्श्वप्रजोः श्रीपार्श्वनाथस्य क्रमयोश्चरणयोर्नखद्युतिजरः नखकांतिसमूहोवोयुष्मान् पातु अवतु रक्तु ॥ कथंजूतो नखद्युतिजरः तपःकरिशिरःक्रोडे सिंदूरप्रकरः तपएव करी हस्ती तस्य शिरःक्रोडे मस्तकमध्यजागः कुंजस्थलं तत्र सिंदूरप्रकरः सिंदूरपुंजसदृशः नखद्युतिजरस्य रक्तत्वात् सिंदूरप्रकरोपमा, पुनः कथंजूतः नखद्युतिजरः कषायाटवीदावार्चिर्निचयः कषायाः क्रोध, मान, मायालोजास्तएव अटवी अरण्यं वनं तस्याः दावार्चिर्निचयः दावाग्निज्वालासमूहतुल्यः । पुनःकथंजूतोनखद्युतिजरः प्रबोधदिवसप्रारंजसूर्योदयः प्रबोधोज्ञानं सएव दिवसो दिनं तस्य प्रारंजे उदये सूर्योदयसमानः । पुनः कथंजूतोनखद्युतिजरः मुक्तिस्त्रीकुचकुंजकुंकुमरसः मुक्तिरेव स्त्री तस्याः कुचावेव कुंजौ तत्र कुंकुमरसः काश्मीररजोऽवलेपतुल्यः मुक्तिस्त्रीवदने कंकुमरसइति वा पाठः । पुनः कथंजूतः नखद्युतिजरः श्रेयस्तरोः पल्लवप्रोल्लासः श्रेयः कल्याणमेव तरुर्वृक्षस्तस्य पल्लवानां नूतनपत्राणां प्रोल्लासः उद्गमः । ईदृशःपार्श्वप्रजोः क्रमयोश्चरणयोर्नखद्युतिजरोवोयुष्मान् पातु रक्तु नखद्युतिजरस्य रक्तवर्णत्वात् रक्ता एवोपमा । जो जव्य प्राणिन् ! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय श्रीपार्श्वनाथस्य चरणकमलौ एव सेव्यौ सेव्यमानानां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरं मांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ १ ॥

जाषा काव्यः– शोजित तप गजराज,सीस सिंदूरपूर डबि ॥ बोधदिवस आरंज, करन कारन उद्योत रवि ॥ मंगल तरु पल्लव,कषाय कंतार हुताशन ॥ बहु गुनरतन निधान, मुक्ति कमला कमलासन ॥ इहविध अनेक उपमा सहित, अरुन वरन संताप हर ॥ जिनराय पाय नख ज्योति वर, नमत बनारसि जोरि कर ॥ १ ॥

हवे कवि सज्जन पुरुष प्रत्यें पोतानी विज्ञप्ति करे छे.

संतः संतु मम प्रसन्नमनसो वाचां विचारोद्यताः, सू
तेऽम्भः कमलानि तत्परिमलं वाता वितन्वंति यत् ॥
किंवाभ्यर्थनयानया यदि गुणोस्त्यासां ततस्ते स्वयं,
कर्त्तारः प्रथनं नचेदथ यशः प्रत्यर्थिना तेन किम् ॥ ३ ॥

अर्थः– (संतः के०) सज्जनो, (मम के०) मने, (प्रसन्नमनसो के०) प्रसन्न छे मन जेनुं एवा (संतु के०) हो. अर्थात् मारी उपर प्रसन्न चित्त वाला थाउ. ए सज्जनो केहवा छे? तोके (वाचां के०) वाणीउना (विचारोद्यताः के०) सदसद्विचारने विषे सावधान एवा अर्थात् आ वाणी सारी, आ वाणी नहिं सारी ए प्रकारना विचारने जाणनारा छे. कवि कहे छे ते घटे छे (यत् के०) जे कारणमाटे (अंभः के०) जल जे छे, ते (कमलानि के०) कमलोने (सूते के०) उत्पन्न करे छे, परंतु (तत्परिमलं के०) ते कमलोनो आमोद जे छे तेने तो (वाताः के०) वायुउ (वितन्वंति के०) विस्तारे छे, तेम हुं पण आ ग्रंथने रचीश, परंतु ग्रंथनो विस्तार तो सज्जन पुरुषोज करशे. कोइ ठेकाणे कहेलुं छे के ॥ श्लोक ॥ पद्मानि बोधयत्यर्कः, काव्यानि कुरुते कविः ॥ तत्सौरभं नभस्वंतः, संतस्तन्वंति तद्गुणान् ॥ अर्थः–कमलने सूर्य विकसित करे छे, तेम काव्योने कवि करे छे, अने ते कमलोना सुगंधने वायु प्रसार करे छे, तेम ए कविना गुणोने संत पुरुषो विस्तारे छे, माटे सज्जननुं एवुं लक्षणज होय छे. (वा के०) अथवा जो ते सज्जनोनी अभ्यर्थना हुं करुं तो पण ते (अनया के०) आ मारी कविताने प्रशंसा करो एवी (अभ्यर्थनया के०) याञ्चायें करीने (किं के०) शुं कांहीज नहिं. शा कारण माटे के (यदि के०) जो (आसां के०) आ मारी वाणीउ मध्यें (गुणोस्ति के०) गुण छे, (ततः के०) तो (ते के०) ते सज्जनो, (स्वयं के०) पोतानी मेलेंज (प्रथनं के०) विस्तारने (कर्त्तारः के०) करनारा थाशे. अर्थात् आ ग्रंथमां कांहिं गुण हशे तो सज्जनो छे, ते मारी प्रार्थना कर्या विनाज विस्तार करशे, (अथन चेत् के०) वली जो आ मारी वाणीउमां गुण नहिं होय तो (यशःप्रत्यर्थिना के०) यशना शत्रुभूत अर्थात् अपयशने करनारा एवा (तेन के०) ते विस्तारें करीने (किं के०) शुं?

कांईज नहि. एटले निर्गुणनो विस्तार करवाथी अपयशज थाय छे ॥२॥

॥ टीका ॥ अथ कविः सज्जनपुरुषान्प्रति स्वविज्ञप्तिमाह ॥ संतइति ॥ सज्जना मम प्रसन्नमनसः संतु ममोपरि प्रसन्नचित्ताः नवंतु । किं विशिष्टाः संतः। वाचां कविवाणीनां विचारे सदसद्विचारे उद्यताः सावधानाः समीची नासमीचीनविचारज्ञाः यत् यस्मात् कारणात् अंबुः पानीयं कमलानि सूते तेषां कमलानां परिमलमामोदं वायवो. वितन्वंति विस्तारयंति तद्व देनं ग्रंथमहं रचयिष्यामि परं विस्तारं सज्जनाः करिष्यंति.॥ यतः ॥ प द्मानि बोधयत्यर्कः,काव्यानि कुरुते कविः ॥ तत्सौरनं ननस्वंतः,संत स्तन्वंतु तद्गुणान् ॥ अथवा अनया ममाभ्यर्थनया सतामग्रे प्रार्थनया किं अपि तु न किमपि । कुतः । यद्यासां ममवाणीनां मध्ये गुणोऽस्ति तदा ते संतः स्वयमेव प्रथनं विस्तारं कर्त्तारः नविष्यंति ॥ यद्यस्मिन् शास्त्रे कश्चिद्गु णो नविष्यति तदा संतः स्वयमेव अभ्यर्थनां विनैव विस्तारं करिष्यंति॥ अ थचेद्यदि आसां ममवाणीनां मध्ये गुणो नास्ति तदा तेन प्रथनेन विस्तरेण किं न किमपि ॥ कथंनूतेन तेन प्रथनेन विस्तरणेन यशः प्रत्यर्थिना यशःप्रत्य र्थिशत्रुनूतं यत्तत् यशःप्रत्यर्थि तेन यशःप्रत्यर्थिना यशसोविनाशकेन निर्गुणस्य विस्तारणेन अयशो नवतीत्यर्थः ॥ २ ॥

नाषाकाव्यः—जैसें कमल सरोवर वासें,परिमल तासु पौन परगासें॥ त्यौं कवि नाषहि अक्कर जोर,संत सुजस प्रगटहिं चिढु उर॥ जो गुणवंत रसाल कवि, तौ जगमहिमा होइ॥ जो कवि अक्करगुन रहित,तौ आदरे न कोइ॥२॥

हवे करी छे सकल सुरासुरें सेवा जेमनी एवा जे श्रीवीतराग तेमना आगमना अनुसारें नव्यजनना हितने माटे धर्मोपदेश कहे छे.

॥ उपजातिवृत्तम् ॥ त्रिवर्ग्गसंसाधनमंतरेण, पशोरिवायुर्विफलं न रस्य ॥ तत्रापि धर्म्मं प्रवरं वदंति, न तं विना यद्भवतोर्थकामौ ॥३॥

अर्थः—हे नव्यजनो ! (त्रिवर्ग्गसंसाधनं के०) धर्म,अर्थ अने काम,तेना साधननी (अंतरेण के०) विना (नरस्य के०) मनुष्यनुं (आयुः के०) आ युष्य (पशोरिव के०) बगादिकनी पठें (विफलं के०) निःफल जाणवुं. अर्थात् धर्म,अर्थ, काम अने मोक्ष ए चार जे पुरुषार्थ छे तेमां हालनरतखंममां मोक्ष तो साधवाने शक्य नथी,ए कारण माटे शेष धर्म,अर्थ अने काम, ए त्रण

ना उपार्जन विना नर जे मनुष्य तेनुं जीवितव्य पशुनी पठें विफल जाण वुं. हवे त्यां आशंका करे ठे के ते धर्म, अर्थ अने काम, ए त्रणे समान ठे के कांइ तेउमां अंतर ठे ? तो त्यां कहे ठे; के (तत्रापि के०) ते त्रण वर्गमां पण (धर्म के०) धर्मने (प्रवरं के०) श्रेष्ठ, (वदंति के०) कहे ठे. (यत् के०) जे कारण माटें (तं के०) ते धर्म (विना के०) विना (अर्थकामौ के०) अर्थ अने काम (न के०) नहिं (जवतः के०) होय ठे. कारण के जेणे पूर्वजन्में धर्म कर्यो ठे तेनेज अर्थ,काम,आ जन्ममां प्राप्त थाय ठे. तेमाटें त्रणवर्गमां जे धर्म ठे, तेज श्रेष्ठ ठे. तेथी हे जव्यप्राणीयो ! मनने विषे विवेक लावीने श्रीसर्वज्ञप्रणीत धर्मज आचरण करवो. धर्माचरण करनारा सज्ञनोने जे पुण्य उत्पन्न थाय ठे, ते पुण्यना प्रसादें करीनें उत्तरोत्तर मांगलिक्यमाला विस्तार पामे छे ॥ ३ ॥

टीकाः—अथ विहितसकलसुरासुरसेव्यस्य देवाधिदेवस्य श्रीवीतरागस्यागमा नुसारेण जव्यानां हितहेतवे धर्मोपदेशमाह ॥ त्रिवर्गइति ॥ जो जव्याः त्रिव र्गसंसाधनं अंतरेण नरस्य आयुःपशोरिव विफलं ज्ञेयं । धर्मार्थकाममोक्षाश्च त्वारः पुरुषार्थाश्चतुर्वर्गास्तेषां मध्ये सांप्रतं अस्मिन् जरतक्षेत्रे मोक्षः सा धयितुं न शक्यः ॥ अंतः कारणात् शेषस्त्रिवर्गः धर्मार्थकामरूपः । त स्य त्रिवर्गस्य संसाधनं उपार्जनं अंतरेण विना नरस्य मनुष्यस्य आयु र्जीवितं पशोरिव विफलं निःफलं वृथेत्यर्थः ॥ येन नरेण धर्मार्थकामानां संसाधनं उपार्ज्जनं न क्रियते तस्य जीवितं पशोरिव बागादेरिव वृथा निः फलं ॥ यतः ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणां, यस्यैकोपि न विद्यते ॥ अजागलस्तन स्यैव, निःफलं तस्य जीवितम् ॥१॥ इति ॥ ते त्रयोपि किं सदृशाः वा किंचि दंतरं इत्याह ॥ तत्रापि त्रिवर्गे धर्मं प्रवरं वदंति श्रेष्ठं कथयंति कुतः यत् यस्मात् कारणात् धर्म्मं विना अर्थकामौ न जवतः । येन पूर्वजन्मनि ध र्म्मः कृतोजवति तस्यैवात्रार्थकामौ जवतः नान्यस्य ॥ यदुक्तं ॥ किं जंपि एण बहुणा, जं जं दीसई समत्तजियलोए ॥ इंदीयमणाभिरामं, तं तं धम्मं फलं सवं ॥ २ ॥ अतः कारणात् त्रिवर्गे धर्म्मएव श्रेष्ठः ॥ जो जव्यप्राणि न्नेवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय श्रीसर्वज्ञप्रणीतोधर्म्मएवाचरणीयः ध र्माचरतां सतां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ ३ ॥

भाषाकाव्यः—पुरुष तीन पदारथ साधहिं, धरम विशेष जानि आराधहिं ॥ धरम प्रधान कहे सब कोइ, अरथ काम धरमहीतें होइ ॥ धरम करत संसार सुख, धरम करत निरवान ॥ धरमपंथ साधन विना, नर तिरियंच समान ॥ ३॥

माटे धर्मने विषे प्रमाद न करवो, धर्मोद्यम करवाने प्रसादें ललितांग कुमर सुख पाम्यो, अने धर्म नही करवाथी सज्जननामा सेवक दुःख पाम्यो ते बेहुनी कथा कहे छे.

कथाः—एहज भरतक्षेत्रने विषे श्रीवास नामें नगर छे. तिहां नरवाहन नामें राजा राज्य करे छे, तेने रूप यौवननिधान, सर्वगुणें करी प्रधान, अमृतसमान जेनी वाणी छे एवी कमलानामें स्त्री छे. तेनी कूखें जेम छीपने विषे मुक्ताफल उपजे, तेवा रूपें करी अमर समान ललितांगनामा कुंअर जन्म्यो, ते अनुक्रमें सर्व कलामां प्रवीण थयो. साक्षात् कंदर्पावतार जेवो अने विनय विवेक विचार चातुर्यादि गुणें संपन्न थयो, तेने लालतां पालतां ते यौवनावस्थाने पाम्यो, तेवारें अनेक प्रकारनां सांसारिक सुख भोगवतो दिवस व्यतिक्रमवा लाग्यो. कोइक अवसरें ते कुमरने कोइ सज्जन एवे नामें मित्र आवी मल्यो, यद्यपि तेनुं नाम तो सज्जन छे परंतु परिणामें करी ते अतिदुर्जन छे. हवे तेनी उपर कुमर अत्यंत प्रीति राखे छे, पण ते पोतानुं दुर्जनपणुं छंधारतो जाय छे॥ यतः॥ शशिनि खलु कलंकं, कंटकं पद्मनाले, जलधिजलमपेयं, पंडिते निर्धनत्वं ॥ दयितजनवियोगं, दुर्भगत्वं स्वरूपे, धनपतिकृपणत्वं, रत्नदोषी कृतांतः ॥ १ ॥ जाड्यं धीमति गण्यते व्रतरुचौ दंभः शुचौ कैतवं ॥ इति काव्यं ॥ शशी दिवसधूसरोगलितयौवना कामिनी, सरोविगतवारिजं मुखमनक्षरं स्वाकृतेः ॥ प्रभुर्धनपरायणः सततदुर्गतिः सज्जनो, नृपांगणगतः खलोभवंति सप्त शल्यानि मे ॥ २ ॥ इति ॥ जेम नागरवेलिमां निःफलतानुं कलंक, चंदनमां कटुतानुं कलंक, लक्ष्मीमां चपलतानुं कलंक, सुवर्णने विषे निर्गंधतानुं कलंक छे, तेम ललितांग कुमरने विषे वार्त्ताविशेष जेकांइ कार्य प्रमुख करवां तथा गुणज्ञाता, पटुता प्रमुख जे करवां, ते सर्वमां सज्जननो मेलापराखवो, ते कलंक रूप छे.

अन्यदा ललितांग कुमर राजाने नमस्कार करवा माटे गयो, विनयवंत गुणवंत कुमरने देखी राजा संतुष्ट थइने एक बहुमूल्यनो अपूर्वहार राजायें कुमरने दीधो. कुमर राजाने नमस्कार करी पाछो वलतां ते कुमरनी

मार्गमां याचकजनोयें जयजयारव करी प्रार्थना कीधी, तेथी कुमरें तरत ते हार याचकोने आपी दीधो. ते सर्व वात सज्जनें जाणी,अनें तेणे आवी राजानी आगल चाडी खाधी॥ कह्युंछे के॥ परविघ्नेन संतोषं, नजते दुर्जनोजनः॥ लनेदग्निः परां दीप्तिं, परमंदिरदाहतः॥ १ ॥ राजायें ते वात सांनली क्रोधवंत थइ कुमरने तेडावी एकांतें बेसाडी शीखामण आपीने कह्युं, के हे पुत्र! तुं अत्यंत दान देवांना व्यसननो त्याग कर ॥ यतः॥ अतिदानाद्बली बद्धो, नष्टोमानात् सुयोधनः॥ विनष्टो रावणोलौल्या, दतिसर्वत्र वर्जयेत् ॥ १ ॥ महादुःखाय संपद्ये, दतिमेघस्य वर्षणम् ॥ प्राणघाताय जायेत, प्राणिनामतिनोजनम् ॥२॥ हे पुत्र! आयपदथी, अधिको व्यय करे तो समुद्रपण खाली थइ जाय, माटे पछी निर्धन पुरुष क्यांय आदर न पामे ॥ यतः ॥ आदरं लनते लोको, न कापि धनवर्जितः॥ कांतिहीनोयथा चंद्रो, वासरे न लनेत् प्रथां॥१॥ यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः इति॥ माटे कुल, शील, आचार, विद्या, इंद्रियनुं पटुत्व, ए सर्व धनविना निरर्थक जाणवां. तो हवे हे वत्स! आजथी तहारे, आयपद माफक उचित खरच करवो, द्रव्यनो संग्रह करवो, जेमाटे राज्यने योग्य तुंज छो, अने राज्य पण जो नंमारमां द्रव्य सबल हशे, तोज चालशे, अने वली द्रव्य हशे तोज सनासर्व ताहारी आज्ञामां रहेशे.

एवुं पितानुं वचन सांनली, कुमर मनमां चिंतववा लाग्यो, के जूउ महारा पितानुं महारी उपर केटलुं हेत छे॥ यतः ॥ आकारैरंगितैर्गत्या, चेष्टया नाषणेन च ॥ नेत्रवक्त्रविकारैश्च, लन्यतेंऽतर्गतं मनः ॥ कोइक पुण्यवंतनी उपरज माता पितानी सौम्यदृष्टि पडे. हवे कुमर पितानी आज्ञा पाम्या पछी.स्वल्प स्वल्पदानं धर्म करवा लाग्यो, तेवारें याचकजनो कहेवा लाग्या के हे ललितांगकुंअर ! प्रथम तमें हाथी सरखा दातार थइने हवे गर्दन जेवा कृपण केम थया? अथवा प्रथम तमें कल्पवृक्ष समान थइने हवे धतुराप्राय केम थया? अथवा पहेला सिंह समान थइने हवे शीयालीया जेवा केम थया? एम स्वार्थनष्ट याचक लोको कहेवा लाग्या॥ यतः॥ तावत् प्रीतिर्नवेल्लोके,यावद्दानं प्रदीयते॥ वत्सः क्षीरक्षयं दृष्ट्वा, स्वयं त्यजति मातरम् ॥१॥ कदापि समुद्रमर्यादाथी चूके, राजा हरिचंद सत्य मूकें, मेरु कंपायमान थाय, पृथ्वी पातालने चांपे, तथापि सत्पुरुष पोतानी वाचा

चूके नहीं ॥ यतः ॥ चलेन्नमेरुः प्रचलेत्तु मंदरं, चलंतुताराग्रहचंद्रभानुः ॥ कदापिकाले पृथिवी चलेद्धि, तथापि वाक्यं नचलेद्धि साधोः ॥ १ ॥ एवां वाक्य सांभली कुमर दुःखित थयो थको चिंतववा लाग्यो के मने तो वाघ नदीना न्याय समान कष्ट प्राप्त थयुं छे. हवे जो हुं दानेश्वर थाउं छुं, तो पितानी आज्ञानुं उल्लंघन थाय छे, अने जो दान नथी आपतो, तो कीर्त्ति जाय छे ॥ यतः ॥ जइ गिलइ गलइ उयरं, जइ न गिलइ गलंति न यणाइं ॥ अहिविसमा कज्ज गइ, अहिणं छछुंदरी गहिया ॥१॥ अथवा रुडुं करतां मुजने श्यो दोष छे. एवुं विचारी कुमर वली पण पूर्वनी पेरें दातार थको दान देवा लाग्यो, ते वात राजायें सांभली तेवारें कोपायमान थइने कुमरनें देशवटो दीधो. पछी कुमर पण महामाननो धरनार, साहसिकनो शिरदार ते थोडाएक असवारोने साथें लइ हाथमां हथीयार लइनें तत्काल परदेशें चाल्यो, केम के तेजी ताजणो खमे नहीं. पछी ते समाचार लोकोना मुखथी जाणीनें सज्जन पण पाछलथी नीकलीनें कुमरने जइ मल्यो. मार्गमां बेहु जण चाल्या जाय छे, तेवारें सज्जनप्रत्यें कुमर पूछवा लाग्यो के हे सज्जन! कांइ चमत्कारिक वात तो कहो. तेवारें सज्जन बोल्यो के हे कुमरजी! तमें कहो के पुण्य अने पाप ए बे मांहे कोण रुडुं छे? के जेनी प्रशंसा करीयें. तेवारें ललितांगकुमर हसीने कहेवा लाग्यो के अरे मूंमा भूर्खा! एटलुं तो सहु कोइ जाणेज छे, के जिहां धर्म तिहां जय, अने पाप तिहां क्षय छे, ते सांभली अधर्मी सज्जन बोल्यो के हे स्वामी! जो पुण्य रुडुं छे, तो तमें दानपुण्यादिक करतां करावतां इहां आवी अवस्था केम पाम्या? तारे तेने कुंअरें कह्युं के जे कष्ट पामीयें ते पूर्वकृत पाप कर्मनो उदय जाणवो अने जे शाता पामीयें, ते पूर्वकृत पुण्यकर्मनो उदय जाणवो. तेवारें वली सज्जन बोल्यो, के तमारा धर्मनुं फल तो में प्रत्यक्ष दीठुं, माटें हवे तमें चौर्यादिकें धन उपार्जन करी राज्य पोताने वश करो. ते सांभली ललितांगकुमर बोल्यो के हे दास! तुं एवां सपाप वचन म बोल. कारण के स्वभावें पण पाप वचन बोल्यो थको जीव दुःख प्रत्यें पामे छे. जेम होंशें करी विष खाधुं थकुं पण मरण उपजावे छे, माटे तहारे एवा यद्वा तद्वा प्रलाप करवा नहीं. कारण वली एम करवाथी तारे शुं लाभ थाय छे. जो तुजने एनो निश्चय करवो होय

तो चालो आपणे कोइ महंत पुरुषने पूछीयें. अने जो तेपुण्यथकी जय थाय एवुं कहे, तो तह्यारे मह्यारे शी सरत ? ते सांजली सज्जन बोल्यो के जो एम कोइ कहे तो हुं आ जन्मपर्यंत तमारो दास थइनें रहिश, अने जो एम नहरे तो आ जन्म पर्यंत तमें माहारा दास थइने रहो. बन्ने जणे एवी प्रतिज्ञा करी, आगल चालतां कोइक गामें जइ पहोंता. तिहां घणामहोटा लोकोनां टोलामांहे जइ पूछवा लाग्या के नाइउं ! सुखश्रेय प्राणीयें ते पुण्यथी किंवा पापथी ? ए प्रश्नवचन सांजलीने लोको बोल्यां के नाइ ! हमणां तो पापज सुखहेतु छे, अने पुण्यथी क्षय थाय छे. एवुं सांजली बेहुजण आगल चाल्या मार्गमां ललितांगकुमरने सज्जन हांसी पूर्वक कहेवा लाग्यो के अहो कुमर ! हवे तमें घोडा उपरथी उतरी चाकर थइने मह्यारी आगल चालो. पोतानी प्रतिज्ञा पालो. एवुं वचन सांजली कुमर घोडाथी नीचें उतरी सज्जन प्रत्यें कहेवा लाग्यो के हे मित्र ! हुं सर्वदा ताहरो सेवकज छुं. ए असार धननी शोना कारमी छे तेनी कांइ मने गरज नथी. मने तो एक धर्मेज निश्चल थाउ. एम कही सेवक थइ आगल चाल्यो अने सज्जन घोडा उपर चढयो. आगल चालतां वली कुमरप्रत्यें कहेवा लाग्यो के हे कुमर ! श्रीजिनधर्मना फल जोगवो केहवां छे ? हुं तमोने हजी पण कहुं छुं, के तमें तमारो कदाग्रह मूकीनें पाप चोरादिक कर्म करो; ते शिवाय बीजो कोइ तमारे जीववानो उपाय मनें नासतो नथी. जो एम नहिं करशो तो कष्ट पामशो. एवां वचन सांजली रीश चढावीने कुमर बोल्यो के अरे मूर्ख ! तह्यारामां गुण तो सर्व दुर्जननाज देखाय छे, पण तह्यारी फइयें तह्यारुं नाम सज्जन पाडयुं छे, ते मिथ्या छे. जे मिथ्याउपदेश आपे ते महापापी जाणवो. तेनी उपर एक दृष्टांत कहुं छुं ते सांजल. कोइएक आहेडी निरंतर जीवोनो वध करतो अटवीमां वसे छे. एकदा प्रस्तावें आहेडीयें वनमां जइ एक हरणी दीठी, तेने हणवा माटे कान पर्यंत बाण सांधीने जेवामां छोडवा लाग्यो, तेवामां हरणी बोली के हे व्याध ! हे बांधव ! तुं क्षण एक सबूर कर; एटलामां हुं मह्यारां न्हानां बच्चांउने धवरावी पाछी आवुं. तेवारें आहेडी बोल्यो अरे बापडी ! तुं आ बाणथी छूटी जइश तो फरी पाछी आवीश नही, तेवारें तेने हरणीयें कह्युं के जो हुं न आवुं तो मह्यारे शिर गोहत्यादिकनां पापो छे, ते वचन सांजली आहेडीयें कह्युं के कष्टमांथी उगरवा माटे तुं एवां वचन बोले छे,

ते हुं मानुं नही. तेवारें मृगलीयें कह्युं के हे पाराधी! आ समयें जे तुं कहे तेवा सम हुं खाउं! तेवारें आहेडीयें कह्युं के शीख पूछतां कुशीख आपे, तेनुं पाप तहारे शिर ले, तो हुं जावा द्युं. तेवारें हरणीयें ते प्रतिज्ञा करी, अने पाराधीयें तेने जवा दीधी, पंछी ते पोताना बालकोने धवरावी संतोषी ने पोतानुं वचन पालवा माटे पाछी आहेडी पासें आवीने कहेवा लागी के हे वधक! हुं कयी दिशायें नासी जाउं तो तहारा बाणथी छूटुं! ते सां भली आहेडी विचारवा लाग्यो के हुं एने कुशीख आपीश तो मने पाप लागशे, माटें खरुं कहेवुं जोश्यें, एम चिंतवीने कहेवा लाग्यो के जो तुं जमणी बाजुयें नाशी जा, तो छूटे, एवुं वचन सांभली हरणी जमणी बाजु नाठी तेथी छूटी. माटे हे सज्जन! शीख आपतां कुशीख आपे तो ते म हापापी कहेवाय. तो हवे तुं महारो मित्र छतां मुजने कुशीख केम आपे छे? जो कोइ बापडा पामर लोकोयें धर्म नही वखाण्यो तो शुं तेथी धर्म व्यर्थ थइ गयो समजवो? जो आंधले पुरुषें सूर्य न दीठो, तो शुं सूर्य नथी उग्यो, एम समजवुं? माटे संसारमांहे सारपदार्थ, सर्वलोकनो आधार, सर्व सुखनो भंमार, स्वर्गापवर्गनो दातार, अचिंत्यचिंतामणि समान, सक लकलाप्रधान एवो एक धर्मज छे एम जाणवुं,

वली सज्जन बोल्यो के अहो कुमर! तुं तो महा कदाग्रही देखाय छे, जेमाटे धर्मनां फल देखतो छतो पण हजी मानतो नथी. रासभनुं पूंछ पक डयुं ते मूकवुंज नही. एवो तहारो न्याय छे. जेम कोइ ग्रामीण माता पितायें पुत्रने शीखव्युं जे पांच जणमां बेशी जे वात अंगीकार करीयें, ते मूकीयें नही. एवी शिक्षा दीधी. एकदा ते मूर्खशिरोमणियें एक सांढ नाशी जतो हतो तेथी तेणे पांचनी साक्षीयी तेनुं पूंछ पकडयुं पण मूके नही तारें लोक क हेवा लाग्यां फे हे मूर्ख! मूकी आप. पण पेलो मूके नही, तेम तें पण हठ लीधो ते छोडतो नथी. हजी पण जो महारुं कह्युं न माने तो चाल आगल बीजा लोकोने पूछीयें. एम वाद करतां परस्परें नेत्रनी होड करी. एटले जे हारे ते पोतानां नेत्र काढी आपे. आगल कोइ गाममां जइ लोकोने पूछ्युं के धर्म उत्तम के अधर्म? तेवारें ते मूर्खोयें पण अधर्मनीज स्थापना करी, ते वाणी सांभली सज्जन हर्ष पाम्यो. आगल जतां कुमरनी पासेंथी होडमां हारेलां नेत्र माग्यां, कुमरें पण पोतानी चक्षु छरी वडे काहाडी आपी, तेवारें सज्जने

कह्युं के केम कुमरजी धर्मनां फल दीठां के ! आंधला तो थया !!! एम कही ल गारेक तिहां बेसी पछी कुमरने मूकी घोडे चडीने सज्जन अन्यदेशें जतो रह्यो.

हवे पाछलथी कुमर चिंतववा लाग्यो के आपदारूप नदीनो पूर, पूर्व कृतकर्मप्रमाणें महारे वृद्धि पाम्यो छे, अथवा वली आपदा ते शुं? धर्मना प्रसादथी सर्व सारुंज थाशे: एम चिंतवी ज्ञानबलें धर्म उपर निश्चल मन करी उनो रह्यो. एवामां सूर्य अस्त पाम्यो. चारे दिशायें अंधकार पसर्यो, रात्रिचर जीवो संचार करवा लाग्या, चोर पेसर्या, एवा अवसरें तिहां वड उपर नारंम पंखीउ मली मांहोमांहे वातो करवा लाग्या के जेणें जे कौतुक दीठुं होय ते कहो. तेवारें एक बोल्यो के इहांथी पूर्वदिशें चंपा नगरें जितशत्रु राजा राज्य करे छे, तेने पुष्पवती नामा पुत्री प्राणथी पण व ल्लन छे. ते महारूपसौंदर्यनुं निधान छे, यौवनावस्था पामी पण कृतक र्मने योगें तेने अंधपणुं प्राप्त थयुं छे. एकदा प्रस्तावें राजा पोतानी पुत्रीने खोलामां बेसाडी चिंतववा लाग्यो के एक तो दीकरी छे ते स्वनावें चिंता नुंज कारण छे अने वली एतो कर्मे कलंकित छे अने विवाहयोग्य पण थइ छे. हवे श्यो उपाय करवो? एम विचारी नगरमां पडह वजडाव्यो के जे राजानी दीकरीनी आंखो सारी करे, तेने राजा अर्धुं राज्य तथा तेहीज कन्या आपे. एवी रीतें राजपुरुषो तिहां चहुटे चहुटे ढंढेरो फेरवे छे. ए कौतुक में दीठुं. हवे आगल शुं थाशे ? ते हुं जाणतो नथी.

एवुं सांनली वली एक न्हानो नारंम बोल्यो के हे तात ! तमें जाणता हो तो कहो, के नेत्र सारां थवानो कोइ उपाय छे. ते सांनली वृद्ध नारंम बोल्यो के हे वत्स ! उपाय तो घणाय छे, पण नाग्य विना मले नही. तेवारें लघुनारंम बोल्यो के तमें जाणता हो तो कहो. तेवारें वृद्धनारंम बोल्यो के हे वत्स ! रात्रियें कहेवाय नही ॥ यतः ॥ दिवा निरीक्ष्य वक्तव्यं, रात्रौ नैवच नैवच ॥ संचरंति महाधूर्त्ता, वटे वररुचिर्यथा ॥ १ ॥ वली ल घुनारंम बोल्यो के इहां तो कोइ सांनलतो नथी माटें तमें कहो. तेवारें वृद्ध बोल्यो जे ए वृक्षने जे वेलडी वींटाइ रही छे, तेने लइने जो आंखे अंजन करे, तो नवां नेत्र आवे, ते सांनली वली लघुनारंम बोल्यो के स्वामी ! तमें प्रनातें किहां जाशो? ते बोल्यो के तेहीज नगरें हुं जइश लघुनारंम बोल्यो के हुं पण कौतुक जोवाने माटे तमारी साथें आवीश.

एवी वात करीने ते भारंम्ड सूइ रह्या. कुमरें वडहेठल बेठां थकां सर्व वात सांजली विचार्युं जे पुण्यनुं प्रमाण अद्यापि प्रवर्त्ते छे. पछी ते वेलडी लइ हाथथी घसीने आंखे अंजन कीधुं, तेथी नवी चक्षु आवी. पछी वड उपर चढी संपूर्ण वेलडी लइ लीधी. अने पोतें भारंम्ड पंखीनी पांखमां बेसी रह्यो. प्रजातें भारंम्ड उडी चंपायें पहोतो कुमर पण पांखमांथी नीसरी वस्त्रादिक पहेरी राजद्वारें गयो; दरवाने आवी राजा आगल हकीगत जाहेर करी के हे स्वामी! कोइक देशांतरी पुरुष आवी कहे छे, के हुं राज्य कुमरीनी आंखो सारी करीश? ते वात सांजली राजायें तेने आदरथी तेडी विनति करीने कह्युं के हे महापुरुष! उपकार करो. पछी कुमरें तरत वेलडीनो रस काहाढी आंखे अंजन करी राजपुत्रीने साजी करी. तेवारें राजायें पण महोटा महोत्सव पूर्वक पोतानी पुत्री कुमरने परणावी दीधी. हाथ मेलावडामां हाथी, घोडा, पायदल प्रमुख घणी लक्ष्मी आपी अने अर्द्ध राज्य दीधुं. तिहां मनुष्य संबंधी भोग भोगवतो सुखें रहे छे.

एकदा गवाक्षमां बेठो छे, एवामां जेनी आंखमांथी आंसु करे छे, रोगें करी ग्रस्त अने फाटेलां वस्त्र, बीभत्सांग, दुर्निरीक्ष्य, पगें पगें पडता एवा सज्जनने आवतो दीठो. तेवारें पापनां फल प्रत्यक्ष देखीने कुमरने दया आवी तेथी चाकर मोकली तेडावी बेसाडीने पूछ्युं के हे सज्जन! तुं मुजने उलखे छे? ते बोल्यो अहो सत्पुरुष! तमने कोण नथी उलखतो. कुमरें साचुं पूछ्युं तेवारें अणबोल्यो रह्यो. पछी कुमरें पाछलुं वृत्तांत कही सर्व पोतानी हकीगत संजलावी, तेथी ते सज्जन लज्जा पाम्यो. पछी तेनां फाटेलां वस्त्र उतरावी नवां पहेरावी भोजन करावीने कह्युं के हे मित्र! आ लक्ष्मी सर्व ताहरीज छे, तुं निश्चिंत थको आंही सुख भोगव.

हवे सज्जन बोल्यो के हुं तमने मूकीने चालतो थयो. आगल जतां मने चोर मल्या तेणें लाकडी तथा मुष्ट्यादिकें खूब मार्यो, अने महारीपासें जे धन हतुं ते सर्व लइ लीधुं. मात्र पाप भोगववा माटेंज जाणे मुने जीवतो मूक्यो होय नहिं? तेम जीवतो मूक्यो. तिहांथी हुं अनेक देश भम्यो सर्वत्र दुःख देखतो तमने आवी मल्यो छुं. माटे हुं पापीने तमें दूर जवा द्यो. तमारी पासें म राखो. ते सांजली कुमर बोल्यो के हे सज्जन!

हुं राज्य कन्यादिक ऋद्धि पाम्यो, ते सर्व तहारो प्रताप छे. माटे हवे तुं आ राज्यनी चिंता कर. एम कही तेने प्रधान पदवी आपी.

ए खबर सर्व कुमरनी स्त्री पुष्पवतीयें सांजली तेवारें जर्त्तार प्रत्यें कहेवा लागीके हे स्वामिन्! ए तमारो बालपणानो मित्र छे, तो एने कोइ एकाद गांम आपी द्यो. पण तमारायी दूर राखो, परंतु पासें म राखो ॥ यतः ॥ दुर्जनः परिहर्त्तव्यो, विद्यया भूषितोपि सन् ॥ मणिना जूषितःसर्पः, किमसौ न जयंकरः ॥१॥ जेमाटे दुर्जनने उपकार करतां पण सांहामुं कष्ट थाय, जेम कोइएक कागडो सरोवरने विषे बग प्रमुखने तरता देखी पोतें पण तेमनी पेठें मत्स्यजक्षण करवा सारु पाणीमां पड्यो, पण तरतां आवडतुं नथी तेथी पाणीमां बूडवा लाग्यो, तिहां तेने कोइ राजहंसीयें दीठो, तेने दया आवी तेवारें राजहंसने कहेवा लागी के हे स्वामी! बापडो कागडो बूडे छे, माटे तमें उपकार करी एने काहाडो. तेवारें हंसहंसिणीयें मली चांचे ताणी पकडीने बाहेर काढयो. पछी कागडो हंस हंसिणीने पगे लागी कहेवा लाग्यो के हे जाग्यवानो! हुं ज्यां सुधी जीवतो रहुं, त्यांसुधी तमारो उपकार मानीश. हवे कृपा करी तमें बेहु जण आहार जक्षण करवा अमारा वनमां आवो. तेवारें हंसें हंसिणीने पूछयुं के केम तहारी शी मरजी छे? हंसिणी बोली के हे स्वामी! उपकार सर्वने करीयें पण अजाण्यानी संगत न करीयें. एम हंसिणीयें वार्यो, तो पण दाक्षिण्यने लीधे हंस, कागडानी साथें वनमां गयो. ते बेहु कोइ लींबडाना फाड उपर बेठा, ते वृक्षनी नीचें कोइ राजा आवी वीसामाने अर्थें उजो रह्यो छे. तेनी उपर कागडो विष्टा करीने तिहांथी उडी गयो. राजायें उंचुं जोइने हंसनी उपर बाण मूक्यो, तेथी हंस तडफडतो जूमियें पड्यो, राजायें विचार्युं जे आ धवल काग छे, ए कौतुक जेवी वात छे. ते सांजली हंस बोल्यो ॥ नाहं काकोमहाराज! हंसोऽहं विमले जले ॥ नीचसंगप्रसंगेन, मृत्युरेव न संशयः ॥१॥ ए वात स्त्रीयें कहीने कह्युं के हे स्वामी! तमें नीचनरनी संगति म करो. कुमर ते हितकारक वचन जाणतो थको पण दाक्षिण्यपणे तेनो संसर्ग मूके नही. एम केटलोएक काल व्यतिक्रम्यो.

अन्यदा प्रस्तावें राजायें सज्जनने पूछ्युं के ए कुमरनी साथें तमारे मांहो मांहे गाढ स्नेहनुं कारण शुं छे? तेवारें सज्जनें विचार्युं जे हुं प्रथमथी

कुमरनी उपर दूषण चढावुं, तो पछी महारां दूषण ए प्रकाशी शकशे नही, एम विमासी राजा प्रत्यें बोल्यो के हे स्वामिन्! ए वात कहेवा योग्य नथी, केम के कुमरें मुजनें प्रथमथी सोगंद खवराव्या छे. एवुं सांभली राजा वली विशेष आग्रह करी पूछवा लाग्यो, तेवारें राजाने सोगंद आपीने सज्जन कहेतो हवो, के वासपुरी नगरीयें नरवाहनराजानो हुं पुत्र छुं. अने ए महारा घरनी दासीनो पुत्र छे. कर्मयोगें देशांतरें भमतो थको विद्या पाम्यो, तेवारें नीचजातिथी लज्जा पामीने घरमां रहे नही. देशांतरेंज भम्या करे, ते भमतो भमतो तमारे नगरें आव्यो. विद्यावंत माटे तमें आदर दीधो. पूर्वकर्मना प्रसादथी अर्द्ध राजपदवी पाम्यो, अने हुं पण महारा पिताथी पराभव पाम्यो थको इहां आव्यो. मने एणे उळख्यो कारण के मर्मनो जाणज मर्म जाणे, तेथी एणे मुजने पोतानी पासें राख्यो. हे स्वामी! एनी वात में तुमनें कही, पण एमांहे भली वार कांइ नथी. एवी वात सांभली राजा विचारमां पड्यो जे में अणविचार्यु काम कर्युं; राज जाउ तो भलें जाउ, धन जाउ तो भलें जाउ. परंतु माराथी माहारो वंश मलीन थयो ते अत्यंत अकार्य थयुं. एम चिंतवी जमाइने मारवा माटे राजायें अंतरंग पुरुषने तेडावीने कह्युं के आजरात्रियें घरमांहेले रस्ते जे आवे, तेने तरत समाधान करि नाखजो. सेवकें पण तेवीज रीतें राजानी आज्ञा प्रमाण कीधी. राजायें रात्रिनें समयें भलो पुरुष मोकलीने कुमरने मारवा माटें तेडाव्यो, तेणें जइ कुमरनें वीनव्यो, जे आपने राजा अवश्य तेडे छे. कोइ महोटुं कार्य छे, तेमाटें घरमांहेले रस्ते थइनें आवो. कुमर पण तेवीज रीतें सज्ज थइने जवा लाग्यो, तेवारें स्त्री बोली हे स्वामी! भोला थइ रात्रें जाउ छो पण राज्यस्थिति मलीन छे ॥ यतः ॥ काके शौचं द्यूतकारेषु सत्यं, सर्प्पे क्षांतिः स्त्रीषु कामोपशांतिः ॥ क्लीबे धैर्यं मद्यपे तत्त्वचिंता, राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतं वा ॥१॥ ते सांभली कुमर बोल्यो हे सुभगि! तुं कहे छे, ते सत्य छे, परंतु राजानी आज्ञा लोपीयें तो महादोष लागे ॥ यतः ॥ आज्ञाभंगोनरेंद्राणां, गुरूणां मानमर्दनम् ॥ पृथक्शय्या च नारीणां, अशस्त्रवधउच्यते ॥ १ ॥ ते सांभली स्त्री बोली तमें कह्यो छो ते पण सत्य छे माटे हमणां मित्रने मोकलो, कुमरें पण तेमज कर्युं अने सज्जनने मोकल्यो. मार्गें जातां राजाना सेवकें पूर्वे

संकेतथी तेने पेसतांज मारी नाख्यो,मरण पामीने दुर्गतियें गयो ॥यतः॥ मित्रद्रोहिकृतघ्नाश्च, ये च विश्वासघातकाः ॥ ते नरा नरकं यांति, यावच्चंद्र दिवाकरौ ॥ १ ॥ तिहां ते सज्जनना मरणथी कोलाहल थयो, तेवारें कुमरी बोली हे स्वामी! जो तमें तिहां आता, तो शा हवाल थाता! माटें अद्यापि तमें प्रमाद छांडी कटक सज्ज करी सावधान थका रहो कुमर पण तेमज सज्ज थइ रह्यो. राजा पण सर्व वात जाणी कटक लइ युद्ध करवाने साहामो आव्यो. बेहु सैन्य मांहोमांहे मल्यां. एवामांहे दीर्घबुद्धिना धणी मंत्रीश्वर आवी राजाने कहेवा लाग्या के हे स्वामी! अणविचार्यु युद्ध न करीयें ॥यतः॥ अपरीक्षितं न कर्त्तव्यं, कर्त्तव्यं सुपरीक्षितं ॥ पश्चाद्भवति संतापो, ब्राह्मणी नकुलं यथा ॥१॥ इत्यादि प्रधानोनां वचन सांभली राजायें युद्ध निवारण करी कुलजाति पूछवा माटें मंत्रीश्वरने कुमरपासें मोकल्या. मंत्रीश्वरें आवी कुमरने विनव्यो जे तमारो कुलवंश प्रकाश करो. कुमर बोल्यो के सत्पुरुष, पोतानुं कुल पोताना मुखथी कहे नहीं. प्रधान पुरुष बोल्यो तमारा सज्जनमित्रें आवीने राजानी आगल तमारा अवर्णवाद कह्या छे, प्रायः दुर्जन होय ते परविघ्नें संतोषी थाय. ते वचन सांभली कुमरें पोतानुं सर्ववृत्तांत प्रधान आगल कह्युं. मंत्रीयें जइ राजानी आगल निवेदन कर्युं, ते समाचार आमूलथी जाणवा भणी तत्काल कागल लखीने राजायें कुमरना नगरभणी सेवक मोकल्यो, ते सेवक पण ललितांगकुमरना पितापासें जइ सर्व हकीगत कही. तेवारें राजा पोताना पुत्रनी खबर सांभली घणोज हर्षवंत थयो. अने राजा कहेवा लाग्यो जे भलुं कर्युं जे महारा पुत्रने जितशत्रु राजायें जीवितव्यनी पेरें राख्यो, में मंदभागीयें तो अतिदाननुं दूषण आपीने सज्जनना कहेवाथी पुत्रने परदेशें काहाढयो. एम कही ते राजाना सेवकने वस्त्रादिक आपी संतोषीने विसर्जन कर्यो. सेवकें आवी राजानी आगल सर्व समाचार संभलाव्यो, राजा प्रमुदित थयो. जमाइ तथा दीकरीने जइ पोतानो अपराध खमाव्यो. अने कह्युं के हे ललितांगजी! तमारा जेवा गुणवंत कोइ नथी, अने सज्जन सरखो दुर्गुणी पापी पण कोइ नथी, माटें हवे हे कुमरजी! तमें राज्यनो अंगीकार करो. एम कही कुमरने राज्य आपी पोतें दीक्षा लइ देवलोकें गयो.

पाछलथी ललितांगकुमर पण राज्यनी चिंतामां करनार मंत्रीश्वरने सर्व कारजार सोंपी पोतें सैन्य लइ महोटी ऋद्धिथी पिताने चरणे जइ नम्यो. पिता पण नेत्रने आनंदकारक एवा पुत्रनुं दर्शन पामीने जेम चंद्रमाना दर्शनथकी समुद्रने हर्ष थाय, तेम हर्षवंत थयो थको पुत्रने कहेवा ला ग्यो के हे वत्स ! हवे अमें परलोक साधन करशुं ! अने तमें ए राज्य अं गीकार करो. ते सांजली ललितांग बोल्यो के हे स्वामी ! हुं तमारी सेवामां तत्पर रहीश अने तमें राज्य पालो. एम राज्यने अणवांछतां पण राजायें कुमरने राज्य दीधुं. अने पोतें चारित्र लइ परजवनुं साधन करवा मां ड्युं. ललितांगकुमर पण घणा वर्ष न्यायपूर्वक राज्य पाली अंत्यावस्थायें चारित्र लइ देवलोकें गयो. ए ललितांगकुमरनुं चरित्र सांजली हे जविज नो ! तमें गीतार्थनां वचनने अनुसारें एकमना थइ श्रीजैनधर्मनेविषे प्रीति राखो अने दानादिक चार प्रकारनो धर्म पालो, प्रमाद टालो, पाप गालो, आठ मद टालो, आत्मा अजुवालो. तो स्वर्ग मोक्षनां सुख निश्चय पांमो ॥ ३ ॥ इति धर्मविषयिक ललितांगकुमरनी कथा संपूर्ण ॥

हवे आ नरजवनुं डुर्लनपणुं छे, ते कहे छे.

इंद्रवज्रावृत्तम् ॥ यः प्राप्य डुःप्राप्यमिदं नरत्वं,
धर्म्मं न यत्नेन करोति मूढः ॥ क्लेशप्रबंधेन स
लब्धमब्धौ, चिंतामणिं पातयति प्रमादात् ॥४॥

अर्थः—(यः के०) जे (मूढः के०) मूढ पुरुष; (इदं के०) आ (डुःप्राप्यं के०) डुःखें प्राप्त थावा योग्य एवुं (नरत्वं के०) मनुष्यपणुं; तेने (प्राप्य के०) पामीने (यत्नेन के०) उद्यमें करीने (धर्म्मं के०) धर्मने (न करोति के०) न करे छे, (सः के०) ते पुरुष, (क्लेशप्रबंधेन के०) अति महेनतें (लब्धं के०) पामेला (चिंतामणिं के०) चिंतामणिने (अब्धौ के०) समुद्रमां (प्रमादात् के०) आलस्यें करीने (पातयति के०) नाखे छे. अर्थात् जे मूर्ख पुरुष मोहोटा कष्टें पमाय एवो मनुष्यजन्म पामीने सावधानतायें करीने श्रीवी तरागप्रणीत धर्मने न अंगीकार करे, तेणें अतिडुःखें मलेलो एवो प्रत्यक्ष चिंतामणि प्रमादथकी समुद्रमां नाख्यो, एम जाणवुं. ए कारण माटे नरजवें करीने धर्मनुं उपार्जन करवुं. आ ठेकाणें ब्राह्मण रत्नद्वीपें देवीयें

दीधेला चिंतामणिनुं समुद्रमां पातन कर्युं, तेनो संबंध जाणवो. माटें हे भव्यजनो! ए प्रकारें मनने विषे विवेक लावीने धर्मज करवो कारण के धर्मने विषे प्रीति करनारा सुजन पुरुषो तेने जे पुण्य उत्पन्न थाय. इत्यादि सर्व पूर्ववत् जाणवो ॥ ४ ॥

टीका ॥ अथ नरभवस्यं दुर्लभत्वमाह ॥ यः प्राप्येति ॥ यो मूढो मूर्खः इदं दुःप्राप्यं नरत्वं प्राप्य यत्नेन उद्यमेन धर्म्मं न करोति. सः क्लेशप्रबंधेन लब्धं चिंतामणिरत्नं प्रमादात् अब्धौ समुद्रे पातयति ॥ यो मूर्खः पुमान् दुःखेन महता कष्टेन प्राप्यं ॥ यतः ॥ चुल्लग १ पासग २ धन्ने ३, जूए ४ रयणे य ५ सुमिण ६ चक्केय ७ ॥ कूम्मे ८ युग ९ परमाणू १०, दस दिठंता मणुअ जम्मे ॥ १॥ इत्यादिदशनिर्दिष्टांतैर्दुर्लभं इदं नरत्वं मनुष्यजन्म प्राप्य लब्ध्वा यत्नेन सावधानतया श्रीवीतरागप्रणीतं धर्म्मं न करोति उपेक्षते स क्लेशप्रबंधेन, महता कष्टप्रकारेणातिप्रयासेन लब्धं प्रत्यक्षं प्राप्तं चिंतामणिरत्नं प्रमादात् अब्धौ समुद्रे पातयति ॥ अत्र ब्राह्मणरत्नद्वीपदेव्यादत्तचिंतामणि रत्नसमुद्रपातनसंबंधोवाच्यः। भो भव्यप्राणिन्! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय यत्नेन धर्म्मएव कार्यः धर्म्मं च कुर्वतां सतां यत् पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ ४ ॥

॥ भाषाकाव्य ॥ कवित्त ॥ जैसें पुरुष कोइ धनकारन, हींमत दीप दीप चढि जान ॥ आवत हाथ रतन चिंतामनि, मारत जलधि जानि पाखान ॥ तैसें भ्रमत भ्रमत भवसागर, पावत नरसरीर परधान ॥ धरम जतन नहिं करत बनारसि, खोवत वादि जनम अज्ञान ॥ ४ ॥

सिद्धांतने विषे मनुष्यनो जन्म पामवो दश दृष्टांतें दुर्लभ कह्यो छे, ते दश दृष्टांतनां नाम कहे छे. एक चूलकनो, बीजो पासकनो, त्रीजो धान्यनो, चोथो द्यूतनो, पांचमो रत्ननो, छठो स्वप्ननो, सातमो चक्रनो, आठमो कूर्म्मनो, नवमो युगनो, दशमो परमाणुनो. ए दश दृष्टांतनां नाम कह्यां. हवे एनी उपर संक्षेपथी कथाउ कहे छेः—

प्रथम चुलक ते देशी भाषायें भोजन कहेवाय छे, तेनो दृष्टांत कहे छे. कांपिलपुर नगरें ब्रह्मनामें राजाने चुलणी नामें राणी तेने चौद सुपने सूचित ब्रह्मदत्त नामें पुत्र थयो. ते पांच वर्षनो थयो, तेवारें तेनो पिता मरण पाम्यो. हवे राज्यचिंता करवा भणी तेना दीर्घादिक चार मित्र मल्या.

तेमां दीर्घने कांपिल्लपुरें राख्यो. अने बीजा त्रण मित्र पोताने घेर गया. हवे चुलणी राणी इंद्रियोना चपलपणाथकी दीर्घनी साथें लुब्ध थइ. तेवारें धनुनामा मंत्रीश्वरें ते समाचार कुमरने जणाव्या, कुमर पण दीर्घने तथा पोतानी माताने शीखामण आपवा सारु नानाविध प्रपंच देखाडवा लाग्यो. राजसन्नामांहे अनाचारी पुरुष देखी राजहंसीशुं काग संयोग करतो जोइ ब्रह्मदत्त कहेवा लाग्यो के ए पापीने अन्य जातिशुं अणमलतां संबंध क्यांथी मल्यो. ए अन्याय हुं सहन करी शकुं एम नथी. तेवारें प्रधानने शंका उपनी जे निश्चें ए ब्रह्मदत्तें चुलणीने अनाचार सेवती जाणी छे. अने दीर्घराजायें पण ते समाचार जाणी चुलणीनी आगल कह्युं के तहारा पुत्र ब्रह्मदत्तें एवां चिन्ह देखाड्यां छे, माटें ते आपण बेहुजणने मारशे, तेथी जो तुऊने महारो खप होय तो प्रथमथीज आपणे एने मारी नाखीयें, तो सारुं थाय. तेवारें राणीयें कह्युं के हुं एना विनाशनो उपाय करुं छुं. पछी चुलणीयें ब्रह्मदत्तने एक कन्या परणावी. अने नवुं लाखनुं गृह कराव्युं. ए चुलणीनो अभिप्राय सर्व जूना पाटनक्त प्रधानें जाण्यो,जे ए विषयांधत्वथकी पुत्रने लाख गृहमां बाली नाखशे, तेमाटे प्रधाने पण नगरबाहिर थका प्रछन्नपणे लाखना धवलगृह लगें मध्य गर्त्ता खणावीने पछी ब्रह्मदत्तने कह्युं के तहारी मातायें तुऊने मारवा माटे लाखनुं गृह बनाव्युं छे, पण ते वात ब्रह्मदत्तें मानी नही. ब्रह्मदत्तें कह्युं के छोरु कुछोरु थाय पण मावतर कुमावतर थाय नही. ते सांनली प्रधानें कह्युं के स्वामी! तमें कहो छो ते सत्य हशे. पण जेवारें आ घरमां वसवानुं मुहूर्त्त होय, तेवारें सूतां थकां सावधान रहेजो. कांइ काम पडे तो पाटु प्रहारें सरंग उघाडी नगरनी बाहिर आवजो. अश्व शणगारी पलाण सहित हुं सज्ज करी राखीश. तमें महारी साथें देशांतर चालजो.

हवे चुलणीयें मुहूर्त्त जोवरावी पुत्रने कह्युं के तमें नवपरिणीत छो, माटें आजे नवा घरमां शयन करवा जाजो. कुमर तिहां गयो, तेवारें तेने प्रधानें कह्युं के आज तुमें सावधान रहेजो. ते सांनली ब्रह्मदत्तें नइक परिणामें चिंतव्युं जे आवा स्थानकमां वली शो उपद्रव थवानो छे? रात्रियें अकस्मात् ते पापबुद्धि मातायें घरनी चारे बाजुयें आग लगाडी दीधी. ते देखी वरधनु मित्रें कुमरने जगाड्यो, ते सुरंगमांथी बेहु जण नाशि अश्वारूढ थइ देशां

तर नणी चाल्या. केटलीएक नूमि उल्लंघी गया. एकदा वनमांहे कुंअरने तृषा लागी ते सारु मंत्रिपुत्र पाणी लेवा गयो, ते घणी वार पर्यंत न आव्यो तेवारें तेने जोवा माटें कुंअर निकल्यो, ते मार्गमां नूलो पड्यो तेवारें तृषायें पीड्यो थको एक वृक्षनी नीचें जइ सुइ रह्यो. एवामां एक देशांतरी वटेमार्गु कोइ एक ब्राह्मण पाणीनुं पात्र लइ वृक्षनी बायायें आवी विश्राम लेवा बेगे. ब्रह्मदत्तें तेनी पासेंथी पाणी माग्युं. ब्राह्मणें पाणी आप्युं अने वली पासें कांइक फलादिक हतां, ते खावाने आप्यां, तेवारें ब्रह्मदत्तें कह्युं के मुफने जे वखत राज्य प्राप्त थयुं तमें सांनलो, ते वखत कपिलपुर पाटणे आवजो. एम कही ब्राह्मणने विसर्ज्यो.

वली तिहांथी केटलेक कालें बेनातट नगर नणी जातां मार्गमां एक ब्राह्मण मल्यो; तेनर सथवाराथी बार योजननी अटवी कुमरें उल्लंघन करी. नोजननी वेलायें ब्राह्मण पोतें एकलोज जम्यो, पण कुमरने आग्रह मात्र न कीधो. तेम कुंअरें पण याचना कीधी नही. कारण के महांत पुरुष मरणांतें पण याचना करे नही. एम करतां अटवी उतरी प्रांतें पहोता, तेवारें कुमरें कह्युं के हे ब्राह्मण! तमारा पसायथी हुं अटवी उतस्यो, माटें जेवारें मुफने कांपिलपुरनुं राज्य प्राप्त थयुं सांनलो, तेवारें तरत आवजो. एम कही ब्रह्मदत्त बेनातट नगरें गयो. ब्राह्मण चिंतववा लाग्यो के जूउ एनुं औदार्य धैर्य केहवुं बे? अने महारुं कृपणपणुं केहवुं बे? एम चिंतवतो स्वस्थानकें गयो. पबी केटलेक कालें नाग्ययोगें ब्रह्मदत्तने ब खंम पृथ्वीनुं राज्य मल्युं. चक्रवर्त्तीनी पदवी प्राप्त थइ. वरधनुमित्र पण आवी मल्यो, तेमने आपणा नगर नणी आवता जोइ चुलणीयें देहनो त्याग कस्यो. ब्रह्मदत्त पोताना पिताना राज्यपाटें बेगे.

हवे जेणे पाणी पीवराव्युं हतुं ते ब्राह्मण पण ब्रह्मदत्तने राज्य मल्युं सांनली नगरमां आव्यो, तेणें राजाने मलवाना घणा उपाय कस्या पण दरिडीने राजानुं दर्शन थाय नही. एम ब मास वही गया पबी नगरमां कोइ बुद्धिथी उपाय बतावनारानी शोध करतां एक बुद्धिना आपनारायें कह्युं के मने लाख सोना मोर आपो तो हुं उपाय बतावुं. तेने ब्राह्मणें कह्युं जो मुफने राजानो मेलाप थशे, तो हुं तुफने लाख सोनामोर आपीश. पबी बुद्धिना देवा वालायें कह्युं के एक महोटो जबरजस्त वांस ल

इने तेने रस्तामांहिलां जूनां त्रूटेलां फाटेलां खासडांनी माला वलगाडी ते वांसडाने पकडी राजमार्गे उन्ना रहो. जेवारें राजानी स्वारी निकलशे, ते वारें तेना उपर दृष्टि पडवाथी अभिनव आश्चर्य देखी राजा पूछा करशे, ते वखत तुं आशीर्वाद आपजे. ब्राह्मण पण तेज उपाय करी राजाने मल्यो. राजायें दीठो तेवारें तरत उलखी तुष्टमान थइने कहेवा लाग्यो के हे विप्र! माग माग. जे मागे ते आपुं. ब्राह्मणें कह्युं के स्वामी घेर जइ म हारी स्त्रीने पूछी आवुं, राजायें कह्युं.शीघ्र पूछी आव. ब्राह्मणें घेर आवी स्त्रीने पूछ्युं के हे प्रिये! राजा संतुष्ट थयो छे माटें हवे हुं शुं मागुं? तेवारें स्त्रीयें विचार्युं जे ए गाम. गरास नगर मागशे तो पछी मुजने मानशे नही माटें एवुं मगावुं के जेथी ए समतुल्य रहे. एवुं चिंतवीने कहेवा लागी के आपणे ब्राह्मणजाति छैयें, माटे गाम नगरादिक मागशुं तो रा त्रि दिवस तेनी चिंतामां रहेवुं पडशे, घणा चाकर नफर राखवा पडशे. अने जो धनधान्य, मागशुं, तो व्यापार चलाववो जोशे. व्याजें धंन आपवुं जोशे. इत्यादि संन्नाल राखवानी विटंबना करवी पडशे, माटे रा जाना छ खंम पृथ्वीमां जेटला चूला छे, ते प्रत्येक चूला दीठ एक दिवस आपणा कुटुंबने नोजन मले, अने एक सोनामोर दक्षणा मले. एवी मा गणी करो. ब्राह्मणें पण स्त्रीना कह्या मुजब राजा पासें जइ याचना करी, तेवारें राजा बोल्यो के हे निर्न्नाग्य! पाछलबुद्धि ब्राह्मण! हुं तुष्टमान थयो छतां आ फरी नीख मागवानुं ते तें शुं माग्युं? पण ब्राह्मणें तो स्त्रीना क हेवा प्रमाणेंज राजाने कह्युं. हे महाराज! जो तुमें तुष्टमान थया तो एट लुंज आपो के जेथी हुं रलीयायत थाउं! तेवारें राजायें तेमज प्रमाण कीधुं. अने पहेला दिवसें चक्रवर्त्तीयें पोताने घेर जमाडीने एक सोना मोर दक्षणा आपी. पछी चक्रवर्त्तीनी १९२०००) अंतेउरीने घेर जम्यो. पछी चक्रवर्त्तीना पुत्र पौत्रादिकने घेर जम्यो. पण जेवो स्वाद पहेले दिवसें च क्रवर्त्तीना घरनी रसवतीनो हतो, तेवो स्वाद बीजा कोइना घरनी रसव तीनो आवे नही. तेथी तेज जमण संन्नार्या करे अने मनमां विचारे के कोइ रीतें फरी चक्रवर्त्तीने घरे जमवानो वारो आवे तो सारुं! पण वारो आवे नही. ते वारो पण कदापि कोइ देवताना सहायथी अथवा प्रबल

आयुष्यवान् पामे. परंतु मनुष्य जन्मथी भ्रष्ट थयो ते फरी मनुष्यावतार न पामे ॥ इति प्रथम चुल्लकदृष्टांतः ॥ १ ॥

हवे बीजो पासानो दृष्टांत कहे छे. भरतक्षेत्रमां गोल्ल देशने विषे चणकनामें ग्राम छे. तिहां चणकनामें ब्राह्मण तेनी चिणेश्वरी नामें भार्या ते स्त्री भरतार बेहु अरिहंतनी भक्तिनां करनार छे. तेमने घरे दांत सहित पुत्र जन्म्यो. मात पितायें दांत घसावी नाख्या. एकदा ऋषीश्वरनो संघाडो तेमने घेर आव्यो, तेवारे चिणेश्वरीयें नमस्कार करीने पूछ्युं के महाराज! अमारे घेर आ दांत सहित पुत्र आव्यो, तेनुं शुं फल थाशे? ऋषियो बोल्या के जो तमें एना दांत नही घसत तो ए राजा थात. हवे ए दांत घसी नाख्या माटे बिंबांतरित राजा थाशे. पछी ते पुत्रनुं चाणाक्य एवुं नाम दीधुं. ते पण आकरो श्रावक थयो, सर्वविद्या भण्यो, यौवनावस्था पाम्यो, रुडा कुलमां परणाव्यो, अन्यदा प्रस्तावें चाणाक्यनी स्त्री भाइना विवाह माटें पीयर गइ. तिहां विवाह उपर बीजी पण बहेनो आवी छे, तेना ससरा महाधनवंत छे तेथी ते बहेनो वस्त्राभरण पहेरी जमी तांबूल भक्षण करी.उंची चढी बेठी. अने चाणाक्यनी स्त्रीना अंगनां वस्त्र जूनां फाटां देखी हसवा लागी. तेथी ते आकरो असंतोष धरती विवाह करी पोताने घेर आवी. चाणाक्यें पोतानी भार्याने आमण दूमणी देखीने पूछ्युं जे तुझने शी असमाधि उपनी छे? पण ते बोली नही. ते वारें भर्त्तारें घणो आग्रह करीने पूछ्युं तारें तेणें पण पोताना पीयर संबंधी सर्व वृत्तांत कह्युं. ते सांभली चाणाक्य द्रव्योपार्जन करवानो उपाय चिंतववा लागो. तेवारें तेने कोइक ब्राह्मणें कह्युं के पाडलीपुर नगरें नंदराजा वर्षदिवसने आंतरे ब्राह्मणने दक्षणा आपे छे. एवुं सांभली चाणाक्य पण तिहां गयो. राजाने घेर जइ वीशामो लेवा माटे नंदराजाना सिंहासन उपर चढी बेठो. राजानी दासीयें कह्युं के हे विप्र! तमें बीजे कोइ आसनें बेसो. ते सांभली चाणाक्यें बीजे आसनें कमंडल मेल्युं. तेमज त्रीजे आसने दंड मूक्यो, चोथे जपमालिका मूकी, एम चार सिंहासन रुंध्यां. अने पांचमे आसने जनोइ मूकी, तेवारें दासीयें तेने रीशथी उगाडी मूक्यो. चाणाक्यें पण रीसाइने एवी प्रतिज्ञा करी के हुं खरो चाणाक्य तोज के ए नंदराजाने समूलो उन्मूली नाखुं! एवुं कही सभामांहेथी निकल्यो आगल

जतां विचारवा लाग्यो के मने तो राज्य मलवानुं नथी, माटे हुं प्रधानज थाइश! पण कोइ राजयोग्य कुमर जोउं. एम चिंतवतो मयूरपोषकने गामें गयो. यावत् भिक्षानिमित्तें तेने घेर गयो, ते अवसरें मयूरपोषकनी दीकरीने गर्भने योगें चंद्रमा पीवानो दोहोलो उपनो, पण कोइ पूरी शके नही तेना बापें चाणाक्यने परदेशी जाणी पूछयुं तेवारें चाणाक्य बोल्यो के ए पुत्र जन्मतांज जो मुजने आपो तो हुं दोहोलो पूर्ण करुं. बापें ते वात कबूल करी तेवारें चाणाक्यें पोतानी मतियें करी छिद्रयुक्त तृणनुं घर कराव्युं ते उपर एक पुरुष छिद्र पूरवा माटे छानो चढाव्यो. पछी विशालथाल दुग्धमिश्रीप्रमुख परमान्नें जरी ते घरमां जिहां चंद्रमानो उद्योत छे, तिहां मूक्यो तेमां चंद्रमानुं प्रतिबिंब छे. माटें बापें दीकरीने तेडीने कह्युं के हे पुत्रि! ए चंद्रमा छे तेनुं तमें पान करो. तेवारें ते पुत्रीयें परमान्न पीवा मांड्युं तेम तेम उपर रहेला पुरुषें ते छिद्र पण पूरवा मांड्युं, जेवारें संपूर्ण पान करी लीधुं. तेवारें छिद्र पण पूरी नाख्युं, घरमां अंधकार थयो. एम करी चंद्रमानो दोहोलो पूरो कराव्यो. पूर्ण मासें पुत्र जन्म थयो, तेनुं नाम चंद्रगुप्त पाड्युं.

हवे चंद्रगुप्तने तिहां मूकी चाणाक्य पोतें सुवर्णविद्या साधवा भणी देशांतरें भमवा लाग्यो, सुवर्णसिद्धि करवानी विद्या पामीने चाणाक्य बार वर्षे पाछो तेज गामें आव्यो. तेवारें चंद्रगुप्तने छोकराउ साथें रमतो दीठो. तिहां चंद्रगुप्त पोतें राजा थयो छे, कोइक छोकराने प्रधान कर्यो छे, केटला एकने खिजमतदार सेवक कर्या छे, एवो देखी चाणाक्य हर्षवंत थयो छोकराने आशीष आपी कहेवा लाग्यो के, हे राजा! अमने कांइक दान आपो, चंद्रगुप्तें कह्युं जाउ तमोने पांच गाम दीधां: एम कही नमस्कार कीधो. वली लोकोनी गाय जती देखी चंद्रगुप्तें कह्युं के ए गाय पण तमें ल्यो. चाणाक्यें कह्युं के ए पारकी छे ते केम लेवाय! चंद्रगुप्तें कह्युं "वीरभोज्या वसुंधरा" ए वचन सांभली विस्मित थको चाणाक्य पूछवा लाग्यो आ बालक कहेनो छे? तारें बीजा बोल्या ए परिव्राजकनो पुत्र छे. ते सांभली चाणाक्यें कह्युं, के हे वत्स! आव तुजने राज्य देवरावुं. तेवारें चंद्रगुप्त उठीने चाणाक्यने पगे लाग्यो अने बेहुजण देशांतरें चाल्या. पछी धातुर्वादादिकने योगें सुवर्णसिद्धि करी हस्ती, तुरंगम, गज पायदलादिक सर्व सैन्य एकठुं करी, लइने पाडलीपुर नगरें

घेरो नाख्यो. नंद राजा पण युद्ध करवा साहामो आव्यो, युद्ध करतां दैव योगें चाणाक्यनुं सैन्य नाग्युं. तेवारें ते चाणाक्य, चंद्रगुप्तने साथें लइ जीवतो नाठो. पाछलथी नंद राजायें चाणाक्यने मारवा माटें केटलाएक घोडेसवार मोकल्या अने नंदराजा पाछो घेर आव्यो. हवे ते सवारो दोडता दोडता चाणाक्यनी नजीक आव्या. ते जोइ चाणाक्यें चंद्रगुप्तने कह्युं के हे वत्स! तुं नाशीने सरोवरमां प्रवेश कर. तेणे तेमज कीधुं अने चाणाक्य पोतें ते सरोवरने कांठे योगींद्र थइ ध्यान धरवा बेठो. एवामां असवार आवी चाणाक्यने पूछवा लाग्या. स्वामी! तमे इहां बे स्वरूपवंत यौवन वय पुरुषो जाता दीठा? चाणाक्यें ध्यानभंगना भयनो मोल घालीने संज्ञाथी सरोवरमां रहेलो चंद्रगुप्त देखाड्यो. तेने काढवा माटें असवारें हथीयार धरती उपर राख्या अने पोतें पाणीमां प्रवेश करवा मांड्यो. एटलामां चाणाक्यें उतावलथी उठी लघुलाघवी कलायें करी तेहज हथीयारथी तेनुं मस्तक कापी नाख्युं, पछी चंद्रगुप्तने पाणीमांथी काहाडी अश्व तथा हथीयार लइ बेहु मार्गे चालता थया. तेवारें रस्तामां चंद्रगुप्तने चाणाक्यें कह्युं के हे वत्स! में तुजने पाणीमां बताव्यो ते वखतें तुजने महारी उपर द्वेष उपन्यो के केम? ते कहे. तेवारें चंद्रगुप्ते कह्युं के हुंतो एम समज्यो के जे तमें कह्युं हशे, ते गुणने वास्तेज कह्युं हशे.

वली आगल जतां नंदराजानो बीजो असवार आवतो देखी फरी चाणाक्यें ते चंद्रगुप्तने तलावमां प्रवेश कराव्यो अने त्यां कोइ धोबी वस्त्र धोतो हतो तेने चाणाक्यें कह्युं हे रजक! राजा रीसाणो छे ते लोकोने मारतो आवे छे, माटे जीवितव्य वांछो तो आहींथी नाशी जाउ. रजकें पण उघाडे खड्गें असवार आवतो दीठो, ते जोइ धोबी नाशी गयो. पाछलथी चाणाक्य ते धोबीनां वस्त्र धोवा लाग्यो. तेने असवारें आवी पूर्वनी पेठें पूछ्युं, तेने पण चाणाक्यें तेमज पूर्वोक्त बुद्धियें करी मारी नाख्यो.

फरी बेहु जण तिहांथी आगल चाल्या. संध्या समयें एक गामें गया, तिहां एक डोशीने घेर जइ बेठा एटलामां ते डोशीनो पुत्र व्यालु करवा बेठो तेने डोशीयें उनी राब पीरशी छे, तेमां ते छोकरे उतावलें वचमां हाथ घाल्यो, तेवारें डोशीयें कह्युं के दाझ्यो रे पुत्र दाझ्यो. तुं पण चाणाक्यनी पेठें मूर्ख कां थयो छो? ते सांभली चाणाक्यें डोशीने पूछ्युं के माताजी!

चाणाक्यने मूर्ख केम कह्यो छो ? तेवारें मोशी बोली के चाणाक्यें प्रथमथीज पाडलीपुर जइ रुंध्युं परंतु जो देश पोताने वश करी पछी नगरने घेरो घाल्यो हत, तो शुं बगडी जात? ए बुद्धि सांजली चाणाक्य विस्मयापन्न थइ हिमवंत पर्वतें गयो. तिहां एक गाममां जइ पर्वतराजानी साथें प्रीति कीधी. एकदिवस अवसर जोइ चाणाक्य ते राजानी साथें मसलत करी के आपणे नंदराजानो देश वश करी पाडलीपुरमांथी नंदराजाने उगाडी अर्द्धो अर्द्ध राज्य वहेंची लेशुं, तेणें पण ते वात मान्य करी,पछी बेहु एकग भली कटक मेलवी अनुक्रमें सर्वदेश वश करी छेहेलो पाडलीपुरने विषे घेरो नाख्यो,नंद राजायें युद्ध कर्युं. तेमां नंदराजा हारी गयो,तेवारें धर्मद्वार माग्युं, तेने चाणाक्यें कह्युं के हे नंदराजा ! जेटलुं एक रथमां द्रव्य उपडे, तेटलुं लइ जाउ, तेथी अधिक लेशो मां. नंदराजा पण मणिरत्न सुवर्णादिक रथमां नरी, एक स्वरूपवहलना दीकरीने रथमां बेसाडी तिहांथी निकल्यो. एवामां चंद्रगुप्त रथमां बेसी गाममां फरवा निकल्यो छे, तेनी उपर कुमरीनी दृष्टि पडी, तेथी अनुराग उपन्यो, तेवारें नंदराजा पुत्रीनो मनोगत नाव जाणीने बोल्यो के हे पुत्रि ! तुं सुखें ए चंद्रगुप्त नर्त्तारने वर. तहारुं कल्याण थाउ. एम कहेतांज ते पुत्री रथ उपरथी उतरीने चंद्रगुप्तना रथ उपर चढवा लागी. तेटलामां चंद्रगुप्तना रथना नव आरा नांगी पड्या तेवारें चंद्रगुप्तें कह्युं के ए कन्या अशुनकारिणी छे माटें जवा द्यो. आपणा कामनी नथी. तेने चाणाक्यें कह्युं के ए शुकन नलुं छे,एनुं वर्जन म कर. नव आरा नांग्या माटें तहारी नव पेढी पर्यंत राज चालशे, एम कही कन्या राखी. पछी पर्वतक अने चंद्रगुप्त ए बेहु नंदना घरमां गया, तिहां लक्ष्मीनी वहेंचण करवा लाग्या, ते घरमां एक कन्या दीठी. तेनी उपरें पर्वतक राजा सानुरागी थयो. तेवारें ते कन्या चाणाक्यें पर्वतकराजाने परणावी. परंतु ते विषकन्या हो वाथी तेना करस्पर्शनथी पर्वतक राजा विपत्ति पाम्यो.ते विषकन्याने योगे चंद्रगुप्तने औषध विना व्याधि गयो ॥ यतः ॥ अर्द्धराज्यहरं मित्रं, योन हन्यात्स हन्यते ॥ तस्माद्विनौषधेनैव, व्याधिर्गच्छेत्तु गम्यते ॥ १ ॥ चंद्रगुप्त सर्वराज्यनो धणी थयो, राज्य पालवा लाग्यो. एवामां पाडलीपुरनिवासी सर्व लोक मली विनति करवा लाग्या.के अहो स्वामी ! नंदराजा अमारी पासेंथी स्वल्प कर लेतो हतो, प्रजाने आत्मजनी पेरें पालतो अने

हमणां तमारा राज्यमां तो श्रमें करें करी पीडित छैयें, माटें केम करीयें! क्यां जइयें!!! तेवारें चंद्रगुप्तें चाणाक्यना मुख साहामुं जोयुं, तेणें विचार्युं जे आ लोकोने संतोष नहिं थाशे, तो लोक उचालो नरीने जाशे! एम विचारी लोकोने कर रहित कर्या, तेने लीधें आयपद थोडी अने खरच घणो थवाथी नंमार खाली थतो देखीने चाणाक्य कांइक नवीन उपाय चिंतववा लाग्यो, तेवारें त्रण उपवास करी पूर्वना मित्र देवताने आराध्यो. ते देवतायें आवी नक्तिने प्रमाणें चाणाक्यने बे अजेय पासा आप्या. पढी चाणाक्य ते शहेरना व्यवहारीयाने तेडी क्रोड क्रोड टकानां रत्न नंमारमांथी काहाढी द्यूत रमवा माटे कहेवा लाग्यो के जे मुजने जुवटुं रमतां जीते, तेने ए रत्न सर्व आपुं. अने जे हारे ते ए रत्न मांहेला रत्न सरखुं एक रत्न आपे. ए वचने संतोष पाम्या थका ते व्यवहारिया रमवा लाग्या, पण देवताधिष्ठित पासाना बलथी चाणाक्य जीती जाय. कोइ कालें हारे नही. ते पण कदापि दैवयोगें हारी जाय, परंतु मनुष्यनव हाथमांथी गयो ते फरी पामवो महा डुर्लन ढे ॥ इति द्वितीयपासक दृष्टांतः ॥ २ ॥

हवे त्रीजो धान्यनो दृष्टांत कहे ढे. कोइक राजायें कौतुक माटें सर्व जातिनां नरतक्षेत्रमां उपजतां धान्यो एकठां करावी तेमां एक पाथो सरशवना दाणानो नाख्यो, ते धान्य साथें मेलवीने पढी एकशो वर्षनी मोशीने तेडावी कह्युं के आ चोवीश जातिना धान्यनी राशिमांथी सर्व जातिनां धान्य जूदां करीने वली एक सरशवनो पाथो साथें मेलव्यो ढे, ते काहाढी आपो. ते वृद्धा मोशीथी ए कोइ रीतें जूदा थइ शकेज नही तेपण कदापि देव सहायथी सरशव जूदा थइ शके, पण जे मनुष्यावतार गयो ते फरी वीतरागनी आज्ञामां वर्त्ततो एवो मनुष्यनव पामवो डुर्लन ढे ॥ इति तृतीय दृष्टांतः॥

हवे चोथो द्यूतनो दृष्टांत कहे ढेः—कोइक राजानी सजा एकशो आठ थांनायें करी समन्वित ढे, ते वली एकेके थंनें एकशो ने आठ हांसो ढे. ते राजा घणो वृद्ध थयो पण मरण पामतो नथी, तेवारें महोटा ढोकरायें विचार्युं जे हुं पण वृद्ध थवा आव्यो. तो हवे राजा क्यारें मरशे ने पढी हुं ते राज्य क्यारें नोगवीश! माटे कोइ रीतें राजाने मारी नाखुं तो हुं राजा थाउं. ते बुपी वात प्रधाने जाणीने राजाने संनलावी. राजायें विचार्युं जे पुत्र पण जीवतो रहे अने हुं पोतें पण जीवतो रहुं! एवी युक्ति शोधुं. पढी

बुद्धिना प्रपंचें करी पुत्रने तेडावीने कह्युं जे हे वत्स !. हुं वृद्ध थयो माटे तुं राज्य ले पण प्रथम आपणा घरनी चाल छे, ते कर. के जे थकी तुजने राज्य स्थिर थाय. कुमर बोल्यो के हे पिताजी ! जे तमें आज्ञा आपो, ते हुं करुं. राजायें कह्युं आपणी सनाना एक मंमपें १०८ थांनला छे थांनले थांनले १०८ हांस छे, माटे तमें मंहारी साथें जूवटुं रमो. तेमां एकवार जीतो तो एक हांस जीत्या. एम १०८ वार जीतो तो एक थांनो जीत्या एवा १०८ थांना जीतीने राज्य ल्यो; पण जो रमतां रमतां वचमां एक दाव हारी जाशो, तो पाछला दाव सर्व व्यर्थ जाशे. ते वचन सांनली कुमर पण लोनना वशथी रमवा बेठो. घणा दिवस रमतां पण एके थांनो जीती शकाया नहीं, तो सर्व सनाना थांनला क्यांथी जीत्या जाय? कदापि ते पण कोइ देवताना सान्निध्यथी जीत्या जाय, परंतु मनुष्यनवथी भ्रष्ट थयो ते बीजी वार मनुष्यजन्म न पामे ॥ इति चतुर्थ द्यूतदृष्टांतः ॥ ४ ॥

हवे पांचमो रत्ननो दृष्टांत कहे छेः—वसंतपुर नगरें अपार धननो धणी गुणवान् धन्नो एवे नामें व्यवहारीयो वसे छे. तेने गुणवंत एवा पांच पुत्रो छे. हवे ते धन्नो शेठ रत्नपरीक्षाने विषे निपुण छे, माटें तेनुं अपर नाम रत्नपरीक्षक छे. जे जे बहुमूला रत्न आवे, ते सर्वनो संग्रह करे, पण वेचे नहीं. तेवारें पुत्रो कहेवा लाग्या के हे पिताजी ! बमणा त्रमणा दाम आवे छे, तेम छतां रत्न कां वेचता नथी ? तो पण ते लोनवशें वेचे नहीं. एकदा ते शेठ ग्रामांतरें गयो, पछी पाछलथी पुत्रोयें सर्व रत्न कोइ देशांतरीने वेचातां आपी दीधां. शेठ घेर आव्यो, अने पोतानां रत्न वेचवाना सर्व समाचार सांनली रीशें करी कहेवा लाग्यो के हे पुत्र ! मंहारां जे रत्नो छे, ते रत्नो पाछां आव्याविना मंहारा घरमां तमें आवशो नहीं. तेवारें ते पांचे पुत्र रत्न लेवा माटे परदेश नणी निकल्या, पण ते सर्व रत्नो तेवांने तेवांज क्यांथी मले ? हवे ते पण कदाचित् कोइ देवताना सहायथी मली जाय, परंतु मनुष्यावतारथकी भ्रष्ट थयो जे होय, ते फरी मनुष्यनवने पामे नहीं ॥ इति पंचम रत्नदृष्टांतः ॥ ५ ॥

हवे छठो स्वप्ननो दृष्टांत कहे छेः—उज्जयणी नगरीयें बहोंतेर कलानो जाण एवो मूलदेव नामें राजपुत्र छे, ते कलाकलापें करी सकल लोकने प्रीति उपजावतो रहे छे. एकदा ते उज्जयणीमां देवदत्ता वेश्यानी उपर

आकरो रागातुर थइनें तिहांज रह्यो. तेने कोइक व्यवहारीये मानभ्रंश करी काढयो. त्यांथी निकली परदेश जमवा लाग्यो. अनेक पृथ्वीना विनोद देखतो थको कोइक गामें मठमांहे जइ सूतो, तिहां स्वप्नमां चंद्रमाने पोताना मुखमां पेसतो देखी जाग्यो, ते समयें तेंज मठमां एक कापडीये एटले कोइ गुंसांइने चेलें पण एवुंज स्वप्न दीठुं. पछी जागीने ते स्वप्ननो विचार पोताना गुरु गुंसांइ पासें जइ पूछवा लाग्यो, तेवारें गुंसांइयें कह्युं के आज तुं घृत खांड सहित रोटलो पामीश! एवुं जाणी मध्यान्ह समयें ते भिक्षामाटे गयो, तिहां कोइक दातार पुरुषें घृत खांड सहित रोटला आप्या, ते लइ चालतो थयो अने मनमां प्रमोद पाम्यो. हवे मूलदेव तो शास्त्रनो जाण छे माटे मठथकी निकली फलफलादिक लइ स्वप्नपाठक आगल मूकी स्वप्न नो विचार पूछयो. तेवारें पाठक बोल्यो के तमोनें महोटुं राज्य मलशे? ते ने तहत्त मानीने नगरमांहे भिक्षा पामी कल्माषें करी मासोपवासी साधुने पारणुं कराव्युं. ते साधुनी भक्तिना प्रभावथी देवता तुष्टमान थइ बोल्यो के हे मूलदेव! तुं एके वचनें जे विचारमां आवे, ते माग. तेवारें मूलदेव बोल्यो के हे स्वामी! हजार हस्ती बंधाय एवुं राज्य देवदत्ता गणिका सहित आपो. देवता बोल्यो के ए सर्व तमें पामशो. तेवारें पछी सातमे दिवसें कोइक नगरें गयो, तिहां अपुत्रीयो राजा मरण पाम्यो. ते नगरना लोकोयें राजानुं मृतकार्य करी राज्यना अधिकारी पंचने मेलवी पंचदिव्य प्रगट करी मूलदेवने राज्य आप्युं. ए वात गुंसांइना चेलायें सांभली तेवारें पश्चात्ताप करवा मांडयो जे अरे हुं निर्बुद्धि छुं मने स्वप्न लाधुं ते फोकट हार्युं. पछी वारं वार जइ तिहांज सुवे पण स्वप्न देखे नही. कदाचित् दैवयोगें वली ते कापडी स्वप्न पण देखे, परंतु मनुष्यभवथी भ्रष्ट थयो ते फरी मनुष्यभव पामे नही॥ इति षष्ठ स्वप्नदृष्टांतः ॥६॥

हवे सातमो चक्रनो दृष्टांत कहे छे. इंद्रपुर नगरें इंद्रदत्त राजा छे, तेने बावीश राणीयोना श्रीमाल प्रमुख बावीश पुत्रो छे, सर्व ते बहोंतेर कलामां प्रवीण छे, सर्व सौभाग्यना निधान छे, एकदा वली राजायें मंत्रीनी पुत्रीने परणी. पांछलथी कर्मयोगें ते मंत्रीनी पुत्रीने अने राजाने द्वेष थयो, तेथी राजायें तेने त्यागी दीधी, पिताने घेर जइ रही. एम करतां घणा दिवस वीत्यां, तेवारें एक दिवस राजायें बाहिर जातां ते

स्त्रीने गोंखें बेठी दीठी, ते दिवसें ते ऋतुस्नानवाली छे. राजायें तेने साक्षात् रतिसमान देखी पोताना मानसोने पूछ्युं के अरे! ए स्त्री ते कोण छे? तेवारें एक सुभटें कह्युं हे स्वामी! ए मंत्रीनी पुत्री तमारी राणी छे, तेवारें राजा ते रात्रें तिहांज रह्यो. पछी भाग्ययोगें कोइक पुण्यवंत जीव तेने उदरें आवी उपनो. प्रातःकालें पुत्रीयें पिता आगल सर्व समाचार कह्या. तेवारें मंत्रीयें ते दिवस, वेला, संकेत, इत्यादि सर्व यादी कागळें लखी राखी अने पूर्ण दिवस थये पुत्र जन्म्यो, तेनुं नाम सुरेंद्रदत्त दीधुं. पछी उज्ज्वल पक्षमां जेम चंद्रमा हर्ष उपजावे, तेम हर्ष उपजावतो क्रमें क्रमें वधतो गयो. हवे तेज दिवसें मंत्रीनी दासीयें चार पुत्र प्रसव्या, तेनां नाम कहे छे. एक अग्निकर, बीजो पर्वतक, त्रीजो बहुल, चोथो सागर अने पांचमो तेनी साथें सुरेंद्रदत्त, ए पांचे मली एकज उपाध्याय पासें भणवा लाग्या, तिहां प्रधानें सुरेंद्रदत्तने भणाववा माटे कलाचार्यने सारी रीतें भलामण दीधी, ते उपरथी कलाचार्यें पण घणी मेहेनत करीने भणाव्यो, दासीना चारे पुत्र विघ्न करे, पण सुरेंद्रदत्त विद्याभ्यासज करतो रहे. वली राजाना बीजा जे बावीश पुत्रो छे, ते पण तेज नीशालमां भणे छे, परंतु ते राजमद यौवन मदें करीने उछ्रंखल थका गुरुनी साहामा वांकुं बोले, तेवारें कलाचार्य तेमने शीख आपे, तो रुदन करता मा बापनी आगल जाय. अने प्रधान तो अध्यापकने एज भलामण करे, के पुत्रने ताडना तर्जना करीने पण भणावजो. तेथी उपाध्याय पण तेने खांतें करी विशेष भणावे, शास्त्रकला, राधावेध प्रमुख सर्वकलाउ शीखी हुशीयार थयो, तेवारें अध्यापकें सुरेंद्रदत्त कुमरने लावीने प्रधानने सोंप्यो, प्रधाने पण अध्यापकने सारीरीतें दान दइ संतोषीने विसर्जन कर्यो.

एवा अवसरें मथुरानगरीयें जितशत्रुराजानी निर्वृत्ति नामें पुत्री छे, ते तरुण अवस्थाने प्राप्त थइ, तेवारें मातायें सर्व शणगार पहेरावी तेना बाप पासें मोकली, पितायें तेनी सुरत देखी ए कन्या स्वयंवरने योग्य छे. एम चिंतवीने कह्युं के हे पुत्रि! मनमानता भरतारने तमें वरो. पुत्री बोली हे पिताजी! जे राधावेध साधे, तेने हुं वरुं! कुमरीनी एवी प्रतिज्ञा जाणी राजायें गाम गाम दूत मोकली कहेवराव्युं. अने इंद्रदत्तने घणापुत्र छे माटे तेने तेडवा सारु प्रधान मोकल्यो, तेणे जइ राजाने वीनव्यो के स्वामी!

तमारा पुत्रो सहित तमें स्वयंवरने विषे पधारो. राजा पण बावीश पुत्रें परवर्यो थको प्रधान सहित स्वयंवर मंडपें आव्यो.

हवे जितशत्रुराजायें शुभ मुहूर्त्ते सर्वनगर शणगार्युं. पोतें नगर बाहिर सर्व परिवार सहित निकल्यो, मंडप कराव्यो, तेनी वचमां स्तंभ उभो कीधो, उपर सृष्टिसंहारें फरतां आठ आठ चक्र मांड्यां, ते उपर पूतली मांडी, उंधामुखने धारण करनारी ते पूतली छे तेथी तेनुं नाम राधा पाडेलुं छे. वली हेठल तेलथी भरेली एक कडाइ मांडी. तिहां कन्या, पंचवर्णी सुगंध युक्त फूलनी माला लइ थंभनी पासें आवी उभी रही. अने कहे छे के जें पुरुष ए राधावेध साधशे, तेना कंठमां हुं आ माला आरोपण करीश. एम कही सावधान थइ उभी रही.

ते अवसरें इंद्रदत्त राजायें पोतानो महोटो श्रीमाल नामें पुत्र छे तेने दूर लइ जइ कह्युं के हे पुत्र! तुं राधावेध साध. अने कन्या सहित ए राज्य लइ ले. ते वात सांभली ते पुत्र कंपवा लाग्यो, धनुष्य मात्र पण उपाडी न शक्यो, तथापि वली कांइक साहस आदरी धनुष्य तो प्रयासें करी उपाड्युं, पण ते चढावी शक्यो नही, तेवारें विलख्यो थइने बोल्यो के अरे! आ कार्य तो महाराथी थायज नही!

एवामां वली बीजो कुंअर आव्यो, ते आवी धनुष्य चढावी तुरत पाछो वल्यो. पछी त्रीजो कुमर आवी दृष्टियें जोइ पाछो वल्यो, तथा चोथो पुत्र तो अर्द्ध रस्तेथीज जोइ पाछो वल्यो, अने पांचमो तो पोताना स्थान कथी उठ्योज नही. एम बावीस कुमर विलखा थइ बेठा, तेवारें राजानुं मुख विलखाणुं जोइ प्रधानें कह्युं के स्वामी! दुःखी म थाओ. एक पुत्र तमारो हजी पण छे, तेने राजायें पूछ्युं के ते कयो पुत्र छे? तेवारें मंत्रीश्वरें सर्व वृत्तांत कही संभलाव्युं अने कागल लावी नामो वंचाव्यां. राजायें पण ते वात संभारीने प्रधानने कह्युं के ते पुत्रने तरत तेडी लावो. तेवारें मेहेतें पण सुरेंद्रदत्तने स्नान शणगार करावी तेडी आणी राजाने पगे लगाड्यो. राजा ते पुत्रने देखी हर्षित मन थयो थको चिंतववा लाग्यो के ॥ यत्रोदकं तत्र वसंति हंसा, यत्रामिषं तत्र पतंति गृध्राः ॥ यत्रार्थिनस्तत्र भवंति वेश्या, यत्राकृतिस्तत्र गुणावसंति ॥ १ ॥ हवे राजायें कह्युं के हे वत्स! ए राधावेध साधी कन्या सहित राज ल्यो. ते कुम

रनी मुखाकृति देखी लोक पण चमत्कार पाम्यां. कुमर पण राजानो आदेश पामी निश्चल मनें गुरुना चरणकमलने नमस्कार करी स्थंजनी नजीक जइ धनुष्यने नमन करी तत्काल धनुष्य चढावी तेलनी कढाइमांहे नीची दृष्टियें मुख जोते थके, उपर बाण मूंक्यो. ते बाणें राधानी आंखमांहेली कीकी वींधी, जेंवी वींधी के तुरत याचक लोकोयें जयजयारव कीधो, अने कन्यायें वरमाला घाली. राजा अने मंत्रीश्वर ए बे हर्ष पाम्या, तिहां सुरेंद्रदत्त कन्या सहित राज्यलक्ष्मीना सुख पाम्यो. एवी रीतें कोइ कदाचित् राधावेध साधे, पण मनुष्यजवथी ज्रष्ट थयो, ते वली फरीने नरजव न पामे ॥ इति सप्तम चक्रदृष्टांतः ॥ ७ ॥

हवे आठमो कूर्मनो दृष्टांत कहे छेः—कोइक एक लक्ष योजन प्रमाण इह छे, तेमां एक महोटो काचबो रहे छे. तेणें एकदा प्रस्तावें वायराने योगें सेवाल फूटे थके आकाश मंमलने विषे आशु शुदि पूनमनी रात्रें सकलकलायें संपूर्ण नयनानंदकारी, समग्र नक्षत्रें करी बिराजमान एवो चंद्रमा दीठो. तेथी मनमां प्रमोद पाम्यो. पछी पोताना कुटुंबने देखाडवा माटें फरी पाणीमां डुबकी खाइने कुटुंबने तेडी लाव्यो, तेटलामां वायरानें प्रसंगें सेवाल मांहोमांहे तेमज मली गइ तेथी चंद्र दर्शन थया विना एमज आखा कुटुंबने पाछुं फरवुं पड्युं. ते काचबो वली पण कदाचित् चंद्रमा देखे, पण नरजव हारी गयो धर्मविना शिथिल थयो ते जीव, फरी मनुष्यजन्म न पामे ॥ इत्यष्टम कूर्मदृष्टांतः ॥ ८ ॥

हवे नवमो युगनो दृष्टांत कहे छेः— आ तिर्यग् लोकमांहे लवण समुद्र आदें देइ ठाण बमणां करतां असंख्याता द्वीप समुद्र छे, तेमां छेहलो स्वयंजुरमण समुद्र अर्द्धराज्य प्रमाण ज्ञूमि रुंधी रह्यो छे, तेनी पूर्वदिशियें धोंसर नाखीयें अने पश्चिमदिशियें खीली समील नाखीयें तो कहो ते पाछी केम मले? अथवा ते समील धोंसराना छिद्रमांहे केवी रीतें प्रवेश करे? कदाचित् देव प्रजावथी ते पण धोंसरमांहे खीली मले, पण जे जीव नरजवथकी ज्रष्ट थयो, ते वली फरीने नरजव न पामे ॥ इति नवम युगदृष्टांतः ॥ ए ॥

हवे दशमो परामाणुनो दृष्टांत कहे छेः— एक देवतायें महोटा पाषाणना थंजनें वज्रें करी चूर्ण कर्यों तेने अत्यंत पीशी वाटी मेरुपर्वतें

चढी वांसनी नळीमां नेरी, फूंक साथें उडाव्यो, ते परमाणुओ पाछा ए
कठा करवा महा दुर्लन छे तो पण कदाचित् देवना प्रजावें ते पण ए
कठा मेळवी शकाय, पण मनुष्यनवथकी भ्रष्ट थयेला जीवने ते मनुष्यजन्म
पाछो पामवो अति दुर्लन छे ॥ इति परमाणुदृष्टांतः ॥ ए दश दृष्टांत कह्या ॥

हवे मनुष्यनवनो सर्वोत्कृष्ट जय कहे छे.

॥ मंदाक्रांतावृत्तम् ॥ स्वर्णस्थाले क्षिपति स रजः पा
दशौचं विधत्ते, पीयूषेण प्रवरकरिणं वाहयत्यैंधनार
म् ॥ चिंतारत्नं विकिरति कराद्वायसोड्डायनार्थम्,
यो दुःप्रापं गमयति मुधा मर्त्यजन्म प्रमत्तः ॥ ५ ॥

अर्थः–(यः के०) जे पुरुष, (प्रमत्तः के०) मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, वि
कथारूप प्रमादने वश थयो थको (दुःप्रापं के०) चोराशी लाखजीवयो
निने विषे नमता जीवें महाकष्टें पामवा योग्य एवुं (मर्त्यजन्म के०) मनु
ष्यजन्म तेने, जिनधर्मविना (मुधागमयति के०). व्यर्थ गमावे छे, (सः के०)
ते पुरुष, (स्वर्णस्थाले के०) सुवर्ण स्थालने विषे (रजः के०) धूल एटले
कचरादिक तेने (क्षिपति के०) नाखे छे. अर्थात् सुवर्णस्थाल समान मनु
ष्यजन्म जाणवुं, तथा रजसमान प्रमाद जाणवा, एटले प्रमादवशें मनु
ष्यजन्म व्यर्थ जाय छे. वळी पण ते पुरुष शुं करे छे ? तो के, (पीयूषेण के०)
अमृतें करीने (पादशौचं के०) पादप्रक्षालनने (विधत्ते के०) करे छे,
अर्थात् जे अमृतना बिंदुमात्रनुं पान करवाथी अजरामरत्व प्राप्त थाय छे,
ते अमृतने पादप्रक्षालनने माटे वृथा गमाववुं ते अयुक्त जाणवुं. तेम वळी
ते पुरुष शुं करे छे? तो के (प्रवरकरिणं के०) उत्तम हस्तीप्रत्यें (ऐंधनारं
के०) काष्ठनारने (वाहयति के०) वहन करावे छे. अर्थात् जे हस्तीने
पोताना द्वार आगळ बांधे छते द्वारनी शोना थाय छे, तो ते हाथीएं
काष्ठ लाववां, ते अयुक्त छे. वळी ते पुरुष शुं करे छे? तो के (वायस
के०) कागडाने (उड्डायनार्थम् के०) उडाडवाने अर्थें (चिंतारत्नं के०)
चिंतामणिने (करात् के०) हाथथकी (विकिरति के०) फेंके छे. अर्थात् मनो
वांछित अर्थने देनारुं एवुं चिंतामणि रत्न तेनुं कागडाने उडाडवाने माटे फें
कवुं ते अयोग्य छे, तेम धर्मसाधक पुरुषें मर्त्यजन्मे करी प्रमाद करवो ते

अयुक्तज बे. तेथी हे नव्यजनो! एम जाणीने मनमां विवेक लावी प्रमादनो त्याग करीने धर्म करीने मनुष्यजन्म सफल करवो धर्म आचरता एवा सज्जन पुरुषोने जे पुण्य ॥ इत्यादि पूर्ववत् ॥ ५ ॥

टीकाः—अथ मनुष्यनवस्य सर्वोत्कृष्टत्वमाह ॥ स्वर्णे स्थाल इति ॥ यः पुमान् प्रमत्तः सन् प्रमादस्य वशं पतितः सन् मद्य विषय कषायनिद्रा विकथारूप प्रमादवशं गतः सन् दुःप्रापं चतुरशीतिलक्षजीवयोनिषु च्रमति जीवेन दुःखेन महता कष्टेन प्राप्यं यत् मर्त्यजन्म मनुष्यनवं तत् मुधा वृथा श्रीजिन धर्म्मं विना निःफलं गमयति। स पुमान् स्वर्णस्थाले रजो धूलिं कचवरादि क्षिपति। स्वर्णस्थालतुल्यं मर्त्यजन्म रजःसदृशाः प्रमादाः॥ पुनःसः पुमान् पीयूषेण अमृतेन कृत्वा पादशौचं चरणप्रक्षालनं विधत्ते करोति । पीयूषस्य बिंदुमात्रपानेनाजरामरत्वं स्यात् तत्पादप्रक्षालनार्थं मुधावृथा गमयतीत्युक्तं ॥ पुनःसः पुमान् प्रवरकरिणं प्रधानहस्तिनं ऐंधनारं इंधनकाष्ठसमूहं वाहयति ॥ यस्मिन् गजे द्वारिबद्धेऽपि सति शोना नवति । तेन इंधनानयनमयुक्तं ॥ पुनः सः पुमान् वायसोड्डायनार्थं काकस्य उड्डायननिमित्तं चिंतामणिरत्नं करात् हस्तात् विकिरति विक्षिपति ॥ यथा मनोवांछितार्थदायकस्य चिंतामणिरत्नस्य काकउड्डायनार्थं विक्षेपणमयुक्तं तथा धर्मसाधकेन मर्त्यजन्मना प्रमादसेवनमयुक्तं । नो नव्यप्राणिन् ! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय प्रमादं त्यक्त्वा धर्मेण कृत्वा मनुष्यजन्म सफलं कार्यं ॥ धर्ममाचरतां सतां यत् पुण्यमुत्पद्यते तत् पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ ५ ॥

नाषाकाव्यः—सवैया त्रेवीशा ॥ ज्यों मतहीन विवेक विना नर, साजि मतंगज इंधन ढोवै ॥ कंचन नाजन धूलि नरे सठ, मूढ सुधारससूं पग धोवै ॥ बोहितकाग उडावन कारन, मारि महामनि मूरख रोवै ॥ त्यों नरदेह दुर्लभ बनारसि, पाइ अजान अकारथ खोवै ॥ ५ ॥

हवे जे संसारना विषय माटे धर्मनो त्याग करे बे, ते मूढ पुरुष जाणवा तेकहेबे.

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ ते धत्तूरतरुं वपंति नवने प्रोन्मूल्य कल्पद्रुमम्, चिंतारत्नमपास्य काचशकलं स्वीकुर्वते ते जडाः ॥ विक्रीय द्विरदं गिरींद्रसदृशं क्रीणंति ते रासनं, ये लब्धं परिहृत्य धर्म्ममधमा धावंति नोगाशया ॥ ६ ॥

अर्थः– (ये के०) जे (अधमाः के०) मूर्ख एवा पुरुषो (लब्धं के०) प्राप्त थयेला एवा (धर्मं के०) धर्म जे तेने (परिहृत्य के०) त्याग करीने (भोगाशया के०) भोगविषय वांछनाने अर्थे, (धावंति के०) दोडे छे, अर्थात् विषयार्थमां प्रवर्त्ते छे, (ते के०) ते नरो, (भवने के०) पोताना गृहनेविषे उत्पन्न थयेला (कल्पद्रुमं के०) कल्पवृक्षने (प्रोन्मूल्य के०) काढी नाखीने (धत्तूरतरुं के०) धंतुरांना वृक्षने (वपंति के०) आरोपण करे छे, वली (ते जडाः के०) ते जड पुरुषो शुं करे छे ? तो के (चिंतारत्नं के०) चिंतामणि रत्नने (अपास्य के०) त्याग करीने (काचशकलं के०) काचना कटकाने (स्वीकुर्वते के०) स्वीकार करे छे. वली (ते के०) तेजड पुरुषो, (गिरींद्रसदृशं के०) पर्वतसमान उंचीकायावाला (द्विरदं के०) हस्तीने (विक्रीय के०) वेचीने (रासभं के०) गर्दभने (क्रीणंति के०) मूल्यें करीने ग्रहण करे छे. आ ठेकाणें कल्पवृक्षसदृश धर्म जाणवो, तथा धंतुराना वृक्षसमान विषय जाणवा, तेवी रीतें सर्वत्र सारां दृष्टांतो धर्मने लगाडवां तथा अन्य दृष्टांतो विषयने लगाडवां. माटे हे भव्यजनो ! एम मनने विषें विवेक लावीने कल्पवृक्ष तथा चिंतामणि समान; श्रीजिनेश्वरना धर्मनुंज आराधन करवुं. आराधन करनारनुं जे पुण्य ॥ इत्यादि पूर्ववत् ॥ ६ ॥

टीकाः– ये तु असाराणां विषयाणां कृते धर्मं त्यजंति ते मूढा एवे त्याह ॥ ते धत्तूर इति ॥ ये अधमा मूर्खाः पुरुषाः लब्धं प्राप्तं धर्म्मं परिहृत्य त्यक्त्वा भोगाशयां. विषयवांछया धावंति । विषयार्थं प्रवर्त्तते, ते नरा भवने स्वगृहे प्रोद्गतं उत्पन्नं कल्पवृक्षं प्रोन्मूल्य उत्खाय धत्तूरतरुं वपंति आरोपयंति । पुनस्ते जडाः मूर्खाः चिंतामणिरत्नं अपास्य त्यक्त्वा दूरीकृत्य काचशकलं काचखंडं स्वीकुर्वते गृण्हंति ॥ पुन स्ते जडा गिरींद्रसदृशं पर्वत प्रायकायं उच्चं द्विरदं हस्तिनं विक्रीय रासभं गर्दभं क्रीणंति मूल्येन गृण्हंति ॥ अत्र कल्पवृक्षसदृशोधर्म्मः । धत्तूरसदृशा भोगाः एवं सर्वत्रोपनयः । भो भव्यप्राणिन् ! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीयं कल्पवृक्षचिंतामणिसदृशः श्री जिनधर्म्मएवाराध्यः आराधयतां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरो त्तर मांगलिक्यमालाविस्तरंतु ॥ ६ ॥

॥ भाषाकाव्यः–ज्यौं नरमूल उखारि कल्पतरु, बोवन मूढ कनकको खेत ॥ ज्यौं गजराज वेचि गिरिवरसंम, क्रूर कुबुद्धि मोल खर लेत ॥

जैसे छांमि रतंन चिंतामनि, मूरख काच खंड मन देत ॥ तैसे धरम विसारी बनारसि, धावत अधम विषय सुख हेत ॥ ६ ॥

कथाः—ए अर्थ उपर शशी सूरनो दृष्टांत कहे छेः—आ भरत क्षेत्रमांहे शुक्तिमती नामा नगरीने विषे शशीनामा राजा राज्य करे छे, ते माहाप्रतापी छे, तथा तेनो लघुभाइ सूर एवे नामें छे. ते बेहु भाइ एक दिवस रयवा डीयें चढया, वनमांहे वृक्षनी नीचे साधुने बेठा दीठा, तेवारें अश्वथी उतरी बेहुभाइयें साधुने वांद्या, साधुयें पण धर्मलाभ आपी उपदेश देवा मांड्यो ॥ गाथा ॥ माणुस्स खित्त जाई, कुल रूवारोग आउयं बुद्धि ॥ सवा णुग्गह सिक्खा, संजम लोगंमि डुल्लहो लहियं ॥ १ ॥ माटे तमें सत्पुरुष छो, ते धर्मने विषे प्रमाद म करो ॥ गाथा ॥ चिक्कणघडेण साचिय, छलीकणं पाणियं जाई ॥ कोरं कुंभं च भेदइ, तहावि भवजीवाणं ॥ १ ॥ इत्यादि उपदेश सांभली सूरराजा दीक्षा लइ डुष्कर तप करवा तैयार थयो. अने शशीप्रत्यें भाइपणांना हितने माटें कहेवा लाग्यो के हे बांधव! आ जीवें जन्मो जन्म भोग भोगव्या, समुद्रनी जेटलां पाणी पीधां, मेरु जेटलां धान्य आरोग्यां, तो पण तृप्ति न थइ. तेने शशी कहेवा लाग्यो के हे बांधव! एवो कोण मूर्ख होय के जे भला राज्यभोग, ललित लोचना स्त्री, पान, फूल तंबोलादि उत्तम प्रकारना भोग इत्यादि सामग्री संबंधी सुख तेने त्यागीने परलोकना सुखने अर्थें उपवासादिक कष्ट करे, पर लोक छे के नथी ते कोणें जोयो छे? माटें तमें माह्या हो, तो आ छता भोग भोगवो, पोताना जीवने शाता आपो, अंतराय म करो, यौवन पामेलुं फोकट म गमावो; एवा भाइनां वचन सांभलीने सूरराजा खिन्न थयो. पछी गुरुपासेंथी चारित्र ग्रहण करी सर्वपरिग्रह छांमी चारित्र पालवामां तत्पर थयो. अंत्यावस्थायें अणसण आराधी स्वर्गे गयो. अने शशी राजा विषयासक्त थको मरण पामी नरकें गयो. सूरराजायें देवलोकने विषे अवधिज्ञानने बलें करी पोताना भाइने नरकनां डुःख भोगवतो दीठो, तेवारें देवलोकथी निकली नरकमां जइ आपणां रूप तेज शक्ति प्रगट कीधां, ते देखी शशी बोल्यो के हे बांधव! अद्यापि ते मह्यारो देह पड्यो छे, माटें तुं जइने ते देहनी यत्ना करके जेम हुं नरकथकी निकली सुखी थाउं! ते सांभली सूर बोल्यो के अरे मूर्ख! जीवरहित देह पड्यो छे ते शुं

सुकृत करशे ? प्रथमथीज.तें कोइ कष्ट कर्युं हूत तो आ नरकमां तुं पडत नही. हवे तुं तहारुं मन ठाम राखी कर्म खपाव, करेलां कर्मनो पश्चात्ताप कर, जेम आगले नवें सुखी थाइश. एवुं कही सूर पोतानें स्थानकें प होतो. एम कोइक जीव शशीनी पेरें मनुष्यनवमां धर्म न करे, ते आगल पश्चात्ताप पामे. मांटे सर्वकोइ धर्म करो ॥ ६ ॥

हवे मनुष्य जन्मनुं तथा धर्मसामग्रीनुं डुर्लनपणुं कहे छे.

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ अपारे संसारे कथमपि संमा
साद्य नृनवम्; न धर्मं यः कुर्याद्विषयसुखतृष्णातर
लितः ॥ ब्रुडन् पारावारे प्रवरमपहाय प्रवहणम्,
स मुख्योमूर्खाणामुपलमुपलब्धुं प्रयतते ॥ ७ ॥

अर्थः– (यः के०) जे पुरुष, (विषय के०) शब्द, रूप, रस, स्पर्श, गंध, तेमनां (सुख के०) सुख तेनी (तृष्णा के०) वांछा तेणें करीने (तरलितः के०) व्याकुल थयो थको (अपारे के०) अनंत एवा (संसारे के०) संसारने विषे (कथमपि के०) माहाकष्टें करीने (नृनवं के०) नरनवत्वने (समासाद्य के०) पामीने (धर्मं के०) धर्मने (न के०) नहिं (कुर्यात् के०) करे, (सः के०) ते पुरुष, (पारावारे के०) समुड्रने विषे (ब्रुडन् के०) बूडतो छतो (प्रवरं के०) उत्तम एवुं (प्रवहणं के०) वाहाणने (अपहाय के०) त्याग करीने तरवाने माटे (उपलं के०) पाषाणनें (उपलब्धुं के०) ग्रहण करवाने (प्रयतते के०) प्रयत्न करे छे, एटले उद्यम करे छे. ते पुरुष कहेवो जाणवो ? तो के (मूर्खाणां के०) मूर्खोना मध्यें (मुख्यः के०) मुख्य जाणवो. अर्थात् ते पुरुष, मूर्खोमां मोहोटो मूर्ख जाणवो. आ ठेकाणें संसार ते समुड्र जाणवो अने धर्म, ते वाहाण जाणवुं. विषयो ते पाषाण समान जाणवा. माटे हे नव्यजनो ! आ प्रकारें जाणीनें मनमां विवेक लावीने संसार समुड्तारक एवा धर्मनुंज आराधन करो. आराधन करता एवा सज्जनोनें जे पुण्य उत्पन्न थाय छे, ते पुण्य ॥ इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥ ७ ॥

टीकाः– अथ नरनवस्य धर्म्मसामग्र्याश्च डुर्लनत्वमाह ॥ अपारे संसारेति ॥ यः पुमान् विषयसुखतृष्णातरलितः सन् विषयाणां कामनोगानां शब्द

रूपरसस्पर्शगंधानां सुखस्य तृष्णा वांछा तया तरलितो वाहितो व्याकुली कृतः सन् अपारे अनंते संसारे कथमपि महता कष्टेन नृभवं मनुष्यजन्म स मासाद्य प्राप्य धर्म्मं न कुर्यात् न करोति। सः पुमान् पारावारे समुद्रे ब्रुड न् निमज्जन् प्रवरं उत्तमं प्रवहणं पोतं अपहाय त्यक्त्वा तरणार्थं उपलं पाषाणं उपलब्धुं गृहीतुं प्रयतते यत्नं करोति उद्यमं करोति ॥ कथंभूतः सः। मूर्खाणां मुख्यः मूर्खेषु वृद्धमूर्खः। अत्र संसारःसमुद्रः। धर्म्मः प्रवहणं। विषयाः पाषाणसदृशा इत्युपनयः ॥ भो भव्यप्राणिन्! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय संसारसमुद्रतारकः श्रीधर्म्मएव आराध्यः। आराधयतां च स तां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु॥७॥

भाषाकाव्यः—सोरठो॥ ज्यौं जल बूडत कोइ, तजि वाहन पाहन गहैं॥ त्यौं नर मूरख होइ, धरम छांडि सेवत विषय ॥ ७ ॥

हवे आ ग्रंथमां जेटलां उपदेशनां द्वारो कहेवानां छे ते उपदेश द्वारें करी सर्व द्वारो कहे छे.

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तत्रयम् ॥ भक्तिं तीर्थकरे गुरौ जिन
मते संघे च हिंसानृतं,स्तेयाब्रह्मपरिग्रहाद्युपरमं क्रोधाद्य
रीणां जयम् ॥ सौजन्यं गुणिसंगमिंद्रियदमं दानं तपोभाव
नां, वैराग्यं च कुरुष्व निर्वृतिपदे यद्यस्ति गंतुं मनः ॥ ८ ॥

अर्थः—हे भव्यप्राणीयो! (यदि के०) जो तमारुं (निर्वृतिपदे के०) मोक्षपदने विषे (गंतुं के०) जावानुं (मनः के०) मन (अस्ति के०) छे, तो तमें १ (तीर्थकरे के०) तीर्थंकरने विषे एटले श्रीवीतरागने विषे (भक्तिं के०) गुणोत्कीर्त्तनरूप भावपूजाने (कुरुष्व के०) करो. वली २ (गुरौ के०) धर्मोपदेशक गुरुने विषे भक्तिने करो. भक्ति अने कुरुष्व ए बे पदो, सर्वत्र योजवां. वली ३ (जिनमते के०) श्री जिनशासनने विषे भक्तिने करो. वली ४ (संघे के०) चतुर्विध श्रीसंघने विषे भक्तिने करो. (च के०) तथा ५ (हिंसा के०) जीववध प्राणातिपात, ६ (अनृतं के०) असत्य ते मृषावाद तेने तथा ७ (स्तेय के०) अदत्तादान एटले परवस्तुनुं ग्रहण करवुं. ८ (अब्रह्म के०) स्त्रीसेवा, मैथुन, तथा ९ (परिग्रहादि के०) धन धान्यादि नवविध परिग्रहादि ते थकी (उपरमं के०) निवर्त्तन जे तेने

करो. तथा (क्रोधाद्यरीणां के०) १० क्रोध, ११ मान, १२ माया, १३ लोन, ते रूप शत्रुउनो (जयं के०) जयने करो. तथा १४ (सौजन्यं के०) सुजनजाव ते सर्व जीवोने विषे मैत्रिजाव तेने करो. तथा १५ (गुणिसंगं के०) गुणवान मनुष्योनो संग जे संगति तेने करो. तथा १६ (इंद्रियदमं के०) पांच इंद्रियोनुं दमन करो. वली १७ (दानं के०) सुपात्रादि पांच प्रकारना दानने करो. वली १८ (तपः के०) तप ते अनशन ऊनोदर्यादि बाह्य अने अभ्यंतर मली बार प्रकारनुं तेने करो. तथा १९ (जावनां के०) शुजचित्त जावने करो. (च के०) वली २० (वैराग्यं के०) संसारथकी जोगादिकथकी जे विरक्तजाव तेने करो. एटलां वानां मोक्षपददायक जाणीने रूडे प्रकारें आराधन करवां. आराधना करनार सुजनोनुं जे पुण्य। इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥८॥ ए प्रकारें आ काव्यमां सर्व मली वीशद्वार जे आ ग्रंथमां हवे कहेवाशे, ते द्वारनां नाम कह्यां.

टीकाः--अथास्मिन् शास्त्रे एतान्युपदेशद्वाराणि कथयिष्यंते ॥ इत्युपदेशद्वारेण द्वारवृत्तमाह ॥ जक्तिमिति ॥ जो जव्यप्राणिन्! यदि तव निर्वृतिपदे मोक्षे गंतुं मनोऽस्ति । तदा त्वं तीर्थंकरे श्रीवीतरागे जक्तिं जावपूजां गुणोत्कीर्त्तनरूपां कुरुष्व ॥ १ ॥ पुनर्गुरौ धर्म्मोपदेशके जक्तिं कुरुष्व ॥२॥ पुनः जिनमते जिनशासने जक्तिं कुरुष्व ॥ ३ ॥ पुनः चतुर्विधसंघे जक्तिं कुरुष्व ॥ ४ ॥ हिंसाऽनृतस्तेयाऽब्रह्मपरिग्रहाद्युपरमं कुरुष्व ॥ ए ॥ हिंसा जीववधः प्राणातिपातः ॥ १ ॥ अनृतं, असत्यं मृषावादः ॥ २ ॥ स्तेयं चौर्यं अदत्तादानं अदत्तपरस्ववस्तुग्रहणं ॥३॥ अब्रह्म मैथुनं स्त्रीसेवा ॥४॥ परिग्रहो धनधान्यादि नवविधः ॥५॥ एन्य उपरमं निवर्त्तनं कुरुष्व ॥ए॥ अत्र व्युपरमोऽपि पाठोजवति पुनः क्रोधाद्यरीणां क्रोध, ॥१०॥ मान, ॥११॥ माया, ॥१२॥ लोज, ॥१३॥ रूपारीणां जयं कुरुष्व। पुनः सौजन्यं सुजनजावं सर्वजीवेषु मैत्रिजावं कुरुष्व ॥ १४ ॥ पुनः गुणिसंगं गुणानां गुणवतां मनुष्याणां संगं संगतिं कुरुष्व ॥ १५ ॥ पुनः इंद्रियदमं पंचेंद्रियाणां दमनं कुरुष्व ॥ १६ ॥ पुनर्दानं सुपात्रादि पंच प्रकारं कुरुष्व ॥१७॥ पुनस्तपोऽनशनमूनोदर्यादि बाह्यं आभ्यंतरं च द्वादशविधं कुरुष्व ॥ १८ ॥ पुनर्जावनां शुजचित्तजावं कुरुष्व ॥ १९ ॥ पुनर्वैराग्यं संसारात् जोगादिन्यश्च विरक्तजावं कुरुष्व ॥२०॥ एतानि मोक्षपददायकानि ज्ञात्वा सम्यक् प्रकारेणाराध

नीयानि ॥ आराधयतां सतां यदुत्पद्यते पुण्यं तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमां गलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ ८ ॥

भाषाकाव्यः—छप्पय ॥ जिन पुज्जहि गुरु नमहि, जैनमत बैन बखानहि ॥ संगभगति आदरहि, जीवहिंसा नहि जानहि ॥ झूठ कुसील अदत्त, त्याग परिग्रह परिमानहि ॥ क्रोध मान छल लोभ, जीति सज्जन थिति ठानहि ॥ गुन संग करहि इंद्रिय दमहि, देहि दान तप भाव जुत ॥ गहि मन विराग इह विधि रहहि, ते जगमें जीवन मुकत ॥ ७ ॥

हवे जेवो उद्देश तेवो निर्देश एवुं वचन छे माटें प्रथमना श्लोकमां
कहेलां जे द्वारो तेने यथाक्रमें विवरे छे, तेमां प्रथम चार
श्लोकें करी श्रीतीर्थंकरनी भक्तिनुं द्वार कहे छे.

पापं लुंपति दुर्गतिं दलयति व्यापादयत्यापदम्,
पुण्यं संचिनुते श्रियं वितनुते पुष्णाति नीरोगताम् ॥
सौभाग्यं विदधाति पल्लवयति प्रीतिं प्रसूते यशः,
स्वर्गं यच्छति निर्वृतिं च रचयत्यर्चाऽर्हतां निर्मिता॥ए॥

अर्थः— हे भव्यजनो! (अर्हतां के०) जिनभगवंतोनी (निर्मिता के०) करेली एवी (अर्चा के०) गुणोत्कीर्त्तन, वंदना, पर्युपास्त्यादि एवी भाव पूजा जे छे, ते (पापं के०) पापने (लुंपति के०) दूर करे छे. वली ते भाव पूजा, (दुर्गतिं के०) दुर्गति एटले नरकादिक जे दुष्टगति तेने (दलयति के०) खंमन करे छे, अर्थात् निवारण करे छे. वली ते भावपूजा, (आपदं के०) कष्टने (व्यापादयति के०) विनाश करे छे. तथा वली ते भाव पूजा, (पुण्यं के०) पुण्य जे धर्म तेने (संचिनुते के०) वृद्धि पमाडे छे. तथा ते भावपूजा, (श्रियं के०) लक्ष्मीने (वितनुते के०) विस्तारे छे, वली ते भावपूजा, (नीरोगतां के०) शरीरने विषे जे आरोग्यता तेने (पुष्णाति के०) पोषण करे छे, वली ते भावपूजा, (सौभाग्यं के०) सर्व जनोमां जे श्लाघनीयता, तेने (विदधाति के०) करे छे. वली ते भावपूजा, (प्रीतिं के०) प्रीतिने (पल्लवयति के०) उत्पन्न करे छे. वली ते भाव पूजा, (यशः के०) यशने (प्रसूते के०) प्रसवे छे एटले विस्तारे छे. तथा ते भाव

पूजा, (स्वर्ग के०) देवपदवीने (यच्छति के०) आपे छे. (च के०) तथा ते भावपूजा, (निर्वृतिं के०) निर्वृतिने (रचयति के०) रचे छे उत्पन्न करे छे. माटें हे भव्यजनो ! ए प्रकारें विवेक लावीने मनने विषे जाणीने रुडा प्रकारें निर्मल पणाने आपनारी एवी अने आ लोक तथा परलोक, तेने विषे सर्व सौख्यने देनारी एवी वंदनादि गुणस्तुति रूपश्रीजिननी भावपूजा, करवा योग्य छे. ते भावपूजा, करनार सज्जनने जे पुण्य । इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥९॥

टीकाः—अथ यथोद्देशस्तथैव निर्देश इति वचनात् अनुक्रमेण द्वाराणि विवृणोति ॥ तत्र प्रथमं चतुर्निर्वृत्तेः श्रीतीर्थंकरभक्तिद्वारमाह ॥ पापं लुंपतीति ॥ भो भव्याः ! अर्हतां जिनानां भावपूजा, गुणोत्कीर्त्तनवंदना पर्युपास्त्यादि निर्मिता कृता सती पापं लुंपति दूरीकरोति । पुनर्दुर्गतिं नरकादिकुष्टगतिं दलयति खंडयति निवारयति । पुनः आपदं कष्टं व्यापादयति विनाशयति । पुनः पुण्यं धर्म्मं संचिनुते वृद्धिं प्रापयति । पुनः श्रियं लक्ष्मीं वितनुते विस्तारयति पुनर्नीरोगतां शरीरे आरोग्यं पुष्णाति पोषयति । पुनः सौभाग्यं सर्वजनेषु श्लाघनीयतां विदधाति करोति । पुनः प्रीतिं पल्लवयति उत्पादयति । पुनर्यशः प्रसूते यशोविस्तारयति । पुनः स्वर्गं त्रिदिवं देवपदं यच्छति ददाति । पुनर्निर्वृतिं रचयति ददाति । भो भव्यप्राणिन ! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय सम्यक्निर्मलविधायिनी इह लोके परलोके च सर्वं सौख्यदायिनी वंदनादि गुणस्तुतिः श्रीजिनभावपूजा कार्या । कुर्वतां सतां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ९

भाषाकाव्यः—मात्रात्मक कवित्त लोपैं दुरित हरैं दुःख संकट, आपैं रोग रहितनर देह ॥ पुन्न भंमार भरैं जस प्रगटैं, मुगतिपंथसों करै सनेह ॥ रचै सुहाग देहि सोभा जग, परभव पहुंचावैं सुरगेह ॥ कुगति बंध दल बलैं बनारसि, वीतराग पूजा फल एह ॥ ९ ॥

वली पण श्रीजिनवरनी भावपूजाना फलने कहे छे.

स्वर्गस्तस्य गृहांगणं सहचरी साम्राज्यलक्ष्मीः शुभा,
सौभाग्यादिगुणावलिर्विलसति . स्वैरं वपुर्वेश्मनि ॥
संसारः सुतरः शिवं करतलक्रोडे लुठत्यंजसा, यः
श्रद्धाभरभाजनं जिनपतेः पूजां विधत्ते जनः ॥ १० ॥

अर्थः– (यः के०) जे (जनः के०) पुरुष, (श्रद्धा के०) पूजा रुचि तेनो (भर के०) भार एटले प्रचुरता तेनुं (भाजनं के०) पात्र थयो छतो अर्थात् शुभ भावना युक्त थयो छतो (जिनपतेः के०) श्री वीतरागनी (पूजां के०) भावपूजाने (विधत्ते के०) करे छे, (तस्य के०) ते पुरुषने (स्वर्गः के०) देवलोक ते, (गृहांगणं के०) गृहना आंगणानी पेठें निकट थाय छे. वली (शुभा के०) मनोहर एवी (साम्राज्यलक्ष्मीः के०) साम्राज्यनी ऋद्धि, ते पुरुषने (सहचरी के०) साथें वर्त्तनारी थाय छे. तथा (वपुः के०) शरीर तेज (वेश्मनि के०) घर तेने विषे (सौभाग्यादि के०) सौभाग्य, धैर्य औदार्यादि (गुणावलिः के०) गुणोनी पंक्ति, ते (स्वैरं के०) पोतानी इच्छायें (विलसति के०) आवीने विलास करे छे. अर्थात् रहे छे. वली (संसारः के०) संसार ते (सुतरः के०) सुखें करीने तरवाने शक्य थाय छे. वली (शिवं के०) मोक्ष, ते (अंजसा के०) अनायासें करी शीघ्र, ते पुरुषना (करतलक्रोडे के०) हस्ततलमध्यें (लुठति के०) हस्तगोचर थाय छे. मोटे हे भव्यजनो! एम जाणीने मनने विषे विवेक लावीने, जिनप्रभुनी भावपूजा करो, ने पूजा करनारने जे पुण्य॥ इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥१०॥

टीकाः–पुनः श्रीजिनस्य भावपूजायाः फलमाह ॥ स्वर्गस्तस्येति ॥ यो जनः श्रद्धाभरभाजनं सन् श्रद्धारुचिः तस्या भरः प्रचुरता तस्य भाजनं स्थानं भाजनशब्दस्याजहल्लिंगत्वान्नपुंसकत्वं शुभभावनायुक्तः सन् जिनपतेः श्रीवीतरागस्य भावपूजां विधत्ते करोति तस्य जनस्य स्वर्गो देवलोको गृहांगणं गृहस्यांगणवन्निकटो भवति। पुनः शुभा मनोहरा साम्राज्यलक्ष्मीः राज्यऋद्धिस्तस्य सहचरी सार्थवर्तिनी भवति। पुनर्वपुर्वेश्मनि वपुरेव शरीरमेव वेश्म गृहं तस्मिन् सौभाग्यधैर्यौदार्यचातुर्यादिगुणानां आवलिः श्रेणिः स्वैरं स्वेच्छया विलसति आगत्य विलासं करोति तिष्ठतीत्यर्थः। पुनः संसारः सुतरः सुखेन तीर्यते इति सुतरः सुखेन तरीतुं शक्योभवति। पुनः शिवं मोक्षः अंजसा शीघ्रं तस्य करतलक्रोडे हस्ततलमध्ये लुठति हस्तगोचरोभवतीत्यर्थः ॥ अतोभावार्हतः उत्पन्नकेवलज्ञानाश्चतस्त्रिंशदतिशयैर्विराजमानाः समवसरणस्थाः इति ॥ यतः ॥ उसरणमवसरित्ता, चउत्तीसं अइसए निसेवित्ता ॥ धम्मकहं च कहंता, अरिहंता हुंतु मे सरणं ॥ १ ॥ इति वचनात् ॥ भो भव्यप्राणीन्! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय

अर्हतां ज्ञावपूजा कार्या । कुर्वतां च यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्त रोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ १० ॥

जाषाकाव्यः—वृत्त उपर प्रमाणें ॥ देवलोक ताको घर अंगन, राजरिद्धि सेवैं तस पाइ ॥ ताके तन सोजाग आदिं गुन, केलि विलास करें नित आइ ॥ सो नर तुरत तरें जवसागरं, निरमल होंइ मोक्षपद पाइ ॥ दरव जाव विधि सहित बनारसि, जो जिनवर पूजें मन लाइ ॥ १० ॥

वली पण ज्ञावपूजानुं फल कहे छे.

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ कदाचिन्नातंकः कुपितइव पश्य
त्यन्निमुखम्, विदूरे दारिद्र्यं चकितमिव नश्यत्यनुदि
नम् ॥ विरक्ता कांतेव त्यजति कुगतिः संगमुदयो,
न मुंचत्यन्यर्णं सुहृदिव जिनार्चां रचयतः ॥ ११ ॥

अर्थः—(जिनार्चां के०) श्रीवीतरागनी वंदनादि ज्ञावपूजाने (रचय तः के०) करता एवा पुरुषोने (आतंकः के०) जय, ते (कदाचित् के०) कोइ वखत पण (अन्निमुखं के०) सन्मुख (न पश्यति के०) न जोवे छे. ते केनी पेठें ? तो के जेम कोइ (कुपितइव के०) कोइनी उपर कोपायमान थयो होय ते तेनी सामुं न जोवे, तेनी पेठें आहीं पण जाणी लेवुं. तथा (दारिद्र्यं के०) दारिद्र जे छे ते तेनाथी (अनुदिनं के०) निरंतर (विदूरे के०) घणेज दूर (नश्य ति के०) नासे छे, अर्थात् तेनाथी दारिद्र्य दूर जाय छे, केनी पेठें ? तो के (च कितमिव के०) ते दारिद्र्य जाणीयें जयजीत थयुं होय नहिं ? तेनी पेठें. वली (कुगतिः के०) नरकादि दुर्गति, ते पुरुषना (संगं के०) समीपपणाने (त्यज ति के०) त्याग करे छे. एटले तेने मूकी दे छे, केनी पेठें ? तो के (विरक्ता के०) विरक्त थयेली एवी (कांतेव के०) स्त्री जेम होय तेनी पेठें. अर्थात् जेम विरक्त स्त्री, स्वामीना संगनो त्याग करे छे, तेनी पेठें. वली (उदयः के०) अन्युदय, जे प्रताप, ऐश्वर्यादिक. ते (अन्यर्णं के०) ते पुरुषना समीपपणाने (नमुंचति के०) न मूके छे, केनी पेठें ? तो के (सुहृदिव के०) मित्रनी पेठें. ए कारण माटें अर्हत्प्रजुनी ज्ञावपूजा जे वंदनादिक ते करवा योग्य छे, माटें हे जव्यजनो ! ए प्रकारें जाणीने मनमां विवेक लावीने श्रीजिन वरनी ज्ञावपूजा करवी. करता एवा सुजन पुरुषोने जे पुण्य। इत्यादि पूर्ववत् ११

टीकाः—पुनर्नावपूजायाः फलमाह ॥ जिनार्चां श्रीवीतरागस्य वंदनादिना वपूजां रचयतः कुर्वतः पुरुषस्य आतंको नयं कदाचित् अनिमुखं सन्मुखं न पश्यति न विलोकयति । क इव ? कुपित इव । यथा कश्चित् कुपितोरुष्टोनवति स यथा तस्य सन्मुखं न पश्यति तथेत्यर्थः ॥ पुनर्दारिद्र्यं दरिद्रत्वं अनुदिनं निरंतरं तस्य दूरे नश्यति दूरे याति किमिवं ? चकितमिव । नयनीतमिव । पुनर्नरकादिकुगतिस्तस्य संगं समीपं त्यजति । मुंचति का इव ? विरक्ता कुपिता रुष्टा कांता इव स्त्री इव । यथा विरक्ता स्त्री नर्तुः संगं त्यजति तथेत्यर्थः । पुनः उदयअन्युदयः प्रतापैश्वर्यादिवृद्धिस्तस्य अन्यर्णं समीपं न मुंचति न त्यजति । क इव ? सुहृदिव मित्रमिव ॥ अतोऽर्हतां नावपूजा वंदनादि कार्या । नो नव्यप्राणीन् ! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय श्रीजिनस्य नावपूजा कर्त्तव्या । कुर्वतां च सतां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ ११ ॥

नाषाकाव्यः—वृत्त उपरप्रमाणे ॥ ज्यों नर रहे रिसाय कोप करि, ज्यों चिंता नय विमुख बखानि ॥ ज्यों कायर संके रिपु देखत, त्यों दारिद्द नजे नय मानि ॥ ज्यों कुनारि परिहरे मंदपति, त्यों डुरगति ठंमे पहिचानि ॥ हित ज्यों विनौ तजें नहि संगति, वीतराग पूजा फल जानि ॥ ११ ॥

वली पण श्रीजिनपरमेश्वरनी नावपूजानुं माहात्म्य कहे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ यः पुष्पैर्जिनमर्चति स्मितसुरस्त्रीलोचनैः सोऽर्च्यते, यस्तं वंदति एकशस्त्रिजगता सोऽहर्निशं वंद्यते ॥ यस्तं स्तौति परत्र वृत्रदमनस्तोमेन स स्तूयते, यस्तं ध्यायति कॢप्तकर्म्मनिधनः स ध्यायते योगिनिः ॥ १२ ॥

अर्थः—(यः के०) जे पुरुष, (पुष्पैः के०) पुष्पोयें करीने (जिनं के०) जिननगवानने (अर्चति के०) पूजन करे छे, (सः के०) ते पुरुष, (स्मित के०) विकसित एवां (सुरस्त्री के०) देवताउनी स्त्रीयोनां (लोचनैः के०) नेत्रोयें करीने (अर्च्यते के०) पूजाय छे, अर्थात् जिन पूजन करनारो पुरुष, देवलोकनें विषे उत्पन्न थाय छे, अने तेने देवलोकनी स्त्रीयो विकसितनेत्रें करी पूजे छे, एटले राग सहित तेनुं अवलोकन करे छे. वली (यः के०)

जे पुरुष, (एकशः के०) एकवार (तं के०) ते जिनप्रज्जुनें (वंदति के०) वंदन करे ठे, (सः के०) ते पुरुष, (अहर्निशं के०) रात्रि दिवस, (त्रिजगता के०) त्रण जुवनें करि (वंद्यते के०) वंदन कराय ठे. अर्थात् जे जगवानने वंदन करे, ते त्रिजगतने वंद्य थाय. वली (यः के०) जे पुरुष, (तं के०) ते श्री जिनवरने (स्तौति के०) स्तवे ठे, वर्णन करे ठे, (सः के०) ते पुरुष, (परत्र के०) स्वर्गने विषे (वृत्रदमन के०) इंडो, तेना (स्तोमेन के०) समूहें करीने (स्तूयते के०) स्तवाय ठे, स्तुति कराय ठे एटले पोतानी गुणस्तुतियें करीने वर्णन कराय ठे. वली (यः के०) जे पुरुष, (तं के०) ते परमेश्वरने (ध्यायति के०) पिंमस्थपदस्थरूपस्थ रूपातीतजेदें करीने ध्यान करे ठे, एटले हृदयने विषे जगवानने ध्यानगोचर करे ठे. (सः के०) ते पुरुष, (योगिन्निः के०) योगीश्वर जे महामुनियो तेमणें (ध्यायते के०) ध्यानगोचर कराय ठे. हवे ते पुरुष कहेवो ठे? तो के (कृत के०) रचना कस्यो ठे (अष्टकर्म के०) आठ कर्मनो (निधनः के०) विनाश जेणें एवो ठे. अर्थात् सिद्धावस्थाने प्राप्त थाय ठे ॥ १२ ॥ आ प्रकारें आ सिंदूरप्रकर ग्रंथमां चार श्लोकें करी जावपूजानो प्रथमप्रक्रम कह्यो ॥ इति प्रथमप्रक्रमः ॥ १ ॥ ए परमेश्वरनी पूजा उपर नलराजा अने दमयंतीनी कथा जाणवी, ते सर्वत्र प्रसिद्ध ठे ॥ ए श्री तीर्थंकरजक्तिनुं प्रथमद्वार संपूर्ण थयुं ॥ १ ॥

इति पूजायाः प्रस्तावः ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिना ॥ सूरिणा विहितायां तु, पूजायाः प्रक्रमोऽजनि ॥१॥ इतिजिनवर प्रक्रमः ॥

टीकाः— पुनः श्रीजिनजावपूजायाः माहात्म्यमाह ॥ यः पुरुषः पुष्पैः कृत्वा जिनं श्रीवीतरागं अर्चति पूजयति स पुरुषः स्मितसुरस्त्रीलोचनैः अर्च्यते पूज्यते । स्मितानि विकसितानि यानि सुरस्त्रीणां देवांगनानां लोचनानि नेत्राणि तैः । देवलोके देवत्वेनोत्पन्नः स देवांगनाजिर्विकसितनेत्रैः अर्च्यते पूज्यते । सरागं अवलोक्यते इत्यर्थः । पुनर्यः पुमान् एकशः एकवारं श्रीजिनं वंदति स अहर्निशं दिवारात्रौ त्रिजगता त्रिजुवनेन वंद्यते । यो जिनं वंदति स त्रिजगद्वंद्यो जवतीत्यर्थः । पुनर्यः पुमान् तं श्रीजिनं स्तौति वर्णयति स पुमान् परत्र परलोके वृत्रदमनस्तोमेन, वृत्रदमनानां इंद्राणां स्तोमेन समूहेन स्तूयते । गुणस्तुत्या कृत्वा वर्ण्यते । पुनर्यस्तं श्रीजिनं ध्यायति पिंमस्थपदस्थरूपस्थरूपातीतजेदैर्हृदये ध्यानगोचरं करोति

स पुमान् योगिभिर्योगीश्वरैर्महामुनिभिर्ध्यायते। ध्यानगोचरः क्रियते। कथंभूतः सः। कृप्तकर्म्मनिधनः कृप्तं रचितं कृतं अष्टानां कर्म्मणां निधनं विनाशो येन सः कृप्तकर्म्मनिधनः॥ सिद्धावस्थां प्राप्त इत्यर्थः॥१२॥इतिपूजायाःप्रस्तावः

भाषाकाव्यः—वृत्त उपर प्रमाणें॥ जो जिनंद पूजें भूलनसों,सुर नैननि पूजा तिसु होइ ॥ वंदें भाव सहित जो जिनवर, वंदनीक त्रिभुवनमें सोइ ॥ जो जिन सुजस करें जन ताकी,महिमा इंद्र करें सुर लोइ ॥ जो जिनध्यान करंत बनारसि, ध्यावें मुनि ताके गुन जोइ ॥ १२ ॥

हवे चार श्लोकें करी गुरुभक्तिनुं द्वार कहे छे.

॥ वंशस्थवृत्तम् ॥ अवद्यमुक्ते पथि यः प्रवर्त्तते, प्रवर्त्तयत्यन्यजनं च निःस्पृहः ॥ स एव सेव्यः स्वहितैषिणा गुरुः, स्वयं तरंस्तारयितुं क्षमः परम् ॥१३॥

अर्थः—(स्वहितैषिणा के०) पोताना हितना वांछक पुरुषें (सएव के०) तेहीज (गुरुः के०) गुरु (सेव्यः के०) सेवन करवा योग्य छे. ते केवा गुरु सेववा योग्य छे ? तो के (अवद्यमुक्ते के०) अवद्य जे पाप तेथकी मुक्ते एटले मुकायेला एटले सत्य एवा (पथि के०) मार्गने विषे (यः के०) जे गुरु (प्रवर्त्तते के०) प्रवर्त्तें छे (च के०) वली (अन्यजनं के०) अन्य जनने शुद्धमार्गने विषे (प्रवर्त्तयति के०) प्रवर्त्तावे छे. वली (निःस्पृहः के०) परिग्रहादि वांछारहित छता जे गुरु (स्वयं के०) पोतें (तरन् के०) संसारसमुद्र तरता छता (परं के०) अन्यने (तारयितुं के०) तारवाने (क्षमः के०) समर्थ होय छे. ये गुरु शब्दनो अर्थ शुं छे ? तो के (गृणाति एटले कहे छे तत्त्वने ते गुरु कहियें. अर्थात् जे तत्त्वोपदेशक शुद्ध प्ररूपक ते गुरु जाणवा. ए माटे जे शुद्धप्ररूपक तथा जिनाज्ञाराधक होय, ते गुरु सेववा योग्य छे. परंतु जमाल्यादिक कुगुरुउ सेववा योग्य नहिं, कुगुरु केवा होय छे ? तो के उत्सूत्रना प्ररूपक, स्वछंद, पोतानी मतियें कल्पित एवा मतनें करनारा तथा जिनाज्ञाना विराधक अने मायावी होय छे. माटें हे भव्य जीवो ! ए प्रकारें जाणीने मनने विषे विवेक लावीने जे शुद्ध प्ररूपक तथा जिनाज्ञाऽराधक एवा गुरु होय, तेने सेववा. सेवन करनारने० ॥१३॥

टीकाः—अथ चतुर्भिर्वृत्तैर्गुरुभक्तिद्वारमाह ॥ अवद्यमुक्तेति ॥ आत्महितवांछ

केन पुरुषेण स एव गुरुः सेव्यः । कः सः? यः अवंच्यमुक्ते पापवर्जिते सत्ये पथि धर्म्ममार्गे स्वयं प्रवर्त्तते प्रचलति । च पुनः अन्यजनं अन्यलोकं शुद्धमार्गे प्रवर्त्तयति । गुरुर्निःस्पृहः परिग्रहादिवांछारहितः सन् पुन यः स्वयं संसार समुद्रं तरन् सन् परं अन्यं तारयितुं क्षमः समर्थः ॥ गृणाति कथयति तत्त्वमिति गुरुः तत्त्वोपदेशकः शुद्धप्ररूपकइत्यर्थः ॥ यतः ॥ हीणस्स वि सुद्ध परू, वगस्स नाणाहियस्स कायव्वं ॥ जणचित्तग्गहणत्थं, करंति लिंगा विसेसं तु ॥ १ ॥ अन्यच्च ॥ दंसणं भठो भठो, दंसण भठस्स नत्थि नि व्वाणं ॥ सिज्झंति चरण रहिया, दंसण रहिया नसिज्झंति ॥ १२ ॥ अतः कारणात् यः शुद्धप्ररूपकः जिनाज्ञाराधकः स गुरुः सेव्यः नतु जमाल्या दयः कुगुरवः सेव्याः । अहाछंदाः उत्सूत्रप्ररूपकाः स्वमतिकल्पितमतक र्त्तारः जिनाज्ञाविराधकाः मायाविनस्ते तु कुगुरवः ॥ एवं भो भव्यप्राणिन्! इति ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय शुद्धप्ररूपकोजिनाज्ञाराधकोगुरुः सेव्यः ॥ सेव्यमानानां यत् पुण्य मुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलि क्यमाला विस्तरंतु ॥ १३ ॥

भाषाकाव्यः—आभानक छंद ॥ पाप पंथ परहरहि, धरहि शुभ पंथ मग ॥ पर उपगार निमित्त, वखानहि मोख मग ॥ सदा अवंछित चित्त जु, तारन तरन जग ॥ ऐसे गुरुकों सेवत, भागहिं कर्म खग ॥ १३ ॥

वली फरीने पण गुरुसेवानुं फल कहे छे.

॥मालिनीवृत्तम्॥ विदलयति कुबोधं बोधयत्यागमार्थम्, सुग तिकुगतिमार्ग्गौ पुण्यपापे व्यनक्ति ॥ अवगमयति कृत्याकृत्य भेदं गुरुर्यो, भवजलनिधिपोतस्तं विना नास्ति कश्चित् ॥ १४॥

अर्थः—हे भव्यजनो ! (तं विना के०) ते गुरु विना बीजो (कश्चित् के०) कोइ पण, (भवजलनिधि के०) संसाररूप जे समुद्र तेने विषे (पो तः के०) नावसमान (नास्ति के०) नथी. अर्थात् संसारसमुद्र तरवामां नावसमान गुरु विना बीजो कोइ नथी. ते गुरु कहेवा छे? तो के (यः के०) जे (गुरुः के०) गुरु, (कुबोधं के०) कुत्सित बोध ते कुत्सितज्ञान जे मिथ्यात्व, तेने (विदलयति के०) विशेषें करी नाश करे छे. वली जे गुरु (आगमा र्थं के०) सिद्धांतोना अर्थने (बोधयति के०) जणावे छे. तथा जे गुरु

(पुण्यपापे के०), पुण्य अनें पाप ते धर्म अने अधर्म ए बेने पण (व्यन क्ति के०) प्रगट करे ले. एटले आ पुण्य ले अने आ पाप ले, ए प्रकारें प्रकट करे लें. ते पुण्य अने पाप कहेवां ले? तो के (सुगतिकुगतिमार्गौ के०) पुण्य ते देवनरादि सुगतिमार्ग, पांप ते नरकतिर्यग्रूप कुगतिमार्ग जाणवो. वली पण जे गुरु, (कृत्याऽकृत्य के०) करवाने योग्य ते कृत्य अने न करवाने योग्य, ते अकृत्य, तेना (नेदं के०) विवेक एटले विचार तेने (अवगमयति के०) जणावे लें. जेम प्रदेशी राजा माहानास्तिकमति हतो, तेने केशीगणधर गुरुयें प्रतिबोध करीने तत्त्वमार्ग विषे स्थापन कस्यो. माटें हे नव्यप्राणीथो ! ए प्रकारें जाणीने मनमां विवेक लावीने संसारसमुड तरवाने माटें नावसमान एवा श्रीगुरुनी सेवा करवा योग्य ले, अने गुरुनी सेवा करनार सुजनोने जे पुण्य। इत्यादि सर्वे पूर्ववत् जाणवुं १४

टीकाः—अथ पुनरपि गुरुसेवायाः फलमाह॥ विदलयतीति॥ नो नव्याः! तं गुरुं विनाऽन्यः कश्चित् नवजलनिधिपोतः प्रवहणं नास्ति। नव एव संसार एव जलनिधिः समुद्रस्तत्र पोतः प्रवहणं संसारसमुद्रतारणे प्रवहणसमानं गुरुं विनाऽन्यः कश्चिन्नास्ति। योगुरुः कुबोधं कुत्सितज्ञानं मिथ्यात्वं विदलयति। पुनर्यो गुरुः आगमार्थं सिद्धांतानां अर्थं बोधयति ज्ञापयति। पुनर्यो गुरुः पुण्यपापे पुण्यं च पापं च पुण्यपापे ते धर्म्माधर्म्मौ द्वे अपि व्यनक्ति प्रकटयति। इदं पुण्यमिदं पापमिति। कथंनूते पुण्यपापे सुगतिकुगतिमार्गौ सुगतिश्च कुगतिश्च सुगतिकुगती तयोर्मार्गौ पुण्यं देवमरादि सुगतिमार्गः पापं नरकतिर्यग्रूपं कुगतिमार्गः। पुनर्यो गुरुः कृत्याऽकृत्यनेदं अवगमयति कर्त्तुं योग्यं कृत्यं कर्त्तुमयोग्यं अकृत्यं। कृत्यं च अकृत्यं च कृत्याकृत्ये तयोर्नेदो विवेको विचारस्तं ज्ञापयति ॥ यथा प्रदेशी नृपः महा नास्तिकमतिः केशिगणधरगुरुणा प्रतिबोध्य तत्त्वमार्गे स्थापितः॥ नो नव्यप्राणिन्! इति ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय संसारसमुद्रतारणाय प्रवहणसमान श्रीगुरोः सेवा कार्या। गुरोः सेवां कुर्व्वतां च सतां यत्पुण्यमुत्पद्यते तत् पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमालाविस्तरंतु ॥ १४ ॥

नाषाकाव्यः—हरिगीतलंद॥ मिथ्यात दलनसिद्धांत साधक, मुगति मारग जान ए॥ करनी अकरनी सुगति दुर्गति, पुन्न पाप बखान ए॥ संसारसा

गर तरन तारन, गुन जिहाज विसेखियें ॥ जगमांहि गुरु सम कहि बनारसि, और कोउ न लेखियें ॥ १४ ॥

कथाः—कश्रीगुरु, कुबोधना विदलन करनार छे, तेनी उपर सूर्याभदेवनी कथा कहे छेः—एकदा श्रीमहावीर देव आमलकप्पा नगरीयें समोसर्या, तिहां सूर्याभविमानथकी सूर्याभदेवता वांदवा आव्या. प्रभु आगल बत्रीशबद्ध नाटक करी स्वस्थानकें गया. पछी गौतमस्वामीयें भगवान्नें पूछ्युं के महाराज! एवडी ऋद्धि एणें केम पामी? तेवारें भगवान् कहेता हवा के श्वेतंबिका नगरीमां प्रदेशी राजा, तेनी सूरिकांता भार्या तेनो चित्रनामें सारथी हतो, ते एकदा सावत्थी नगरीयें गयो. तिहां केशी कुमारने देखी वांद्या, अने धर्मकथा सांभली. श्रावकधर्म पडिवज्यो. पछी ते चित्र सारथीयें पोताना राजाने प्रतिबोध आपवा माटे श्वेतंबीयें पधारवा विनति करी त्यारे गुरुयें कह्युं के अन्नोदक संबंधें जणाशे. पछी केटलेक दिवसें गुरु श्वेतंबीयें आव्या, तेनी चित्र सारथीने खबर पडी. तेवारें गुरुने वांदवा गया, उतारो आपी सारथीयें कह्युं के हे स्वामी! राजा नास्तिक छे, तेने प्रतिबोधजो. हुं पण कोइ उपाय करी तेने इहां लावीश. अन्यदा घोडा फेरववाने मिशें राजाने चित्रसारथी तिहां तेडी लाव्यो. तिहां गुरुने ढूकडाज व्याख्यान करता देखीने चित्रसारथी प्रत्यें राजा कहेवा लाग्यो के, जो खलु मुंढ पज्जुवासंति? अणायरिया खलु जोअणायरियं पज्जुवासंति? तेवारें सारथीयें कह्युं के हे स्वामी! चालो आपणे जइ पूछीयें. राजा पण तिहां गुरुपासें जइ पूछवा लाग्यो, हे मूंढ! शरीरमांहे आत्मा तो नथी तो धर्म करेलो कोण भोगवे? गुरु कहे तमारा कहेवा प्रमाणें प्रत्यक्ष देखाय ते प्रमाण अने जे प्रत्यक्ष न देखाय, ते अप्रमाण. तो तमारां माता पिता पण देखातां नथी, माटें अप्रमाण थयां? राजा बोल्यो जो धर्म अधर्मादिक छे, तो महारो पिता अनेक जीवोनो संहार करनार हतो माटे नरकें गयो हशे? अने महारी माता धर्मिष्ठ हती माटें स्वर्गें गइ हशे? तो हे भिक्षाचर! हुं तो तेनो अत्यंत वल्लभ पुत्र हतो तेमने आवीने धर्मनो प्रतिबोध आपे तो परलोक पण छे तथा पुण्य पाप पण छे, इत्यादि सर्व वात हुं सत्य करी मानुं! तेवारें आचार्य बोल्या के हे राजन्! बंधीवाननी पेरें तहारो पिता कर्मपाशें करी बंधाणो छे, ते शी रीतें आहीं तहारी पासें आवी शके? राजा बोल्यो तो महारी माताजीने स्वर्गे

थी आवतां शी हरकत नडे ले? सूरि बोल्या के ते तो संपूर्ण वांछित सुख जोगवे ले, तेथी नही आवे. तथा वली मनुष्यलोकनो डुर्गंध ऊंचो उछले ले, ते तेनाथी सहन थाय नही. त्यारें राजा बोल्यो के में एक चोरने पकडी पथरानी कोठीमांहे नाख्यो द्वार ढांकी दीधुं, पछी केटलेक दिवसें खोली जोयुं तो चोरनुं शरीर तिलतिलनी पेरें दीठुं, परंतु मांहे जीव तो दीठो नही? माटें जीव नथी, तथा एक चोरने तोलीने पछी फांसी आपी मारी नाखी फरी तोल्यो तो कांइ पण वध्यो घट्यो नही? माटे शरीरमांहे जीव नथी, तेवारें सूरि बोल्या के निःछिद्र कोठीमांहे पेसी कोइक शंख वजावे, ते शंखनो शब्द बाहिर केम संजलाय ले, तेम जीवनो पण एज स्वजाव जाणवो. तथा अरणीना लाकडामांहे फाडी जोतां थकां अग्नि देखातो नथी पण उपायने योगें अग्नि पामीयें बैयें. इत्यादि अनेक दृष्टांत आपी राजाने प्रतिबोध्यो. राजा श्रावक थयो, समकत्वमूल बार व्रतनो उच्चार कस्यो, यावत् एनी स्त्री सूरिकांतायें निःस्वार्थे जाणी विष दीधुं. राजा अनशन लेइ सूरियाजविमानने विषे सूरियाजनामें देव थयो. तिहांथी च्यवी महाविदेहें अवतरी मोक्ष सुख पामशे ॥ इति प्रदेशी राजानो दृष्टांत ॥ १४ ॥

वली पण गुरुसेवानुं फल कहे ले.

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ पिता माता भ्राता प्रियसहचरी सूनुनिवहः, सुहृत्स्वामी माद्यत्करिभटरथाश्वः परिकरः ॥ निमज्जंतं जंतुं नरककुहरे रक्षितुमलम्, गुरोर्धर्माऽधर्म्मप्रकटनपरात्कोऽपि न परः ॥१५॥

अर्थः—(नरककुहरे के०) नरकविवरनी मध्यें (निमज्जंतं के०) बूडता एटले पडता एवा (जंतुं के०) जीवनें (गुरोः के०) गुरुथकी (परः के०) बीजो (कोपि के०) कोइ पण (रक्षितुं के०) रक्षण करवाने (न के०) नहि (अलं के०) समर्थ होय. केम के? (पिता के०) पिता ते पण तेनुं रक्षण करवाने न समर्थ होय ले, तथा (माता के०) जननी ते पण तेनुं रक्षण करवाने न समर्थ होय. तथा (भ्राता के०) सहोदर ते पण तेनुं रक्षण करवाने न समर्थ होय. तथा (प्रियसहचरी के०) अत्यंत वल्लज एवी स्त्री पण तेनुं रक्षण करवाने न समर्थ होय ले. तथा (सूनुनिवहः के०) पुत्रसमूह पण तेनुं र

क्षण करवाने न समर्थ होय छे. तथा (सुहृत् के०) मित्र पण तेनुं रक्षण करवाने न समर्थ होय छे. तथा (स्वामी के०) नायक पण तेनुं रक्षण करवाने न समर्थ होय छे. ते नायक केहवो छे ? तो के (माद्यत् के०) मदोन्मत्त एवा (करि के०) हस्ती, (भट के०) सुभट (रथ के०) रथ तथा (अश्वः के०) घोडाउं छे जेमने एवो छे अर्थात् एवी सर्व सामग्री सहित एटले बलवान् एवो स्वामी पण रक्षण करवाने समर्थ थाय नहि. तथा (परिकरः के०) मद्दोटो सेवकादिवर्ग, ते पण रक्षण करवाने समर्थ न होय छे. अर्थात् नरकमां पडता जीवोने ए पूर्वोक्त सर्व, रक्षण करवाने समर्थ न होय छे, पण मात्र एक गुरु जे छे, तेज नरकमां पडता जंतुने रक्षण करवाने समर्थ थाय छे. गुरु विना कोइ पण नरकमां पडता जीवने रक्षण करवाने समर्थ नथी. ते गुरु कहेवा छे ? तो के (धर्माधर्म के०) पुण्य अने पाप, तेनुं (प्रकटन के०) प्रकाशन तेने विषे (परात् के०) तत्पर एवा छे. वली गुरु जे छे, ते धर्म अधर्म ए बेने बतावे छे. ते जेम के:—जे प्राणी धर्मने अंगीकार करे छे, ते नरकने विषे पडता नथी, अर्थात् सुगतिने भजनारा थाय छे. अने जे अधर्मने अंगीकार करे छे, ते प्राणी नरकमां पडे छे, अर्थात् कुगतिने भजनारा थाय छे. माटे हे भव्यजनो ! एम जाणीने मनने विषे विवेक लावीने नरकपातथकी रक्षण करवाने समर्थ गुरु छे, ते सेववा योग्य छे, बाकी सर्व पूर्ववत् जाणवुं ॥ १५ ॥

टीकाः—पुनः गुरुसेवायाः फलमाह ॥ पितामातेति ॥ नरककुहरे नरकविवरमध्ये निमज्जंतं ब्रूडंतं पतंतं संतं जंतुं जीवं गुरोःपरोऽन्यः कोपि रक्षितुं अलं न। कोपि न समर्थः। कथं ? पिता जनको रक्षितुं नालं। माता जननी रक्षितुं नालं। भ्राता सहोदरोरक्षितुं नालं। प्रिया अत्यंतवल्लभा सहचरी स्त्री रक्षितुं नालं। सूनुनिवहः पुत्रगणोऽपि रक्षितुं नालं। सुहृत् मित्रमपि रक्षितुं नालं न समर्थः। स्वामी नायकोऽपि रक्षितुं नालं। किं भूतः स्वामी ? माद्यत्करिभटरथाऽश्वः। माद्यंतो मदोन्मत्ता करिणो गजाः भटा सुभटाः रथः अश्वाश्च यस्य स एवंविधो बलवान् यःस्वामी स रक्षितुं नालं। पुनः परिकरः प्रभूतसेवकादिवर्गोऽपि नरके पतंतं संतं रक्षितुं अलं समर्थो न। किंतु एको गुरुरेव नरके पतंतं जीवं रक्षितुं समर्थः। गुरोः परः कोऽपि नरके पतंतं जीवं रक्षितुं न समर्थः। किंविशिष्टात् गुरोः। धर्म्माधर्म्मप्रकटनपरात्। धर्म्मश्च अ

धर्म्मश्च धर्म्माधर्म्मौ पुण्यपापे. तयोः प्रकटने प्रकाशने परस्तत्परोयः सः तस्मात्। गुरुर्धर्म्मोऽधर्मौ द्वावपि दर्शयति। ततश्च यः प्राणी धर्म्ममंगीकरोति स नरके न पतति । किंतु? सुगतिंभाग्भवति ॥ यतः ॥ नरय गय गमण पडिहू, ठए कए तह पएसिणा रन्ना ॥ अमरनिमाणं पत्तं, तं आयरिय प्प भावेणं ॥ १ ॥ भो भव्य प्राणिन्! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय नरक पतनात् रक्षणीयः समर्थो गुरुरेव सेव्यः ॥ सेव्यमानानां च यत्पुण्यमुत्प द्यते तत् पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ १५ ॥

भाषाकाव्यः—सवैय्यात्रेवीशा ॥ मात पिता सुत बंधु सबी जन, मीत हितू सुख कामिनी फीके ॥ सेवकराजि मतंगज वाजि, महा दल साजि रथी रथ नीके ॥ दुर्गति जाइ दुःखी विललाइ, परे सिर आइ अकेलहि जीके ॥ पंथ कुपंथ गुरू समुजावत, और सगे सब स्वारथहीके ॥ १५ ॥

हवे गुरुनी आज्ञानुं माहात्म्य कहे छे.

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ किं ध्यानेन भवत्वशेषविषयत्यागैस्तपोभिःकृतम्, पूर्णं भावनयाऽलमिंद्रियदमैः पर्याप्तमाप्तागमैः ॥ किं त्वेकं भवनाशनं कुरु गुरुप्रीत्या गुरोःशासनम्, सर्वे येन विना विनाथबलवत् स्वार्थाय नाऽलं गुणाः ॥ १६ ॥

इति द्वितीय गुरुसेवनप्रक्रमः ॥ २ ॥

अर्थः—हे भव्यप्राणी! गुरुनी आज्ञा विना (ध्यानेन के०) ध्यान करवाथी (किं के०) शुं? तो के काहिं नहिं. तथा (अशेषविषय के०) समस्त विषयो, तेना (त्यागैः के०) त्यागें करीने (भवतु के०) हो एटले संपूर्ण थयुं, अर्थात् समस्त विषयत्यागें करीने पण काहिं नहिं. वली गुरुनी आज्ञा विना (तपोभिः के०) तप जे षष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादशादि, पक्षक्षपण, मासक्षपण, सिंहनिक्रीडितादिक तप तेणे करीने पण शुं (कृतं के०) कर्युं? एटले पूर्ण थयुं, अर्थात् तेणें करीने पण कांहि नहिं. तथा (भावनया के०) शुभभावें करीने पण (पूर्णं के०) पूर्ण थयुं, अर्थात् तेणें करीने पण कांहिं नहिं. वली (इंद्रियदमैः के०) इंद्रियोना दमनें करीने पण (अलं के०) परिपूर्ण, अर्थात् तेणें करीने पण काहिं नहिं. वली (आप्तागमैः के०) सूत्रसिद्धांतना पठनें करीने पण (पर्याप्तं के०)

पूर्ण थयुं. अर्थात्, तेणें करीनें पण काहिं नहिं. त्यारें (तु के०) वली (किं के०) शुं करवुं? के जे थकी ते पूर्वोक्त सर्व सफल थाय? तो के (गुरुप्रीत्या के०) अत्यंत प्रीतियें करीने (एकं के०) एक, (गुरोः के०) गुरुनुं (शासनं के०) शासन जे शीखामणरूप वचन तेने (कुरु के०) हे भव्यजीव! तुं कर. अर्थात् गुरुनीज शुद्ध आज्ञानें पालन कर. ते गुरुनुं शासन कहेवुं छे? तो के (भवनाशनं के०) संसारभ्रमणने नाश करनारुं छे. कारण के (येन के०) जे (एकेन के०) एक गुरुशासन (विना के०) विना (सर्वे के०) सर्व (गुणाः के०) पूर्वोक्त ध्यानादिक गुणो पण (स्वार्थाय के०) पोतपोतानां फल साधनने माटें (अलं न के०) समर्थ थता नथी. अर्थात् सर्व निष्फल थाय छे. केनी पठें? तो के (विनाथबलवत् के०) सैन्याधिपति रहित सैन्यनी पठें. अर्थात् जेम निर्नायक सैन्य, जयसाधक थतुं नथी, तेम गुरुनी आज्ञा विना क्रियानुष्ठानादिक सर्व, निःफल थाय छे. गोशालक, जमालि कुलबालक निह्नवादिकनी पठें. आहीं गोशालकादिकनो दृष्टांत लेवो. माटें एवी रीतें जाणीने गुरुनी आज्ञा सहितें सर्व कर्म, करवा योग्य छे. तेथी हे भव्यप्राणी! ए प्रकारें जाणी मनमां विवेक लावीने श्रीगुरुसेवा करवी. गुरुसेवा करनार एवा सुजननें जे पुण्य इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥ १६ ॥ ए गुरुसेवा नामा बीजुं द्वार संपूर्ण थयुं ॥ २ ॥

टीकाः— अथगुरोराज्ञायाः माहात्म्यमाह ॥ किंध्यानेनेति ॥ भो भव्याः! गुरोः आज्ञां विना चेत् ध्यानं कृतं? तर्हि तेन ध्यानेन किं। अपितु न किमपि फलं। पुनः अशेषविषयत्यागैर्भवतु पूर्णं जातं। समस्तविषयाणांत्यागे पि किमपि म फलं। पुनः गुरोराज्ञां विना तपोभिः कृतं। षष्ठाष्टमदशमद्वादशादि पक्षक्षपणमासक्षपणसिंहनिक्रीडितादिभिस्तपोभिः कृतं संपूर्णं जातं॥ अर्थान्न किमपि। पुनर्भावनया शुभभावेनापि पूर्णं जातं। पुनः इंद्रियदमैः पंचेंद्रियाणां दमनैः कृत्वा अलं पूर्णं जातं। पुनः आप्तागमैः सूत्रसिद्धांतपठनैरपि पर्याप्तं पूर्णं जातं। तर्हि किं? किंतु गुरुप्रीत्या गरिष्टवात्सल्येन अधिकादरेण एकं गुरोः शासनं कुरु। गुरोरेवाज्ञां शुद्धां पालय। किंभूतं गुरोः शासनं? भवनाशनं। संसारपरिभ्रमणवारकं। यतो येनैकेन गुरोः शासनेन आज्ञया विना सर्व्वेऽपि गुणाः पूर्वोक्ता ध्यानादयः स्वार्थाय स्वस्वफलसाधनाय अलं न। समर्था न। किंतु निःफला इत्यर्थः॥

किंवत्? विनाथबलवत्। निर्नायकसैन्यवत् यथा निर्नायकं सैन्यं जयसाधकं न तथा गुरोराज्ञां विना क्रियानुष्ठानादिकं सर्वं निःफलं। गोशालक जमालिकुलबालक निह्नवादिवत्॥ एवं ज्ञात्वा गुर्वाज्ञासहितं सर्वं कर्त्तव्यं॥ यदुक्तं श्रीकल्पसूत्रे॥ असणवा. आहारेत्तए॥ उच्चार पासवणं वा परिठ्ठवेत्तए॥ सज्झायं वा करित्तए॥ धम्मजागरियं वा जागरित्तए॥ णो से कप्पइ अणापुछित्ता॥ निरकू इछेजा अन्नायरं तवो कम्मं उवसंपजित्ताणं विहरित्तए॥ तं चेव सव्वं नणियव्वं॥ नो नव्यप्राणिन्! एवं ज्ञात्वा मनसि विवेकमानीय श्रीगुरुसेवा कर्त्तव्या॥ कुर्व्वतां च सतां यत्पुण्य मुत्पद्यते, तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु॥ इति॥ १६॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिना॥ सूरिणा विहितायां तु, गुरुसेवन प्रक्रमः॥ २॥ इति गुरुसेवनप्रक्रमः॥ २॥

नाषाकाव्यः—वस्तुछंद॥ ध्यान धारन ध्यान धारन, विषे सुख त्याग॥ करुना रस आदरन, नूमिशयन इंद्रिय निरोधन॥ व्रत संयम दान तप नगति नाव सिद्धंत सोधन॥ ए सब काम न आवही, ज्यों बिनु नायक सैन॥ सिवसुख हेत बनारसी, करु प्रतीत गुरु बैन॥ १६॥

कथाः—इहां गुरु सेवानो करनार मोक्षे जाय. तेनी उपर श्रीगौतमस्वामीनी कथा कहे बेः—एकदा प्रस्तावे श्रीवर्द्धमान स्वामीयें व्याख्यान करतां करतां उपदेश दीधो, जे अष्टापदपर्वत उपर नरतचक्रवर्त्तीनी करावेली मानोपेत चोवीश तीर्थंकरनी प्रतिमाउ बे, तेने जे पोतानी लब्धिना बलें जइ वांदे, ते प्राणी तद्भवें मोक्षे जाय. ते सांनली श्रीगौतम स्वामी पोतानें मोक्ष जावानो निर्णय करवा माटें प्रनुनी आज्ञा मागी अष्टापद नणी चाल्या. तेमने कौडिन्यादिक तापसोयें आवता दीठा, तेवारें तापसो, मांहोमांहे कहेवा लाग्या के आ महोटा मुनीश्वर आवे बे, पण योजन प्रमाण पावडी शी रीतें चडी सकशे? अमें महा तपस्याना करनार पांचशें एक जण ते एक उपवास करी सूके पत्रे पारणुं करी एक पावडी चढया, पण आगल जइ शकता नथी. एवो विचार करे बे, एवामां गौतम स्वामी चढया. यावत् दर्शन करी पाढा फरया, तेवारें श्रीगौतमस्वामी पासेंथी सर्व पन्नरशें ने त्रण तापसोयें दीक्षा लीधी, शासनदेवीयें साधुनो वेश आणी आप्यो, पढी मार्गें आवतां सर्वेने पूबयुं के तमारे आजे शेनुं

पारणुं करवुं छे? तेवारें तापस बोल्या के खीर खांम घृतनुं पारणुं करीयें तो सारुं. पछी गौतमस्वामी पात्रुं नरी वहोरी लाव्या. अक्षीणमहानिशि लब्धिने बलें करी सर्व तापसोने पारणुं कराव्युं. एवो चमत्कार देखी पोताना मनमांहे गुरुतत्त्वनी नावना नावतां नावतां पांचशेने एक तापसोने केवलज्ञान उपनुं अने पांचशे ने एकने समोसरण देखतां केवलज्ञान उपनुं. तथा पांचशे ते एकने श्रीवीरनी वाणी सांजलतां केवलज्ञान उपनुं. ते सर्व १५०३ तापस केवली थया थका श्रीवीरने वांदीने केवलीनी सन्नामां बेठा, ते जोइ श्रीगौतमस्वामीने शंका उपनी जे आजना दीक्षितने केवलज्ञान उपनुं हशे?. नगवान् बोल्या के केवल ज्ञान उपनुं छे, अने हुं निर्वाण पामीश तेवारें तुऊने केवलज्ञान उपजशे. ते सांनली श्रीगौतम स्वामी संतोष पाम्या. अनुक्रमें केवल ज्ञान पामी मोक्ष सुख पाम्या. अने तापस पण मोक्ष सुख पाम्या. एवुं गुरु सेवानुं फल जाणी हे नव्यलोको! तमें धर्मना दायक एवा गुरुनी सेवा करो, के जे थकी संसार तरो ॥ १६ ॥ इति गुरुसेवाधिकारे श्रीगौतमस्वामी कथा समाप्ता ॥

हवे चार श्लोकोयें करीनें जिनमत जे जिनोक्त सिद्धांत, तेनुं माहात्म्य कहे छे.

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ न देवं नादेवं न शुनगुरुमेवं
न कुगुरुम्, न धर्म्मं नाधर्म्मं न गुणपरिणद्धं न विगुण
म् ॥ न कृत्यं नाऽकृत्यं न हितमहितं नाऽपि निपुणम्,
विलोकंते लोकाजिनवचनचक्षुर्विरहिताः ॥ १७ ॥

अर्थः-(जिनवचन के०) जिनशास्त्र रूप (चक्षुः के०) चक्षु जे नेत्र तेणें करी (विरहिताः के०) रहित एवा (लोकाः के०) लोको जे छे, ते हवे कहेवाशे ते एवी वस्तुने (नविलोकंते के०) न देखे छे, अर्थात् नहिं जाणे छे. शुं शुं नथी जाणता? तो के (देवं के०) सर्वज्ञ, जितरागादि लक्षणोयें युक्त जे सुदेव, तेने न जाणे छे. वली ते (अदेवं के०) कुदेव एटले स्त्री, शस्त्र, अक्ष, सूत्रादि लक्षणोपेत जे कुदेव तेने पण (न के०) न जाणे छे. वली ते (एवं के०) ए प्रकारें (शुनगुरुं के०) सुगुरु जे छे तेने एटले शुद्धमार्गप्ररूपक एवा सुगुरुने (न के०) न जाणे छे. वली (कुगुरुं के०) पंचाचाररहित एटले उत्सूत्रप्ररूपक एवा कुगुरुने (न के०) न जाणे छे. तथा (ध

र्मं के०) धर्मने (न के०) नहिं जाणे ठे, तथा (अधर्मं के०) अधर्मने न जाणे ठे. अर्थात् धर्माधर्मना अंतरने ते पुरुष जाणता नथी. वली (गुणपरिणद्धं के०) गुणें करीने परिपूर्ण अर्थात् गुणवानने (न के०) न जाणे ठे, तथा (विगुणं के०) गुणरहित एटले निर्गुण तेंने (न के०) नहिं जाणे ठे. अर्थात् गुणवान् अने निर्गुण जनने समानज देखे ठे. वली (कृत्यं के०) करवा योग्य कार्य तेने (न के०) न जाणे ठे, तथा (अकृत्यं के०) जे करवाने अयोग्य कार्य तेनें (न के०) न जाणे ठे. अर्थात् कृत्याकृत्यविवेकने जाणे नहिं. वली (निपुणं के०) चातुर्य जेम रुडे प्रकारें होय तेमज (हितं के०) पोतानुं हित जे सुख तेनुं कारण, तेने (न के०) नहिं जाणे ठे. तथा (अहितमपि के०) अशुननुं जे कारण तेनें पण (न के०) नहिं जाणे ठे. अर्थात् ते लोको जिनवचन श्रवण विना शुनाशुनना अंतरने जाणता नथी. इहांविलोकंते ए क्रियापद सर्व नकारनी साथें लगाडवुं. माटें हे नव्यजीव! ए प्रकारें जाणीनें श्रीजिनप्रणीत सिद्धांतोनुं श्रवण करवुं. जिनवचन श्रवण करता एवा सुजनने जे पुण्य। इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥१७॥

टीकाः—अथ चतुर्निर्वृत्तेर्जिनमतस्य जिनोक्तसिद्धांतस्य च माहात्म्यमाह ॥ न देवमिति ॥ लोकाः जिनवचनमेव चक्षुर्नेत्रं तेन रहिताः संतः एतानि वस्तूनि न विलोकंते। न पश्यंति। न जानंतीत्यर्थः ॥ किं किं न विलोकंते। ते देवं सर्वज्ञोजितरागादिरित्यादिलक्षणोपेतं न विलोकंते। पुनः अदेवं कुदेवं ये स्त्रीशस्त्राक्षसूत्रादतिलक्षणोपेतं कुदेवं न विलोकंते। पुनः शुनगुरुं सुगुरुं शुद्धप्ररूपकं गुरुं न जानंति। पुनः कुगुरुं पंचाचाररहितं उत्सूत्रप्ररूपकं न जानंति। पुनः धर्म्मं अधर्म्मं च न जानंति। धर्माधर्मयोरंतरं न विदंतीत्यर्थः ॥ पुनः गुणपरिणद्धं गुणैः परिपूर्णं गुणवंतं न जानंति ॥ पुनर्विगुणं गुणरहितं निर्गुणं च न जानंति। गुणवंतं निर्गुणं च सदृशमेव पश्यंति। पुनः कृत्यं करणीयं कर्त्तुं योग्यं वस्तु न जानंति। पुनः अकृत्यं कर्तुमनुचितं अयोग्यं च न जानंति। कृत्याऽकृत्य विवेकं न जानंतीत्यर्थः॥ पुनर्निपुणं सचातुर्यं च सम्यग् यथास्यात्तथा आत्मनोहितं सुखकारणमपि न जानंति। पुनः अहितं च अशुनकारणं च न जानंति। जिनवचनश्रवणं विना शुनाऽशुनयोरंतरं न जानंति ॥ यतः ॥ सुच्चा जाणइ कल्लाणं, सुच्चा जाणइ पावगं ॥ उनयंपि जाणई सुच्चा, जं सेयं तं समायरे ॥ १ ॥ नो नव्यप्राणिन् !

एवं ज्ञात्वा श्रीजिनप्रणीतसिद्धांतानां श्रवणं कर्त्तव्यं । कुर्वतां च सतां य त्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तृरंतु ॥१७॥

नाषाकाव्यः— कुंमलियाबंद ॥ देव अदेवहि नही लखैं, सुगुरु कुगुरु नहिं सूऊ ॥ धर्म अधर्म गिनैं नही, कर्म अकर्म न बूज ॥ कर्म अकर्म न बूज गूऊ, गुन अगुन न जानहि ॥ हित अनहिंत न सदहै, निपुन मूरख नहि मानहि ॥ कहत बनारसि ज्ञान, दृष्टि नहि अंध अषेवहि ॥ जैन बचन दृग हीन, लखैं नहि देव अदेवहि ॥१७॥

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्ताष्टकम् ॥ मानुष्यं विफलं वदंति हृदयं व्यर्थं वृथा श्रोत्रयो, र्निर्माणं गुणदोषनेदकलनां तेषामसं नाविनीम् ॥ डुर्वारं नरकांधकूपपतनं मुक्तिं बुधाडर्लनाम्, सार्वज्ञः समयोदयारसमयोयेषां न कर्णातिथिः ॥ १८ ॥

अर्थः—(सार्वज्ञः के०) सर्वज्ञदेवप्रणीत अर्थात् श्रीवीतरागदेवें कहेलो एवो (समयः के०) आगम, (येषां के०) जे पुरुषोने (कर्णातिथिः के०) कर्णगोचर (न के०) नथी थातो, अर्थात् जेणें जिनागम श्रवण कर्यो नथी, हवे ते कहेवो जिनागम छे? तो के (दयारसमयः के०) कृपा जे तेज छे रस जेमां एवो छे. हवे ते जिनागमश्रवण न करनारा जे पुरुषो (तेषां के०) ते पुरुषोनुं (मानुष्यं के०) मनुष्यजन्म जे छे तेने (बुधाः के०) जे पंमितो छे, ते (विफलं के०) निःफल (वदंति के०) कहे छे. अर्थात् पंमि तो ते पुरुषोने मनुष्यजन्म प्राप्त थयुं, तो पण न थया जेवुं कहे छे. तथा ते पुरुषोनुं (हृदयं के०) चित्त तेने (व्यर्थं के०) निरर्थक अर्थात् शून्य क हे छे. वली ते पुरुषोने (श्रोत्रयोः के०) बेहु काननुं (निर्माणं के०) निर्माण जे करवुं तेने (वृथा के०) निःफल कहे छे. तथा तेमने (गुण के०) गुणो तथा (दोष के०) दोषो तेनो जे (नेद के०) नेद तेनी (कलनां के०) विचार णा जे छे तेने (असंनाविनीं के०) डुर्जन एवी कहे छे, तथा ते पुरुषोनुं (नरकां धकूप के०) नरक तेज अंधकूप एटले घांस अने वेलाउयें आछादित कूप तेने विषे (पतनं के०) पडवुं, ते (डुर्वारं के०) वारवाने अशक्य कहे छे. अने ते पुरुषोने (मुक्तिं के०) मुक्ति ते (डुर्लनां के०) डुर्लन कहे छे. अर्थात् जिनागम श्रवण विना जीवो मोक्षने पामता नथी. ए कारण मा

टें सर्वजनोयें जिनागमगुं श्रवण करवुं. कदाचित् नाव न होय तो पण जिनागमश्रवण हितने माटें थाय ढे. आ श्लोकमां वदंति ए क्रियापद स र्वे पदोने जोडवुं. ए प्रकारें जाणीने जिनवचन श्रवण करवुं: करनार एवा जे सुजनो तेमने जे पुण्य। इत्यादिक पूर्ववत् जाणवुं ॥ १० ॥

टीकाः—मानुष्यमिति। नो नव्यप्राणिन्! सार्वज्ञः सर्वज्ञप्रणीतः श्रीवीतराग देवेन नाषितः समय आगमो येषां पुरुषाणां कर्णातिथिः कर्णगोचरो न जातोये ने श्रुतः। किंविशिष्टः समयः दयारसमयः कृपाएव रसः स्वरूपं यस्य।बुधाः पंमितास्तेषां मनुष्याणां नानुष्यं मनुष्यजन्म विफलं निःफलं वदंति। लब्ध मप्यलब्धं कथयंति। तेषां हृदयं चित्तं व्यर्थं निरर्थकं शून्यं वदंति। पुनस्ते षां श्रोत्रयोः कर्णयोर्निर्माणं करणं वृथा निःफलं वदंति। पुनस्तेषां गु णानां दोषाणां च योनेदो अंतरं तस्य कलनां विचारणां असंनाविनीं अ र्थात् डुर्लनां वदंति। पुनः नरकमेव अंधकूपस्तृणवल्लीवितानाच्चादितः कूपस्तत्र पतनं डुर्वारं वारयितुमशक्यं कथयंति। पुनस्तेषां मुक्तिं डुर्लनां कथयंति। जिनागमश्रवणं विना मुक्तिं मोक्षं न प्राप्नुवंति। अतः श्रीजि नागमश्रवणमेव कर्त्तव्यं। नावं विनाऽपि श्रुतं हिताय नवंति ॥ यथा ॥ द्वेषेऽपि बोधकवचः श्रवणं विधाय, स्याद्रौहिणेय इव जंतुरुदारलानः ॥ क्वाथोऽप्रियोऽपि सरुजां सुखदो रविर्वा, संतापकोऽपि जगदंगनृतां हिताय ॥१॥ किं तद्वचः? यतः ॥ अणिमिस नयणामण क, ऊ साहणाः पुप्फदाम अमिलाणा ॥ चनरंगुलेण नूमिं, न विवंति सुरा जिणा बिंती ॥ १ ॥ इति ज्ञा त्वा जिनवचनस्य श्रवणं कर्त्तव्यं। कुर्वतां च संतां यत् पुण्यमुत्पद्यते तत्पु ण्यप्रसादात् उत्तरोत्तरमांगलिक्यमाला विस्तरंतु ॥ १० ॥

नाषाकाव्यः—मात्रात्मककविता ॥ तांको मनुज जनम सब निःफल, निःफल मन बिःफल जुग कान ॥ गुन अरु दोष विचार नेद विधि, तांहि महा डुर्लन्न यह ज्ञान ॥ ताकों सुगम नरक डुःख संकट, आगम पंथ पदइ निरवान ॥ जिनमत बचन दया रस गर्नित, जे नहि सुनत सिद्धांत बखान ॥ १० ॥

कथाः—एनी उपर रोहणीया चोरनो दृष्टांत कहे ढेः— राजगृही नगरीने पासवर्ती वैनारगिरि पर्वतनी गुफामांहे लोहखरो चोर वसे ढे, ते सर्वदा पाप कर्मनो करनार, नगरमांहे चोरी करे, सात व्यसन सेवे, चोरीनो विधि सं पूर्ण जाणे, धर्म उपर लगारमात्र वांढा नही, तेने रोहिणिनक्षत्रने योगें

पुत्र थयो, तेनुं नाम रोहणीयो एवुं स्थाप्युं. अनुक्रमें यौवनावस्था पाम्यो. तेवारें अनेक विद्याउनो अभ्यास कीधो. सर्व कलाउमां निपुण थयो. एकदा तेना पिताने मरणनुं कष्ट आव्युं, तेवारें पुत्रने कहेवा लाग्यो के हे वत्स! तुं म्हारुं वचन अंगीकार करें, तो हुं मरुं! जे माटे तुं केवारें पण श्री महावीर देवनी वाणी सांजलीश मां. रोहणीये तेमज कबूलकर्युं. तेवारें ते डुखरो मरण पाम्यो तेनां मृतकार्य करी नगरमां चोरी करतो फख्या करे.

हवे एकदा श्रीमहावीरस्वामी विहार करता तिहां समोसख्या, देवतायें समोसरणनी रचना करी, ते समोसरणमां बेशी जगवान् देशना देवा लाग्या, ते समयें रोहणीयो पण पर्वतमांथी निकली राजगृही नगरी तरफ जातां मार्गमां समोसरण देखी चिंतववा लाग्यो जे ए मार्गे जतां महाराथी वीरवचन जरूर संजलाशे, तो पितानी आज्ञानो जंग थाशे? अने बीजे मार्गें जाइश तो वखत घणो लागशे. तेम गया विना पण चालशे नही. तेथी बे कानमां आंगली घाली वेहु पगरखां हाथमां लइ एकदम दोड्यो अने समोसरण नजीक आव्यो, तेवारें पगमां कांटो लागो, तेने काहाडवा माटे कानमांथी आंगली काढीने नीचो नम्यो, ते वखत सर्व संदेहनी हरनारी अमृततुल्य एवी श्रीवीरनी वाणी श्रवणें सांजली. ते वाणीमां देवताना स्वरूपनुं वर्णन ते समय आवेलुं हतुं, ते जेम केः— ॥ गाथा ॥ केसट्ठि मंस नह रो, म रुहिर वस चम्म मुत्त पुरिसेहिं ॥ रहिया निम्मल देहा, सुगंध नीसास गयलेवा ॥ १ ॥ अंतमुहुत्तेणंचिय, पज्जत्ता तरुणपुरिस संकासा ॥ सव्वंग जूसण धरा, अजरा निरुया समा देवा ॥ २ ॥ अणिमिस नयणा मण क, ज्ज साहणा पुप्फ दाम अमिलाणा ॥ चउरंगुलेण जूमिं, न छिवंति सुरा जिणा बिंति ॥ ३ ॥ कांटो काहाडतां ए गाथाउ सांजलीने ते वचनने घणां ए वीसारवा मांड्यां, पण कोइ रीतें वीसरे नही पछी गाममां जइ चोरी करी लोकोने संतापीने चोर स्वस्थानकें गयो. एकदा तिहांनी सर्व प्रजायें राजानी आगल विनति करी के स्वामी! आ गाममां चोरनी आगल अमाराथी रही शकाय नही? ते सांजली राजायें सेवकोने बोलावी कह्युं के अरे! तमें चोरनो निग्रह केम नथी करता !!! ते सांजली सेवको बोल्या के स्वामी! अमें तो घणाय प्रपंच कख्या, परंतु ए चोर क्षणमां देखाय अने क्षणमां न देखाय, तेथी अमारा हाथमांज आ

वतो नथी. तेवारें राजायें अनयकुमारने कह्युं. अनयकुमारें कोटवालने कह्युं के नगरना दरवाजामां कोइ नवीन माणस प्रवेश करे, अथवा बाहिर नीकले, तो उलखीने जवा देजो. कोटवालें पण गुप्त पणें दरवाजे रही चोकसी करतां एकदा रात्रिने वखत रोहणीश्राने नगरमां प्रवेश करतां अंगित आकारें चोर जाणीने पकड्यो. बांधीनें राजा आगल आण्यो. राजायें अनयकुमारने पूछयुं के एने कहेवी शिक्षा करीयें ! तेवारें कुमरें कह्युं के चोरेली वस्तु हाथ लाग्या विना शिक्षा थइ शके नही, राजायें चोरने पूछयुं के तुं क्या गामनो रहेवासी छो अने तहारुं नाम शुं छे ? तथा धंधो शुं छे ? ते कहे. चोर बोल्यो महारुं नाम डुर्गचंद्र छे जातें कुणबी छुं अने शालिग्राममां रहुं छुं, कोइ काम विशेषें आहीं आव्यो छुं. आवतां असुर थइ तेथी तलारें मने पकड्यो. ते सांनली राजायें प्रछन्नपणे ते वातनो निश्चय करवा माटे शालीग्रामें माणस मोकल्यो, पण चोरें ते ग्रामनां सर्व माणसो साथें प्रथमथी संकेत करेलो हतो माटे तिहांना रहेवासीयें तेमज तेनुं नाम गाम सर्व ते माणसने कही संनलाव्युं. तेवारें माणसें फरी आवी राजा आगल सर्व समाचार कह्या, ते सांनली अनयकुमारें विचार्युं जे ए चोर छे पण महाकपटी छे. पछी तेने दिलासी आपी.पोतानी पासें राख्यो.

जेवारें अनयकुमार सामायिक पोसह प्रमुख करे, तेवारें ते पण तेमज अनयकुमारनी साथें श्रावकनी करणी करे, तेना मनोगत नाव कोइ जाणे नही ॥ यतः ॥ रामउवाच ॥ पश्य लक्ष्मण पंपायां, बकः परमधार्मिकः ॥ शनैश्च मुंचते पादौ, जीवानामनुकंपया ॥ १ ॥ मत्स्यउवाच ॥ सहवास्येवजानाति, सहवासिविचेष्टितम् ॥ प्रशंस्यते च रामेण, तेनाहं नकुलीकृतः ॥ २ ॥ मुखथी मिष्टवचन बोले अने संसारमां तो मिष्टवचन वल्लन लागे तेथी कोयलनी पेठें अवगुण ढंकाइ जाय॥ यतः ॥ पिकस्तावत् कृष्णः, परमरुणया पश्यति दृशा ॥ परापत्यद्वेषी स्वसुतमपिनो,पालयति यः ॥ तथाऽप्येषोऽमीषां, सकलजगतां वल्लनतमो ॥ न दोषा गण्यते, मधुरवचनानां क्वचिदपि ॥ १ ॥

हवे अनयकुमारें एक आवास कराव्यो, तेमां विचित्र चित्रामण कराव्यां, नानाप्रकारना चंडुवा बंधाव्या, आवासनी उपर अत्यंत सुंदर ध्वजाउ बंधावी मांहे सेलारस, अगरचंदनद्देपन कराव्यां, धूपपरिमल विस्तार्या, द्वारमां तोरण बंधाव्यां, अपूर्व शय्या पथरावी, फूल पगर नरा

थ्या, तथा शोलवर्षना वयवाली अत्यंत रूपवंत एवी आठ गणिकाउने शोल सणगार करावीने तेना हाथमां मृदंग आपी तिहां उभी राखीयो. पछी ते आवासमां अनयकुमारें ते चोरने साधर्मीनाइना नातांथी जमवा बोला व्यो. जमाडतां जमाडतां वच्चमां चंद्रहास्य मदिरानुं पान कराव्युं, तेथी वि व्हल थयो. तेवारें ते आवासनी शय्या उपर तेने सुवाडी मूक्यो. चार घडी वीत्या पछी सचेतन थयो. तेवारें ते गणिकाउ "जयजयनंदा जयजयनदा" एवा शब्दो बोलती थकी बत्रीशबद्ध नाटक करवा लागी. अने ते चोरने पूछ्युं के तमें शी पुण्याइ कधी के जेथकी अमारा स्वामी थया ? अने दे वलोकनी पदवी पाम्या ? ते वखतें तिहां रोहणीयो चोर विचारवा लाग्यो जे आ ते शी वात ! जे में तो जन्मांतरने विषे कांइ पण पुण्य कर्युं नथी, तो हुं देवता शी रीते थयो ! वली विचार्युं जे वीरवचन तो एवुं छे के दे वता होय तेने तो 'अणिमिसनयणा' इत्यादि चिन्ह होय, ते तो ए देवां गनाउमां देखातां नथी. माटें देव श्यो ! आ सर्व प्रपंच अनयकुमारें कर्यो हशे ! एम जाणी विचारे छे के हवे आपणे पण इहां कपट चावज नजवो. कपटकथा करवी ! एम विचारीने कहेवा लाग्यो के हे स्त्रीयो ! में पाछले न वें दान, पुण्य, धर्म, सात व्यसन रहित थकां नियम, व्रत, जीर्णोद्धारादि पुण्यकरणी करेली छे तेथी तमारो स्वामी हुं थयो छुं ! तेवारें देवांगनाने रूपें वेश्याउ बोली के मनुष्यनवमां कांइ पाप कर्युं होय तो ते पण अमने कहो. तेवारें रोहणीयो बोल्यो के में मनुष्यनवें केवल धर्मज कीधो छे, पण पाप कर्म कोइ कीधुं नथी. ए वात सर्व प्रछन्नपणे सांनलीने अनयकुमारें जाण्युं जे आ महोटो बुद्धिमान् छे. एना जेवा बुद्धिमान् तो कोइ विरलाज हशे ! प छी श्रेणिकराजाने पूछीने अनयकुमारें ते चोरने विसर्जन कर्यो, रोहणीयो पण घेर जइ विचारवा लाग्यो के मरवानुं कष्ट महोटुं हतुं तेथी हुं उग रत नही, परंतु में पगमांथी कांटा काढतां जे श्रीवीतरागनी थोडी शी वा णी सांनली ते पण मुने गुणकारी थइ, अणवांछतां थकां पण जिनवाणी में सांनली ते मुने आडी आवी. माटें वीतरागने शरणे जवुं तेज उत्तम छे. पछी तिहांथकी श्रीवर्द्धमानस्वामी पासें आवी नमस्कार करी कहेवा लाग्यो के हे प्रनो ! तमारी थोडी शी वाणी मने नासतां नासतां श्रवणें पडी, तेथी हुं उगर्यो. माटें हवे हे महाराज ! कृपा करी महारा बेहु

जव सुधरे, तेवो उपाय कहो. तेवारें परमेश्वरें तेने धर्मोपदेश कस्यो, ते सांभ ली चारित्र लेवा माटें सावधान थयो. पछी जगवाननें वीनव्यो के हे महारा राज! हुं श्रेणिकराजाने मली आवीने पछी चारित्र लइश! एम कही राजानी पासें आवी कहेवा लाग्यो के हे स्वामी! हुं रोहणीयो नामक चोर, महा पापी छउं, परंतु श्रीवीरनां वचन सांजलतां हुं उगस्यो छुं. हवे मुने चारित्र लेवानो जाव छे, माटें वैज्ञारगिरिनी गुफामांहे में चोरी लावेलुं धन राखेलुं छे, ते तमें महारी साथें तिहां पधारीने सर्वप्रजाने ओलखावी ओलखावीने जे जे ध णीनुं होय ते तेधणीने तमें हवाले करो, राजायें पण तेमज कस्युं. सर्व प्रजाने जे नुं जेनुं धन हतुं तेने तेने ओलखावी ओलखावीने दीधुं. पछी रोहणीये स्वकुटुंब प्रतिबोधी तेमनी आज्ञा पामी चारित्र लीधुं अंत्यावस्थायें अणसण करी देवलो कें देवता थयो. ए रोहणियानी पेरेंजे जिनवचनने सद्दहे, ते सुखने पामे॥१८॥

पीयूषं विषवज्जलं ज्वलनवत्तेजस्तमःस्तोमव, न्मित्रं
शात्रववत्स्त्रजं जुजगवत् चिंतामणिं लोष्ठवत्॥ज्यो
त्स्नां ग्रीष्मजघर्मवत् स मनुते कारुण्यपण्यापणम्,
जैनेंद्रं मतमन्यदर्शनसमं योऽदुर्मतिर्मन्यते ॥ १९ ॥

अर्थः-(यः के०) जे (डुर्मतिः के०) मूर्ख पुरुष, (जैनेंद्रमतं के०) जिनेंद्रशासन, तेनें (अन्यदर्शनसमं के०) अन्यदर्शन जे बौद्ध, नैयायि क, सांख्य, वैशेषिक, जैमिनीयादिक दर्शनो तेनीसमान जो (मन्यते के०) माने छे, तो (सः के०) ते मूर्ख पुरुष, केवुं माने छे? तो के (पीयूषं के०) अमृत जे तेने (विषवत् के०) विष समान (मनुते के०) माने छे. तथा ते मूर्ख पुरुष, (जलं के०) परमशीतल जल जे तेने (ज्वलनवत् के०) अ ग्निसमान माने छे. तथा ते मूर्ख पुरुष, (तेजः के०) तेज जे तेने (तमः स्तोमवत् के०) अंधकार समूहनी पेरें माने छे. तथा वली ते मूर्ख पुरुष (मित्रं के०) सखाइने (शात्रववत् के०) वैरीसमान माने छे. वली ते मू र्खपुरुष (स्रजं के०) पुष्पमालाने (जुजगवत् के०) सर्पसमान माने छे, वली ते मूर्ख पुरुष, (चिंतामणि के०) चिंतामणि रत्नने (लोष्ठवत् के०) पाषाण समान माने छे, वली ते मूर्ख पुरुष, (ज्योत्स्नां के०) चंद्रकांति ने (ग्रीष्मजघर्मवत् के०) उष्णकालना तडका जेवी माने छे. आ ठेकाणें

अमृतादि सरखुं जिनमत जाणवुं, अने विषादि समान अन्यदर्शन जाणवां. हवे ते जैनेंद्रमत कहेवुं ले? तो के कारुण्य के०) दयापणुं ते रूप (पण्य के०) वेचवाने लायक वस्तु तेनुं (आपणं के०) हाट ले. आहिं मनुते ए क्रियापद सर्व ठेकाणें योजन करवुं. एवी रीतें मानीने श्रीजिनमत अंगीकार करवुं. अंगीकार करनारने जे पुण्य। इत्यादि पूर्ववत्॥ १९॥

टीकाः—पीयूषमिति ॥ योऽल्पमतिर्मूर्खः पुमान् जैनेंद्रमतं श्रीजिनशासनं अन्यदर्शनसमं। अन्यदर्शनैर्बौद्ध नैयायिक सांख्य वैशेषिक जैमिनीयादिभिः समं सदृशं मन्यते गणयति स मूर्खः पीयूषं अमृतं विषवत् विषेण तुल्यं मनुते गणयति। पुनर्जलं परमशीतलं पानीयं ज्वलनवत् अग्नितुल्यं गणयति। पुनः तेजः उद्योतं तमःस्तोमवत् अंधकारपुंजवत् मनुते। पुनर्मित्रं सखायं शात्रववत् वैरिसदृशं मनुते जानाति। पुनः स्रजं पुष्पमालां भुजगवत् सर्प्पतुल्यां गणयति। पुनः स चिंतामणिं लोष्ठवत् पाषाणसदृशं गणयति। पुनः स ज्योत्स्नां कौमुदीं चंद्रकांतिं ग्रीष्मजघर्मवत् उष्णकाल आतपवत् मनुते। अत्र पीयूषादिसमं जिनदर्शनं। विषादिसदृशान्यदर्शनानीत्युपनयः। किंभूतं जैनेंद्रमतं कारुण्यपण्यापणं। दयारूपक्रय्यस्य हट्टं॥ एवं मत्वा श्रीजिनमतमेवांगीकर्त्तव्यं कुर्वतां च सतां यत्। शेषं प्राग्वत्॥ १९॥

भाषाकाव्यः—छप्पय॥ अमृत कहे विष कहे, नीर कहे पावक मानें॥ तेज तिमिर सम गिनै, मित्त कहे शत्रु बखानै॥ पुहपमाल कहे नाग, रतन पथ्थर सम तुल्लै॥ चंद्र किरन आतप सरूप, इह भांति जु लुल्लै॥ करुना निधान अमलान गुन, प्रगट बनारसि जैन मत॥ पर मत समान जो मन धरत, सो अजान मूरख अपत॥ १९॥

धर्म्मं जागरयत्यघं विघटयत्युत्थापयत्युत्पथम्, भि
त्ते मत्सरमुच्छिनत्ति कुनयं मथ्नाति मिथ्यामतिम्॥
वैराग्यं वितनोति पुष्यति कृपां मुष्णाति तृष्णां च य,
त्तज्जैनं मतमर्चति प्रथयति ध्यायत्यधीते कृती॥२०॥

अर्थः—(कृती के०) पंमित पुरुष (यत् के०) जे (जैनंमतं के०) जैनेंद्रमत जे जिनशासन, एटले जिनप्रवचन तेने (अर्चति के०) पूजे

बे, (प्रथयति के०) विस्तारे बे. वळी (ध्यायति के०) ध्यान करे बे. एटले चिंतवन करे बे. वळी (अधीते के०) पठन करे बे. (तत् के०) तो ते पूर्वोक्तरीतें करेलुं एवुं जिनशासन शुं करे बे ? तो के (धर्मं के०) धर्मने (जागरयति के०) जागरण जे उद्दीपन तेने करे बे. वळी (अघं के०) पापजे तेने (विघटयति के०) दूर करे बे. वळी (उत्पथं के०) उन्मार्ग जे अनाचार तेने (उत्थापयति के०) निवारण करे बे. तथा (मत्सरं के०) गुणी पुरुषोने विषे द्वेषभावने (भिन्ते के०) नाश करे बे. वळी (कुनयं के०) कुत्सित नय जे अन्याय, तेने (छिनत्ति के०) उच्छेद करे बे. वळी (मिथ्यामतिं के०) कूटबुद्धि जे तेने (मथ्नाति के०) सर्वथा दूर करे बे. वळी (वैराग्यं के०) वैराग्यने (वितनोति के०) विस्तार करे बे. वळी (कृपां के०) दयाने (पुष्यति के०) पोषण करे बे. (च के०) वळी (तृष्णां के०) स्पृहा एटले लोभने (मुष्णाति के०) टाळे बे. अर्थात् जेणें जिनमत आराधन कर्युं, तेणें पूर्वोक्त सर्व वातो कर्यां, एम जाणवुं. ए प्रकारें जाणी ने श्रीजिनमत जे जिनप्रणीत सिद्धांत तेनुं आराधन करवुं. आराधन करनारने जे पुण्य थाय। इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥ २० ॥ ए त्रीजो जिनमत प्रक्रम थयो ॥ ३ ॥

टीकाः—धर्म्ममिति ॥ कृती पंडितः जैनं मतं जैनेंद्रमतं श्रीजिनशासनं जिनोक्तप्रवचनं अर्चति पूजयति । पुनः प्रथयति विस्तारयति । पुनर्ध्यायति चिंतयति । पुनः अधीते पठति । तत् धर्म्मं जागरयति धर्म्मस्य जागरणं उद्दीपनं करोति । पुनः अघं पापं विघटयति दूरीकरोति । पुनः उत्पथं उन्मार्गं अनाचारं उत्थापयति निवारयति । पुनः मत्सरं गुणिषु द्वेषभावं भिन्ते भेदयति विनाशयति । पुनः कुनयं कुत्सितनयं अन्यायं छिनत्ति । पुनः मिथ्यामतिं मथ्नाति कूटबुद्धिं विलोड्य दूरीकरोति । पुनः वैराग्यं वितनोति विस्तारयति । पुनः कृपां दयां पुष्यति पोषयति । पुनः तृष्णां स्पृहां लोभं मुष्णाति निराकरोति । अर्थात् येन जिनमतमाराधितं तेन एतानि वस्तूनि कृतानीत्यर्थः ॥ इति ज्ञात्वा श्रीजिनमतं जिनप्रणीत सिद्धांतश्च सम्यगाराधनीयः ॥ आराधयतां च सतां यत्पुण्यं० ॥ २० ॥ इति ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिना ॥ विहितायां जिनमत,प्रक्रमः पूर्णतामितः ॥ ३ ॥ इति तृतीय जिनमतप्रस्तावः ॥ ३ ॥

नाषाकाव्यः—मदृरगंग छंद ॥ शुन्न धर्म विकासैं, पाप विनासैं, कुपथ उथा पन हार ॥ मिथ्या मत खंमैं, कुनय विहंमैं, मंमैं दया अपार ॥ तिस्ना मद मारैं, राग विमारैं, यह जिन आगम सार ॥ जो पूजैं ध्यावैं, पढें पढावैं, सो जगमांहि उदार ॥ २० ॥

हवे चार श्लोकोयें करीने संघनो महिमाने कहे छे.

रत्नानामिव रोहणक्षितिधरः खं तारकाणामिव, स्वर्गः क
ल्पमहीरुहामिव सरः पंकेरुहाणामिव ॥ पाथोधिः पयसा
मिवेंडुमहसां (शशीवं महसां) स्थानं गुणानामसा,वित्या
लोच्य विरच्यतां जगवतः संघस्य पूजाविधिः ॥ २१ ॥

अर्थः—हे जव्य जनो! (इति के०) आ प्रकारें (आलोच्य के०) जो इने अर्थात् विचार करीने (जगवतः के०) पूजन करवा योग्य एवा (संघस्य के०) संघ जे छे, तेनो (पूजाविधिः के०) पूजानो विधि, (विरच्यतां के०) करीयें, अर्थात् करो. हवे शा प्रकारें. विचार करीने? तो के, (असौ के०) आ साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध संघ जे छे, ते (गुणानां के०) ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने विनयादिक जे सर्व गुणो तेनुं (स्थानं के०) निवासस्थानक छे, केनी पेठें? तो के (रत्नानां के०) रत्नोनुं स्थानक (रोहणक्षितिधरः के०) रोहणाचलपर्वत (इव के०) जेम छे, तेम. तथा (खं के०) आकाश, ते (तारकाणां के०) ताराउनुं निवासस्थान (इव के०) जेम छे, तेम. तथा (कल्पमहीरुहां के०) कल्पवृक्षोनुं निवासस्थानक (स्वर्गः के०) स्वर्ग (इव के०) जेम छे, तेम. तथा (पंकेरुहाणां के०) कमलोनुं निवासस्थानक (सरः के०) तलाव (इव के०) जेम छे, तेम. वली (पाथोधिः के०) समुद्र जे छे, ते (पयसां के०) जलोनुं निवासस्थानक (इव के०) जेम छे, तेम. हवे ते जल केहवां छे? तो के (इंडुमहसां के०) चंद्रमा समान निर्मल छे. अथवा (शशीव महसां के०) शशीव महसां एवो पाठ जो होय तो,(महसां के०) तेजनुं निवास स्थानक (शशी के०) चंद्रमा (इव के०) जेम होय, तेम. अर्थात् पूर्वोक्त वस्तुउ जेम बीजी कहेली वस्तुउनुं निवास स्थानक छे, तेम आ श्री चतुर्विध संघ पण ज्ञान, दर्शन, चारित्रने रहेवानुं निवासस्थानक छे. आ

प्रकारें विचार करीने चतुर्विध संघनुं पूजन करवुं. एज नावार्थ डे. आहीं (स्थानं) ए पद, सर्वत्र योजन करवुं. माटें एम जाणीने श्रीसंघनी नक्ति करवा योग्य डे. अने ते नक्ति करवानुं जे पुण्य थाय । इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥ २१ ॥

टीकाः—अथ चतुर्निर्वृत्तेः संघस्य महिमानमाह ॥ रत्नानामिवेति ॥ नो नव्याः । इत्यालोच्य इति विचार्य्य नगवतः पूज्यस्य संघस्य पूजाविधिर्विरच्य तां क्रियतां । इतीति किं ? यतः असौ संघः साधु साध्वी श्रावक श्राविका रूपश्चतुर्विधसंघः गुणानां ज्ञान दर्शन चारित्र विनयादीनां स्थानं निवासः। कः केषा मिव ? रोहणक्षितिधरः रोहणश्चासौ क्षितिधरश्च पर्वतो रत्नानामिव । यथा रोहणाचलोरत्नानां स्थानं तथेत्यर्थः । पुनः खं आकाशं तारकाणामिव । पुनर्यथा स्वर्गः कल्पमहीरुहां कल्पवृक्षाणां स्थानं तथेत्यर्थः । पुनर्यथा सरस्तडागः पंकेरुहाणां कमलानां स्थानं तथा । पुनर्यथा पाथोधिः समुद्रः पयसां पानीयानां स्थानं तथा । किंनूतानां पयसां । इंडुमहसां इंडुवन्निर्मलानां । अथवा शशीव महसां इति पाठः। यथा शशी चंद्रो महसां तेजसां स्थानं तथाऽसौ संघो गुणानां स्थानं । अथ वा किंनूतानां गुणानां इंडुमहसां इंडुवत् महो एषां तानि इंडुमहांसि तेषां । एवं श्री चतुर्विधसंघः सर्वगुणानां स्थानं । इति ज्ञात्वा श्रीसंघस्य नक्तिः कार्या । कुर्वतां च सतां यत्पुण्यं०॥ २१ ॥

नाषाकाव्यः—कवित्त मात्रात्मक ॥ जैसे नन्नमंमल तारागन, रोहन सिखर रतनकी खान ॥ ज्यों सुरलोक नूरि कल्पडुम, ज्यों सुरवर अंबुज बन जान ॥ ज्यों समुड पूरन जल मंमित, ज्यों ससि बवि समूह सुखदानि ॥ तैसें संग सकल गुन मंदिर, सेवहुं नाव नगति मन आनि ॥ २१ ॥

यः संसारनिरासलालसमतिर्मुक्त्यर्थमुत्तिष्ठते, यं ती
र्थं कथयंति पावनतया येनाऽस्ति नाऽन्यः समः ॥ य
स्मै तीर्थपतिर्नमस्यति सतां यस्माबुनं जायते, स्फूर्त्ति
र्यस्य परा वसंति च गुणा यस्मिन्स संघोऽर्च्यतां॥२२॥

अर्थः—हे नव्यजनो ! तमोयें (सः के०) ते चतुर्विध संघ (अर्च्यतां के०) पूजाय. अर्थात् तमें चतुर्विध संघने पूजो. ते कहेवो संघ डे ? तो के (यः के०) जे संघ, (संसार के०) संसार तेनो (निरास के०) निराकरण एटले त्याग तेने विषे (लालसमतिः के०) इछावाली डे बुद्धि जेनी एवो बतो (मुक्त्यर्थं के०) मुक्तिना साधन माटे (उत्तिष्ठते के०) साव

धान थाय छे. तथा (यं के०) जे संघने (पावनतया के०) पवित्रपणायें करीने (तीर्थं के०) तीर्थभूत एवाने (कथयंति के०) कहे छे. तथा (येन के०) जे संघनी संघातें (समः के०) समान, (अन्यः के०) बीजो कोइ (नास्ति के०) नथी. वली (यस्मै के०) जे संघने (तीर्थपतिः के०) तीर्थंकर पोतें (नमस्यति के०) नमस्कार करे छे. एटले व्याख्या नावसरने विषे " नमोतित्थस्स " एवुं नणे छे. तथा (यस्मात् के०) जे संघथकी (सतां के०) सज्जनोनुं (शुनं के०) कल्याण (जायते के०) उत्पन्न थाय छे. (च के०) वली (यस्य के०) जे संघनी (स्फूर्त्तिः के०) महिमा (परा के०) उत्कृष्ट वर्त्ते छे. वली (यस्मिन् के०) जे संघने विषे (गुणाः के०) गांनीर्य, धैर्य, औदार्यादिक मूलोत्तर गुणो (वसंति के०) वसे छे. आ श्लोकमां सात विनक्तिनो अनुक्रमें समावेश करेलो छे. ते जेम के आरं नमां (यः) ए पद लइने (यस्मिन्) ए पद पर्यंत जोइ लेवुं. माटे ए प्र माणे जाणीने हे नव्यप्राणीयो ! मनमां विवेक लावीने श्रीसंघनी पूजा न क्ति करवी; ते पूजा नक्ति करनारने जे पुण्य । इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥२१॥

टीकाः– यः संसारेति ॥ नो नव्याः! नवद्भिः सः श्री चतुर्विधसंघो अ र्च्यतां पूज्यतां । सः कः ? यः संघः संसारनिरासलालसमतिः सन् सं सारस्य निरासे निराकरणे त्यागे लालसा इछा यस्या सा ईदृशी मति बुद्धि र्यस्य स ईदृशः सन् मुक्त्यर्थं मुक्तिसाधनार्थं उत्तिष्ठते सावधानोनवति । पुनर्यं संघं पावनतया पवित्रत्वेन तीर्थनूतं कथयंति पुनर्येन संघेन समः सदृ शोऽन्यः कोऽपि नास्ति । पुनर्यस्मै संघाय तीर्थपतिः तीर्थंकरः स्वयं नम स्यति नमस्कारं करोति । व्याख्यानावसरे नमोतित्थस्सेतिनणनात् । पुनर्य स्मात् संघात् सतां सज्जनानां शुनं कल्याणं जायते उत्पद्यते । पुनर्यस्य सं घस्य स्फूर्त्तिर्महिमा परा उत्कृष्टा वर्त्तते । पुनर्यस्मिन् संघे गुणा गांनिर्यधैर्यौदा र्यादयः मूलगुणोत्तरगुणाश्च वसंति तिष्ठंति । एवं ज्ञात्वा नो नव्यप्राणिन् ! मन सि विवेकमानीय श्रीसंघस्य पूजा नक्तिश्च प्रकर्त्तव्या । कुर्वतां च सतां० ॥२१॥

नाषाकाव्यः–वृत्त उपर प्रमाणें ॥ जे संसार नोग आसा तजि, ठानत मुकति पंथकी दोर ॥ जाकी सेव करत सुख उपजत, जिन समान उत्तम नहि और ॥ इंद्रादिक जाके पद वंदत, जो जंगम तीरथ सुचि ठौर ॥ जाने नित्त नि वास सुख संपति, सो सिरि संघ जगत सिर मोर ॥ २२ ॥

लक्ष्मीस्तं स्वयमभ्युपैति रभसा कीर्त्तिस्तमालिंगति,
प्रीतिस्तं भजते मतिः प्रयतते तं लब्धुमुत्कंठया ॥
स्वःश्रीस्तं परिरब्धुमिच्छति मुहुर्मुक्तिस्तमालोकते,
यः संघं गुणराशिकेलिसदनं श्रेयोरुचिः सेवते ॥२३॥

अर्थः—(यः के०) जे पुरुष, (श्रेयोरुचिः के०) श्रेय एटले कल्याण तेने विषे वा धर्मने विषे छे रुचि जेनी एवो छतो (संघं के०) चतुर्विध संघ जे तेने (सेवते के०) सेवन करे छे, (तं के०) ते पुरुषने (लक्ष्मीः के०) संपत्ति, ते (रभसा के०) वेगें करीने अर्थात् शीघ्रताथी (स्वयं के०) पोतानी मेलें (अभ्युपैति के०) सन्मुख आवे छे. वली (कीर्त्तिः के०) कीर्त्ति जे छे, ते (तं के०) ते पुरुषने (आलिंगति के०) आलिंगन दे छे, अर्थात् कीर्त्ति प्राप्त थाय छे. तथा वली (प्रीतिः के०) स्नेह जे छे, ते (तं के०) ते पुरुषने (भजते के०) भजे छे, एटले सेवे छे. वली (मतिः के०) बुद्धि जे छे, ते (उत्कंठया के०) उत्सुकतायें करीने (तं के०) ते पुरुषने (लब्धुं के०) प्राप्त थवाने (प्रयतते के०) प्रयत्न करे छे. वली (स्वःश्रीः के०) स्वर्गनी लक्ष्मी, (तं के०) ते पुरुषने (मुहुः के०) वारंवार (परिरब्धुं के०) आलिंगन देवाने (इच्छति के०) इच्छा करे छे. वली (मुक्तिः के०) मोक्ष, (तं के०) ते पुरुषने (आलोकते के०) जुवे छे. हवे ते संघ केहवो छे? तो के (गुणराशि के०) गुणनो जे समूह तेनुं (केलिसदनं के०) क्रीडागृह छे. अर्थात् ते सर्व गुणोने रमवानुं स्थानक छे. माटे एम जाणीने मनने विषे विचार करीने चतुर्विध संघ जे छे ते सेववा योग्य छे. ते सेवन करता सुजनोने जे पुण्य । इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥२३॥

टीकाः—लक्ष्मीति ॥ यः पुमान् श्रेयोरुचिः सन् श्रेयसि कल्याणे धर्मे वा रुचिरभिलाषोयस्य स श्रेयोरुचिः। ईदृशःसन् श्रीसंघं सेवते । तं पुरुषं लक्ष्मीः संपत् रभसा वेगेन स्वयमात्मना अभ्युपैति सन्मुखमायाति। पुनःकीर्त्तिस्तं पुरुषं आलिंगति आलिंगनं ददाति । पुनः प्रीतिः स्नेहस्तं भजते सेवते । पुनर्मतिर्बुद्धिः उत्कंठया उत्सुकतया कृत्वा तं नरं लब्धुं प्राप्तुं प्रयतते यत्नं करोति । पुनः स्वःश्रीः स्वर्गलक्ष्मीस्तं मुहुर्वारं वारं परिरब्धुं आलिंगितुं इच्छति । मुक्तिर्मोक्षस्तं पुरुषं आलोकति पश्यति । किं विशिष्टं संघं? गुणराशि

केलिसदनं गुणसमूहस्यं क्रीडागृहं। एवं ज्ञात्वा संघः सेव्यः शेषं पूर्ववत्॥ २३॥

नाषाकाव्यः—वृत्त उपरं प्रमाणें ॥ ताकों आइ मिले सुख संपति, कीरति रहै तिहूं जग गाई ॥ जिनसौं प्रीति बढै ताके घट, दिन दिन धरम बुद्धि अधिकाई॥ छिन छिन ताहि लखै शिव सुंदरि, सुरग संपदा मिले सुनाई ॥ वानारसि गुनरासि संघकी, जो नर नगति करै मन लाइ ॥ २३ ॥

कथाः—अयोध्या नगरीयें नरतचक्रवर्त्ती अन्याय वर्जतो राज्य पाले छे. एकदा श्रीआदिनाथने केवलज्ञान उपने थके चोराशी गणधर सहित विहार करता अयोध्याना उद्यानमां समोसर्या, उद्यानपालकें वधामणी दीधी, तेने साडीबार क्रोडनुं दान दीधुं. पछी नरतराजायें विचार्युं जे आज रुषनदेव पधार्या छे, तेने सपरिकर नोजन करावुं! एम चिंतवी घणा गाडां पक्वान्नादिकें नरी समोसरणें आवी नगवानने वांदीने विनति करी के महाराज! आज सर्व कुटुंब सहित आप मंहारुं नोजन करो. तेवारें नगवान् बोल्या के हे नरत! साधुने राज्यपिंम अग्राह्य छे. वली आधाकर्मी तथा साहामो आण्यो ते पण अग्राह्य छे. एवी वाणी सांनली नरत पश्चात्ताप करवा लाग्यो, तेवारें नगवान् बोल्या के हे राजेंड! तुं असंतोष म कर, पहेलुं पात्र वीतराग, बीजुं पात्र साधु, त्रीजुं पात्र अणुव्रतधारी अने चोथुं पात्र दर्शनधर, माटें तुं अणुव्रतधारी श्रावकनी नक्ति कर, जेथकी संसाररूप समुड़ चुलूक समान थाय. एवुं सांनली नरत राजा हर्ष पाम्यो थको स्वस्थानकें आव्यो. श्रावक मात्रने जमवा माटें नोतरां दीधां. निरंतर सर्वलोक जमवा आवे. केम के ते वखतें लोक सर्व रुजु जड हता. माटें हरहमेश आववा लाग्या, तेवारें रसोइ करनारायें राजाने विनव्यो के महाराज! प्रजा सर्व उलटी पडी छे, केहने जमाडीयें अने केहने न जमांडीयें! तेवारें राजायें परीक्षा करी शुद्ध श्रावकने ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रेखा कांगणीरत्नथी कीधी. एम करी अवतार सफल करवा लाग्यो. तथा श्रीशत्रुंजयनो प्रथम उद्धार कर्यो, संघवीनी पदवी पाम्यो. वली अष्टापद पर्वत उपर रुषनदेव प्रमुख आगामी कालें थनारा चोवीश तिर्थंकरनां प्रासाद करी मांनोपेत प्रतिमा नरावी. ए रीतें श्रीसंघनी नक्ति करी अनुक्रमें आरीसानवनमां रूप जोतां अनित्यनावना नावतां मनमां वैराग्य वृद्धि करतां आ संसारमां सार ते एक धर्मज छे.

एम कहेतां कहेतां केवलज्ञान पाम्या. तेनो देवतायें महोत्सव कस्यो. चोराशी लाख पूर्वनुं आयु जोगवी मोक्षें गया. तेमनो पुत्र श्रीसूर्ययश थयो, तेणें पण जरतेश्वरनी पेठेंज श्रीसंघनी जक्ति करी. उर्वशी प्रमुख देवांगनायें परीक्षा कीधी पण चलायमान थयो नही. तेमने पण आरीसामां रूप जोतां केवलज्ञान उपन्युं अने मोक्षें गयो. तेमनो पुत्र महायश, तेमनो पुत्र अतिबल, तेमनो पुत्र बलजद्र, तेमनो पुत्र बलवीर्य, तेमनो पुत्र कृतवीर्य, तेमनो पुत्र जलवीर्य, तेमनो पुत्र आठमे पाटें दंमवीर्य. ए सर्व त्रण खंमना जोक्ता थया, चतुर्विध श्रीसंघनी जक्तिना करनार थया. इहां जरतनी पाछल छ कोडी पूर्व वर्ष गयां, तेवारें सौधर्मेंइ अवधिज्ञानने प्रमाणें स्तवना करी पोतें अयोध्यामांहे आवी ज्ञानादिक गुण जणाववा माटें यज्ञोपवित धारी बार व्रतनां बार तिलक कस्यां. ते अवसरें दंमवीर्य राजायें इंइने श्रावकरूपें दीठो, ते देखीने हर्षवंत थयो. पछी जमवानी निमंत्रणा कीधी, रसोइयाने कह्युं के साधर्मिकने रूडी रीतें जोजन करावो. इंइ पण श्रावकरूप धरतो घरमांहे आव्यो, पच्चरकाण पारी श्रावकोनी पंक्तिमां जमवा बेठो. एक क्रोड श्रावकने अर्थें जेटलुं अन्न निपजाव्युं हतुं तेटलुं ते एकलो जम्यो. वली रसोइयाने कह्युं के हुं जुख्यो छुं, माटे अन्न आप. रसोइयायें राजानी आगल सर्व वात कही. राजा तिहां आव्यो, तेने श्रावकरूपधारक इंइें कह्युं के ए रसोइ करनार सर्वेने जूख्या राखे छे. राजायें वली सो मूडा अन्न रंधावी पीरश्युं, ते तत्काल जमीने वली कहेवा लाग्यो के महारी जूख गइ नथी. ए रीतें राजानुं अपमान करवा लाग्यो के हुं तृप्त थातो नथी. तेवारें राजायें मनमां खेद कस्यो जे महाराथी संघनी पूर्ण जक्ति थाती नथी, माटें मुने धिक्कार छे. सेवक बोल्या महाराज! ए कोइ देवस्वरूपी छे, तेवारें राजायें धूपादिकें संतोषी नमस्कार करी पूछ्युं के हे स्वामी! प्रसन्न थाउ. साधर्मीनी जक्ति महाराथी केम थइ शके? एवुं सांजली इंइें पोतानुं प्रगट रूप कीधुं. दंमवीर्यनी प्रशंसा करवा लाग्यो ने कह्युं के हे दंमवीर्य! ते युगादिदेवनो वंश उजाल्यो, धन्य छे तुजने जे तुं आवी रीतें साधर्मीनी जक्ति करे छे. उक्तं च ॥ ते पुत्राये पितुर्जक्ता, स पिता यस्तु पोषकः ॥ तन्मित्रं यत्र विश्वासः, सा जार्या यत्र निर्वृतिः ॥१॥ इत्यादि स्तवना करी इंइ देवलोकें गयो. दंमवीर्य पण संघजक्ति करी जन्म सफल करी मोक्षें पहोतो. एम

जाणी संघनक्ति करो. सात क्षेत्रे धन वावरी अवतार सफल करो ॥ २३ ॥

यद्भक्तेः फलमर्हदादिपदवीमुख्यं कृषेः सस्यवत्, चक्रित्वं त्रिदशेंद्रतादि तृणवत् प्रासंगिकं गीयते ॥ शक्तिं यन्महिमस्तुतौ न दधते वाचोऽपि वाचस्पतेः, संघः सोऽघहरः पुनातु चरणन्यासैः सतां मंदिरम् ॥२४॥ संघप्रक्रमः ॥४॥

अर्थः—(सः के०) ते (संघः के०) चतुर्विध संघ (चरणन्यासैः के०) पोताना पदस्थापनें करीने (सतां के०) नक्तियुक्त मनुष्योनुं (मंदिरं के०) मंदिर जे घर तेने (पुनातु के०) पवित्र करो. ते संघ केहवो छे? तो के (यद्भक्तेः के०) जे संघनी नक्तिनुं (अर्हदादि के०) तीर्थंकरादि एवी (पदवी के०) पदवी जे पदनी प्राप्ति तेज (मुख्यं के०) मुख्य एवुं (फलं के०) फल छे, ते केनी परे? तो के (कृषेः के०) क्षेत्रादिना (सस्यवत् के०) धान्यनी परें अर्थात् जेम कृषि करनार मनुष्यने धान्य प्राप्ति रूप मुख्य फल छे तेम आहिं श्रीसंघनी नक्तिनुं मुख्य फल अर्हदादि पदवी ज छे, अने (चक्रित्वं के०) चक्रवर्त्तीपणुं तथा (त्रिदशेंद्रतादि के०) देवेंद्रादिपदपणुं तो (प्रासंगिकं के०) प्रसंगथीज आव्युं. एम (गीयते के०) कहेवाय छे. केनी परें? तो के (तृणवत् के०) क्षेत्रना घासनी परें. अर्थात् जेम कृषि करनारने विना प्रयासें क्षेत्रथी घासनी प्राप्ति थाय छे. तेम आहिं संघनक्तिकारक पुरुषने चक्रवर्त्तित्व देवेंद्रत्व पदवी ते विना प्रयासेंज प्राप्त थाय छे. वली (यन्महिमस्तुतौ के०) जे संघना प्रनाववर्णनने विषे (वाचस्पतेः के०) बृहस्पतिनी (वाचोऽपि के०) वाणीयो पण (शक्तिं के०) सामर्थ्य जे तेने (नदधते के०) धारण करी शकती नथी. वली ए संघ केहवो छे? तो के (अघहरः के०) पापने हरण करनारो छे. माटें ते संघ अघहर छे, एम जाणीने श्रीसंघने पोताने घेर आमंत्रण करीने पूजन करवुं अने तेनी पूजानुं जे पुण्य थाय। इत्यादि पूर्ववत् जाणवुं ॥ २४ ॥ आ चतुर्थ संघनक्तिनो प्रस्ताव थयो ॥ ४ ॥

टीकाः—यद्भक्तेरिति॥सः श्रीसंघश्चरणन्यासैः स्वपादस्थापनैः कृत्वा सतां सत्पुरुषाणां साधुमनुष्याणां मंदिरं गृहं पुनातु पवित्रयतु। सः कः? यद्भक्तेर्यस्य संघस्य नक्तेः अर्हदादिपदवी मुख्यं तीर्थंकरादिपदप्राप्तेर्मुख्यं फलं वर्त्त

ते ॥ किं वत्? कृषेः, क्षेत्रादेः सस्यवत् धान्यवत् । चक्रित्वं त्रिदशेंद्रतादि । चक्रवर्त्तित्वं इंद्रपदत्वादिकं च प्रासंगिकं प्रसंगादागतं फलं गीयते कथ्यते । किं वत् । कृषेस्तृणवत् पलालादिवत् । पुनर्यन्महिमस्तुतौ यस्य, संघस्य प्रभाववर्णने वाचस्पतेरपि वाचो वरव्यः शक्तिं सामर्थ्यं न दधते न धारयंति । किंविशिष्टः संघः? अघहरः अघं पापं हरति यः सः अघहरः । इति ज्ञात्वा श्रीसंघः स्वगृहे आहूय सम्यक् पूजनीयः । शेषं प्राग्वत् ॥ २४ ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिना ॥ सूरिणा विहितायां तु, श्रीसंघप्रक्रमोऽजनि ॥ ४ ॥ इति चतुर्थ संघभक्तिप्रस्तावः ॥ ४ ॥

भाषाकाव्यः—वृत्त उपर प्रमाणें ॥ जाके भगत मुगति पद पावत, इंद्रादिक पद गनत न कोई ॥ ज्यों कृषि करत धान फल उपजत, सहज प्रयास घास भुस होई ॥ जाके गुन जस संपन कारन, सुरगुरु थकित होत मद खोइ ॥ सो सिरि संघ पुनीत बनारसि, डुरित हरन विचरत भुअ लोइ ॥ २४ ॥

हवे हिंसाना निषेधेंकरीने सर्व प्राणीयोने विषे स्वसमानतानुंध्यान करो, तेंकहेः

क्रीडाभूः सुकृतस्य दुःकृतरजःसंहारवात्या भवो,
दन्वन्नौव्यसनाग्निमेघपटली संकेतदूती श्रियाम् ॥
निःश्रेणिस्त्रिदिवौकसःप्रियसखी मुक्तेः कुगत्यर्गला,
सत्त्वेषु क्रियतां कृपैव भवतु क्लेशैरशेषैः परैः ॥ २५॥

अर्थः— हे भव्यप्राणीयो! (सत्त्वेषु के०) जीवोने विषे (कृपैव के०) कृपा जे दया तेज (क्रियतां के०) कराय. अर्थात् करो. वली ते कृपा (परैः के०) बीजा (अशेषैः के०) समस्त एवा (क्लेशैः के०) कायाना कष्टें करीने पण (भवतु के०) हो. अर्थात् पोताना देहने कष्ट आपीने पण जीवदया पालवी. ए जीवदया केहवी छे ? तो के (सुकृतस्य के०) सुकृत जे तेनी (क्रीडाभूः के०) क्रीडानुं स्थानक छे. तथा वली केवी छे ? तो के (दुःकृत के०) पाप तेज (रजः के०) रज जे धूड, तेना (संहार के०) हरण करवामां (वात्या के०) वायुना विंटोलीया समान छे. अर्थात् कर्मरजने उमाडवामां जीवदया विंटोलीया जेवी छे. पापने धूडनी उपमा केम आपी ? तो के ते पापज कर्ममलनुं कारण छे. वली केवी छे? तो के (भवोदन्वन् के०) संसाररूप जे समुद्र तेमां (नौः के०)

नावसमान छे अर्थात् संसारसमुद्र तरवामां नावसमान छे, वली केहवी छे ? तो के (व्यसनाग्नि के०) कष्टरूप जे अग्नि तेने विषे (मेघपटली के०) मेघघटा तुल्य अर्थात् अग्निने बुझाववामां जेम मेघ छे, तेम दुःखाग्नि बुझाववामां जीवदया छे, माटे मेघ सरखी कही. वली केवी छे ? तो के (श्रियां के०) संपत्तियोनी (संकेतदूती के०) संकेतस्थानमां पोहोंचाडनारी दूतीसमान छे. वली केह्वी छे ? तो के (त्रिदिवौकसः के०) स्वर्गरूप जे घर तेनी उपरखंडवानी (निःश्रेणिः के०) निसरणी जेवी छे, वली ते केवी छे ? तो के (मुक्तेः के०) मुक्ति रूपस्त्रीनी (प्रियसखी के०) वाली सखी छे, वली केवी छे ? तो के (कुगत्यर्गला के०) दुर्गतिना द्वारने आडी देवानी भोगल समान छे, एम जाणीने जीवोने विषे दया करवी २५

टीकाः—अथ हिंसानिषेधेन सर्वसत्त्वेषु दयैव क्रियतामित्याह ॥ क्रीडाभूरिति ॥ भो भव्याः! सत्त्वेषु जीवेषु कृपा एव दया एव क्रियतां। परैरन्यैरशेषैः समस्तैः क्लेशैः कायकष्टकरणैः भवतु पूर्णतया क्रियतामित्यर्थः ॥ कथंभूता कृपा? सुकृतस्य पुण्यस्य क्रीडाभूः क्रीडास्थानं। पुनः कथंभूता ? दुःकृतरजःसंहारवात्या। दुःकृतं पापं तदेव कर्ममलहेतुत्वात् रज इव रजस्तस्य संहारे संहरणे वात्या वायुसमूहतुल्या।पुनः कथंभूता? भवोदन्वन्नौः भव एव संसार एव उदन्वानिव उदन्वान् समुद्रः तत्र नौः नौका । पुनः कथंभूता ? व्यसनाग्निमेघपटली व्यसनानि कष्टान्येव तापहेतुत्वात् अग्नयो वन्हयः तत्र मेघपटली मेघघटासमाना । पुनः किंभूता ? श्रियां संपदां संकेतदूती संकेतस्थानप्रापका संकेतिका दूती । पुनः कथंभूता ? त्रिदिवौकसः निःश्रेणिः । त्रिदिवं स्वर्ग एव ओकोगृहं । तस्य सोपानपंक्तिः । पुनः कथंभूता ? मुक्तेः प्रियसखी वल्लभ वयस्या । पुनः कथंभूता? कुगत्यर्गला कुगतेर्दुर्गतेः अर्गला द्वारपरिघः । इति ज्ञात्वा जीवेषु कृपा क्रियतां ॥२५॥

भाषाकाव्यः—सवैय्या इकतीसा ॥ सुकृतकी खानी इंद्र पुरीकी निसानी जानी, पाप रज खंडनकों पौनरासि पेखियें ॥ भवदुःख पावक बुझायवेकों मेघमाला, कमला मिलायवेकों दूती ज्यौं विशेषियें ॥ मुगतिवधूसौं प्रीति पालवेकों आली सम, कुगतिके द्वार दिढ आगलसी देखियें ॥ ऐसी दया कीजें चित्त तिहुं लोक प्रानी हित, और कर तूति काहु लेखेमें न लेखियें॥

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ यदि ग्रावा तोयें तरति तरणि र्यद्युदयति, प्रतीच्यां सप्तार्चिर्यदि भजंति शैत्यं कथ मपि ॥ यदि क्ष्मापीठं स्यादुपरि सकलस्याऽपि जग तः, प्रसूते सत्त्वानां तदपि न वधः क्वाऽपि सुकृतम् ॥२६॥

अर्थः—(यदि के०) जो (ग्रावा के०) पाषाण ते (तोये के०) ज लने विषे (तरति के०) तरे छे, वली (यदि के०) जो (तरणिः के० सू र्य ते, (प्रतीच्यां के०) पश्चिम दिशाने विषे (उदयति के०) उगे छे, वली (यदि के०) जो (सप्तार्चिः के०) अग्नि, ते (शैत्यं के०) शीतपणाने (भजति के०) भजे छे. वली (यदि के०) जो (कथमपि के०) कोइ पण रीतें (क्ष्मापीठं के०) पृथ्वीमंडल, ते (सकलस्यापि के०) समग्र एवुं पण (जगतः के०) जगत जे तेना (उपरि के०) उपरने विषे (स्यात् के०) थाय, (तदपि के०) तो पण (सत्त्वानां के०) जीवोनो (वधः के०) नाशरूप जे हिंसा ते (क्वापि के०) द्रव्य, क्षेत्र, कालादिकने विषे कांइ पण (सुकृतं के०) पुण्यने (न प्रसूते के०) उत्पन्न करतुं नथी. अर्थात् ते पूर्वोक्त सर्व अघ टित घटना कदाचित् थाय, तो पण जीवहिंसा कोइ रीतें पुण्यकारक थाय नही. माटे हे भव्यजनज्नो ! सर्व जननोयें जीव हिंसानो त्याग करवो ॥२६॥

टीकाः—यदिग्रावेति ॥ यदि ग्रावा पाषाणः तोये जले तरति । पुनर्यदि त रणिः सूर्यः प्रतीच्यां पश्चिमायां दिशि उदयति । पुनर्यदि सप्तार्चिः अग्निः शैत्यं शीतलत्वं भजति । पुनर्यदि कथमपि क्ष्मापीठं पृथ्वीमंडलं सकलस्या पि जगतोविश्वस्य उपरि भवेत् ॥ तदपि सत्त्वानां वधः हिंसा क्वापि द्रव्य क्षेत्र कालादौ सुकृतं पुण्यं न प्रसूते न जनयति । शेषं प्राग्वत् ॥ २६ ॥

भाषाकाव्यः—आभानक छंद ॥ जो पश्चिम रवि उगै, तिरें पाषान जल ॥ जों उलटें भुअ लोक, होइ शीतल अनल ॥ जो सुमेरु डगमगे, सिद्ध क हं लगनमल ॥ तबहूं हिंसा करत, न उपजै पुन्न फल ॥ २६ ॥

॥ मालिनीवृत्तम् ॥ स कमलवनमग्नेर्वासरं भास्वदस्ता, दमृ तमुरगवक्त्रात्साधुवादं विवादात् ॥ रुगपगममजीर्णाज्जीवितं कालकूटा, दभिलषति वधाद्यः प्राणिनां धर्ममिच्छेत् ॥ २७ ॥

अर्थः–(यः के०) जे पुरुष, (प्राणिनां के०) जीवोना (वधात् के०) वध जे हिंसा तेथकी (धर्मं के०) धर्मने (इच्छेत् के०) इच्छे ले, अर्थात् माने ले, (सः के०) ते पुरुष, शुं इच्छे ले ? तो के (अग्नेः के०) अग्निथकी (कमलवनं के०) कमलोना वनेने (अभिलषति के०) अभिलाष करे ले. अर्थात् ते पुरुष, अग्निमांथी कमलवनने जोवानी इच्छा करे ले. तथा (नास्वदस्तात् के०) सूर्य अस्त थया पढी (वासरं के०) प्रनातने इच्छे ले. वली ते (नुजगवक्रात् के०) सर्पना मुखथकी (अमृतं के०) अमृतने इच्छे ले, तथा ते पुरुष, (विवादात् के०) कलह थकी (साधुवादं के०) कीर्त्तिने इच्छे ले. वली ते पुरुष, (अजीर्णात् के०) अजीर्ण थकी (रुगपगमं के०) रोगना नाशनी इच्छा करे ले. वली ते पुरुष, (कालकूटात् के०) विष थकी (जीवितं के०) जीवितव्यने इच्छे ले. अर्थात् जे पुरुष, जीवहिंसा थकी धर्म माने ले, ते पुरुष, आ श्लोकमां कहेला अग्नि वगेरे पदार्थोथकी कमलवन वगेरे पदार्थोने इच्छे ले, एम जाणवुं. एटले ते पुरुष अज्ञानी जाणवो. आ श्लोकमां अभिलषति, ए क्रियापद ले, ते इच्छे ले. एवा अर्थमां सर्वत्र योजन करवुं.

टीकाः–सकमलेति ॥ यः पुमान् प्राणिनां वधात् धर्म्मं इच्छेत् सः अग्नेः सकाशात् कमलवनं अभिलषति वांछति । तथा नास्वदस्तात् सूर्यास्तगमनात् वासरं अभिलषति । तथा उरगवक्रात् सर्प्पमुखात् अमृतं पीयूषं अभिलषति । पुनः विवादात् कलहात् साधुवादं कीर्त्तिं अभिलषति ॥ तथा अजीर्णात् रुगपगमं रोगस्य अपगमं विनाशं अभिलषति । पुनः कालकूटात् विषात् जीवितं प्राणधारणं अभिलषति । शेषं पूर्ववत् ॥ २७ ॥

नाषाकाव्यः– सवैय्या इकतीसा ॥ अगनिमें जैसे अरविंद न विलोकियत, सूर अथमत जैसे वासर न मानियें ॥ सापके वदन जैसे अमृत न उपजत, कालकूट खाये जैसे जीवन न जानियें ॥ कलह करत नहि पाइयें सुजस जेसे, बाढत रसांस रोग नासन बखानियें ॥ प्रानी वधमांहि तैसे धर्मकी निसानी नांही, याहीतें बनारसि विवेक मन आनीयें ॥२७॥

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ आयुर्दीर्घतरं वपुर्वरतरं गोत्रं गरीयस्तरम्, वित्तं नूरितरं बलं बहुतरं स्वामित्वमुच्चैस्तरम् ॥ आरोग्यं विगतांतरं त्रिजगतः श्लाघ्यत्वमल्पेतरम्, संसारांबुनिधिं करोति सुतरं चेतः कृपार्द्रांतरम् ॥ २८ ॥ इत्यहिंसाप्रक्रमः ॥ ५ ॥

अर्थः-(कृपा. के०) जीवदया तेणें करीने (आर्द्र के०) भीनो छे (अंतरं के०) मध्यभाग जेनो एवुं मनुष्यनुं (चेतः के०) चित्त जे छे, ते शुं करे छे ? तो के (आयुः के०) जीवितने (दीर्घतरं के०) अधिकाधिक (करोति के०) करे छे. तथा वली ते चित्त, (वपुः के०), शरीरने (वरतरं के०.) अतिश्रेष्ठ एवाने करे छे. तथा ते चित्त, (गोत्रं के०) नाम अने कुल तेने (गरीयस्तरं के०) अत्यंत गरिष्ट ते. उच्चगोत्ररूप एवाने करे छे. तथा वली ते चित्त,(वित्तं के०) धनने (भूरितरं के०) अत्यंत वृद्धिंगतने करे छे, वली ते चित्त, (बलं के०) बलने (बहुतरं के०) अत्यंतात्यंत एवाने करे छे, तथा वली ते चित्त, (स्वामित्वं के०) प्रभुत्व, तेने (उच्चैस्तरं के०) अत्यंत उत्कृष्ट एटले सर्वोत्कृष्ट एवाने करे छे. वली ते चित्त, (आरोग्यं के०) नीरोगपणाने (विगतांतरं के०) अंतररहित एवाने करे छे, अर्थात् कोइ दिवस रोग न आवे, एवी रीतें करे छे. तथा वली ते चित्त, (त्रिजगतः के०) त्रण जगतने एटले त्रिभुवनने (श्लाघ्यत्वं के०) वखाणवापणाने (अल्पेतरं के०) घणुंज करे छे. तथा वली ते चित्त, (संसारांबुनिधिं के०) संसाररूप समुद्रने (सुतरं के०) सुखथी तरवाने शक्तिमान् करे छे. अर्थात् जे पुरुषनुं चित्त, हिंसा विरहित छे, ते पुरुषने सर्व पदार्थ प्राप्त थाय छे, (करोति) ए क्रियापद जे छे ते करे छे, एवा अर्थमां सर्वत्र योजन करवुं. आ ठेकाणे मेघरथ राजानो, अने हरिबल पाराधिनो दृष्टांत ग्रहण करवो ॥ २७ ॥ आ पांचमो अहिंसाप्रक्रम संपूर्ण थयो ॥ ५ ॥

टीकाः-आयुर्दीर्घतरमिति ॥ कृपया आर्द्र अंतरं मध्यं यस्य ईदृशं चेतः आयुर्जीवितं दीर्घतरं अधिकं करोति । तथा वपुः शरीरं वरतरं अतिप्रधानं करोति । तथा गोत्रं नाम कुलं वा गरीयस्तरं अति गरिष्टं उच्चैर्गोत्ररूपं करोति । तथा वित्तं धनं भूरितरं अतिप्रचुरं करोति। तथा बलं बहुतरं प्राज्यं करोति । तथा स्वामित्वं प्रभुत्वं उच्चैस्तरं सर्वोत्कृष्टं करोति । तथा आरोग्यं नीरोगत्वं विगतांतरं अंतररहितं करोति। तथा त्रिजगतः त्रिभुवनस्य श्लाघ्यत्वं श्लाघनीयत्वं अल्पेतरं प्रचुरं करोति । तथा संसारांबुनिधिं भवसमुद्रं सुतरं सुखेन उत्तरितुं शक्यं करोति ॥ अत्र मेघरथराज्ञः हरिबलधीवरस्य च दृष्टांतः ॥ २७ ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिना सूरिणा विहितायां तु, हिंसायाः प्रक्रमोऽजनि ॥ ५ ॥ इति अहिंसाप्रस्तावः ॥५॥

भाषाकाव्यः—कवित्त मात्रात्मक छंद ॥ दीरघ आउ नाम कुल उत्तम, गुन संपति आनंद निवास ॥ उन्नत विभौ सुगम भव सागर, तीन भुवन महिमा परगास ॥ भुज बलवंत अनंतरूप छवि, रोगरहित नित भोग विलास ॥ जिनके चित्त दया तिन्हके रुख, सब सुख होत बनारसि दास ॥ २७ ॥

कथाः—एज भरतक्षेत्रमां गजपुरनगरें सुनंद एवे नामें कुलपुत्र रहे छे. तिहां धर्मवंत प्राणी जिनदासनी साथें तेने महा प्रीति छे. एकदा ते बेहु मित्र वनमां गया, तिंहां सुराचार्य समान धर्माचार्यने देखी नमस्कार कर्यो, तेणें दयामूल धर्मनो उपदेश दीधो, ते उपदेश सांभली गुरुने कह्युं के हुं मांस भक्षणनुं पच्चरकाण तो करुं पण माहाराथी महारो कुलाचार केम मूकाशे ? गुरुयें कह्युं के धर्माचार खरो समजवो. धर्मनी वेलायें कांइ आलंबन न करवुं. ते सांभली सुनंदें तरत जीवदयाव्रत आदर्युं. मांसभक्षणनो नियम लीधो, सर्व जीव पोताना आत्मा सरखा जाणतो छतो सुखें व्रत पाले छे. एम करतां घणो काल थयो. एकदा दुर्भिक्ष पड्युं, सर्वत्र धान्य मोघुं थयुं, ते अवसरें सुनंदनी स्त्री कहेवा लागी के हे स्वामी ! स्वकुटुंब पालवा माटें माछलां पकडी लइ आवो. तेने सुनंदें कह्युं के हे भूंडी ! महारी आगल एवी वातज करवी नही. गमे तेवुं कष्ट प्राप्त थशे, तो पण हुं हिंसा आदरीश नही, तेनी स्त्रीयें कह्युं के तुं महानिर्दयी छो, कुटुंबने कष्ट करवाथी लोकमां अपयश थाशे. एम कही तेनो सालो बलात्कारथी तेने माछलां पकडवा माटें लइ गयो. तिहां जाल नाखी तेमां माछलां आव्यां, पण व्रत साचववा माटें ते पाछां पाणीमां नाखी दीधां, घरे खाली हाथें आव्यो. वली बीजे दिवसें स्त्रीनी प्रेरणाथी गयो, ते दिवसें पण तेमज माछलां मेली घेर आव्यो, त्रीजे दिवसें स्त्रीनी प्रेरणाथी गयो पण तिहां माछलां पकडतां माछलांनी पांख भांगी, तेथी त्रास पाम्यो, पछी सगांने कही अनशन करी मरण पामी राजगृही नगरीयें नरवर्मराजा राज्य करे छे, तिहां मणीयार नामा शेठनी सुयशा नामें भार्या तेनी कूखें आवी सुनंदनो जीव पुत्रपणे उपनो. तेनुं दामन्नक एवुं नाम पाड्युं. ते आठ वर्षनो थयो, तेवारें शेठने घेर माहामारीनो उपद्रव थयो, तेथी घरना माणस सर्वे मरण पाम्यां. आयुने योगें एक दामन्नक जीवतो रह्यो. राजायें तेने घेर चोकी राखी, दामन्नक क्षुधातुर थको घर घर भीख मागवा लाग्यो. एकदा

सागरपोत नामा व्यवहारीयाने तिहां भीख मागवा माटें आव्यो, एवामां ते व्यवहारीयाने घेर साधु वहोरवा आव्या, तेमां एक वडेरायें सामुद्रिक लक्षण जोइने कह्युं के आ भीखारीए शेठना घरनो मालीक थाशे ? एवी रीतनी वाणी सागरशेठें भींतने अंतरे सांभली दुःखाक्रांत थइने विचार्युं जे शुं महारा घरनो ए धणी थाशे ? तो हवे हुं कोइक उपाय करीने एने मारी नखावुं. एटले महारी लक्ष्मी महारा पुत्र पौत्रादिक भोगवे ? एम विचारी कोइक चांमालने घणुं द्रव्य आपवुं कबूल करीने कह्युं के दामन्नकने मारी नाखजे.

ते चंमाल पण मोदकनी लालच देखाडी ठगीने दामन्नकने बाहेर जंगलमां लइ गयो, पण तिहां ते मुग्ध बालने देखीनें चंमाल मनमां चिंतववा लाग्यो के अरे आ बालकें केवो शेठनो अपराध कर्यो छे के जेथकी शेठें मने आने मारवानो आदेश दीधो ! अथवा महारा जेवो बीजो महा पापी पण कोण हशे जे द्रव्यनी लालचें आवा बच्चाने मारवानी कबुलात आपे. तो हवे ए काम करवुं महारे युक्त नथी ! एवो निश्चय करी बालकने कह्युं के हे मूर्ख ! तुं इहांथी नाशी जा. जो इहां रहीश तो तुजने सागरपोत मारी नाखशे ! एवो भय देखाड्यो, तेथी दामन्नक नाशी गयो, केम के संसारमां जीवितव्य सर्वेने वल्लभ छे ॥ यतः ॥ मरणसमं नत्थि भयं, दारिद्द समो परिभवो नत्थि ॥ पंथसमा नत्थि जरा, खुहा समा वेयणा नत्थि ॥ १ ॥ चंमालें दामन्नकनी आंगली कापी नीसानी लेइ शेठने आवी दीधी. दामन्नक पण लोहीयें झरती आंगली लइ तिहांथी नाठो, ते सागरपोतना गोकुलमांहे गयो. कर्मयोगें तिहां नंदगोकुलपति अपुत्रीयो हतो, तेणें तेने पोताने घरे पुत्र करी राख्यो. दामन्नक अनुक्रमें यौवनावस्था पाम्यो, शूरवीर थयो.

एकदा प्रस्तावें ते सागरश्रेष्ठी स्वगोकुलमांहे आव्यो, तिहां दामन्नकने दीठो, नंदगोकुलीयाने पूछ्युं के ए कोण छे ? ते जेटलुं वृत्तांत दामन्नकनुं जाणतो हतो तेटलुं तेणें सर्व कह्युं; ते सांभली शेठ विचारवा लाग्यो के रखेने साधु वचन अन्यथा न थाय ! एम चिंतवी जेवो आव्यो तेवोज पाछो घेर भणी जवा लाग्यो, तेवारें नंद बोल्यो के तमें शीघ्रपणे केम जाउ छो ? शेठें कह्युं घरे काम छे, नंदगोवालीयायें कह्युं के महारा पुत्रने घेर मोकलजो, ते तमारुं कार्य करी आवशे, ते सांभली शेठें कागल लखी आप्यो ने कह्युं के ए कागल महारा पुत्रने आपजे. दामन्नक पण कागल लेइ चाल्यो. वाटें आ

वतां थाकी गयो,'तेवारें गाम नजीक कामदेवना देहरामां जइ सूतो. एवा मां तेज शेठनी विषा एवे नामें पुत्री'छे, ते पण तिहांज कामदेवनी पूजा करवा आवी छे. तेणें दामन्नक सूतेलो दीठो,अने तेना अंगरखानी कसें कागल बांधेलो दीठो,तै लइने वांचवा मांमयो.' तेमां स्वस्तिश्री गोकुलात् समुद्रदत्तयो ग्यं सानंदं लिख्यते. ए दामन्नकने अपीत पाणीयें शीघ्र विष देजो एमां कांइ विमासण करशो नही. एवो कागल वांची कन्यायें विचार्युं जे मह्हारो पिता का गल लखतां निश्चेंथी एक कानो चूकी गयो छे, केम के विषा मह्हारुं नाम छे ते स्थानकें विष देजो, एवुं भूलथी लखाइ गयुं छे. पछी आंखनुं काजल काढी सलीयें करी कानो दइ विषने स्थानकें विषा करी पाछो कागल तेनी कसमां बांधीने कन्या पोताने घरे आवी. पाछलथी दामन्नक पण जाग्यो,ते चालतो चालतो अनुक्रमें शेठने घरे आव्यो, पुत्रने कागल दीधो, तेणें कागल वांची तत्काल मह्होत्सव पूर्वक पोतानी बहेन'विषा तेने परणावी दीधी. केटलेकदिवसें सागरदत्त पण गोकुलथी घेर आव्यो. वात सांभली मनमां वि षाद उपन्यो अने चिंतववा लाग्यो जे में शुं विचार्युं अनें इहांशुं नीपनुं॥ यतः॥ अन्नं चिंतिज्जइ अन्नं हुइ,अन्न विढवइ अन्नं खाइ॥.कचालु ते थिर थया, थिरवासो ते जाइ॥ १ ॥ में लाजनें माटे मूल पण खोयो ! तथापि हजी कांइ उपाय तो करुं के जेम ए विपत्ति पामे ? एम चिंतवी शेठ वली चांमालने घेर गयो, अने कह्युं के अरे पापी चांमाल ! आते तें शुं कर्युं ? जे तें दामन्नकने जीवतो मूक्यो ? पण अद्यापि जो आटलुं काम करे तो जेटलुं द्रव्य तुं माग, तेटलुं हुं आपुं. तेवारें चांमल बोल्यो के हे स्वामी ! तमें देखाडो, तेने हणुं. तमारी इच्छा सफल करुं ? शेठें संकेत कीधो के संध्यानी वेलायें हुं जेने मातरने देहरे मोकलुं, तेने हणजे. एम कही घेर आवी शेठ कहेवा लाग्यो के अरे मूर्खो ! हजी सुधी तमें मातरनी पूजा नथी कीधी ? काम तो पूजाथी सराडे चडे. ते सांभली पुष्पादिकें छाब भरी मातर पूजवा माटें संध्या समयें जमाइने मोकल्यो. तेने मार्गे जातां रस्तामां सालो मल्यो,तेणें पोताना बनेवीने तिहांज उभो राख्यो,अने पोतें मा तर पूजवा तेनी पासेंथी छाब लइने गयो. ते जेटले देहरामांहे प्रवेश करे छे, तेटले जे खंगिलें तेने खड्गें करी मारी नाख्यो, ते वखतें मह्होटो कोलाहल थयो. लोकें उलख्यो जे आ शेठनो पुत्र छे. ते वात शेठें सांभली शेठने

हृदयस्फाट दुःख थयुं, तेथी मरण पाम्यो. पछी राजाना आदेशथी दाम न्नक घरनो धणी थयो. पुण्यानुसारें लक्ष्मीवान् थयो, साते क्षेत्रें धन वा वरवा लाग्यो, अने त्रिवर्ग साधन करतो सुखमां रहे छे.

एकदा कोइ एक नाटें आवीने दामन्नक आगल गाथा कही ते आ प्रमाणेः– तस्स न हवइ दुक्कं, कयावि जस्सब्बि निम्मलं पुस्सं ॥ असुध रबं दवं, भुंजइ अस्सो जणो जेण ॥ १ ॥ इति ॥ ए गाथा सांजली दामन्नकें ते नाटने त्रण लक्ष द्रव्य आप्युं, ते देखी लोकोनें महोटो द्वेष उपज्यो. तारें राजायें तेडी पूछ्युं के एटलुं महोटुं दान तें केम दीधुं ? तेवारें राजा आगल सर्व पोतानी वातनी उत्पत्ति कही. ते सांजली राजायें दामन्नकने नगरशेठ कस्यो. अनुक्रमें दामन्नक दयाधर्म आराधी देवलोकें गयो, माटें हे जव्यजीवो ! तमें दामन्नकनी पेठें दया दान द्यो. जेम सुखश्रेय पामो ॥ २८ ॥ इति जीवदया उपर दामन्नक कथा ॥

हवे चार श्लोकें करीने सत्यबोलवाना प्रजावने कहे छे.

विश्वासायतनं विपत्तिदलनं देवैः कृताराधनम्,
मुक्तेः पथ्यदनं जलाग्निशमनं व्याघ्रोरगस्तंजनम् ॥
श्रेयःसंवननं समृद्धिजननं सौजन्यसंजीवनम्, कीर्त्तेः
केलिवनं प्रजावजवनं सत्यं वचः पावनम् ॥ २९ ॥

अर्थः– हे जव्य जीवो ! तमो (सत्यं के०) सत्य एवुं अने प्रियकारी तथा हितकारी एवुं (वचः के०) वचनने बोलो. ए सत्यवचन केहवुं छे ? तो के (विश्वासायतनं के०) विश्वासनुं आयतन एटले घर छे. अर्थात् जे पुरुष सत्यवचन बोले छे, ते जगतमां विश्वासपात्र थाय छे, वली केहवुं छे ? तो के (विपत्तिदलनं के०) आपत्तिने नाश करनारुं छे, अर्थात् जे पुरुष सत्यवक्ता होय, ते आपत्तिने पामे नहिं. वली ते केहवुं छे ? तो के (देवैः के०) देवताउयें (कृताराधनं के०) कस्युं छे आराधन एटले सेवन जेनुं एवुं छे, अर्थात् सत्यवक्ता पुरुषनुं देवताउ पण सेवन करे छे. तथा ते स त्यवचन केहवुं छे ? तो के (मुक्तेः के०) मुक्ति जे सिद्धि तेना (पथि के०) मार्गने विषे (अदनं के०) संबल छे, अर्थात् जेम कोइ पुरुष, ग्रामां तरें जाय, तेने रस्तामां जातुं वगैरे संबल जोइयें तेम मुक्तिमार्गमां जना

रने सत्यवाक्य तेज संबलसमान जाणवुं. एटलेंजे सत्यवक्ता थाय, तेने मुक्तिप्राप्ति थाय. वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (जलाग्निशमनं के०) जल अने अग्नि तेने उपशमन करनारुं छे, अर्थात् सत्यवक्ता पुरुषने जल अग्निनो जय मटे.छे. वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (व्याघ्रोरग स्तंभनं के०) व्याघ्र जे सिंह तथा उरग जे सर्प तेने (स्तंभनं के०) स्तंभन करनारुं छे, अर्थात् सत्यवक्ता पुरुष,सिंह अने सर्प तेनो स्तंभनकारक थाय छे. तथा वळी ते सत्यवाक्य केहवुं छे? तो के (श्रेयः के०) कल्याण जे मोक्ष तेनुं (संवननं के०) वशीकरण छे. अर्थात् सत्यबोलनार पुरुषने मोक्ष जे छे, ते वश थाय छे. वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (समृद्धिजननं के०) संपत्तिने उत्पन्न करनारुं छे, अर्थात् सत्यवाणीवाळाने संपत्ति स्वतः प्राप्त थाय छे. वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (सौजन्य के०) सुजनपणानुं (संजीवनं के०) उत्पन्न करनारुं छे, अर्थात् सत्य वक्ता पुरुषने सुजनता प्राप्त थाय छे, वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (कीर्त्तेः के०) यशनुं (केलिवनं के०) क्रीडा करवानुं वन छे. अर्थात् सत्य वक्ता पुरुष जे छे, ते यशस्वी थाय छे. वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (प्रभावभवनं के०) प्रभाव जे महिमा तेनुं गृह छे. अर्थात् सत्यवक्ता पुरुषनो महिमा पण अधिक होय छे, वळी ते सत्यवचन केहवुं छे? तो के (पावनं के०) पवित्र करनारुं छे. अर्थात् सत्यवक्ता पुरुष, निरंतर पवित्रज गणाय छे. माटें ए सत्यवचन सर्वथा सर्व मनुष्योयें बोलवुं ॥ २९॥

टीकाः—अथ सत्यवचनस्य प्रभावं कथयति॥ विश्वासायतनमित्यादि ॥ भो भव्याः सत्यं वचो हितं प्रियं वचनं वदंत्विति शेषः॥ कथंभूतं सत्यं वचः? विश्वासायतनं विश्वासस्य आयतनं स्थानं। पुनः कथंभूतं सत्यं वचः विपत्तिदलनं। विपत्तीनां आपदानां फेटकं। पुनः कथं० देवैःसुरैः कृताराधनं। कृतं आराधनं सेवनं यस्य तत्। पुनः मुक्तेः सिद्धेः पथि मार्गे अदनं संबलं। तथा जलाग्निशमनं। जलाग्न्योरुपशामकं। पुनः व्याघ्रोरगस्तंभनं व्याघ्राणां सिंहानां उरगाणां सर्पाणां च स्तंभनकारकं। पुनः श्रेयसोमोक्षस्य कल्याणस्य वा संवननं वशीकरणं। पुनः समृद्धिजननं समृद्धीनां संपदां संपादकं। पुनः सौजन्यसंजीवनं सुजनतायाः संजीवनं समुत्पादकं।

तथा कीर्त्तेर्यशसः केलिवनं क्रीडारामं । पुनः प्रभावभवनं प्रभावस्य महि म्नोगृहं । पुनः पावनं पवित्रकारकमित्यर्थः ॥ २९ ॥

नाषाकाव्यः—बप्पय बंद ॥ गुननिवास विश्वास, वास दारिद दुख खं मन ॥ देव आराधन जोग, मुगति मारग मुख मंमन ॥ सुजस केलि आ राम, धाम सज्जन मन रंजन ॥ नाग वाघ वसिकरन, नीर पावक नय नंजन ॥ महिमा निधान संपति सदन, मंगल नीति पुनीत मग ॥ सुख रासि बनारसि दास नानि, सत्य वचन जयवंत जग ॥ २९ ॥

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ यशोयस्माद्भस्मीनवति वनवह्ने रिव वनम्, निदानं दुःखानां यदवनिरुहाणां जलमि व ॥ न यत्र स्याच्छायातप इव तपःसंयमकथा, कथंचित्तन्मिथ्यावचनमनिधत्ते न मतिमान् ॥ ३० ॥

अर्थः—(मतिमान् के०) बुद्धिमान् पुरुष, (कथंचित् के०) कोइ वखत कष्ट आवे बते पण (तन्मिथ्यावचनं के०) ते मिथ्यावचन एटले असत्य वचन तेने (नअनिधत्ते के०) नहिं बोले बे. ते केम नथी बोलता ? तो के (यस्मात् के०) जे मिथ्यावचनथकी (यशः के०) कीर्त्ति, ते (नस्मीनवति के०) नस्म थाय बे, अर्थात् नाश पामे बे. केनी पठें ? तोके (वनवन्हेः के०) दावाग्निथकी (वनमिव के०) वनज जेम. अर्थात् दवाग्नि थकी जेम वन दाह पामे बे तेम मिथ्यावचनथकी कीर्त्ति नाश पामे बे. वली ते मतिमान् पुरुष क्यारें पण केम मिथ्या वाक्य नथी बोलता ? तो के (यत् के०) जे मि थ्यावचन (दुःखानां के०) दुखोनुं (निदानं के०) कारण बे, केनी पेठें ? तोके (अवनिरुहाणां के०) वृक्षोनुं (जलमिव के०) जल जेम कारण बे. अर्थात् जेम वृक्षोनुं कारण जल बे तेम दुःखोनुं कारण असत्यज बे. वली ते मतिमान् पुरुष क्यारें पण केम मिथ्यावाक्य नथी बोलता ? तो के (यत्र के०) जे मिथ्यावचनने विषे (तपःसंयमकथा के०) तपनी अने चारित्रनी कथा पण (न के०) नहि (स्यात् के०) होय. केनी पेठें ? तो के (आतपे के०) सूर्यना तडकाने विषे (बायाइव के०) बाया जे बे तेज जेम. अर्थात् असत्यवाक्यथकी आ श्लोकमां कहेलां कीर्त्यादिकनो नाश थाय बे केनी

पठें ? तो के आ श्लोकमां कहेला वनाग्नि वगेरेनी पठें जाणवुं. माटें हे न
व्यजनो ! सत्यज बोलवुं, परंतु असत्य नज बोलवुं ॥ ३० ॥

टीकाः—यशोयस्मादिति ॥ मतिमान् बुद्धिमान पुमान् कथंचित् कष्टेऽपि सति तत् मिथ्यावचनं असत्यवचनं न अभिधत्ते न जल्पति। तत् किं? यस्मान्मिथ्यावचनाद्यशः कीर्त्तिर्नश्मीजवति विनश्यति । कस्मात् किमिव? वन वन्हेर्दावाग्नेर्वनमिव यथा दावानलात् वनं जस्मीजवति। तथा पुनर्यन्मिथ्या वचनं दुःखानां निदानं कारणं । केषां किमिव? अवनिरुहाणां वृक्षाणां कारणं जलमिव। यथा जलं वृक्षाणां कारणं तथा पुनर्यत्र मिथ्यावचने तपःसंयमकथा तपश्चारित्रयोर्वार्त्ताऽपि न । कस्मिन् केव ? आतपे सूर्यातपे छाया इव यथाऽतपे छाया न स्यात् तथा ॥ ३० ॥

जाषाकाव्यः—कवित्त मात्रा० ॥ जोज समान करै निज कीरति, ज्यौं वन अगनि दहै वन सोइ ॥ जाके संग अनेक दुःख उपजत, वढे विरख ज्यौं सींचत तोइ ॥ जामें धरमकथा नहिं सुनियत, ज्यौं रविबीच छांह न हिं होइ ॥ सो मिथ्यात वचन वानारसि, गहत न तांहि विचछन कोइ ३०

वंशस्थवृत्तम्॥ असत्यमप्रत्ययमूलकारणम्, कुवा
सनासद्म समृद्धिवारणम् ॥ विपन्निदानं परवंच
नोर्जितम्, कृतापराधं कृतिभिर्विवर्जितम् ॥ ३१ ॥

अर्थः—(कृतिभिः के०) पंडितो जे तेमणें (असत्यं के०) असत्य बोलवुं ते (विवर्जितं के०) त्याग करेलुं छे. ते शा माटें त्याग करेलुं छे ? तो के ते असत्य वाक्य जे छे ते (अप्रत्यय के०) अविश्वास तेनुं (मूलकारणं के०) मूलकारण छे. वली केहवुं छे ? तो के (कुवासना के०) माठी वासना जे पापबुद्धि तेनुं (सद्म के०) घर छे. वली केहवुं छे ? तो के (समृद्धि के०) लक्ष्मी तेने (वारणं के०) वारनारुं छे. वली केहवुं छे ? तो के (विपन्निदानं के०) कष्टनुं करनारुं छे. वली केहवुं छे ? तो के (परवंचनोर्जितं के०) अन्यजनने ठगवामां अति बलवान् छे. वली केहवुं छे ? तो के (कृतापराधं के०) कर्यो छे अपराध जेणें एवुं छे ? ते माटे सुज्ञजनोयें अति निंद्य एवुं असत्य वाक्य बोलवुं नहिं ॥ ३१ ॥

टीकाः—पुनरसत्यवचनस्य दोषानाह ॥ असत्यमिति ॥ इति कारणात् कृति

भिः पंमितैः असत्यं कूटं विशेषेण वर्जितं परिहृतं । यतोऽसत्यं अप्रत्ययमूलकारणं अविश्वासस्य मूलके हेतुः । पुनः कुवासनायाः पापबुद्धेः सद्म गृहं । पुनः समृद्धिवारणं समृद्धेर्लक्ष्म्याः वारणं निराकरणं । पुनर्विपन्निदानं विपदां कष्टानां निदानं कारणं । पुनः परवंचनोर्जितं परेषां वंचने विप्रतारणे ऊर्जितं बलिष्टं । पुनः कृतापराधं कृतागसं कृतोऽपराधोयेनअसत्येन तत्कृतापराधं अत एव असत्यवचनं कृतिभिःपंमितैर्न वक्तव्यं ॥ ३१ ॥

नाषाकाव्यः—रोडकछंद ॥ कुमति कुरीति निवास, प्रीति परतीति निवारन ॥ रिद्धि सिद्धि सुखहरन, विपति दारिद्र दुःख कारन ॥ परवंचनि उतपत्ति, सहज अपराध कुलछन ॥ सो यह मिथ्यात वचन, नहिं आदरत विचछन ॥ ३१ ॥

वली पण सत्यवचननो प्रनाव कहे छे.

शार्दूल विक्रीडितवृत्तम् ॥ तस्याऽग्निर्जलमर्णवः स्थलमरिर्मित्रं सुराः किंकराः, कांतारं नगरं गिरिर्गृहमहिर्माल्यं मृगारिर्मृगः ॥ पातालं बिलमस्त्रमुत्पलदलं व्यालः शृगालो विषम्, पीयूषं विषमं समं च वचनं सत्यांचितं वक्ति यः ॥ ३२ ॥ अनृतप्रक्रमः ॥ ६ ॥

अर्थः— (यः के०) जे पुरुष, (सत्यांचितं के०) सत्ययुक्त एवुं (वचनं) वचन जे तेने (वक्ति के०) बोले छे, (तस्य के०) ते पुरुषने (अग्निः के०) अग्नि जे छे, ते (जलं के०) जल सरखो थाय छे. वली ते पुरुषने (अर्णवः के०) समुद्र, ते (स्थलं के०) द्वीप थाय छे. वली ते पुरुषने (अरिः के०) शत्रु ते (मित्रं के०) मित्रतुल्य थाय छे. तथा ते पुरुषने (सुराः के०) देवताउ ते (किंकराः के०) किंकर तुल्य थाय छे. वलीते पुरुषने (कांतारं के०) वन ते (नगरं के०) नगर तुल्य थाय छेली ते पुरुषने (गिरिः के०) पर्वत, ते (गृहं के०) घर समान थाय छे. वली ते पुरुषने (अहिः के०) सर्प, (माल्यं के०) पुष्पमाला तुल्य थाय छे. वली ते पुरुषने (मृगारिः के०) मृगनो अरि जे सिंह ते (मृगः के०) हरिण समान थाय छे. तथा ते पुरुषने (पातालं के०) रसातल, ते (बिलं के०) छिद्र तुल्य थाय छे. वली ते पुरुषने (अस्त्रं के०) अस्त्र ते, (उत्पलदलं के०) कमलपत्र समान थाय छे. वली ते पुरुषने (व्यालः के०) मदोन्मत्त हस्ती ते (शृगालः के०) शीयाल जेवो थाय छे. वली ते पुरुषने (विषं के०) विष ते

(पीयूषं के०) अमृततुल्य थाय छे. तथा ते पुरुषने (विषमं के०) विषम स्थानक ते (समं के०) सरखुं थाय छे. (च के०) चकार पादपूर्णार्थे छे. एटले आ श्लोकमां नाव एटलोज छे के सत्यवक्ता पुरुषने सर्वे सुखरूप थाय छे, माटे सत्यजे बोलवुं ॥३१॥ आ छठुं मिथ्यावचन प्रकरण संपूर्ण थयुं ॥

टीकाः—अथ सत्यप्रनावं दर्शयति ॥ तस्याग्निरिति ॥ यः पुमान् सत्यांचितं सत्ययुक्तं वचो वचनं वक्ति ब्रूते । तस्य पुंसोऽग्निर्वह्निः सत्यप्रनावाज्जलं । तथाऽर्णवः समुद्रः स्थलं स्यात् । तथा अरिः शत्रुर्मित्रं स्यात् । पुनः सुराः देवाः किंकराः सेवका आदेशकारिणः स्युः । पुनः कांतारमरण्यं नगरं स्यात् । तथा गिरिःपर्व्वतोगृहं स्यात् । पुनरहिः सर्प्पोमाल्यं स्रक् स्यात् । तथा मृगारिः सिंहोमृगो हरिण इव स्यात् । तथा पातालं रसातलं बिलं बिलरूपं स्यात् । तथाऽस्त्रं शस्त्रं उत्पलदलं कमलपत्रसदृशं स्यात् । तथा व्यालो दुष्टगजः शृगाल इव स्यात् । पुनर्विषं हालाहलं पीयूषं अमृतं स्यात् । तथा विषमं संकटं स्थानं संपद्रूपं स्यात् सत्यप्रनावतः । अतः सत्यं वक्तव्यं अत्र वसुराज्ञः क्षीरकदंबकोपाध्यायपुत्रपर्व्वतकनारदयोर्दृष्टांतः ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिना ॥ सूरिणा विहितायां तु, मिथ्यावचनप्रक्रमः ॥३१॥ इति षष्ठों मिथ्यावचनप्रक्रमः ॥ ६ ॥

नाषाकाव्यः—सवैया इकतीसा ॥ पावकतें जल होइ वारिधितें थल होइ, शस्त्रतें कमल होइ ग्राम होइ वनतें ॥ कांतार नगर होइ पर्वततें घर होइ, वासवतें दास होइ हेतू डुरजनतें ॥ सिंहतें कुरंग होइ व्याल स्याल अंग होइ, विषतें पियूष होइ माला अहि फनतें ॥ विषमतें समहोइ संकट न व्यापै कोइ, एते गुन होइ सत्यवादी दरसनतें ॥ ३१ ॥

कथाः—शुक्तिमती नगरीयें अनिचंद्र नामा राजा तेनो वसु नामें पुत्र छे, ते न्हानपणथी सत्यवचननो बोलनार छे, ते नगरीमां क्षीरकदंबक उपाध्याय सर्व शास्त्रनो जाण छे, तेनो पुत्र पर्वतक नामें छे, ते स्वनावें कुटिलाशयवालो छे, एक पर्वतक बीजो वसुराजा अने त्रीजो नारद ए त्रणे क्षीरकदंबक उपाध्याय पासें नणे छे. अन्यदा ते त्रणे शिष्य अगासीमां सूता छे उपाध्याय अगासीमां बेठो जागे छे एवामां आकाशमार्गे बे चारण मुनियो वातो करता चाल्या जाय छे, तेमांथी एक मुनि बोल्यो के आ त्रणमां बे तो नरकगामी छे, अने एक स्वर्गगामी छे. ए वाणी सांनली उपाध्याय उद्वे

ग पाम्या. पछी कोण स्वर्गगामी अने कोण नरकगामी छे ? तेनी परीक्षा करवा माटें जूदा जूदा लोटना त्रण कुर्कुट बनावीने त्रणे शिष्यने दीधा, अने कह्युं के जिहां कोइ देखे नहिं, तिहां एने हणी आवजो. तेमां वसुराजा अने पर्वतक ए बे जण तो जंगलमां जइ कोइ एकांत जग्यायें कुकडानो विनाश करीने आव्या, अने नारदें तो घणा स्थानक जोयां पण क्यांहि कोइ न देखे एवुं स्थानक दीठुं नहिं. तेवारें कुकडाने पाछो आण्यो. उपाध्यायें पूछ्युं के केम पाछो लाव्यो? तेवारें नारद बोल्यो के देव, दानव, निगोद अथवा ज्ञानी जिहां तिहां देखी रह्या छे तेमज महारो आत्मा पण देखतो हतो, माटें शी रीतें तमारी आज्ञानो भंग करी एनो विनाश करुं! ते सांभली उपाध्यायें चिंतव्युं के ए स्वर्गगामी छे अने पहेला बे नरकगामी छे. अनुक्रमें उपाध्याय आयुष्य पूर्ण करी देवलोकें गया. पछी तेने पाटें पर्वतक बेठो अने वसुने राज्य मल्युं, नारद पोतानें घेर गयो.

एकदा एक आहेडीयें वनमां जइ कोइ मृगनी उपर बाण नाख्यो, आगल जइ जोयुं तो मृगने स्थानकें स्फाटिकनी शिला दिठी, तेणें राजाने आवी कह्युं के तरत राजायें ते शिला छानी मगावी, पीठिका मंमावी, उपर सिंहासन थापी पोतें बेसवा मांम्युं, लोक सर्व जाणवा लाग्या के वसुराजा सत्यवचनने बलें करी अधर बेसे छे, तेथी सिमाडीया राजा प्रमुख सेवामां रह्या, महोटो प्रतिष्ठावंत सत्यवादी एवो वसुराजा कहेवाणो.

एकदा पर्वतकने मलवा माटें नारद कोइ ग्रामांतरथी तिहां आव्यो, पोतपोतामां मलीने बेठा, ते समयें शिष्यने भणावतां अज शब्दनो अर्थ छागनो होम करवो एवो पर्वतें कह्यो, तेवारें नारद बोल्यो के गुरुयें तो आपणने भणावतां अज शब्दनो अर्थ त्रण वर्षनी जूनी व्रीहि कही छे,तो तमें अज शब्दनो अर्थ छाग केम कहो छे?पर्वतें ना कही. एम पोत पोतामां विवाद करतां जे खोटो ठरे, तेनी जीभ छेदी नाखवी. एवी प्रतिज्ञा करी. ते वखत पर्वतकनी मातायें जाण्युं जे नारद कहे छे,ते वात खरी छे माटे हुं जइ वसुराजानी पासें थीपुत्रभिक्षा मागी लेउं.कारण के साक्षी दाखल बे जण वसुराजा पासें जवाना छे, एवुं विचारी वसुराजा पासें जइने कालावाला कीधा, अनुक्रमें ते बेहु जण वाद करतां वसुराजा पासें अर्थ पूछवा आव्या. राजायें पण मिश्र वचन बोलीने कह्युं के अज शब्दनो अर्थ बोकडो पण थाय छे, अने भेदांतरें व्रीहि

पण थायछे. एवुं सानलातांज तत्क्षण देवतायें पादुप्रहारें करी वसुराजाने सिंहासनथी नीचें पाडी मारी नाख्यो, विपत्ति पामी मरीनें नरकें गयो. पाछल पर्वत पण आयु पूर्ण थये नरकें गयो. नारद शील पाली सत्यवचनना प्रभावें देवलोकें गयो. ए सत्यवचन उपर वसुराजानो दृष्टांत कह्यो ॥ ३२ ॥

हवे अदत्तादान व्रत कहे छे.

मालिनीवृत्तम् ॥ तमभिलषति सिद्धिस्तं वृणीते समृद्धि, स्त मभिसरति कीर्तिर्मुच्यते तं भवार्त्तिः ॥ स्पृहयति सुगतिस्तं ने क्षते दुर्गतिस्तम्, परिहरति विपत्तं यो न गृह्णात्यदत्तम् ॥ ३३ ॥

अर्थः–(यः के०) जे पुरुष, (अदत्तं के०) न दीधेलुं एवुं जे पारकुं वित्त तेने (नगृह्णाति के०) न ग्रहण करे छे, (तं के०) ते पुरुषने (सिद्धिः के०) मुक्ति, (अभिलषति के०) इच्छा करे छे. वली (तं के०) ते पुरुषने (समृद्धिः के०) चक्रित्वादि संपत्ति ते (वृणीते के०) वरे छे. तथा (तं के०) ते पुरुषप्रत्यें (कीर्त्तिः के०) यश ते (अभिसरति के०) आवे छे. तथा वली (तं के०) ते पुरुषने (भवार्त्तिः के०) संसारव्यथा (मुच्यते के०) मूके छे. एटले त्याग करे छे. तथा (सुगतिः के०) देवमनुष्यरूपगति, ते (तं के०) ते पुरुषने (स्पृहयति के०)स्पृहा करे छे. एटले वांछा करे छे. तथा (दुर्गतिः के०) नरकतिर्यगादिक गति (तं के०) तेपुरुषने (नेक्षते के०) नथी जोती. तथा (विपत् के०) आपत्ति ते (तं के०) ते पुरुषने (परिहरति के०) त्याग करे छे. अर्थात् अदत्त वस्तुने जे जीव ग्रहण करतो नथी, तेने सर्वसुख प्राप्त थायछे ॥ ३३ ॥

टीकाः–अथादत्तादानव्रतमाह॥तमभीति॥ यः पुमान् अदत्तं अवितीर्णप्रस्तावात् परवित्तं किंचिद्वस्तु वा न गृह्णाति तं पुरुषं सिद्धिर्मुक्तिरभिलषति वांछति। पुनस्तं समृद्धिश्चक्रित्वादि संपत् वृणीते । तथा कीर्त्तिर्यशस्तं अभिसरति प्रत्यागच्छति । भवार्त्तिः संसारपीडा तं मुच्यते त्यजति । तथा सुगतिर्देवमनुष्यरूपा तं स्पृहयति वांछति । तथा दुर्गतिर्नरकतिर्यग्रूपा तं पुरुषं नेक्षते न पश्यति च विपद् आपद् तं परिहरति त्यजति ॥ तं कं? यो अदत्तं न गृह्णाति ॥ ३३ ॥

भाषाकाव्यः–रोडकछंद॥ताहि रिद्धि अनुसरे, सिद्धि अभिलाष धरे मन॥ विपति संग परिहरे, जगतविस्तरे सुजसघन ॥ भव आरति तिहिं तजे, कुगति वंछे न एकछिन॥ सो सुरसंपति लहे, गहै नहिं जो अदत्त धन ॥ ३३ ॥

वली पण अदत्तादानना परम गुणो कहे छे.

शिखरिणीवृत्तम् ॥ अदत्तं नादत्ते कृतसुकृतकामः किमपि यः, शुभश्रेणिस्तस्मिन् वसति कलहंसीव कमले ॥ विपत्तस्माद्दूरं व्रजति रजनीवांबरमणे, विनीतं विद्येव त्रिदिवशिवलक्ष्मीर्भजति तम् ॥ ३४ ॥

अर्थः— (यः के०) जे पुरुष, (कृतसुकृतकामः के०) कर्यो छे सुकृत विषे अभिलाष जेणें एवो छतो (किमपि के०) कांईंपण (अदत्तं के०) न दीधेला एवा पदार्थने (नादत्ते के०) न ग्रहण करे छे, (तस्मिन् के०) ते पुरुषने विषे (शुभश्रेणिः के०) कल्याणनी पंक्ति (वसति के०) वसे छे, केनी पठें ? तो के (कमले के०) कमलने विषे (कलहंसीव के०) राजहंसीनी पठें रहे छे. वली (तस्मात् के०) ते पुरुषथकी (विपत् के०) विपत्तियो ते (दूरं के०) दूरने विषे (व्रजति के०) जाय छे केनी पेठें ? तो के (अंबरमणेः के०) सूर्यथकी (रजनीव के०) रात्रिज जेम नाश पामे छे तेम. अर्थात् जेम रात्रि सूर्यथकी नाश पामे छे तेम जाणवुं. तथा (तं के०) ते पुरुषने (त्रिदिवशिवलक्ष्मीः के०) स्वर्गापवर्गनी लक्ष्मी जे छे, ते (भजति के०) सेवे छे: केनी पेठें ? तोके (विनीतं के०) नम्रपुरुषने (विद्येव के०) विद्याज जेम आवे छे, अर्थात् विद्या जेम विनयसंपन्न पुरुषने प्राप्त थाय छे, तेम स्वर्गापवर्गनी लक्ष्मी पण ते पुरुषने प्राप्त थाय छे ॥३४॥

टीकाः—भूयोप्यऽदत्तादानस्य परमगुणानाह ॥ अदत्तमिति ॥ यः पुमान् कृतः सुकृते पुण्येऽभिलाषो येन ईदृशः सन् अदत्तं परकीयं किमपि वस्तु न आदत्ते न गृह्णाति तस्मिन् पुंसि शुभश्रेणिः कल्याणपरंपरा वसति निवासं करोति । कस्मिन् केव ? कमले कलहंसीव । यथा कमले राजहंसी वसति तथा । पुनस्तस्मात् पुरुषात् विपत् कष्टं दूरं व्रजति दूरे याति कस्मात् केव ? अंबरमणेः सूर्यात् रजनीव । यथा सूर्याद्रात्रिर्दूरे व्रजति तथा । पुन स्त्रिदिवशिवयोः स्वर्गापवर्गयोर्लक्ष्मीः श्रीस्तं भजति सेवते। कं केव ? विनीतं विद्येव यथा विद्या विनीतं विनयान्वितं पुरुषं भजति विद्या आगच्छति तथा ॥ ३४ ॥

भाषाकाव्यः—कवित्त मात्रा० ॥ ताकों मिलें देवपद शिवपद, ज्यों वि

द्याधन लहै विनीत ॥ तामें आइ रहै गुन पंकति, ज्यौं कलहंस कमल सो नीत ॥ तांहि विलोकि डरै दुख दारिद, ज्यौं रवि आगंम रयनि वितीत ॥ जो अदत्त धन तजत बनारसि, पुन्नवंत सो पुरुष पुनीत ॥ ३४ ॥

हवे जे बुद्धिमान् पुरुष अदत्तनो त्याग करे छे; ते पण कहे छे.

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ यन्निर्वर्त्तितकीर्त्तिधर्मनिधनं सर्वागसां साधनम्, प्रोन्मीलद्वधबंधनं विरचितक्लिष्टाशयोद्बोधनम् ॥ दौर्गत्यैकनिबंधनं कृतसुगत्याश्लेषसंरोधनम्, प्रोत्सर्पत्प्रधनं जिघृक्षति न तद्धीमानदत्तं धनम् ॥ ३५ ॥

अर्थः– (धीमान् के०) विद्वान् पुरुष, (तत् के०) ते (अदत्तं के०) परकीय (धनं के०) वस्तु जे तेने (न जिघृक्षति के०) ग्रहण करवाने इछता नथी. ते केवुं अदत्त छे ? तो के (यत् के०) जे (निर्वर्त्तित के०) कर्युं छे (कीर्त्तिधर्मनिधनं के०) कीर्त्ति, अने धर्मनो नाश जेणें एवुं छे. वली (सर्वागसां के०) सर्वअपराधोनुं (साधनं के०) साधन एटले हेतुरूप छे. वली (प्रोन्मीलत् के०) प्रगट छे (वधबंधनं के०) वध जे लाकडी वगेरेथी ताडन तथा बंधन जे रज्ज्वादिकथी बंधन ते जेनेविषे. वली केवुं छे ? तो के (विरचित के०) कर्युंछे (क्लिष्टाशय के०) दुष्ट अंतःकरणनुं (उद्बोधनं के०) प्रगटपणुं जेणें अर्थात् दुष्टविचारनुं करवावालुं छे. वली ते केहवुं छे ? तो के (दौर्गत्य के०) दुर्गतिपणुं तेनुं (एकनिबंधनं के०) अद्वितीय कारणभूत छे. वली केहवुं छे ? तो के (कृत के०) करेलुं छे (सुगति के०) सारी गति तेनुं जे (आश्लेष के०) मलवुं तेनुं (संरोधनं के०) निवारण जेणें एवुं छे. वली केहवुं छे ? तो के (प्रोत्सर्पत् के०) प्रसरतुं छे (प्रधनं के०) मरण जे थकी एवुं छे. अर्थात् एतादृश दुःखकारि जे अदत्त तेनी पंमितो इछा करता नथी ॥ ३५ ॥

टीकाः– व्यतिरेकेणाह ॥ यन्निर्वर्त्तितेति ॥ धीमान् विद्वान् पुमान् तत् अदत्तं धनं परकीयं वस्तु न जिघृक्षति ग्रहीतुं नेछति। तत् किं ? यत् अदत्तं निर्वर्त्तितकीर्त्तिधर्मनिधनं स्यात् निर्व्वर्त्तितं कृतं कीर्त्तिधर्मयोर्निधनं विनाशो येन तत्। तथा सर्व्वागसां साधनं सर्वाणि च तानि आगांसि च सर्वागांसि तेषां सर्व्वापराधानां साधनं हेतु स्यात्। पुनः प्रोन्मीलद्वध

बंधनं वधो लकुटादिताडनं बंधन रज्ज्वादिना बंधनं प्रोन्मीलंति प्रकटीन्न वंति वधबंधनानि यत्र तं । पुनर्विरचितक्लिष्टाशयस्य डुष्टाज्ञिप्रायस्य उद्बो धनं प्रकटनं येन तत् । पुनर्दौर्गत्यैकनिबंधनं दौर्गत्यस्य दारिद्र्यस्य एकं अद्वि तीयं निबंधनं कारणं । पुनः कृतसुगत्याश्लेषसंरोधनं कृतं सुगतेराश्लेषस्य आलिंगनस्य संरोधनं निवारणं येन तत् । पुनः प्रोत्सर्प्पत् प्रधनं प्रोत्सर्प्पत् प्रसरत् प्रधनं मरणं यस्मात् तत्तथा । ईदृशं अदत्तं धीमान् न जिघृक्षति॥३५॥

नापाकाव्यः—मरहठा बंद ॥ जो कीरति गोपै, धरम विलोपै, करै महा अपराध ॥ जो शुन्न गति तोरै, डुरगति जोरै, जोरै शुद्ध उपाधि ॥ जो संकट आनै, डुरमति ठानै, वध बंधनको गेह ॥ सब उगुन मंमित, गहे न पंमित, सो अदत्त धन एह ॥ ३५ ॥

वली पण अदत्तना दोषो कहे ठे.

॥ हरिणीवृत्तम् ॥ परजनमनःपीडाक्रीडावनं वधन्ना वना, नवनमवनिव्यापिव्यापल्लताघनमंमलम् ॥ कुग तिगमने मार्गः स्वर्गापवर्गपुरार्गलम्, नियतमनुपादेयं स्तेयं नृणां हितकांक्षिणाम् ॥३६॥ इतिस्तेयप्रक्रमः ॥७॥

अर्थः– (नियतं के०) निश्चयें (हितकांक्षिणां के०) हितनी वांठाना करनारा एवा (नृणां के०) पुरुषोने (स्तेयं के०) चौर्य एटले चोरीनुं कर्म ते (अनुपादेयं के०) ग्रहण करवा योग्य नथी. ते अदत्त केहवुं ठे ? तो के (परजनमनः के०) अन्यजनोनां मन जे चित्त तेमनी (पीडा के०) बा धा तेमनुं (क्रीडावनं के०) रमण करवानुं उद्यान ठे. वली (वधन्नावना के०) हिंसानी जे नावना एटले चिंतवन तेनुं (नवनं के०) घर ठे. व ली (अवनि के०) पृथ्वी तेने विषे (व्यापि के०) व्यापी रहेली एवी जे (व्यापत् के०) आपत्तियो तेज (लता के०) लताउ जे वल्लीयो, तेनुं (घन मंमलं के०) मेघमंमलरूप ठे. वली (कुगतिगमने के०) माठी गतिने वि षे गमन करवानो (मार्गः के०) मार्ग ठे. वली (स्वर्गापवर्गपुर के०) स्वर्ग अने मोक्ष ते रूप जे नगर तेने (अर्गलं के०) नोगल सरखुं ठे. माटे आ श्लोकनो नावार्थ ए ठे जे डुःखदायक एवुं जे चौर्य तेनो सर्वथा सर्व जनोयें त्याग करवो ॥ ३६ ॥ आ सातमो चौर्यप्रक्रम थयो ॥ ७ ॥

टीकाः— पुनरदत्तदोषमाह ॥ परजनेति ॥ निश्चितं निश्चितं हितकांक्षिणां हितवांछितां नृणां पुरुषाणां स्तेयं चौर्यं अनुपादेयं अग्राह्यं भवति अदत्तं अग्रहणीयं स्यात् । किंभूतं अदत्तं ? परे च ते जनाश्च तेषां मनांसि चित्तानि तेषां पीडा बाधा तस्याः क्रीडावनं रमणायोद्यानं । पुनः वधभावनाभवनं वधस्य हिंसायाः भावना चिंतनं तस्याः गृहं । पुनः अवनिव्यापिव्यापल्लताघनमंडलं अवन्यां व्यापिनी प्रसरणशीला या व्यापत् आपत् सैव लता वल्ली तस्याः घनमंडलं मेघपटलं । पुनः कुमति गमने मार्गो अध्वा । पुनः स्वर्गापवर्गपुरार्गलं स्वर्गापवर्गावेव देवलोकमोक्षावेव पुरं नगरं तत्र अर्गला परिघः ॥ ईदृशं स्तेयं हितकांक्षिणां नृणां अग्राह्यं स्यात् ॥३६॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, टीकायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, संपूर्णः स्तेयप्रक्रमः ॥ ७ ॥ इति सप्तम स्तेयप्रक्रमः ॥ ७ ॥

भाषाकाव्यः—कवित्त मात्रात्मकं ॥ जो परजैन संताप केलिवन, जो वध बंध कुबुद्धि निवास ॥ जो जग विपति वेलि घनमंमल, जो डुरगति मारग परगास ॥ जो सुरलोक बार दिढ अग्गेल, जो अपहरन सुगति सुखवास॥ जो अदत्त धन तजत साधु जन, निज हित हेत बनारसि दास ॥ ३६ ॥

कथाः— एज भरतक्षेत्रमांहे वाणारसी नगरीयें माहाविख्यात पराक्रमनो धणी जितशत्रु राजा राज्य भोगवे छे; तिहां एक धनदत्तनामें व्यवहारी अत्यंत धनवंत रहे छे. तेनी धनश्री नामें स्त्री छे, तेनो पुत्र नागदत्त करीने छे, ते गुणरूप रत्ननो भंमार छे, तेना हृदयरूप सरोवरमांहे राजहंसनीपेठें दया रमे छेः हवे ते नगरमां बीजो कोइ प्रियमित्र एवे नामें व्यवहारीयो वसे छे, ते सौभाग्यसुंदर चातुर्यकलासागर छे, तेने नागवसु एवे नामें पुत्री छे. एकदा नागदत्त देवगृहमांहे देव वांदतो हतो, तेने नागवसु कन्यायें दीठो, तेवारें विचार्युं जे पुरंदर समान ए पुरुष कोण हशे ? एवा कंदर्प्पावतार भर्त्तार विना स्त्रीनुं यौवन बकरीना गलाना स्तननी पेठें निःफल जाणवुं, माटें महारें तो आ भवें एहज भर्त्तार करवो, नही कां चारित्र लेवुं, पण बीजो भर्त्तार न करवो! एम चिंतवी नागवसु कन्या पोताने घेर आवी पण कोइ स्थानकें रति पामे नही, भोजन निद्रा मूकीने रात्रि दिवस नागदत्तनुंज ध्यान कस्या करे. एवी पुत्रीनी अवस्था जोइने तेना माता पितायें बलात्कारथी वारंवार पूछ्युं, तेवारें तेनी सज्ञान सखीयें कह्युं

जे ए नागदत्तनी प्रार्थना करे छे. पितायें पुत्रीनो नाव जाणी नागदत्तने घेर जइ विवाह मेळववानी वात करीने कह्युं के सरखे सरखी जोडी छे माटें बेहु जन्म सफळ करे, ए युक्त छे. नागदत्तना पितायें मान्युं, परंतु नाग दत्ते ते वात सांजळीने पिताने वार्यो अने कह्युं के स्वामी! म्हारुं सगपण करशो नही, हुं तो चारित्र लइश. ए संसार असार छे माटे विषयसुखथी सर्युं! कन्यायें ते वचन सांजळ्युं अने ते कन्या तो मन वचनथी एनी उप रज मोहित थयेली छे ॥ यतः ॥ संसारे ते नरा धन्या, ये मोहे नैव मो हिताः ॥ मोहमोहितचित्तानां, न जने न वने रतिः ॥ १ ॥

एकदा ते कन्याने मार्गे जाती कोटवाळें देखीने तेना पिता पासेंथी मा गणी करी. तेवारें पितायें कह्युं के ए कन्या नागदत्त उपर रागिणी छे माटे तेने दीधी छे. ते सांजळी नगरनो कोटवाळ, नागदत्तनां छिद्र जोता लाग्यो. प्रायः पापी जे होय छे, ते पोताना स्वार्थ माटें सज्जननां छिद्र जोतोज रहे छे ॥ यतः ॥ मृगमीनसज्जनानां, तृणजलसंतोषविहितवृत्तीनाम् ॥ लुब्धकधी वरपिशुना, निःकारणवैरिणोजगति ॥ २ ॥

एवा समयमां राजानुं रत्नजडित कुंमळ गयुं, ते वखतें नागदत्तने पोषध शाळामां आवश्यक करतां कोटवाळें दीठो, अने रस्तकें मार्गमां कुंमळ पडयुं पण दीठुं. ते उपाडी पोतानी पासें राख्युं. पछी छळ करीने रात्रिने समयें कोटवाळें ते कुंमळ लावी नागदत्तना कानमां घाल्युं. प्रजातें नाग दत्तने पकडी राजा आगळ लइ गया. कुंमळनी चोरीनुं आळ दीधुं. राजायें तत्काळ मारवानी आज्ञा दीधी, तेने कोटवाळें मुख काळुं करी रासन्न उपर चढावी अनेक जातिनी विटंबना करी नगरमां फेरवी शूळारोपणने स्थानकें (मसाणें) आण्यो. ते वात नागवसु स्त्रीयें सांजळी, तेवारें महाडुःख धरती थकी तेनुं कष्ट निवारण करवा माटें शासनदेवीनुं स्मरण करी काउस्सग्ग कर्यो अने विचार्युं के जेवारें ए नागदत्त मूकाशे, तेवारें हुं काउस्सग्ग पारीश! एम निश्च ल ध्यानमां थिर रही ते अवसरें नागदत्तने शूळियें दीधो के शूळी जांगी पडी, पण नागदत्तने अंगें न लागी, तेवारें कोटवाळना आदेशथी नागदत्तने खड्गें करी हण्यो, ते खड्ग पण फूलमाळा जेवुं तेने लाग्युं, तेवारें राजपुरुषें विस्म य पामी ते वात राजा आगळ कही, राजा पोतें तिहां आव्यो ते विचार प्र त्यक्ष देखी नागदत्तने सर्व विचार खरेखरो पूछवायी नागदत्तें यथास्थित वा

त कही. ते सांजली राजा महोटा महोत्सव पूर्वक नागदत्तने नगरमां लइ आव्यो अने पोतानो अपराध खमावी कोटवालने देश बाहेर काढयो, तेना घरनुं सर्वस्व लइ लीधुं. जेमाटें अति उग्र पुण्य पापनां फल तत्काल प्राप्त थाय छे ॥ यतः ॥ त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासै,स्त्रिभिःपक्षैस्त्रिभिर्दिनैः ॥ अत्युग्रपुण्यपापाना, मिहैव लभते फलम् ॥ २ ॥

पछी नागदत्तें नागवसुनां काउस्सग्गनुं सर्व वृत्तांत सांजली तेनो घणोज पोतानी उपर स्नेह जाणीने ते कन्यानुं पाणिग्रहण कर्युं. अने चिरकाल तेनी साथें विषयसुख भोगवी वृद्धावस्थायें वैराग्य पामी दृढचित्तें चारित्र लइ देवलोकें पहोतो. माटें जे भाग्यवंत पुरुष अदत्तवस्तु न लीये, ते नागदत्तनी पेठें इहलोकें परलोकें मनोवांछित फलने पामे ॥ ३६ ॥

हवे मैथुनव्रत आश्रय करीने उपदेश कहे छे.

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ कामार्त्तस्त्यजति प्रबोधयति वा स्वस्त्रीं परस्त्रीं न यो, दत्तस्तेन जगत्यकीर्त्तिपटहोगोत्रे मषीकूर्चकः ॥ चारित्रस्य जलांजलिर्गुणगणारामस्य दावानलः, संकेतः सकलापदां शिवपुरद्वारे कपाटोदृढः ॥ पाठांतरं ॥ शीलं येन निजं विलुप्तमखिलं त्रैलोक्यचिंतामणिः ॥ ३७ ॥

अर्थः—(यः के०) जे पुरुष, (कामार्त्तः के०) कामें करी पीडितथको (स्वस्त्रीं के०) पोतानी स्त्रीने (नप्रबोधयति के०) न बोलावे छे (वा के०) अने (परस्त्रीं के०) पारकी स्त्रीने (नत्यंजति के०) न त्याग करे छे. अर्थात् पोतानी स्त्री छतां परस्त्रीनो संग करे छे, परंतु परस्त्रीनो त्याग करतो नथी, (तेन के०) ते पुरुषें (जगति के०) विश्वने विषे (अकीर्त्तिपटहः के०) पोतानी अपकीर्त्तिरूप ढोल, (दत्तः के०) दीधो, एटले वजाड्यो. अर्थात् तेनी विश्वमां अपकीर्त्तिज थाय. वली ते पुरुषें निर्मल एवा पोताना (गोत्रे के०) गोत्रने विषे (मषीकूर्चकः के०) मशनो कूचो दीधो. अर्थात् पोताना निष्कलंक कुलने लांछन लगाड्युं. वली ते पुरुषें (चारित्रस्य के०) देश विरति सर्वविरतिरूप संयमने (जलांजलिः के०) जलनो अंजलि दीधो, अर्थात् तेणे चारित्रनोपण नाश कीधो. वली ते पुरुषें (गुणगणारामस्य के०) गुणना गण जे समूह ते रूप आराम जे बगीचो तेने (दावानलः के०)

वनाग्नि दीधो. अर्थात् तेणें गुणोने पण नाश कर्या, वली (सकलापदां के०) समग्रआपत्तियोने (संकेतः के०) मलवाने स्थानक दीधुं. अर्थात् तेणें आपत्तियोने आववानो मार्ग पूरतो कर्यो. वली ते पुरुषें (शिवपुरद्वारे के०) मोक्षपुरना द्वारने विषे (दृढः के०) मजबूत अतिकठीन (कपाटः के०) कमाड दीधां. अर्थात् ते जीवें मोक्षमां जवानो रस्तो अत्यंत बंध कीधो, वली पाठांतरमां (येन के०) जे पुरुषें (त्रैलोक्यचिंतामणिः के०) त्रणलोकने विषे चिंतामणिरूप एवुं (निजं के०) पोतानुं (शीलं के०) ब्रह्मचर्य, ते (अखिलं के०) संपूर्ण (विलुप्तं के०) लोप्युं छे, तो ते पुरुषें पूर्वोक्त सर्व वस्तु करी. एटले आ श्लोकमां भाव ए छे जे शील रहित पुरुषनुं जे कांइ कर्म, ते सर्व व्यर्थ थाय छे ॥ ३७ ॥

टीकाः—अथ मैथुनव्रतमाश्रित्योपदेशमाह ॥ दत्त इति ॥ यैः पुमान् कामार्त्तः कामपीडितः स्वस्त्रीं न प्रबोधयति वा इति तर्के परस्त्रीं परनारीं न त्यजति तेन पुंसा जगति विश्वे अकीर्त्तिपटहो दत्तः वादितः। निर्मले गोत्रे स्वकीये वंशे मषीकूर्च्चकोदत्तः। पुनः चारित्रस्य देशविरति सर्वविरतिरूपसंयमस्य जलांजलिर्दत्तः। गुणानां गणः समूहः सएव आरामस्तस्य दावानलो वनदवः वनदवाग्निर्दत्तः। पुनस्तेन सकलापदां समस्तकष्टानां संकेतोदत्तः। मलिनस्थानं कथितं। पुनस्तेन शिवपुरद्वारे मुक्तिनगरद्वारे दृढः कपाटोदत्तः। शीलरहितस्य मुक्तिगमनायोगात् ॥ पाठांतरे तु ॥ शीलं येन निजं विलुप्तमखिलं त्रैलोक्यचिंतामणिः। येन त्रैलोक्यचिंतामणिः निजं शीलं विलुप्तं तेन एतानि वस्तूनि कृतानि ॥ ३७ ॥

भाषाकाव्यः—अथ शीलको अधिकार ॥ सो अपजसको ढंक बजावत, लावत कुलकलंक परधान ॥ सो चारितकों देत जलांजलि, गुनवनकों दावानल दान ॥ सो शिवपंथके बार बनावत, आपत विपति मिलनको स्थान॥ चिंतामनि समरतन जग जो नर, सीलरतन निज करत मलान ॥ ३७ ॥

वली पण शीलना गुणो कहे छे.

व्याघ्रव्यालजलानलादिविपदस्तेषां व्रजंति क्षयम्,
कल्याणानि समुल्लसंति विबुधाः सान्निध्यमध्यासते॥
कीर्त्तिः स्फूर्त्तिमियर्त्ति यात्युपचयं धर्मः प्रणश्यत्यघम्,
स्वर्निर्वाणसुखानि संनिदधते ये शीलमाबिभ्रते ॥३८॥

अर्थः– (ये के०) जे मनुष्यो (शीलं के०) ब्रह्मचर्यने (आबिभ्रते के०) धारण करे छे, (तेषां के०) ते मनुष्योने (व्याघ्र के०) वाघ, (व्याल के०) दुष्टगज वा सर्प, (जल के०) नदी समुद्रादि, (अनलादि के०) अग्नि आदिक जे (विपदः के०) विपत्तियो छे ते (क्षयं के०) क्षय प्रत्यें (व्रजंति के०) पामे छे. वली ते पुरुषोने (कल्याणानि के०) कल्याणो (समुल्लसंति के०) रुडे प्रकारें प्राप्त थाय छे. वली ते पुरुषोने (विबुधाः के०) देवताउ (सान्निध्यं के०) संनिधिपणा प्रत्यें (अध्यासते के०) प्राप्त थाय छे, एटले तेनी देवता सहाय करे छे. वली ते पुरुषोनी (कीर्त्तिः के०) कीर्त्ति ते (स्फूर्त्तिं के०) विस्तारने (इयर्त्ति के०) पामे छे. वली ते पुरुषोनो (धर्मः के०) धर्म ते (उपचयं के०) पोषणने (याति के०) पामे छे. वली ते पुरुषोनुं (अघं के०) पाप ते (प्रणश्यति के०) नाशने पामे छे. वली ते पुरुषोने (स्वर्निर्वाणसुखानि के०) स्वर्गमोक्षनां सुखो (सन्निदधते के०) समीप आवे छे. अर्थात् जे शीलने धारण करे छे, तेमने एटलां वानां थाय छे ॥

टीकाः–शीलगुणानाह ॥ व्याघ्रेति ॥ ये नराः शीलं ब्रह्मचर्यं आबिभ्रते धरंति तेषां पुंसां व्याघ्रव्यालजलानलादिविपदः क्षयं यांति व्याघ्रः प्रसिद्धः । व्यालो दुष्टगजः सर्प्पोवा । जलं पानीयं । नदी समुद्रादि । अनलो वन्हिस्तेषां विपदः कष्टानि । तैःकृताविपदः क्षयं व्रजंति क्षयं यांति । पुनः कल्याणानि श्रेयांसि समुल्लसंति वृद्धिं प्राप्नुवंति पुनस्तेषां विबुधा देवाः सान्निध्यं अध्यासते साहाय्यं कुर्व्वंति । पुनस्तेषां कीर्त्तिः स्फूर्तिं इयर्त्ति विस्तारं याति । पुनस्तेषां धर्मोदानादिविधिरुपचयं पोषं याति । पुनस्तेषां अघं पापं प्रणश्यति नाशं याति । पुनस्तेषां स्वर्निर्वाणसुखानि स्वर्गाऽपवर्गसुखानि संनिदधते समीपमभ्यांति । ये शीलं आबिभ्रते तेषां एतानि नवंति ॥३८॥

नाषाकाव्यः–रोडकछंद ॥ कुल कलंक दल मिटै, पापदल पंक पखारै ॥ दारुन संकट हरै, जगत महिमा विस्तारै ॥ सरग मुगति पद रचै, सुकृत संचै करुनारसि ॥ सुर गन वंदहि चरन, शील गुन कहत बनारसी ॥ ३८ ॥

॥ मालिनीवृत्तम् ॥ हरति कुलकलंकं लुंपते पापपंकम्, सुकृतमुपचिनोति श्लाघ्यतामातनोति ॥ नमयति सुरवर्ग्गं हंति दुर्गोपसर्गम्, रचयति शुचिशीलं स्वर्गमोक्षौ सलीलम् ॥ ३९ ॥

अर्थः—(शुचिशीलं के०) निर्मल एवुं ब्रह्मव्रत ते (कुलकलंकं के०) कुलनुं कलंक जे मलिनता तेने (हरति के०) नाश करे छे. वली (पाप पंकं के०) पापरूप कचराने (लुंपते के०) छेदे छे. वली (सुकृतं के०) सुकृत जे तेने (उपचिनोति के०) वधारे छे. वली (श्लाघ्यतां के०) प्रशंसाने (आतनोति के०) विस्तारे छे. वली (सुरवर्ग्गं के०) देववर्गने (नमयति के०) नमावे छे. तथा (दुर्गोपसर्गं के०) नयंकर उपद्रवने (हंति के०) हणे छे. वली (स्वर्गमोक्षौ के०) स्वर्ग अने मोक्ष तेने (सलीलं के०) लीलामात्रमांज (रचयति के०) आपे छे, ए माटें सर्व सुखनुं देवा वालुं एवुं जे शीलव्रत, तेने कदापि छोडवुं नही ॥ ३९ ॥

टीकाः—पुनश्च हरतिकुलेति॥ शुचिनिर्मलं शीलं ब्रह्मव्रतं कुलस्य कलंकं मलिनतां हरति नश्यति । पुनः शीलं पापमेव पंकं कर्दमं लुंपते छिनत्ति । पुनः शुचिर्निर्मलं शुद्धं शीलं सुकृतं पुण्यं उपचिनोति वर्द्धयति । पुनः श्ला घ्यतां प्रशस्यतां आतनोति विस्तारयति । पुनः शीलं सुरवर्ग्गं नमयति । देवसमूहं नम्रीकरोति । पुनः शीलं दुर्गोपसर्ग्गं रौद्रोपसर्गं उपद्रवं हंति । पुनः शीलं कर्तृ सलीलं यथास्यात्तथा लीलयैव हेलामात्रेण स्वर्गमोक्षौ रचयति ददातीत्यर्थः ॥ ३९ ॥

नाषाकाव्यः—सवैया त्रेवीसा ॥ ताहि न वाघ जुयंगमको नय, पानि न बोरै न पावक जालै ॥ ताके समीप रहै सुर किन्नर, सो सुन रीति करै अघ टालै ॥ तासु विवेक बढै घट अंतर, सो सुरके शिवके सुख नालै ॥ ताकि सुकीरति होइ तिहूं जग, जो नर शील अखंमित पालै ॥ ३९ ॥

॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ तोयत्यग्निरपि स्रजत्यहिरपि व्याघ्रोऽपि सारंगति, व्यालोऽप्यश्वति पर्वतोप्युपलति क्ष्वेडो ऽपि पीयूषति ॥ विघ्नोऽप्युत्सवति प्रियत्यरिरपि क्रीडातडागत्यपां नाथोपि स्वगृहत्यटव्यपि नृणां शीलप्रभावाद्ध्रुवम् ॥ ४० ॥

अर्थः—(नृणां के०) मनुष्योने (ध्रुवं के०) निश्चे (शीलप्रनावात् के०) शीलना प्रनावथकी (अग्निरपि के०) अग्नि पण (तोयति के०) जल नी समान थाय छे. वली (अहिरपि के०) सर्प पण (स्रजति के०) पुष्पमाला समान थाय छे. तथा शीलना प्रनावथी (व्याघ्रोपि के०) सिंह

पण (सारंगति के०) हरिण समान थाय छे. तथा (व्यालोपि के०) दुष्ट गज पण (अश्वति के०) अश्वतुल्य थाय छे. तथा (पर्वतोऽपि के०) पर्वत पण (उपलति के०) पत्थर सदृश थाय छे. अने (क्ष्वेडोपि के०) विष पण (पीयूषति के०) अमृत तुल्य थाय छे. तथा (विघ्नोऽपि के०) अंतराय पण एटले आपत्तियो पण (उत्सवति के०) उत्सव तुल्य थाय छे तथा (अरिरपि के०) शत्रु पण (प्रियति के०) प्रिय समान थाय छे. तथा (अपांनाथोपि के०) समुद्र पण (क्रीडातडागति के०) क्रीडाना तलावनी तुल्य थाय छे. (अटव्यपि के०) अरण्य पण (स्वगृहति के०) पोताना घरसमान थाय छे. अर्थात् मनुष्यने शीलप्रभावथकी पूर्वोक्त दुःख सर्व सुखरूप थाय छे ॥ ४० ॥ आ ठेकाणें दृष्टांतमां सुदर्शनश्रेष्ठीनी तथा वंकचूलनी तथा रावणनी कथा जाणवी ते प्रसिद्ध छे माटें आहिं लखी नथी. आ आठमो शीलनो प्रक्रम संपूर्ण थयो ॥ ८ ॥ इति ॥

टीकाः—पुनः शीलप्रभावात् इह लोकेपि कष्टानि यांतीत्याह ॥ तोयत्यग्निरिति ॥ नृणां मनुष्याणां ध्रुवं निश्चितं शीलप्रभावात् अग्निरपि तोयति तोयमिवाचरति जलवत् शीतलं स्यात् । तथा अहिरपि सर्पोऽपि स्रजति । स्रक् इव पुष्पमालेव आचरति । पुनः शीलप्रभावात् व्याघ्रोऽपि सिंहोऽपि सारंगति सारंग इव हरिण इवाचरति । पुनर्व्यालोऽपि दुष्टगजोपि अश्वति अश्व इवाचरति । विषमः पर्वतोऽपि उपलति उपलइवाचरति, सामान्यपाषाणइवाचरति । क्ष्वेडोपि विषमपि पीयूषति अमृतं भवति । विघ्नोप्यंतरायोपि आपदपि उत्सवति उत्सव इवाचरति । विघ्नोप्युत्सव एव भवति । तथा अरिरपि शत्रुरपि प्रियति प्रियइवाचरति । शत्रुरपि प्रिय एव भवति । तथा अपांनाथोऽपि समुद्रोऽपि क्रीडातडागति क्रीडातडागइवाचरति खेलनसरोवरमिवाचरति । अटव्यपि अरण्यमपि स्वगृहति स्वगृहमिवाचरति । नृणां शीलप्रभावादेतानि वस्तूनि भवंति ॥ अत्र सुदर्शन श्रेष्ठिकथा १ वंकचूलकथा २ रावणकथा ३ ॥ ४० ॥ सिंदूरप्रकाराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः । सूरिभिर्विहितायां तु, शिलस्य प्रक्रमोभनि ॥ ८ ॥ इत्यब्रह्मप्रक्रमः ॥८॥

भाषाकाव्यः—छप्पयछंद ॥ अगनि नीर सम होइ, माल सम होइ भुअंगम ॥ नाहर मृग सम होइ, कुटिल,गज होइ तुरंगम ॥ विषपीयूष सम होइ, सिखर पाषान खंड मित ॥ विघन उलटि आनंद, होइ रिपु प

लटि होइ हित ॥ लीला तलाव सम उदधि जल, गृह समान अटवी वि कट ॥ इह विध अनेक डुख होइ सुख, शीलवंत नरके निकट ॥ ४० ॥

हवे परिग्रहना दोषो कहे बे.

कालुष्यं जनयन् जडस्य रचयन् धर्म्मडुमोन्मूलनम्,
क्लिश्यन्नीतिकृपाक्षमाकमलिनीर्लोनांबुधिं वर्द्धयन् ॥
मर्यादातटमुड्डुजन् शुजमनोहंसप्रवासं दिशन्, किं
न क्लेशाकरः परिग्रहनदीपूरः प्रवृद्धिं गतः ॥ ४१ ॥

अर्थः–(परिग्रह के०) धन, धान्य, क्षेत्र, गृह, रूप्य, सुवर्ण, कूप्य, द्विपद, चतुःपद, ए नवविध परिग्रहरूप जे (नदीपूरः के०) नदीनो प्रवाह, ते (प्रवृद्धिंगतः के०) अति वृद्धिने पामतो बतो (किं के०) शुं (क्लेशाकरः के०) क्लेशने करवावालो (न के०) नथी थातो ? अर्थात् थायज बे. हवे परिग्रहने नदीना पूरनी साहश्यता कहे बे. ते परिग्रहरूप नदीपूर शुं करतो बतो वृद्धिंगत थाय बे? तो के (जडस्य के०) जडपुरुषोना (कालुष्यं के०) क्लिष्ट अध्यवसायने (जनयन् के०) उत्पन्न करतो बतो वृद्धिंगत थाय बे. अने नदीनो पूर पण (जडस्य के०) जलन (कालुष्यं के०) कलुषित पणाने (जनयन् के०) उत्पन्न करे बे. "जडस्य" ए पदमां डकार बे, तेथी जल एवो अर्थ न थाय, परंतु व्याकरणने नियमें करी डकारने लकारनुं ऐक्य बे तेथी थाय. वली (धर्मडुमोन्मूलनं के०) धर्मरूपवृक्षनुं जे उन्मूलन तेने (रचयन् के०) करतो बतो वृद्धिंगत थाय बे अने नंदीपूर पण पृथ्वीगत वृक्षोने उखेडी नाखतो बतो वृद्धिने पामे बे. वली (नीतिकृपाक्षमा के०) न्याय, दया, अने क्षांति ते रूप (कमलिनीः के०) कमलिनी जे तेने (क्लिश्यन् के०) क्लेश पमाडतो बतो वृद्धि पामे बे. अने नदीनो पूर पण कमलिनीने पीडा पमाडे बे. वली (लोनांबुधिं के०) लोनरूप समुड्ने (वर्द्धयन् के०) वधारतो बतो वृद्धि पामे बे, अने नदीनो पूर पण समुड्ने वधारनारो बे. वली (मर्यादातटं के०) धर्मरूप मर्यादानुं तट जे चारित्रादिक तेने (उड्डुजन् के०) पीडा पमाडतो बतो वृद्धि पामे बे,अने नदीनो पूर पण वृद्धि पामतो बतो नदीना तटने पाडी नाखे बे. तथा (शुजमनोहंसप्रवासं के०) धर्म ध्यान शुक्ल जे मन, ते रूप हंस तेने परदेश गमन प्रत्यें (दिशन् के०) देतो बतो

वृद्धिपणाने पामे छे. अने नदीनो पूर पण हंसोने उमाडतो थको वृद्धिने पामे छे. माटें मूर्छारूप परिग्रह जे छे, तेनो सर्वजीवें त्याग करवो ॥ ४१ ॥

टीकाः—अथपरिग्रहदोषमाह ॥ कालुष्यमिति ॥ परिग्रहो धन धान्य क्षेत्र गृह रूप्य कूप्य द्विपद चतुःपदानां संग्रहो मूर्छा स एव नदीपूरः । सरित्प्रवाहः प्रवृ द्धिगतः उपचयं प्राप्तः सन् किं क्लेशकरः कष्टदायी न स्यात्? अपि तु स्यादेव। किं कुर्वन् जडस्य परिग्रहं संग्रहं कर्तुं मूर्खजनस्य कालुष्यं क्लिष्टाध्यवसाय त्वं जनयन् उत्पादयन् । अन्योऽपि नदीपूरो वृद्धःसन् जलस्य पानीयस्य कालुष्यं जनयति । डलयोरैक्यं जडस्य जलस्य । पुनः किं कुर्वन्? धर्म्म एव द्रुमोवृक्षस्तस्योन्मूलनं उत्पाटनं रचयन् कुर्वन् । अन्योऽपि नदीपूरः प्रवृद्धो वृक्षाणां उत्पाटनं करोति । पुनः किं कुर्वन्? नीति कृ पाक्षमाकमलिनीः । नीतिर्न्यायः । कृपा दया । क्षमा क्षांतिः । ता एव कमलिन्यः ताः क्लिश्यन् पीडयन् । अन्योपि नदीपूरः कमलिनीः पी डयति । पुमः किं कुर्वन्? लोभांबुधिं वर्द्धयन् । लोभएव अंबुधिः समु द्रस्तद्वर्द्धयन् वृद्धिं नयन् ॥ जहा लाहो तहा लोहो, लाहाल्लोहो पव ड्ढई ॥ दोमासा कणयं कंयं, कोडिएवि न नियट्टियं ॥ १ ॥ इति ॥ पुनः किं कु र्व्वन्? धर्मस्य मर्यादा एव तटं चरणविधिरूपं तटं उद्रुजन् पीडयन् भं जयन् । अन्योऽपि नदीपूरः प्रवृद्धः सन् तटं पातयति । पुनः किं कुर्व्वन्? शुभमनोहंसप्रवासं दिशन् । शुभं धर्मध्यानसहितं यन्मनस्तदेव हंसस्तस्य प्रवासं परदेशगमनं दिशन् आदिशन् । अन्योऽपि नदीपूरोहंसान् उड्डा पयति । ईदृशोमूर्छापरिग्रहः क्लेशकरः स्यात् ॥ ४१ ॥

भाषाकाव्यः—कवित्त मात्रा० ॥ अंतर मलिन होइ निज जीवन, वि नसै धरम तरूवर मूल ॥ किसलयलता नीतिनलिनीवन, धरै लोभ सा गर तन थूल ॥ उवै वाद मरजाद मिटै सब, सुजन हंस नहिं पावहिं कू ल ॥ बढत पूर पूरें दुख संकट, यह परिग्रह समता सम तूल ॥ ४१ ॥

वली पण परिग्रहना दोषो कहे छे.

मालिनीवृत्तम् ॥ कलहकलभविंध्यः क्रोधगृध्रश्मशानम्, व्यसनभुजगरंध्रं द्वेषदस्युप्रदोषः ॥ सुकृतवनदवाग्निर्मार्दवांभोदवायु, र्नयनलिनतुषारोऽत्यर्थमर्थानुरागः ॥ ४२ ॥

अर्थः-(अत्यर्थं के०) अत्यंत (अर्थानुरागः के०) धननो अभिलाष जे छे, ते केहवो छे ? तो के (कलहकलभविंध्यः के०) क्लेशरूप जे बाल हस्ती तेने रहेवाने माटें विंध्याचल जेवो छे. अर्थात् जेम बालहस्तीने क्रीडा करवानुं स्थानक विंध्याचल छे, तेम क्लेशने क्रीडा करवानुं स्थानक अर्थानुराग छे. वली कहेवो छे ? तो के (क्रोधगृध्रश्मशानं के०) क्रोधरूप जे गिद्ध पक्षीयो तेनें रहेवाने श्मशानतुल्य, अर्थात् गिद्ध पक्षीयो जेम श्मशानमां रहे छे, तेम क्रोध पण अर्थानुरागमां रहे छे. वली (व्यसनभुजगरंध्रं के०), व्यसन जे कष्ट ते रूप जे सर्प तेना राफडा सरखो छे, अर्थात् जेम सर्पने रहेवानुं स्थानक राफडो छे, तेम कष्टने रहेवानुं स्थानक द्रव्यानुराग छे. वली (द्वेष दस्युप्रदोषः के०) द्वेषरूप चोरने चोरी माटे संध्यासमय समान छे, अर्थात् जेम चोरनुं जोर संध्या समयमां वधे छे, तेम ज्यां अर्थानुराग होय त्यां द्वेषरूप चोरनुं जोर वधे छे. तथा (सुकृतवनदवाग्निः के०) सुकृत एटले पुण्य ते रूप जे वन, तेने वनना अग्निसमान, अर्थात् जेम वननो अग्नि वनने बाले छे तेम ए अर्थानुराग पण सुकृतने बाली नाखे छे, वली (मार्दवां भोदवायुः के०) मृदुपणारूप जे मेघ तेने विषे वायु समान छे अर्थात् वायुथकी जेम मेघ नाश पामे छे, तेम अर्थानुरागथकी मृदुत्व जे विनयपणुं ते नाश पामे छे. वली (नयनलिनतुषारः के०) न्यायरूप जे कमल तेने हिम समान छे. अर्थात् कमलनो जेम हिम नाश करे छे, तेम न्यायनो नाश अर्थानुराग करे छे. माटें सर्व जीवें अत्यंत अर्थ एटले द्रव्य तेनी उपर अनुरागनो त्याग करवो ॥ ४१ ॥

टीकाः—भूयोपि परिग्रहदोषानाह ॥ कलहेति ॥ अत्यर्थं अर्थानुरागः । परिग्रहोपरि मूर्बारागः ईदृशोऽस्ति । कथंभूतः? कलहएव कलभो बालहस्ती तस्य विंध्यो विंध्याचलः । यथा विंध्याचले कलभः क्रीडति तथाऽत्यर्थं अर्थानुरागे द्रव्यरागे कलहोभवति । तथा क्रोधगृध्रश्मशानं क्रोध एव गृध्रः पक्षिविशेषस्तस्य श्मशानं प्रेतवनं । गृध्रः श्मशाने रमते तथात्र क्रोधः । पुनः व्यसनमेव कष्टमेव भुजगःसर्प्पस्तस्य बिलं । पुनर्द्वेष एव दस्युश्चौरस्तस्य प्रदोषः संध्यासमयः प्रदोषे चौराणां बलं भवति तथा । पुनः सुकृतमेव पुण्यमेव वनं तस्य दावाग्निर्दावानलः । पुनर्मार्दवांभोदवायुः मार्दवं मृदुत्वं कोमलत्वं तदेव अंभोदोमेघस्तत्र वायुः । पुनर्नयो न्याय एव नलिनं कम

लं तत्र तुषारइव तुषारोहिमं । अत्यर्थं इव्यानुरागो लोजः इदृशोऽस्ति । अ तो न कर्त्तव्यः ॥ ४२ ॥

जाषाकाव्यः—सवैया इकतीसा ॥ कलह गयंद उपजायवेको विंध गिरि, कोप गिधके अधायवेकों सुमसानं है ॥ संकट जुजंगके निवास करवेकों बिल, वैरजाव चोरकों महानिसा समांन है ॥ कोमल सुगुन घन खंम वेकों महा पौनं, पुन्नवन दाहवेकों दावानल दांन है ॥ नीति नय नीर ज नसायवेकों हिमरासि, ऐसो परिग्रह राग डुःखको निधान है ॥ ४२ ॥

वली पण परिग्रहना दोषो कहे ले.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तत्रयम् ॥ प्रत्यर्थी प्रशमस्य मित्रमधृतेर्मो हस्य विश्रामजूः, पापानां खनिरापदां पदमसद्ध्यानस्य ली लावनम् ॥ व्याक्षेपस्य निधिर्मदस्य सचिवः शोकस्य हेतुः क लेः, केलीवेश्म परिग्रहः परिहृतेर्योग्योविविक्तात्मनाम् ॥ ४३ ॥

अर्थः—(विविक्तात्मनां के०) विवेकवान् पुरुषोने (परिग्रहः के०) परिग्रह जे ले, ते (परिहृतेः के०) परिहार करवाने (योग्यः के०) योग्य ले. अर्था त् विवेकी जनोयें परिग्रहनो त्याग करवो. ते परिग्रह केहवो ले ? तो के (प्र शमस्य के०) उपशमने (प्रत्यर्थी के०) शत्रु समान ले. वली (अधृतेः के०) असंतोषने (मित्रं के०) मित्र समान ले. वली (मोहस्य के०) मूढनुं एटले मोहनीयकर्मनुं (विश्रामजूः के०) विश्रांति स्थानक एटले मोहने रहेवानुं विश्रामस्थानक ले. तथा वली (पापानां के०) अशुजकर्मोनी (खनिः के०) खाण ले. वली (आपदां के०) आपत्तियोनुं (पदं के०) स्थानक ले. वली (असद्ध्यानस्य के०) आर्त्तरौद्रध्याननुं (लीलावनं के०) क्रीडावन ले. वली (व्याक्षेपस्य के०) व्याकुलपणानो (निधिः के०) जंमार ले. वली (मदस्य के०) अहंकारनो (सचिवः के०) मंत्री ले. वली (शोकस्य के०) शोकनुं (हेतुः के०) कारण ले. वली (कलेः के०) कलह जे ले तेनुं (केलीवेश्म के०) क्रीडागृह ले. माटें परिग्रहनो त्याग करवो ॥ ४३ ॥

टीकाः—पुनः परिग्रहदोषमाह ॥ जो जव्याः ! अयं परिग्रहोमूर्छाधिक्यं वि विक्तात्मनां विवेकवतां पुंसां परिहृतेः परिहारस्य योग्यः । परिग्रहः कीदृशः? प्रशमस्योपशमस्य प्रत्यर्थी शत्रुः । पुनः अधृतेः असंतोषस्य मित्रं सुहृत् । पुन

मोहस्य मूढस्य मोहनीयकर्मस्यैव विश्रामस्थानं । पुनः पापानां अशुभ कर्मणां खनिः खानिः । पुनरापदां कष्टानां पदं आस्पदं । पुनरसद्ध्यानस्य आर्त्तरौद्रध्यानस्य लीलावनं क्रीडावनं । पुनर्व्याक्षेपस्य व्याकुलत्वस्य निधि र्निधानं । पुनर्मदस्याऽहंकारस्य सचिवो मंत्री । पुनः शोकस्य हेतुः कारणं । पुनः कलेः कलहस्य केलीवेश्म क्रीडागृहमित्यर्थः ॥ ४३ ॥

भाषाकाव्यः—वृत्त ऊपरप्रमाणें ॥ प्रसमको अहित अधीरंजको बाल मित्त, माहामोहराजकी प्रसिद्ध राजधानी है ॥ भ्रमको निधान दुरध्यानको विलासवन, विपत्तिको थान अभिमानकी निसानी है ॥ दुरितको खेत रोग सोग उतपति हेत, कलह निकेत दुरगतिको निदानी है ॥ ऐसो परिग्रह भोग सबनको त्याग जोग, आतमगवेषी लोग याकी भांति जानी है ॥ ४३॥

वली पण परिग्रहना त्यागने कहे छे.

वन्हिस्तृप्यति नेंधनैरिह यथा नांभोभिरंभोनिधि, स्त
द्वन्मोहघनोघनैरपि धनैर्जंतुर्न संतुष्यति ॥ न त्वेवं
मनुते विमुच्य विभवं निःशेषमन्यं भवम्, यात्यात्मा
तदहं मुधैव विदधाम्येनांसि भूयांसि किम् ॥ ४४ ॥

अर्थः—(वन्हिः के०) अग्नि, (इह के०) आलोकने विषे (यथा के०) जेम (घनैरपि के०) घणा एवां पण (इंधनैः के०) काष्ठोयें करीने (न के०) नहि (तृप्यति के०) तृप्ति पामे छे. वली (अंभोभिः के०) जलोयें करी ने (अंभोनिधिः के०) समुद्र जेम (न के०) नथी तृप्ति पामतो (त द्वत् के०) तेनी पेरें (जंतुः के०) जीव, (घनैरपि के०) घणा एवा पण (धनैः के०) धनें करीने (न के०) नहि (संतुष्यति के०) संतुष्ट थाय छे. ते प्राणी केहवो छे ? तो के (मोहघनः के०) मोहें करी व्याप्त छे. (तु के०) वली ते जीव (एवं के०) ए प्रकारें (नमनुते के०) नथी मानतो के (आत्मा के०) जे जीव छे, ते (निःशेषं के०) समस्त (वि भवं के०) द्रव्यनें (विमुच्य के०) मूकीने (अन्यं के०) बीजा (भवं के०) जन्मने (याति के०) पामे छे (तत् के०) ते कारणमाटे (अहं के०) हुं (मुधैव के०) वृथाज (भूयांसि के०) घणांक (एनांसि के०) पापोने (किं के०) शामाटें (विदधामि के०) करुं छुं ? एम प्राणी जाणतो नथी. माटें परिग्रहनो

त्याग करवो. अहिं नंदराजा तथा मुम्मणनी कथानो दृष्टांत जाणवो ॥४४॥

टीकाः—वन्हिरिति ॥ यथा वन्हिरग्निः घनैरपि इंधनैः समिद्भिर्न तृप्यति न तृप्तिं याति । पुनर्यथा अंनोनिधिः समुद्रः अंनोनिर्जलैः कृत्वा न तृप्यति । तद्वत् यो जंतुः प्राणी कदाचित् घनैरपि बहुभिर्धनैर्द्रव्यैः कृत्वा न संतुष्यति कथंनूतो जंतुः? मोहेन घनो निबिडः । तु पुनः जंतुः एवं न मनुते न जानाति । यदयं आत्मा जीवो निःशेषं समस्तं विज्ञवं द्रव्यं विमुच्य त्यक्त्वा अन्यं नवं अपरं जन्म परन्नवं याति । तत्तस्मात् कारणात् अहं मुधैव वृथैव नूयांसि प्रचुराणि एनांसि पापानि किमर्थं विदधामि करोमि? एवं न जानाति ॥ ४४ ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिनिः ॥ सूरिनिर्विहितायां तु, प्रक्रमोयं परिग्रहे ॥ ए ॥ इति परिग्रह प्रक्रमः ॥ ए ॥ अत्र.नंदराज मम्मणकथा ॥

नाषाकाव्यः—छप्पय छंद ॥ ज्यों नहिं अगनि अघाय, पाय इंधन अनेक विधि ॥ ज्यों सरिता घननीर, तृपति नहिं होय नीरनिधि ॥ त्यों असंख धन बढत, मूढ संतोष न माने ॥ पाप करत नहिं मरहिं, बंध कारन मन आनै ॥ परतक्ष विलोकि जनम मरन, अथिर रूप संसार क्रम ॥ समुझै न पाप परताप गुन, प्रगट बनारसि मोहन्नम ॥ ४४ ॥

कथाः— मगधदेशें राजगृहीनगरीमां श्रेणिकराजा छे तेनी चेलणा नामें राणी छे, एकदा प्रस्तावें नाद्रपद मासें चेलणा राणी राजानी साथें गोंखमां बेगं थकां वैनारगिरि साहामुं जोवा लाग्यां. तिहां अनेक निर्झरणां वहे छे, गाम गाम दर्दुर स्वर थइ रह्या छे, बप्पैया बोली रह्या छे, मोर नृत्य करे छे, पाणीना प्रवाह वहेता नदीमां समाता नथी. ए अवसरें कोइ एक पुरुषने नदीप्रवाहनी मांहेथी महोटी महेनतें काष्ठ काढतां चेलणायें दीठो, तेथी मनमां विषाद करती राजा प्रत्यें बोली के हे स्वामी ॥ नरि याने सहु को नरे, वूठां वरसे मेह ॥ सधन सनेहा सहु करे, निर्धन दाखे छेह ॥ १ ॥ ए उखाणो जे जगमां कहेवाय छे, ते साचो छे. राजायें पूछ्युं के केम? तेवारें राणीयें कह्युं के हे स्वामी! ए एक दरिद्री पुरुष छे तेने उदर नरवुं दोहेलुं छे, एणे परन्नवें पुण्य कर्युं नथी माटें तमें सर्वने दान आपो छो पण एवा दुःखीने कां देता नथी? तेवारें राजायें सेवक मोकली तेने तेडाव्यो, ते पण आवी नमस्कार करी उनो रह्यो. राजायें कह्युं के

हे पुरुष ! तुं दुःखित थको काष्ठ कापे बे, माटें दुःख नही नोगव. तुऊने जोइयें ते हुं आपुं. तेणें कह्युं के स्वामी ! हुं मम्मणनामें वाणीयो बुं, मुऊने बे बलद जोइयें बेयें. तेमां एक तो मेलव्यो बे पण बीजाने मेलववा माटें उद्यम करुं बुं. राजायें कह्युं के अमारे घरे हजारो बलद बे, तेमां जे सारो होय, ते तुं ले. वणिक बोल्यो के महारा बलदीया अन्य जातिना बे, तमारा तेहवा नथी. अने मने तो महारा बलद जेवोज बलद जोइयें ! ते सांनली तेना बलदने जोवा माटे राजा ते वणिकने घेर आव्यो, घरमां अत्यंत ऋद्धि दीठी, तथा सुवर्णमय रत्नें जडित एक बलद पण दीठो. ते जोइ राजा विस्मयने पाम्यो अने ते सर्व समाचार राणीने जइ कह्या. चिल्लणा पण तिहां बलद जोवा सारु आवी, बलद देखीने मम्मण प्रत्यें बोली. एवा लाकडां कापवाथी तहारे एवो वृषन केम प्राप्त थाशे ? ते बोल्यो के एवा वृषनने अर्थें में समुद्र मांहे प्रवहण पूर्यां बे, ते परदेशमां ए लाकडां वेचीनें तेनां नाणानां रत्न लइ आवशे. तेवारें वृषन नीपजशे. ए काष्ठ जे बे, ते बावनाचंदन बे, एनो मर्म जे परीक्षक होय, तेज जाणे. हुं पण बीजा कोइने शीखवतो नथी. पबी राजा राणी तेना लोनना विचार देखी विषाद धरतां पाबां घेर आव्यां. हवे ते मम्मण शेठ अतिलोनना वशथकी आर्त्तध्यान धरतो विपत्ति पामतो अपूर्ण मनोरथेंज मरण पामी तिर्यंचादिकने विषे घणा घणां नवं पर्यंत नम्यो. एम जाणी नविकजीवें परिग्रहनी विरति करवी ॥ इति परिग्रहविषे मम्मण कथा समाप्ता ॥ ४४ ॥

हवे क्रोधजयने माटें उपदेश कहे बे.

योमित्रं मधुनोविकारकरणे संत्राससंपादने, सर्प्प
स्य प्रतिबिंबमंगदहने सप्तार्चिषः सोदरः ॥ चैतन्य
स्य निषूदने विषतरोः सब्रह्मचारी चिरं, स क्रोधःकु
शलाभिलाषकुशलैः प्रोन्मूलमुन्मूल्यताम् ॥ ४५॥

अर्थः— हे लोको ! (कुशलाभिलाषकुशलैः के०) पोताना जीवना श्रेयनी वांबामां चतुर एवा पुरुषोयें (सः के०) ते (क्रोधः के०) क्रोध, (प्रोन्मूलं के०) समूलथीज जेम होय तेम (उन्मूल्यतां के०) उच्छेदन करवो. ते क्रोध केहवो बे ? तो के (यः के०) जे क्रोध, (विकारकरणे के०) चित्तादि

ने विकारना करवामां (मधुनः के०) मद्यनो (मित्रं के०) मित्र छे. वळी जे क्रोध, (संत्राससंपादने के०) संत्रास मेळववामां एटले जय उत्पन्न करवामां (सर्पस्य के०) सर्पनो (प्रतिबिंबं के०) प्रतिबिंबरूप अथवा सर्पसमान छे. वळी जे क्रोध, (अंगदहने के०) शरीर दहनमां (सप्तार्चिषः के०) अग्निनो (सोदरः के०) भ्राता छे. वळी जे क्रोध, (चैतन्यस्य के०) ज्ञानना (निषूदने के०) नाश करवामां (चिरं के०) अतिशयपणायें करी (विषतरोः के०) विषवृक्षनो (सब्रह्मचारी के०) साधर्मिक छे. अर्थात् ज्ञानना नाश करवानेविषे विष समान छे. माटें ते क्रोधनो त्याग करवो ॥ ४५ ॥

टीकाः—अथ क्रोधजयार्थमुपदेशमाह ॥ योमित्रमिति ॥ जो लोकाः! कुशलाभिलाषकुशलैः आत्मनः श्रेयोवांछाचतुरैर्नरैः सः क्रोधः कोपोनिर्मूलं समूलं यथास्यात्तथा उन्मूल्यतां उच्छिद्यतां । सः कः? यः क्रोधः विकारकरणे चित्तादिविकारविधाने मधुनो मद्यस्य मित्रं सुहृत्। पुनर्यः क्रोधः संत्राससंपादने जयजनने सर्पस्य प्रतिबिंबं सर्प्पसदृशं । पुनर्यः क्रोधोऽगदहने शरीरप्रज्वालने सप्तार्च्चिषोग्नेः सोदरः अग्नेर्भ्राता । पुनर्यः क्रोधश्चैतन्यस्य ज्ञानस्य निषूदने नाशने विषतरोर्विषवृक्षस्य चिरमतिशयेन सब्रह्मचारी सार्धी ॥ ४५ ॥

जाषाकाव्यः—गीताछंद ॥ मात्रा छवीश ॥ जो सुजन चित्त विकार कारन, मनहुं मदिरा पान ॥ जो जरम जय चिंता बढावन, असित सरप समान ॥ जो जंतुजीवन हरन विषसम, जग दहन दवदान ॥ सो कोपरासि विनासि जवि जन, लहत शिवसुख थान ॥ ४५ ॥

वळी पण क्रोधंजयने माटें कहे छे.

॥ हरिणीवृत्तम् ॥ फलति कलितश्रेयः श्रेणिप्रसूनपरंपरः, प्रशमपयसा सिक्तोमुक्तिं तपश्चरणद्रुमः ॥
यदि पुनरसौ प्रत्यासत्तिं प्रकोपहविर्भुजो, जजति लजते जस्मीजावं तदा विफलोदयः ॥ ४६ ॥

अर्थः—(तपश्चरणद्रुमः के०) तप चारित्ररूप जे वृक्ष ते (मुक्तिं के०) मोक्षने (फलति के०) निष्पादन करे छे. ते केहवो वृक्ष छे? तो के (कलितश्रेयःश्रेणिप्रसूनपरंपरः के०) उत्पन्न करी छे जाणे कल्याणनीज पंक्ति होय नही तेम पुष्पनी पंक्ति जेणें. वळी ते वृक्ष केहवो छे? तो के (प्रशम

पयसा के०) उपशमरूपजलें करी (सिक्तः के०) सिंचेलो छे. तो पण (पुनः के०) वली (असौ के०) ए वृक्ष, (यदि के०) जो (प्रकोपहविर्भुजः के०) प्रकोपाग्निनी (प्रत्यासत्तिं के०) समीपताने (जजति के०) आश्रय करे छे. (तदा के०) तो (जस्मीजावं के०) जस्मजावने (लजते के०) प्राप्त थाय छे. ते केहवो छतो प्राप्त थाय छे ? तो के (विफलोदयः के०) गयो छे फलनो उदय जे थकी अर्थात् फलोदय रहित छतो जस्म जावने प्राप्त थाय छे. माटें क्रोधनो त्याग करवो ॥ ४६ ॥

टीकाः—फलतीति ॥ तपश्चारित्ररूपएव डुमो वृक्षः मुक्तिं मोक्षं फलति निष्पादयति । कथंजूतः ? कलिताश्रेयःश्रेणिप्रसूनपरंपरः । कलिता उत्पादिता श्रेयसां पुण्यानां कल्याणानां श्रेणिः राजिरेव प्रसूनानां पुष्पाणां परंपरा पंक्तिर्येन सः । पुनः कथंजूतः ? प्रशमपयसा उपशम एव जलं तेन सिक्तः सेकं प्रापितः यदि पुनः परंतु असौ तपश्चरणडुमः प्रकोपहविर्जुजः क्रोधवन्हेः प्रत्यासत्तिं समीपं जजति आश्रयति, तदा जस्मीजावं जस्मरूपतां लजते प्राप्नोति । कथंजूतः ? विफलोदयः। विगतः फलस्य उदयो यस्मात् फलोदयरहितः॥४६॥

जाषाकाव्यः—कवित्त मात्रा० ॥ जब मुनि कोइ बोइ तप तरुवर, उपसम जल सींचत चित्त खेत ॥ उदित ज्ञान साखा गुन पल्लव, मंगल पुहप मुगति फल हेत ॥ तव तहिं कोप दावानल उपजत, महा मोह दल पवन समेत सो जसमंत करत छिन अंतर, दाहत विरख सहित मुनिचेत ॥ ४६ ॥

शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ संतापं तनुते जिनत्ति विनयं सौहार्दमुत्सादय, त्युद्वेगं जनयत्यवद्यवचनं सूते विधत्ते कलिम् ॥ कीर्त्तिं कृंतति डुर्मतिं वितरति व्याहंति पुण्योदयम्, दत्ते यः कुगतिं स हातुमुचितो रोषः सदोषः सताम् ॥ ४७ ॥

अर्थः—(सः के०) ते (रोषः के०) क्रोध, (सतां के०) सत्पुरुषोने (हातुं के०) त्यागवाने (उचितः के०) योग्य छे. ए केहवो क्रोध छे ? तो के (यः के०) जे रोष, (सदोषः के०) अनेक दोषोयें सहित छे. तथा (संतापं के०) चित्तोद्वेगने (तनुते के०) विस्तारे छे. वली (विनयं के०) विनयगुणने (जिनत्ति के०) जेदे छे. वली (सौहार्दं के०) मित्रजावने (उत्सादयति के०) विनाश करे छे, वली (उद्वेगं के०) उद्वेगने (जन

यति के०) उत्पन्न करे छे. वली (अवद्यवचनं के०) असत्यवचनने (सूते के०) उत्पन्न करे छे. वली (कलिं के०) कलहने (विधत्ते के०) धारण करे छे. वली (कीर्त्तिं के०), यशने (कृंतति के०) छेदे छे. वली (दुर्मतिं के०) दुष्टबुद्धिने (वितरति के०) विस्तारे छे. वली (पुण्योदयं के०) धर्मना उदयने (व्याहंति के०) विनाश करे छे, वली (कुगतिं के०) नरकतिर्यग्गतिने (दत्ते के०) आपे छे. माटें ते क्रोध सज्जनें त्याग करवा योग्य छे ॥ ४७ ॥

टीकाः—पुनः क्रोधस्य दोषमाह ॥ संतापमिति ॥ स रोषः क्रोधः सतां सत्पुरुषाणां हातुं त्यक्तुं उचितो योग्योऽस्ति । कथंभूतः रोषः ? सदोषः अनेक दोषैः सहितः । सः कः ? यो रोषः संतापं चित्तोद्वेगं तनुते विस्तारयति । पुनर्यो रोषो विनयं विनयगुणं भिनत्ति विदारयति विनाशयति । पुनर्यः सौहार्दं मित्रभावं उत्सादयति विनाशयति । पुनर्यः उद्वेगं उच्चाटं जनयति । पुनर्यः अवद्यवचनं असत्यवचनं सूते उत्पादयति । पुनर्यः कलिं कलहं विधत्ते करोति। पुनर्यो रोषः कीर्त्तिर्यशः कृंतति छिनत्ति । पुनर्यो दुर्मतिं दुष्टबुद्धिं वितरति दत्ते । पुनर्यो पुण्योदयं धर्मस्य उदयं व्याहंति विनाशयति । पुनर्यः कुगतिं नरकतिर्यग्गतिं दत्ते । स रोषः सतां हातुं उचितः ॥ ४७ ॥

भाषाकाव्यः—वस्तुछंद ॥ कलह मंडन कलह मंडन करन उदवेग, जस खंडन हित हरन दुःख विलाप संताप साधन ॥ दुरवेन समुच्चरन धरम पुन मारग विराधन ॥ विनय दमन दुरगति गमन, कुमति हरन गुन लोप ॥ ए सब लछन जांनि मुनि, तजहिं ततछन कोप ॥ ४७ ॥

वली पण क्रोधना दोषो कहे छे.

योधर्म्मं दहति द्रुमं दवइवोन्मथ्नाति नीतिं लताम् ॥
दंती वेंदुकलां विधुंतुदइव क्लिश्नाति कीर्त्तिं नृणाम् ॥
स्वार्थं वायुरिवांबुदं विघटयत्युल्लासयत्यापदम्, तृष्णां
घर्मइवोचितः कृतकपालोपः स कोपः कथम् ॥ ४८ ॥

अर्थः—(सः के०) ते (कोपः के०) क्रोध, (कथं के०) कये उपायें करी टालवाने (उचितः के०) योग्य छे ? अर्थात् कोइ उपायथी टालवा लायक नथी. (यः के०) जे कोप (धर्मं के०) धर्मनें (दहति के०) भस्म करे छे

केनी पठें? तोके (डुमं के०) वृक्षने (दवश्व के०) दावानल जे तेज जेम. अर्थात् जेम दावानल वृक्षने बाले ले तेम. वली (नीतिं के०) न्यायने (उन्मथ्नाति के०) उन्मूलन करे ले. केनी पठें? तो के (दंती के०) हस्ती (लतामिव के०) लतानेज जेम. अर्थात् हाथी जेम लताने उखेडी नाखे ले तेम. वली जे क्रोध (नृणां के०) मनुष्योनी (कीर्त्तिं के०) कीर्त्तिनें (क्लिश्नाति के०) क्लेश पमाडे ले. अर्थात् कीर्त्तिनो नाश करे ले. केनी पेठें? तो के (विधुंतुदः के०) राहु, (इंडुकलामिव के०) चंड्रकलानेज जेम. वली जे क्रोध, (स्वार्थं के०) स्वार्थने (विघटयति के०) नाश करे ले. केनी पठें? तो के (वायुः के०) वायु जे ले, ते (अंबुदमिव के०) मेघनेज जेम. वली जे क्रोध, (आपदं के०) कष्टने (उल्लासयति के०) विस्तारे ले. केनी पठें? तो के (घर्मः के०) गरमी, (तृष्णामिव के०) तृषानेज जेम, अर्थात् जेम तापमां तृषा वधे ले तेम. वली ते कोप केहवो ले ? तो के (कृतकृपालोपः के०) कस्यो ले कृपानो नाश जेणे एवो ले ॥ ४८ ॥ क्रोधप्रक्रम संपूर्ण ॥

टीकाः–यो धर्म्ममिति ॥ सः कोपः क्रोधः कथं केनोपायेनोचितोयोग्यः स्यात्? अपि तु न कथमप्युचितः। सः कः? यः कोपोधर्म्मं श्रेयोदहति नस्मीकरोति । कः कमिव? दवो दावानलो डुममिव । यथा दावानलो डुमं वृक्षं दहति। पुनर्येन्नीतिं न्यायं उन्मथ्नाति उन्मूलयति । कः का मिव ? दंती हस्ती लतामिव । यथा हस्ती लतामुन्मूलयति। नृणां मनु ष्याणां कीर्त्तिं क्लिश्नाति पीडयति गमयति। कः कामिव? विधुंतुदो राहुरिं डुकलां चंड्रलेखामिव । पुनर्यो रोषः स्वार्थं विघटयति स्फेटयति । कः क मिव? वायुरंबुदमिव। यथा वायुर्मेघं विघटयति । पुनर्यः आपदं कष्टं उल्ला सयति विस्तारयति। कः कामिव? घर्मः ग्रीष्मः तृष्णामिव। यथातपे स्तृषां वर्द्धयति । कथंनूतः कोपः? कृतः कृपायाः लोपो विनाशो येन सः ॥ ४८ ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिनिः ॥ सूरिनिर्विहितायां तु, क्रोध स्य प्रक्रमोऽजनि ॥ १० ॥ इति दशम क्रोधप्रक्रमः ॥ १० ॥

नाषाकाव्यः–उप्पयछंद ॥ कोप धर्म धन दहै, अगनि जिम विरख वि नासै ॥ कोप सुजस आवरै, राहु जिम चंद गिरासै ॥ कोप नीति दलम लै, नाग जिम लता विहंमै ॥ कोप काज सब हरै, पवन जिम जलधर

खंभै ॥ संचरत कोप दुख ऊपजै, बढै तृषा जिम धूपमहं ॥ करुना विलोप गुन गोप जुत, कोप निसिद्ध महंत कह ॥ ४७ ॥

कथाः— क्रोधत्याग उपर गजसुकुमारनी कथा ॥ सौराष्ट्रदेशें द्वारिका नगरी छे, तिहां कृष्णवासुदेव राज्य करे छे: एकदा देवकीजीयें गवाक्षें बेठां थकां कोइ स्त्रीने पोताना बालकने रंमाडती दीठी, ते जोइने मनमां चिंतव्युं जे मुजने पुत्र होय तो हुं पण दुलरावुं? एम धारी चिंतातुर थइ रही. तिहां श्रीकृष्णें चिंतानुं कारण पूछ्युं. देवकीजीयें बलात्कारथी पोतानुं अभिलषित कह्युं. पछी माताने संतोषी पोषधशालायें आवी अठम तप करी हरणीगमेषी देवता आराध्यो, ते प्रसन्न थइने कहेवा लाग्यो के तमारी माताने पुत्र थाशे, पण ते यौवनावस्थामां दीक्षा लेशे, पछी देवप्रभावें नवमासें देवकीजीने पुत्र थयो, गजसुकुमार नाम दीधुं. अनुक्रमें सकलकला भण्यो, यौवनावस्था पाम्यो, सोमिल ब्राह्मणनी पुत्री परण्यो, एवामां श्रीनेमिनाथ समोसर्या, तेमनी पासेंथी उपदेश सांभली माताने समजावी दीक्षा लीधी. द्विविध शिक्षा पामीने प्रभुने पूछ्युं के महाराज! शीघ्र मोक्ष आपो. प्रभु बोल्या के, स्मशानमां काउस्सग्ग करीयें, क्षमाथी उपसर्ग सहन करीयें, तो तरत मोक्षप्राप्ति थाय, ते सांभली प्रभुनी आज्ञा मागी मसाणमां जइ काउस्सग्ग कर्यो, तेवारें गामथी आवतां सोमिल ब्राह्मणें जमाइने दीठो. के तरत क्रोध उपनो जे एणे महारी पुत्रीने दुःखी करी तो हुं पण एने दुःखी करुं? एम विचारी शीशथी मस्तक सूधी माटीनी पाल बांधी, मांहे खेरनां अंगारा भर्या. गजसुकुमारें चिंतव्युं के ए महारो उपकारी थयो छे, एना उपसर्गथी महारां कर्म क्षय थशे? एम निश्चल ध्यान धरी केवलज्ञान पामी मोक्षें गयो. प्रभातें श्रीकृष्णें भगवानने पूछ्युं के महारो लघुबंधव क्यां छे? ते कहो. भगवानें सर्व वृत्तांत कह्युं तेवारें श्रीकृष्णें पूछ्युं के मारनार कोण छे? भगवानें कह्युं के हमणां मार्गें जातां तुजने देखशे के तरत तेनुं हृदय फाटी जाशे अने मरण पामशे! श्रीकृष्ण पण भगवानने वांदी पाछा वल्या अने मार्गमां तेमज दीठुं, तेवारें मनमां खेद पाम्या. ए रीतें गजसुकुमार क्रोध जीतवाथी मोक्षें गयो. अने सोमिल ब्राह्मण मरी दुर्गतियें गयो. ए माटें क्रोधनो जय करवो ॥ इति क्रोध जयोपरि गजसुकुमारकथा ॥ ४७ ॥

हवे-अहंकारना दोषो कहे छे.

॥ मंदाक्रांतावृत्तम्॥ यस्मादाविर्भवति विततिर्डुस्तरा पन्नदीनाम्, यस्मिन् शिष्टाभिरुचितगुणग्रामनामापि नास्ति॥ यश्च व्याप्तं वहति वंधधीधूम्यया क्रोधदावम्, तं मानाद्रिं परिहर डुरारोहमौचित्यवृत्तेः॥४ए॥

अर्थः—हे भव्य प्राणी! (औचित्यवृत्तेः के०) उचित आचरण करवाथी, अर्थात् योग्यविनय करवाथी (तं के०) ते (मानाद्रिं के०) अहंकाररूप पर्वतने (परिहर के०) त्याग कर. ते मानाद्रि एटले मानरूप पर्वत कहेवो छे? तो के (यस्मात् के०) जेथकी (डुस्तरा के०) न तराय एवी (आपन्नदीनां के०) विपत्तिरूप नदीनी (विततिः के०) पंक्ति, ते (आविर्भवति के०) प्रगट थाय छे. जेम बीजा पर्वतोथकी पण नदीनी श्रेणि उत्पन्न थाय छे तेम. वली (यस्मिन् के०) जे मानरूप पर्वतने विषे (शिष्टाभिरुचित गुणग्रामनामापि के०) उत्तम पुरुषोने प्रीतिदायक एवा जे ज्ञानादिक गुणो अथवा औदार्यादिक जे गुणो तेनो जे समूह, तेनुं जेमां नाम पण (नास्ति के०) नथी. (च के०) वली (यः के०) जे मानाद्रि, (क्रोधदावं के०) क्रोधरूप दावानलने (वहति के०) वहन करे छे. ते क्रोधदावानल केहवो छे? तो के (वधधीधूम्यया के०) हिंसाबुद्धिरूप धूमें करीने (व्याप्तं के०) व्याप्त छे. वली (डुरारोहं के०) उपर चडवाने अशक्य अर्थात् जेनो पार पामवाने पण अशक्य थवाय छे. अथवा बीजो अर्थ करवो. ते जेम के (औचित्य वृत्तेः के०) उचिताचरण करनारने (डुरारोहं के०) ते मानाद्रि चडवाने अशक्य छे. अर्थात् उचिताचरण करनारने मानाद्रिनो अभाव छे ॥४ए॥

टीकाः—अथ मानस्य अहंकारस्य दोषानाह॥ यस्मादिति। भो भव्यप्राणिन! औचित्यवृत्तेः उचिताचारकरणात्। तद्योग्यविनयविधानात् तं मानाद्रिं मानएव अहंकारएव अद्रिस्तं अहंकारपर्व्वतं परिहर। त्यज मुंच। तं कं? यस्मान्मानाद्रेर्डुस्तरा तरीतुं अशक्या। आपन्नदीनां कष्टरूपनदीनां विततिः श्रेणिराविर्भवति प्रकटीभवतिं। अन्यस्मादप्यद्रेर्नदीविततिः प्राडुर्भवति। तथा यस्मिन्मानाद्रौ शिष्टाभिरुचितगुणग्रामनामापि नास्ति। शिष्टानां उत्तमानां अभिरुचिताः प्रीतिदायिनोये गुणा ज्ञानादयः औदार्यादयो वा तेषां ग्रामः

समूहस्तस्य नामापि नास्ति। गुणानां लवलेशोपि न। पुनर्यो मानाद्रिः क्रोधदावं क्रोधदावानलं वहति धत्ते सः। कथंभूतं क्रोधदावं? वधधीधूम्यया व्याप्तं हिंसाबुद्धिधूमसमूहेनालीढं। पुनः कथंभूतं क्रोधदावं? दुरारोहं आरोढुमशक्यं। अथवा औचित्यवृत्तेः योग्यवृत्तेः दुरारोहं ॥ ४ए ॥

जाषाकाव्यः—कवित्त मात्रा० ॥ जातें निकसि विपति सरिता सब, जग में फैलि रही चिहुं ओर ॥ जाके ढिग गुन गाम नाम नहिं, माया कुमति गुफा अति घोर ॥ जहं वध बुद्धिधूमरेखा सम, उदित कोप दावानल जोर ॥ सो अजिमान पहार पटंतर, तजत तांहि सर्वज्ञ किसोर ॥ ४ए ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ शमालानं जंजन् विमलमतिनाडीं विघटयन्, किरन् दुर्वाक्पांशूत्करमगणयन्नागमशृणिम् ॥ भ्रमन्नूर्व्यां स्वैरं विनयनयवीथीं विदलयन्, जनः कं नानर्थं जनयति मदांधो द्विपइव ॥ ५० ॥

अर्थः—(मदांधः के०) अहंकारें करी गयां छे जावरूप नेत्र जेनां एवो (जनः के०) प्राणी (कं के०) कया (अनर्थं के०) अनर्थने (न जनयति के०) नथी उत्पन्न करतो? अर्थात् सर्व अनर्थने उत्पन्न करे छे. केनी परें? तो के (द्विपइव के०) मदोन्मत्त हाथीज जेम. शुं करतो छतो अनर्थने उत्पन्न करे छे? तो के, (शमालानं के०) शमतारूप आलान एटले गजबंधन स्तंज तेने (जंजन् के०) जांजतो छतो. वली शुं करतो छतो? तो के (विमलमतिनाडीं के०) निर्मलबुद्धि रूप नाडि जे बंधनरज्जु तेने (विघटयन् के०) त्रोडतो छतो, वली (दुर्वाक्पांशूत्करं के०) दुर्वचनरूप जे धूड तेनो जे समूह तेने (किरन् के०) विक्षेपण करतो छतो. वली (आगमशृणिं के०) सिद्धांत रूप अंकुशने (अगणयन् के०) न गणतो छतो वली (ऊर्व्यां के०) पृथ्वीने विषे (स्वैरं के०) स्वेछायें करी (भ्रमन् के०) जमतो छतो, वली (विनयनयवीथीं के०) विनयरूप न्यायश्रेणि तेने (विदलयन् के०) विनाश करतो छतो अनर्थने उत्पन्न करे छे. अर्थात् जेम अहंकार मदांध पुरुष उपर कहेली वात करतो छतो अनर्थ उत्पन्न करे छे, तेम मदांध हाथी पण एटली वस्तु उत्पन्न करतो छतो अनर्थने करे छे ॥ ५० ॥

टीकाः— जूयोऽपि मानदोषानाह ॥ शमालानमिति ॥ मदेन अहंकारेण

अंधो गतभावेक्षणो जनः कं कं अनर्थं न जनयति नोत्पादयति ? अपि तु सर्व्वं अनर्थं जनयति । क इव ? द्विप इव । मत्तगज इव । यथा मदांधो द्विपोऽनर्थं उपद्रवं जनयति । किं कुर्व्वन् ? शमालानं भंजन् शमएव उपशम एवालानः गजबंधनस्तंभस्तं भंजन् उन्मूलयन् । पुनः किं कुर्व्वन् ? विमल मतिनाडीं निर्मलबुद्धिमेव नाडीं बंधनरज्जुं विघट्टयन् त्रोटयन् । पुनः किं कुर्व्वन् ? दुर्व्वाक् पांशूत्करं दुर्वागेव दुर्वचनमेव पांशुर्धूलिस्तस्याः उत्करं समूहं किरन् विक्षिपन् । पुनः आगमएव सिद्धांतएव सृणिः अंकुशस्तं अगणयन् । अविचारयन् अवमानयन् । उर्व्यां पृथ्व्यां स्वैरं स्वेच्छया भ्रमन् विचरन् । पुनर्विनयनयवीथीं । विनय एव नयवीथीः न्यायश्रेणिस्तं विदलयन् विध्वंसयन् । अन्योऽपि मदांधोहस्ती एतानि वस्तूनि करोति ॥ ५० ॥

भाषाकाव्यः– रोडकछंद ॥ भंजे उपसम थंभ, सुमति जंजीर विहंडे ॥ कुवचन रज संग्रहे, विनय वन पंकति खंडे ॥ जगमें फिरे सुछंद, वेद अंकुश नहिं माने ॥ गज ज्यों नर मद अंध, सहज सब अनरथ ठाने ॥ ५० ॥

वली पण मानना दोषो कहे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ औचित्याचरणं विलुंपति पयोवाहं नभस्वानिव, प्रध्वंसं विनयं नयत्यहिरिव प्राणस्पृशां जीवितम् ॥ कीर्त्तिं कैरविणीं मतंगजइव प्रोन्मूलयत्यंजसा, मानोनीचइवोपकारनिकरं हंति त्रिवर्गं नृणाम् ॥ ५१ ॥

अर्थः–(मानः के०) अहंकार, (नृणां के०) मनुष्यना (त्रिवर्गं के०) धर्म, अर्थ, काम, ए त्रण वर्ग जे तेने (हंति के०) नाश करे छे. केनी पठें ? तो के (नीचः के०) नीच पुरुष, (उपकारनिकरमिव के०) उपकारसमूहनेज जेम हणे छे तेम. वली ते मान, (औचित्याचरणं के०) योग्य एवा आचरणने (विलुंपति के०) नाश करे छे. केनी पठें ? तो के (नभस्वान् के०) वायु (पयोवाहमिव के०) मेघनेज जेम, वली (प्राणस्पृशां के०) प्राणीना (विनयं के०) अभ्युत्थानादिक विनयने (प्रध्वंसं के०) क्षयप्रत्यें (नयति के०) पमाडे छे. केनी पठें ? तो के (अहिः के०) सर्प, (जीवितमिव के०) जीवतरनेज जेम क्षय पमाडे छे, तेम. अर्थात् जेम सर्प जीवितने क्षय पमाडे छे तेम ते मानी पुरुष विनयनो नाश करे छे. वली (अं

जसा के०) वेगें करी (कीर्त्तिं के०) कीर्त्तिने (प्रोन्मूलयति के०) उन्मूलन करे छे. केनी पठें ? तो के (मतंगजइव के०) मदोन्मत्त हस्ती (कैरविणीं के०) कमलिनीनेज जेम. अर्थात् हस्ती जेम कमलिनीने उन्मूलन करे छे तेम कीर्त्तिनुं उन्मूलन मान करे छे ॥ ५१ ॥

टीकाः—औचित्येति ॥ पुनराह ॥ मानोऽहंकारो नृणां पुंसां त्रिवर्गं धर्मार्थकामरूपं हंति नाशयति । कः किमिव ? नीचः मनुष्यः उपकारनिकरमिव । यथा नीचः उपकारसमूहं हंति तथा । पुनर्मानः औचित्याचरणं योग्याचारं विलुंपति स्फेटयति । कः कमिव ? नभस्वान् वायुः पयोवाहमिव । पुनर्मानः प्राणस्पृशां प्राणिनां विनयं अभ्युत्थानादिकं प्रध्वंसं क्षयं नयति । कः किमिव ? अहिः सर्पो जीवितमिव यथा सर्पोजीवितं क्षयं नयति । पुनरंजसा वेगेन कीर्त्तिं यशः प्रोन्मूलयति । कः कामिव ? मतंगजो हस्ती कैरविणीं कमलिनीं यथा प्रोन्मूलयति ॥ ५१ ॥

भाषाकाव्यः—कडखा छंद ॥ मान सवि उचित आचार भंजन करै, पवन संचार जिम घन विहंडै ॥ मान आदरत नय विनय लोपै सकल, भुजग विष नीर जिम मरन मंडै ॥ मानके उदित जगमांहि विनसै सुजस, कुपित मातंग जिम कुमुद खंडै ॥ मानकी रीति विपरीत करतूति जिम, अधमकी प्रीति नर नीति छंडै ॥ ५१ ॥

वली पण मानना दोषो कहे छे.

वसंततिलकावृत्तम् ॥ मुष्णाति यः कृतसमस्तसमीहितार्थं, संजीवनं विनयजीवितमंगभाजाम् ॥ जात्यादिमानविषजं विषमं विकारम्, तं मार्दवामृतरसेन नयस्व शांतिम् ॥ ५२ ॥ इति मानप्रक्रमः ॥ ११ ॥

अर्थः—(यः के०) जे अहंकार, (अंगभाजां के०) प्राणीना (विनयजीवितं के०) विनयगुणरूप जीवितने (मुष्णाति के०) उच्छेदन करे छे. एकेहवुं विनयजीवित छे ? तो के (कृतसमस्तसमीहितार्थसंजीवनं के०) कर्युं छे समस्त वांछितार्थनुं संजीवन जेणें एवुं छे. माटें (तं के०) ते (जात्यादिमानविषजं के०) जाति, लाभ, कुल, ऐश्वर्य, बल, रूप, तप, श्रुत, तेनो जे अहंकार ते रूप जे विष, तेथकी उत्पन्न थयेला एवा (विषमं के०) घोर

एवा (विकारं के०) विकारने (मार्दवामृतरसेन के०) मृडुतारूप अमृतरसें करी (शांतिं के०) उपशमप्रत्यें (नयस्व के०) पमाडो अर्थात् मानने नम्रता रूप रसें करी शांतिप्रत्यें पमाडो ॥५१॥ इति एकादश मानप्रक्रमः ॥११॥

टीकाः—नूयश्चाह ॥ मुष्णातीति ॥ योमानोऽग्नाजां प्राणिनां विनय जीवितं विनयगुणरूपं जीवितं मुष्णाति छिनत्ति। कथंनूतं विनयजीवितं? कृतसमस्तसमीहितार्थसंजीवनं। कृतं समस्तानां समीहितार्थानां वांछितार्था नां संजीवनं येन तत्। तं जात्यादिमानविषजं जातिलानकुलैश्वर्यबलरूपतपः श्रुतानां मानोऽहंकार स एव विषं तस्मात्समुद्भवं उत्पन्नं विषमं घोरं विकारं मा र्दवाऽमृतरसेन मृडुतासुधारसेन शांतिं उपशमं नयस्व प्रापय॥ मानत्यागे बाहु बलि नंदीषेण दृष्टांतः ॥५१॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिन्तिः॥ सूरिनिर्विहितायां तु, मानस्य प्रक्रमोऽजनि ॥ ११॥ इति मानप्रक्रमः ॥११॥

नाषाकाव्यः—चोपाई ॥ मान विषम विष तन संचरै, विनय विनासै वं छित हरै ॥ कोमल गुन अमृत संयोग, विनसै मान विषम विष रोग ॥५१॥

कथाः— मगधदेशें राजगृहनगरीयें श्रेणिकराजा छे तेनो नंदिषेण नामें पुत्र गुणें करी पवित्र छे, तिहां गुणशैलचैत्यें श्रीमहावीर समोसस्या, नंदी षेणें नगवानने वांद्या, धर्मदेशना सांनलीने दीक्षा लेवानो नाव थयो. तेवारें शासन देवतायें कह्युं के हजी तमारे नोगावली कर्म शेष रह्यां छे, ते नोगव्या पछी चारित्र लेजो. कारण के अवसरें सर्व रूडुं कहेवाय अने अवसरेंज फल दायक थाय, एम शासन देवतायें समजाव्युं. तेमनुं वचन अप्रमाण करी नवितव्यताने वशें तेणें दीक्षा लीधी. ते घणा वर्ष पाली, घणी लब्धियो उपनी. एकदा पारणें वहोरवा माटें वेश्याने घेर आवीने धर्मलान दीधो, वेश्यायें अर्थलान कह्यो. तेवारें नंदीषेणें तरणुं ताणीने साडी बार क्रोड़ द्रव्यनो वरसाद वरसाव्यो, यावत् नोगावली कर्मथी तिहां रह्यां. वेश्या सार्थे नोग नोगववा लाग्या. तिहां बार वर्ष वही गयां. नित्य प्रत्यें दश दश माणसने प्रतिबोध पमाडी श्रीवीरनी पासें दीक्षा लेवा मोकले.

एकदा नोगावली कर्मनो क्षय थवाथी उपदेश देतां नव जणने प्रति बोध पमाडी श्रीवीर पासें मोकल्या पण दशमो सोनी प्रतिबोध न पाम्यो. तेणें कह्युं के जेम मुजने उपदेश आपो छो, तेम तमें केम आदरता नथी? एवामां नोजनवेला थवाथी स्त्रीयें आवीने रीशथी नोजन करवाने बोलाव्या. तेवारें

नंदीषेणे बोल्यो के दशमो हुं. एम कही श्रीवीरपासें चालवा मांड्युं. स्त्रीयें घणी रीतें समजाव्यो, परंतु तेने पण प्रतिबोधी दीक्षा लइ सद्गतियें गयो. एम नंदीषेणें अहंकार कर्यो, तो चारित्रथी पड्यो. इति मानत्याग ऊपर नंदीषेणनी कथा ॥ ११ ॥ माटे मान त्यागवुं ॥ ५२ ॥

हवे मायात्यागनो प्रक्रम कहे छे.

मालिनीवृत्तम् ॥ कुशलजननवंध्यां सत्यसूर्या
स्तसंध्याम्, कुगतियुवतिमालां, मोहमातंगशा
लाम् ॥ शमकमलहिमानीं दुर्यशोराजधानीम्,
व्यसनशतसहायां, दूरतोमुंच मायाम् ॥ ५३ ॥

अर्थः—हे भव्यजन! (मायां के०) कपटने (दूरंतो के०) दूरथकी (मुंच के०) मूक. ए माया केहवी छे? तो के (कुशल के०) क्षेमना (जनन के०) उत्पन्न करवामां (वंध्यां के०) वंध्या स्त्री समान, तथा (सत्यसूर्यास्तसंध्यां के०) सत्यवचनरूप जे सूर्य तेना अस्तने माटें संध्यासमान छे, वली (कुगतियुवतिमालां के०) कुगतिरूप जे स्त्री तेने पहेरवानी माला समानछे. वली (मोहमातंगशालां के०) मोहरूप हस्तीने बांधवानी शाला समान छे, वली (शमकमलहिमानीं के०) उपशमरूप जें कमलों तेनी ऊपर पडावामां हिमसमान छे वली (दुर्यशोराजधानीं के०) अपकीर्त्तिने रहेवाने निवासनगरी छे, वली (व्यसनशतसहायां के०) सहस्र गमे कष्टोनी सहायभूत छे, माटें मायानो दूरथीज त्याग करवो ॥ ५३ ॥

टीकाः—अथ मायात्यागमाह ॥ कुशलेति ॥ भो भव्यजन! मायां कपटं दूरतोमुंच त्यज । कथंभूतां मायां? कुशलस्य क्षेमस्य जनने उत्पादने वंध्यां वंध्यास्त्रीरूपां । पुनः सत्यमेव सूर्यस्तस्याऽस्तमनाय संध्या तां । पुनः किंभूतां? कुगतिरेव युवतिस्तस्याः वरमाला तां । पुनः किंभूतां? मोहएव मातंगस्तस्य शाला बंधनस्थानं तां । पुनः किंभूतां? शमएव उपशम एव कमलानि तेषां हिमानी हिमसंहतिः तां । पुनः किंभूतां? दुर्यशसः अपकीर्त्तेः राजधानी निवासनगरी तां । पुनः किंभूतां? व्यसनानां कष्टानां शतानि तेषां सहायो यस्याः सा तां । ईदृशीं मायां दूरतो मुंच ॥ ५३ ॥

नाषाकाव्यः—रोड़कबंद ॥ कुशल जनन कहुं वांऊ, सत्त रवि हरन सांऊ थिति ॥ कुगति जुवति उर माल, मोह कुंजर निवास बिति ॥ शमवारिज हिमरासि, पाप संताप सहायिनी ॥ अजस खानि जग जानि, तजहुं माया डुख दायिनी ॥ ५३ ॥

वली पण मायाना दोषो कहे बे.

उपेंद्रवज्रावृत्तम् ॥ विधाय मायां विविधैरुपायैः, परस्य ये वंचनमाचरंति, ते वंचयंति त्रिदिवापवर्ग, सुखान्महामोहसखाः स्वमेव॥५४॥

अर्थः—(ये के०) जे जनो (विविधैः के०) अनेक प्रकारना (उपायैः के०) उपायोयें करीने (मायां के०) कपटने (विधाय के०) करीने (परस्य के०) बीजा जननुं (वंचनं के०) वंचनने एटले अन्य जनोने उगवानुं (आचरंति के०) आचरण करे बे. (ते के०) ते जनो (महामोहसखाः के०) महामोह बे सखाइ जेनो एवा बता अर्थात् अज्ञानयुक्त बता, (त्रिदिवापवर्गसुखात् के०) देवलोक तथा मोक्षसुखथकी, (स्वमेव के०) पोतेंज पोताना आत्माने (वंचयंति के०) बेतरे बे ॥ ५४ ॥

टीकाः—पुनराह ॥ विधायेति ॥ ये जनाः विविधैर्नानाप्रकारैरुपायैर्मायां कपटं विधाय कृत्वा परस्यान्यजनस्य वंचनं आचरंति कुर्वंति ते जनाः। महामोहसखाः महदज्ञानयुक्ताः संतः त्रिदिवापवर्गसुखात् देवलोकमोक्षसुखात् स्वयमेवात्मानमेव वंचयति विप्रतारयंति ॥ ५४ ॥

नाषाकाव्यः—वेसरिबंद ॥ मोह मगन माया मन संचै, करि उपाउ और नकों वंचै ॥ अपनी हानि लखे नहि सोइ, सुगति हरै डुर्गतिडुःख होइ ॥५४॥

वली पण मायाना दोषो कहे बे.

इंद्रवंशावृत्तम् ॥ मायामविश्वासविलासमंदिरं,
डुराशयोयः कुरुते धनाशया ॥ सोऽनर्थसार्थं न प
तंतमीक्षते, यथा बिडालो लगुडं पयः पिबन् ॥५५॥

अर्थः— (यः के०) जे (डुराशयः के०) डुष्टचित्तयुक्त एवो जीव, (धनाशया के०) इव्यनी आशायें करी अर्थात् इव्यलोनें करी (मायां के०) कपटने (कुरुते के०) करे बे. (सः के०) ते प्राणी, (पतंतं के०)

आवतो एवां (अनर्थसार्थं के०) कष्टना समूहने (नईक्षते के०) नथी जोतो. केनी पठें? तो के (बिडालः के०) बिल्लाडो ते (पयः के०) दूधने (पिबन् के०) पीतो बतो (लगुडं के०) दंमप्रहारने (यथा के०) जेम जोतो नथी! ते केवी माया बे? तो के (अविश्वासविलासमंदिरं के०) अविश्वास जे अप्रतीति तेने रमवानुं गृह बे. माटें मायानो त्याग करवो ॥ ५५ ॥

टीकाः– पुनर्मायादोषमाह ॥ यो दुराशयोऽदुष्टचित्तोजनो धनाशया द्रव्यस्य वांबया लोनेन मायां कपटं कुरुते विदधाति । स जनः आत्मनोऽनर्थसार्थं कष्टानां समूहं पततं आगबंतं नेक्षते नालोकते । कथं? यथा बिडालो मार्जारः पयो दुग्धं पिबन् सन् लगुडं दंमप्रहारं नेक्षते नालोकते कथंनूतां मायां? अविश्वासस्य अप्रतीतेः क्रीडागृहं । मंदिरशब्दस्याजहल्लिंगत्वं ॥ ५५ ॥

नाषाकाव्यः–पद्धडीबंद ॥ माया अविसास विलास गेह, जो करै मूढ जन धन सनेह॥ सो कुगति बंध नहिं लखै एम, तजि नय बिलाउ पय पिवै जेम॥५५॥

वली मायाना दोषो कहे बे.

॥ वसंततिलकावृत्तम् ॥ मुग्धप्रतारणपरायणमुज्जिहीते, यत्पाटवं कपटलंपटचित्तवृत्तेः ॥ जीर्यत्युपप्लवमवश्यमिहाप्यकृत्वा, नापथ्यनोजनमिवामयमायतौ तत् ॥ ५६ ॥ इति मायाप्रक्रमः ॥ १७ ॥

अर्थः–(कपटलंपटचित्तवृत्तेः के०) मायाने विषे वांबायुक्त बे चित्तवृत्ति जेनी एवा पुरुषनुं (यत्पाटवं के०) जे चातुर्य (उज्जिहीते के०) प्रकाश थाय बे, (तत् के०) ते चातुर्य, (अवश्यं के०) निश्चें करी (आयतौ के०) आवता समयने विषे (इहापि के०) आहिं पण (उपप्लवं के०) उपद्रवने (अकृत्वा के०) न करीने (नजीर्यति के०) परिणाम पामतुं नथी. अर्थात् ते मायाकृत चातुर्य, कांइ पण उपद्रव कर्या शिवाय परिणाम पामतुं नथी. केनी पठें? तो के (अपथ्यनोजनं के०) कुपथ्यनुं नोजन, (आमयं इव के०) रोगनेज जेम. अर्थात् कुपथ्यनोजन, आगामिकालने विषे रोगने उत्पन्न कर्या शिवाय परिणाम पामतुं नथी तेम मायाकृत चातुर्य पण जाणवुं. हवे ते मायाकृत चातुर्य केहवुं बे? तो के (मुग्धप्रतारणप

रायणं के०) मूर्खजनने छेतरवाने तत्पर छे ॥ ५६ ॥ इति माया प्रक्रमः ॥ १२ ॥ ए माया उपर श्रीमल्लिनाथजीना पूर्वभवनी कथा जाणवी ते प्रसिद्ध छे माटें आहीं लखी नथी ॥ १२ ॥

टीकाः–पुनराह ॥ मुग्धप्रतारणेति ॥ कपटे मायायां लंपटा वांछायुक्ता चित्तवृत्तिर्मनोव्यापारो यस्य तस्य पुरुषस्य यत्पाटवं चातुर्यं तस्मिन्नीहिते उल्लासति । तत्पाटवं अवश्यं निश्चयेन आयत्तौ आगामिनि काले उपप्लवं उपद्रवं अकृत्वा अविधाय न जीर्यति परिणामं न याति। किं कुतः?, तस्य विपाकोभवत्येव। किमिव ? अपथ्यभोजनं आमयमिव । यथा अपथ्यं भोजनं जेमनं आमयं रोगं अकृत्वा आयतौ न जीर्यति । कथंभूतं पाटवं ? मुग्धानां मूर्खानां प्रतारणे वंचने परायणं तत्परं ॥ अत्र मल्लीनाथजीवमहाबलदृष्टांतः ॥ ५६ ॥ इति ॥ सिंदूरप्रकाख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, मायायाः प्रक्रमोऽजनि ॥ १२ ॥ इति द्वादशोमाया प्रक्रमः॥ १२ ॥

भाषाकाव्यः–आभानकछंद ॥ ज्यौं रोगी करि कुपथ, बढावै रोग तन ॥ स्वाद लंपटी भयो, कहै मुझ भनम धन ॥ त्यौं कपटी करि कपट, मूढ को धन हरै ॥ करै कुगतिको बंध, हरष मनमें धरै ॥ ५६ ॥

हवे लोभत्यागनो उपदेश करे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ यद्दुर्गामटवीमटंति विकटं क्रामंति देशांतरम्, गाहंते गहनं समुद्रमतनुक्लेशां कृषिं कुर्वते ॥ सेवंते कृपणं पतिं गजघटासंघट्टदुःसंचरम्, सर्पंति प्रधनं धनांधितधियस्तल्लोभविस्फूर्जितम् ॥५७॥

अर्थः–(धनांधितधियः के०) धनें करी अंध थयेली छे बुद्धि जेनी एवा पुरुषो, अर्थात् लोभी जनो (यत् के०) जे धनने माटें (दुर्गां के०) न जवाय एवी (अटवीं के०) अरण्यप्रत्यें (अटंति के०) अटन करे छे. एटले अरण्यमां फरे छे. वली (विकटं के०) विस्तीर्ण एवा (देशांतरं के०) देशांतर प्रत्यें (क्रामंति के०) भ्रमण करे छे. वली (गहनं के०) कोइथी न अवगाहन थाय एवा (समुद्रं के०) समुद्रप्रत्यें (गाहंते के०) अवगाहन करे छे. वली (अतनुक्लेशां के०) बहु कष्टें करी साध्य थाय एवी (कृषिं के०)

खेतीने (कुर्वंते के०) करे छे. वळी (कृपणं के०) अदाता एवा (पतिं के०) स्वामीने (सेवंते के०) सेवे छे, वळी (गजघटासंघट्टदुःसंचरं के०) हस्तिसमूहना यूथें करी जेमां न जवाय एवा (प्रधनं के०) युद्धप्रत्यें (सर्पंति के०) जाय छे. (तत् के०) ते पूर्वोक्त सर्व (लोभविस्फूर्जितं के०) लोभनुं विचेष्टित जाणवुं. अर्थात् लोभवशें करी प्राणी सर्व चेष्टा करे छे, माटें लोभनो त्याग करवो ॥५७॥

टीकाः—अथ लोभत्यागोपदेशमाह ॥ यद्दुर्गामेति ॥ धनेन वित्तेनांधिता अंधप्रायकृता धीर्बुद्धिर्येषां ते ईदृशाः पुरुषाः । यत् दुर्गां विषमां अटवीं अरण्यं अटंति क्रामंति । पुनर्यत् विकटं विस्तीर्णं देशांतरं क्रामंति भ्रमंति । पुनर्यत् गहनं दुरवगाहंगाहंते उल्लंघयंति । पुनर्यत् अतनुक्लेशां बहुकष्टसाध्यां कृषिं कर्षणं क्षेत्रादि कुर्व्वते विदधते । पुनर्यत् कृपणं अदातारं पतिं स्वामिनं सेवंते । पुनर्यत् गजघटानां हस्तिसमूहानां संघेन दुःसंचरं गंतुमशक्यं प्रधनं युद्धं प्रति सर्प्पंति गच्छंति । तत् सर्व्वं लोभस्य विस्फूर्जितं । लोभस्य चेष्टितं जानीहि । लोभवशादेतानि वस्तूनि कुर्व्वंति । अतःकारणाल्लोभः संत्याज्यएव ॥५७॥

भाषाकाव्यः—सवैय्या इकतीसा ॥ सहै घोर संकट समुद्रकी तरंगनिमें, कंपै चित भीत पंथ गाहै वीज वनमें ॥ ठानै कृषिकर्म जामें शर्मको न लेश कहुं, संकलेश रूप व्हैके जूझि मरै रनमें ॥ तजै निज धामकों विराम परदेश धावै, सेवैं प्रभु कृपन मलीन रहै मनमें ॥ सोले धन कारज अनारज मनुज मूढ, ऐसी करतूति करे लोभकी लगनमें ॥ ॥ ५७ ॥

वळी पण लोभना दोषो कहे छे.

मूलं मोहविषद्रुमस्य सुकृतांभोराशिकुंभोद्भवः, क्रो
धाग्नेररणिः प्रतापतरणिप्रच्छादने तोयदः ॥ क्रीडा
सद्म कलेर्विवेकशशिनः स्वर्भाणुरापन्नदी, सिंधुः की
र्त्तिलताकलापकलभो लोभः पराभूयताम् ॥ ५८ ॥

अर्थः—हे भव्यलोको ! (लोभः के०) लोभ जे छे ते (पराभूयतां के०) पराभव करीयें, एटले लोभनो त्याग करीयें. ते लोभ केहवो छे ? तो के (मोहविषद्रुमस्य के०) अज्ञानरूप जे विषतरु तेनुं (मूलं के०) मूळ छे वळी (सुकृतांभोराशिकुंभोद्भवः के०) पुण्यरूप समुद्रना शोषणने विषे अगस्ति ऋषि समान छे, वळी (क्रोधाग्नेः के०) क्रोधरूप जे अग्नि तेनुं (अरणिः के०)

काष्ठ छे, एटले क्रोधाग्निनुं उत्पत्तिस्थानक छे. वली (प्रतापतरणिप्रछादने के०) प्रतापरूप सूर्यने ढांकवामां (तोयदः के०) मेघसमान छे, वली (कलेः के०) कलहनुं (क्रीडासद्म के०) लीलागृह छे, वली (विवेकशशिनः के०) पुण्यापुण्यरूप चंद्रमा जे तेने (स्वर्भाणुः के०) राहुसमान छे, वली (आपन्नदीसिंधुः के०) आपत्तिरूप नदीयो जे छे तेने धारण करवामां समुद्र छे. अर्थात् आपत्तिनुं स्थानक छे वली (कीर्त्तिलताकलापकलभः के०) कीर्त्तिरूप जे वल्ली तेनो जे समूह तेना नाशने विषे हस्तीना बच्चा समान छे? एवो पूर्वोक्त दुर्गुण युक्त जे लोभ तेनो त्याग करवो ॥ ५८ ॥

टीकाः—पुनराह ॥ मूलमिति ॥ भो भव्याः! लोभः पराभूयतां निराक्रियतां त्यज्यतां। मोहएव अज्ञानमेव विषद्रुमोविषतरुः तस्य मूलं जटारूपं। मूलशब्दस्याऽऽह्लिंगत्वं । पुनः कथंभूतो लोभः? सुकृतमेव पुण्यमेवांभोराशिः समुद्रस्तस्य शोषणे कुंभोद्भवोऽगस्तिरिव। पुनः क्रोधाग्नेः अरणिः क्रोधएव अग्निस्तस्य अरणिः काष्ठं उत्पत्तिस्थानं। पुनः प्रतापएव तरणिः सूर्यस्तस्याछादने तोयदो मेघोऽभ्रं । पुनः कलेः कलहस्य क्रीडासद्म लीलागृहं । पुनर्विवेकएव पुण्यापुण्यविचारएव शशी चंद्रस्तस्य स्वर्भाणुः राहुः। पुनः आपन्नदीसिंधुः आपदः कष्टान्येव नद्यस्तासां सिंधुः समुद्रस्तासां स्थानरूपत्वात्। पुनः किंभूतोलोभः? कीर्त्तिरेवलता वल्ली तस्याः कलापः समूहस्तस्य विनाशे कलभो हस्तिशावः। ईदृशोलोभोजीर्यतां ॥ ५८ ॥

भाषाकाव्यः—वृत्त उपरप्रमाणें ॥ पूरन प्रताप रवि रोकवेकों धाराधर, सुकृत समुद्र शोषवेकों कुंभनंद है ॥ कोप दव पावक जननको अरनि दारु, मोह विष भूरुहको महा दृढकंद है ॥ परम विवेक निसिमनि ग्रसिवेकों राहु, कीरति लता कलाप दलन गयंद है ॥ कलहको केलि भौन आपदा नदीको सिंधु, ऐसो लोभ याहिको विपाक दुख दंद है ॥ ५८ ॥

फरीने पण लोभना दोषो कहे छे.

वसंततिलकावृत्तम् ॥ निःशेषधर्मवनदाहविजृंभमाणे, दुःखौघभस्मनि विसर्पदकीर्त्तिधूमे ॥ बाढं धनेंधनसमागमदीप्यमाने, लोभानले शलभतां लभते गुणौघः ॥ ५९ ॥

अर्थः—(लोनानले के०) लोनरूप अग्निने विषे (गुणौघः के०) ज्ञानादिकगुणोनो समूह, (शलनतां के०) पतंगपणाने (लनते के०) प्राप्त थाय ने. अर्थात् अग्निमां जेम पतंग पडीने बले ने, तेम गुणसमूह, ते लोनरूप अग्निमां पडीने बले ने. हवे ते लोनानल कहेवो ने? तो के (निःशेषधर्मवनदाहविजृंनमाणे के०) समस्त धर्मरूप जे वन तेने बालवे करी विस्तार पामेलो एवो वली (दुःखौघनस्मनि के०) दुःखना समूहरूप ने नस्म जेमां एवो, वली (विसर्पदकीर्त्तिधूमे के०) प्रसरती जे अपकीर्त्ति ते रूप ने धूम जेमां ऐवो, वली (बाढं के०) अतिशयें करी (धनेंधनसमागमदीप्यमाने के०) धनरूप जे काष्ठ तेना समागमें दीप्यमान अर्थात् अत्यंत धनरूप इंधनें करी जाज्वल्यमान एवो ने तेमां सर्वे गुणो पतंगनी पतें बली जाय ने॥५९॥

टीकाः—पुनराह ॥ निःशेषेति ॥ लोनएवानलोऽग्निस्तस्मिन् लोनानले गुणौघोज्ञानादिगुणानां उघः समूहः शलनतां पतंगत्वं लनते। पतंगवज्ज्वलति। कथंनूते लोनानले? निःशेषं समस्तं यद्धर्मएव वनं तस्य दाहेन विजृंनमाणः विस्तारं प्राप्नुवन् तस्मिन्। पुनः कथंनूते? दुःखानां उघः समूह एव नस्म रक्षा यत्र स तस्मिन्। पुनः कथंनूते? विसर्प्पत् प्रसरत् अपकीर्त्तिरेव धूमो यस्मात् सः तस्मिन्। पुनः कथंनूते? बाढं अतिशयेन धनान्येव इव्याण्येव इंधनानि एधांसि तेषां समागमेन आगमनेन दीप्यमानोऽत्यंतं प्रज्वलत् वृध्दिं प्राप्नुवत् तस्मिन्। सर्वे गुणाः पतंगवत् नवंति ॥५९॥

नाषाकाव्यः—छप्पयछंद ॥ परम धरम वन दहे, डुरित अंबर गति धारे॥ कुजस धूम उगिरे, नूरि नय नस्म विदारे ॥ डुःख फुलिंग फूंकरे, तरल तिस्ना कल कढे ॥ धन इंधन आगम, संयोग दिन दिन अति वढे॥ लह लहे लोन पावक प्रबल, पवन मोह उद्धत वहे ॥ दजहिं उदारता आदि बहु, गुन पतंगको दाव है ॥ ५९ ॥

संतोषें करी लोन निवारण करवा योग्य ने, माटें संतोषना गुणो कहे ने.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ जातः कल्पतरुः पुरः सुरगवी तेषां प्रविष्टा गृहम्, चिंतारत्नमुपस्थितं करतले प्राप्तोनिधिः संनिधिम् ॥ विश्वं वश्यमवश्यमेव सुलनाः स्वर्गापवर्गश्रियो, ये संतोषमशेषदोषदहनध्वंसांबुदं बिभ्रते ॥ ६० ॥ लोनप्रक्रमः ॥ १३ ॥

अर्थः– (ये के०) जे मनुष्यो (संतोषं के०) तृष्णानो जे निरोध कर वो तेने (बिभ्रते के०) धारण करे छे; (तेषां के०) ते पुरुषोना (पुरः के०) अग्रने विषे (कल्पतरुः के०) कल्पवृक्ष, (जातः के०) उत्पन्न थयो छे. वली ते पुरुषोना (गृह के०) गृहप्रत्यें (सुरगवी के०) कामधेनु, (प्रविष्टा के०) प्रवेश थयेली छे. अर्थात् आवेली छे. वली तेना (करतले के०) हस्ततलने विषे (चिंतारत्नं के०) चिंतामणि रत्न (उपस्थितं के०) प्राप्त थयुं छे. वली ते पुरुषोने (निधिः के०) द्रव्यनंभार, (सन्निधिं के०) समीपताने (प्राप्तः के०) प्राप्त थाय छे. व ली ते मनुष्यने (विश्वं के०) जगत्, (अवश्यं के०) अवश्य (वश्यमेद के०) वशज थाय छे. अने वली ते पुरुषोने, (स्वर्गापवर्गश्रियः के०) देवलोकनी अने मो क्षनी संपत्ति ते (सुलभाः के०) रुडे प्रकारें प्राप्त थाय छे. हवे ते संतोष क हेवो छे ? तो के (अशेषदोषदहन के०) समग्र दोषरूप जे अग्नि तेना (ध्वंस के०) नाश करवाने माटें (अंबुदं के०) मेघ समान छे. अर्थात् मेघ जेम अग्नि बुझाववामां प्रचुर छे तेम दोषोना नाश करवामां संतोष छे ते माटें संतोषज कर्त्तव्य छे ॥ ६० ॥ आहीं सागरश्रेष्ठीनी कथा जाणवी ॥ १३ ॥

टीकाः–संतोषेण लोभोनिवार्यः स्यादतः संतोषगुणानाह ॥ जातइति॥ ये जनाः संतोषं तृष्णानिरोधं बिभ्रते धारयंति । तेषां पुरोऽग्रे कल्पतरुः कल्पवृक्षो जातः प्रत्यक्षोऽभूत् । पुनस्तेषां गृहं सुरगवी कामधेनुः प्रविष्टा आगता । पुन स्तेषां करतले चिंतामणिरत्नं उपस्थितं आगतं । पुनस्तेषां निधिः द्रव्यस्य निधिः सन्निधिं समीपं प्राप्तः । पुनः विश्वं जगत् अवश्यं निश्चितं तेषां व श्यं जातं । पुनस्तेषां स्वर्गापवर्गश्रियः देवलोकमोक्षसंपदः सुलभाः सु प्राप्याः स्युः । कथंभूतं संतोषं ? अशेष दोषदहनध्वंसांबुदमशेषाश्च ते दो षाश्च अशेषदोषाः तएव दहनः अशेषदोषदहनस्तस्य ध्वंसाय अंबुदं । अतः संतोषएव कर्त्तव्यः । अत्र सुभूमचक्रवर्त्ति सागरश्रेष्ठि कथा ॥ ६० ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, लोभस्य प्रक्रमोऽजनि ॥ इति त्रयोदशोलोभप्रस्तावः ॥ १३ ॥

भाषाकाव्य–कवित्त मात्रात्मक ॥ विलसै कामधेनु ताके घर, पूरे कलप वृक्ष सुखपोष ॥ अखय भंमार भरे चिंतामनि, तिनकों सुगम सुरग अरु मोख ॥ ते नर वश्य करै त्रिभुवनकों, तिनसों विमुख रहै दुख दोष ॥ वसै निधान सदा तिनके ढिग, जिनके हृदय वसत संतोष ॥ ६० ॥

कथाः—लोज उपर सागरश्रेष्ठीनी कथा कहे छे. आ जंबुद्वीपने विषे ज रतक्षेत्रमां पद्मपुरनामा नगर छे, त्यां अतिधनाढ्य सागरनामा श्रेष्ठी वसे छे. ते एवो कृपण छे के एठे.हाथे कागडांने पण उमाडे नहिं. ते एम जाणे के.जो उच्छिष्टहाथे कागडानेः उमाडीश् तो महारा हाथमां लागेला अन्ननुं एठुं कागडाउने मलशे! एवो ते कदरी छे. तेने सुशीला गुणवती नामा स्त्री छे. तेना एक सोमदत्त, बीजो जयदत्त, त्रीजो धनदत्त, चोथो अमरदत्त. एवा चार पुत्रो छे. ते यौवनावस्थानें पाम्या; तारें तेना पितायें परणाव्या. ते चारे पुत्रो पोतपोतानी स्त्रीयो साथें विषयसुख जोगवता छता काल गमावता हता. अनुक्रमें शेठनी स्त्री गुणवती मरण पामी तेथी सागरश्रेष्ठी डुःख पामवा लाग्यो, तेवारें तेना सगां वालाउयें दिलासो आपी शोकमुक्त कस्यो.

एक दिवसें ते सागरश्रेष्ठीना चारे पुत्रो बापना आदेशथी वाहाणमां बेसी वेपार माटें देशांतरें गया. पाछलथी सागरश्रेष्ठीनें छोकराउनी वहूरो नो विश्वास न आववाथी पोतें घर आगल खाटलो ढाली हाथमां लाकडी लइ बेसे. एक दिवसें ते सागरश्रेष्ठीने राजायें रत्नोनी परीक्षा करवा माटें बोलाव्यो. तेवांमां फरतो फरतो कोइक योगी तेने घेर आव्यो. तेने छोक राउनीं वहूयें मिष्टान्नपानें करी तृप्त कस्यो. तेवारें जोगीयें संतुष्ट थई ते स्त्रीयोने एक मंत्र आप्यो. अने कह्युं के तमें कोइ पण लाकडा उपर बेसीने आ माहारो आपेलो मंत्र जणी ते लाकडा उपर अडदना दाणा छांटीने पछी तमारें ज्यां जवुं होय, ते स्थलनुं नाम लइने कहेशो जे अमने तुं आ स्थानकें पोहोंचाडं! तो ए लाकडुं ज्यां जवा इच्छशो, त्यां पहोंचाडशे. एम सर्व मंत्रनो प्रजाव कहिने ते योगी गयो. पछी चारे स्त्रीयोयें मली एक मोहोटुं लाकडुं घरने विषे राख्युं. पण ते वातनी सागरश्रेष्ठीने कांइ पण खबर नथी. हवे सागरश्रेष्ठीनी पग चंपी वगेरे चाकरी करवा माटें एक हजाम निरंतर आवे. एक दिवस ते हजामें घरमां पडेलुं ते मोहोटुं लाकडुं नजरें जोयुं. तेवारें विचारवा लाग्यो के आ लाकडुं आहींथी बीजे स्थलें लइ जवाने कोइ समर्थ न थाय एवुं महोटुं छे. ते आहीं घर आगल पड्युं छे, माटें आमां कांइ चमत्कार तो नहिं होय? एम विमासणमां ते हजामने शेठनी चाकरी करतां ते दिवसें घणो वखत थइ गयो. घणी रात्रि गया पछी शेठने निद्रा आववा लागी त्यारें नापितने

रजा आपी के तुं जा. तो पण ते नापित त्यां ग्रानो मानो शेठनी ढोली यानी नीचें सुइ गयो. शेठें नापित गयो जाणीने घरनां कमाडो बंध कस्यां अने पोतें सुतो. ते ज्यारें घोर निद्रामां आव्यो, ते वखत चारे स्त्रियो ते लाकडा उपर बेसीने मंत्रनां जोरथी रत्नद्वीपमां जइ पोताना मनोरथ पूर्ण करी पाछली रातें पाछी घेर आवीयो. तेने जोइने हजाम विचारवा लाग्यो के, अरे! आ स्त्रीयो किहां गइयो हशे! आ स्त्रीयोनुं केवुं साहस छे!! एम चिंतवतो पोताने घेर गयो. बीजे दिवसें पण पूर्वोक्तरीतें ते नापितें कस्युं. अने शेठने सुवा वखत थइ, त्यारें ते लाकडाना पोलाणमां पेठो ॥ कह्युं छे के ॥ नराणां नापितोधूर्त्तः, पक्षिणां धूर्त्तवायसः ॥ वर्णानां वणिकोधूर्त्तो, नारीणां गणिका मता ॥ १ ॥ सागरश्रेष्ठीयें हजाम गयो जाणी बारणा बंध कस्यां. पूर्वोक्तरीतें स्त्रीयो पण लाकडा पर बेसीने रत्नद्वीपें गइ. त्यां लाकडाथी उतरीने पोताना मनोरथ पूर्ण कस्या. ते सर्व नापितें जोयुं. अने पोतें लाकडानी पोलमांथी नीकलीने रत्नद्वीपमांथी घणांक अमूल्य रत्नो लइ पाछो लाकडामां पेठो. अने स्त्रीयोनी साथें पाछो घेर आव्यो. स्त्रीयो लाकडा उपरथी उतरी घरमां गइयो. पाछलथी नापित पण लाकडामांथी बाहेर निकली पोताने घेर गयो. पण बीजे दिवसें धनवान् थवाथी साग रश्रेष्ठीनुं आनुचर्य करवा आव्यो नहिं. एक दिवस ते शेठ पासें नापितें आवीने नमस्कार करी पोतानुं दर्पण शेठने बताव्युं. ते वखतें शेठें घणे दिवसें आवेला नापितने जोइने ठबको आप्यो. त्यारें खोटा साचा जबाप आपीने पोतानी पासें रत्नद्वीपमांथी आणेलुं जे रत्न हतुं, ते बताव्युं. ते जोईने शेठें कह्युं के अरे दुष्ट! आ रत्न देवतानुं, घणाज मोल्यवालुं, सकल भूमंडलाधिपतिने पण न मले तेवुं, तुने क्यांथी मल्युं! ते मने कहे!!! तेवारें तेणें कह्युं के तमारा घरमांथी मने ए रत्न मलेलुं छे. शेठें कह्युं के हे मूर्ख! तुं खोटुं बोल नहिं. मारा घरमां आवुं रत्न होय क्यांथी? ते सांभलीने हजामें यथास्थित जेवी वात बनी हती तेवी सविस्तर कही संभलावी. त्यारें शेठें कह्युं के मने पण तेम करवुं छे. तो ते नापितनी प्रमाणें शेठें पण रत्नद्वीपमां गमन कस्युं अने लाकडामांथी नीसरीने पोतें लोभी तो छेज माटें घणांज रत्नो लइ गांसडी बांधीने पाछो लाकडामां पेठो. पाछलथी स्त्रियो पण आवी बेठी. लाकडुं उडयुं. परंतु घणां रत्नोनो तथा शेठनो भार हो

वाथी लोकडुं हलवे हलवे चालवा माम्युं. तेने जोइने स्त्रियो विचारवा लागी के अरे ! आज काष्ठ बराबर चालतुं नथी ने नमतुं जाय छे, माटें जो घेर जवा वखत लागशे तो आपणने सासरो खीजशे ? माटें हवे शो उपाय करवो ? एम परस्पर कहेवा लागियो. त्यारें लाकडाना कोतरमां रहेलो श्रेष्ठी कहेवा लाग्यो के तमें लगार पण जय राखशो नहिं. जेनो तमने जय छे, ते तो हुं सागरश्रेष्ठी तमारी साथेंज छउं ! आ वात सांजली सर्वे स्त्रियो आश्चर्य पामी विचारवा लागी जे अरे ! आ क्यांथी आपणी साथें आव्यो ! ! माटें हवे जो ते पाछो घेर आवशे तो आपणने फजेत करशे. तेथी तेने आ समुद्रमांज नाखी द्यो. एम विचारी काष्ठने हलावीने ते शेठने रत्न सुधां समुद्रमां नाखी दीधो. त्यां शेठ बूडी मरण पाम्यो, माटें अति लोज करवाथी सागरश्रेष्ठी जेवा हवाल थाय छे तेथी लोज करवो नहिं ॥ ए लोजने विषे सागरश्रेष्ठीनी कथा कही ॥ ६० ॥

हवे सौजन्यता राखवाविषे उपदेश करे छे.

॥ शिखरिणीवृत्तम् ॥ वरं क्षिप्तः पाणिः कुपितफणिनोवक्रकुहरे, वरं झंपापातोज्वलदनलकुंमे विरचितः ॥ वरं प्रासप्रांतः सपदि जठरांतर्विनिहितो, नजन्यं दौर्जन्यं तदपि विपदां सद्म विडुषा ॥ ६१ ॥

अर्थः—(कुपित के०) कोपायमान थयेला एवा (फणिनः के०) सर्पना (वक्रकुहरे के०) मुखविवरने विषे (पाणिः के०) हाथ (क्षिप्तः के०) नाख्यो होय ते (वरं के०) श्रेष्ठ, वली (ज्वलदनलकुंमे के०) प्रज्वलित एवा अग्नि कुंमने विषे (झंपापातः के०) झंपापात (विरचितः के०) कस्यो होय ते (वरं के०) श्रेष्ठ, वली (प्रासप्रांतः के०) कूंतणानो अग्रजाग ते (सपदि के०) तत्काल, (जठरांतः के०) उदरना मध्यजागने विषे (विनिहितः के०) नाख्यो होय ते (वरं के०) श्रेष्ठ. (तदपि के०) तो पण (विडुषा के०) पंमितजनें (दौर्जन्यं के०) पैशुन्य, (नजन्यं के०) न करवुं. ते केहवुं दौर्जन्य छे ? तो के (विपदां के०) आपत्तिनुं (सद्म के०) गृह छे अर्थात् विपत्तिनुं स्थानक छे ॥ ६१ ॥

टीकाः—अथ सौजन्यविधानोपदेशमाह ॥ वरमिति ॥ कुपितस्य फणिनः क्रुद्धस्य सर्पस्य वक्रकुहरे मुखविवरे पाणिर्हस्तः क्षिप्तोनिक्षिप्तः सन् वरं

श्रेयान् । पुनर्ज्वलज्ज्वलनकुंडे प्रज्वलत् अग्निकुंडे ऊंपापातोविरचितः कृतो वरं श्रेष्ठः । पुनः प्रासस्य कुंतस्य प्रांतो अग्रं जठरांतः उदरमध्ये सपदि क्षिप्तोवरं श्रेष्ठः । तदपि विदुषा पंमितेन दौर्जन्यं पैशुन्यं नजन्यं न कर्त्तव्य मेव । किंनूतं दौर्जन्यं? विपदां आपदां कष्टानां सद्म गृहं स्थानमित्यर्थः । अतःकारणात् सौजन्यमेव विधेयं ॥ ६१ ॥

भाषाकाव्यः—चौपाईछंद ॥ वरु अहिवदन हत्र निज मारहिं, अगनि कुंममहिं तन परजारहिं ॥ दारहिं उदर करहिं विष नखन, पैं दुष्टता न गहे विचखन ॥ ६१ ॥

वली पण सौजन्यने माटें उपदेश करे छे.

वसंततिलकावृत्तम् ॥ सौजन्यमेव विदधाति यशश्चयं च, स्वश्रेयसं च विभवं च भवक्षयं च ॥ दौर्जन्यमावहसि यत् कुमते तदर्थम्, धान्येऽनलं दिशसि तज्जलसेकसाध्ये ॥ ६२ ॥

अर्थः—(यत् के०) जे (सौजन्यमेव के०) सुजनपणुं तेज (पुंसां के०) पुरुषोना (यशश्चयं के०) कीर्त्तिसमूहने (विदधाति के०) धारण करे छे. (च के०) वली (स्वश्रेयसं के०) स्वकल्याणने करे छे. (च के०) वली (विभवं के०) इव्यवैभवने करे छे. (च के०) वली (भवक्षयं के०) संसारनो क्षय जे मोक्ष तेने करे छे, तेमाटें (कुमते के०) हे कुमतिजन ! (तदर्थं के०) यशश्चयादिकने माटें (दौर्जन्यं के०) पिशुनताने (आवहसि के०) तुं वहन करे छे, तो (धान्ये के०) धान्यना क्षेत्रने विषे (अनलं के०) अग्निने (दिशति के०) आपे छे. (तत् के०) ते धान्य केवुं छे.? तो के (जलसेकसाध्ये के०) जलसिंचनें करी साध्य छे, तेवा धान्ययुक्त क्षेत्रने विषे दवाग्नि देवानी तुं इछा करे छे ॥६२॥

टीकाः—पुनराह । सौजन्यमेव सुजनतैव पुंसां यशश्चयं कीर्त्तिसमूहं विदधाति करोति । पुनः स्वश्रेयसं स्वकल्याणं विदधाति । पुनर्विभवं इव्यं विदधाति । पुनर्भवक्षयं संसारक्षयं मोक्षं विदधाति । ततो हे कुमते! हे कुबुद्धे ! यत् तदर्थं यशश्चयाद्यर्थं दौर्जन्यं पिशुनतां आवहसि धरसि । तत् धान्ये धान्य क्षेत्रेऽनलं अग्निं दिशसि ददासि । कथंभूते धान्ये? जलसेकसाध्ये जलस्य सेकेन सिंचनेन साध्ये निःपादनीये । तत्र दवं ददासि ॥ ६२ ॥

भाषाकाव्यः—सवैया तेइसा ॥ ज्यौं कृषिकार भयो चित चातुर, सो कृ

षिकी करनी इम गानैं ॥ बीज बवै न करै जल-सिंचन, पावकसों फलकों थल जानै ॥ त्यों कुमती निज स्वारथके हित, डुर्जन नाव हियेमह आनै ॥ संपति कारन बंध विदारन, सज्जनता सुख मूल न जानै ॥६२॥

दारिद्र्यमां पण सुजनताज श्रेष्ठ छे, ते कहे छे.

पृथ्वीवृत्तम् ॥ वरं विनववंध्यता सुजन(स्वजन)ना
वनाजां नृणा, मसाधुचरितार्जिता न पुनरूर्जिताः
संपदः ॥ कृशत्वमपि शोनते सहजमायतौ सुंदरम्,
विपाकविरसा न तु श्वयथुसंनवा स्थूलता ॥६३॥

अर्थः—(सुजननावनाजां के०) सौजन्यसहित एवा (नृणां के०) मनुष्योने (विनव के०) वैनवनी (वंध्यता के०) निर्द्रव्यता तेज (वरं के०) श्रेष्ठ छे (पुनः के०) परं तु (असाधुचरितार्जिताः के०) डुर्जनपणायें करी संपादन करेली एवी (संपदः के०) संपत्तियो ते (वरं के०) श्रेष्ठ,(न के०) नथी. ते केवी संपत्तियो छे ? तो के (ऊर्जिताः के०) अति बलिष्ठ छे. त्यां दृष्टांत कहे छे. के (सहजं के०) स्वानाविक, (कृशत्वमपि के०) दौर्बल्यत्व पण (शोनते के०) शोने छे, (तु के०) परं तु (श्वयथुसंनवा के०) शरीरमां सोजो उत्पन्न थवाथी थयेली जे (स्थूलता के०) पुष्टता ते (न के०) नथी शोनती. ए केवुं कृशत्व छे? तो के (आयतौ के०) उत्तरकालनें विषे (सुंदरं के०) शोनायमान छे. अने ते स्थूलता केहवी छे ? तो के (विपाकविरसा के०) परिणाममां दारुण छे. माटें सौजन्यरहित एवा धनवानने पण धिक्कार छे ॥ ६३ ॥

टीकाः—दारिद्र्येपि सुजनतैव श्रेष्ठेत्याह ॥ वरमिति ॥ सुजननावनाजां सौजन्यसहितानां अत्र स्वजननावनाजामपि पाठोऽस्ति नृणां पुंसां विनवस्य वंध्यता निःफलता निर्द्रव्यता दारिद्र्यमेव वरं श्रेष्ठं। परंतु असाधुचरितेनाऽर्जिताः दौर्जन्येन उपार्जिताः संपदः श्रियोऽपि वरं न श्रेष्ठाः । न श्लाघ्याः । कथंनूताः संपदः? ऊर्जिताः बलिष्ठाः प्रचुराः । तत्र दृष्टांतमाह । सहजं स्वानाविकं कृशत्वं दौर्बल्यमपि शोनते । तु पुनः श्वयथुसंनवा शोफाज्जाता स्थूलता पीनताऽपि न वरं न श्रेष्ठा । कथंनूतं कृशत्वं? आयतौ उत्तरकाले आगामिकाले सुंदरं शोननं । कथंनूता स्थूलता ? विपाके परिणामे अंत्ये विरसा दारुणा ॥ ६३ ॥

भाषाकाव्यः—आभानकछंद ॥ वर दारिद्रता होउ करत सज्जनकला, दुराचारसों मिलै राज सो नहिं भला ॥ ज्यों शरीर कृश सहज सुशोभा दे तु है, सूजे थूलता बढै मरनको हेतु है ॥ ६३ ॥

हवे सुजनता युक्तजनोना गुणो कहे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ न ब्रूते परदूषणं परगुणं वक्त्यल्पमप्यन्वहम्, संतोषं वहते परर्द्धिषु पराबाधासु धत्ते शुचम्॥ स्वश्लाघां न करोति नोज्झति नयं नौचित्यमुल्लंघय, त्युक्तोप्यप्रियमक्षमां न रचयत्येतच्चरित्रं सताम् ॥ ६४ ॥ इति सुजनप्रक्रमः ॥ १४ ॥

अर्थः—(सतां के०) सज्जनपुरुषोनुं (एतच्चरित्रं के०) आ चरित्र एटले चेष्टित छे. आ चरित्र ते कयुं चरित्र ? तो के सज्जनजन जे छे,'ते (परदूषणं के०) पारका दोषने (न ब्रूते के०) बोलता नथी. अने (अल्पमपि के०) थोडा एवा पण (परगुणं के०) पारका गुणने (अन्वहं के०) निरंतर (वक्ति के०) कहे छे. वली (परर्द्धिषु के०) परसंपत्तिने विषे (संतोषं के०) अनभिलाष एटले अमत्संरने (वहते के०) धारण करे छे. वली (पराबाधासु के०) परपीडाने विषे (शुचं के०) शोकने (धत्ते के०) धारण करे छे. तथा (स्वश्लाघां के०) आत्मप्रशंसाने (न करोति के०) न करे छे. वली (नयं के०) विनयने (नोज्झति के०) त्याग करता नथी. वली (औचित्यं के०)योग्यताने (नोल्लंघयति के०) उल्लंघन करता नथी. तथा (अप्रियं के०) अहितप्रत्यें (उक्तोपि के०) कह्या होय तो पण (अक्षमां के०) क्रोधने (न रचयति के०) रचना करता नथी. माटें सौजन्ययुक्तजनना एवा गुणो छे ॥ ६४ ॥ ए चौदमो सुजनप्रक्रम संपूर्ण थयो ॥ १४ ॥

टीकाः—सौजन्यभाजां गुणानाह ॥ न ब्रूतइति ॥ सतां साधूनां सज्जनानां एतच्चरित्रं चेष्टितं अस्ति । एतदिति किं? सज्जनः परदूषणं परदोषं न ब्रूते । पुनरल्पमपि तुच्छमपि परगुणं अन्यगुणं अन्वहं निरंतरं वक्ति कथयति । पुनः परेषां ऋद्धिषु संपत्सु संतोषं अनभिलाषं अमत्सरं वहते धत्ते । पुनः परबाधासु परपीडासु शुचं शोकं धत्ते । पुनः स्वश्लाघां आत्मप्रशंसां न करोति । पुनर्नयं न्यायं नोज्झति न त्यजति । पुनरौचित्यं योग्यतां नोल्लंघयति । नातिक्रामति । पुनरप्रियं विरूपं अहितं उक्तोऽपि भाषितोपि

अक्रमां क्रोधं च रचयति ।.सतां एतच्चरित्रं वर्त्तते ॥६४॥ सिंदूरप्रकरग्रंथ, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, सौजन्यप्रक्रमोऽजनि॥१४॥

नाषाकाव्यः—ढप्पयछंद.॥ नहिं जंपै पर दोष, अल्प पर गुन बहु मानहिं ॥ हृदय धरहिं संतोष, दीन लखि करुना गानहि ॥ उचित रीति आदरहिं, विमल नय नीति न छंमहिं ॥ निज जसलहन परहरहिं, राम रचि विषय विहंमहिं ॥ मंमहिं न कोप डुर्वचन सुनि, सहज मधुर धुनि उच्चरहिं ॥कहि कवर पाल जग जाल वस, ए चरित्र सज्जन करहिं ॥६४॥

कथाः—सुजनता उपर कथा कहे छे. उज्जयणी नगरीयें विक्रमादित्य राजाने घरे शीलालंकाररूप कमलावती नामें नार्या छे. एकदा राजा सन्नामांहे हर्षोत्कर्षें बिराजमान थइ सन्नाना लोकोनें कहेवा लाग्यो के संसारमांहे एवुं कोइ ज्ञान प्रवर्त्तमान छे, के जे महारा राज्यने विषे नज होय ? ते सांनली एक कलावंत देशांतरी पुरुष बोल्यो के हे राजा ! तमारा राज्यमां लक्ष्मीवान् विद्यावान्, गुणवान्, एवा अनेक पुरुषो छे, अने तमें पोतें पण लक्ष्मी अने विद्यायें करी सहित छो. तमारी स्त्री सरस्वती सदृश छे, दातार शिरोमणि छे, परंतु एक परकाया प्रवेशकारिणी विद्या तमारी पासें नथी. ते सांनली राजा ससंभ्रम थइ बोल्यो के ते विद्या क्यां छे ? ते बोल्यो केहे स्वामी ! गिरनार पर्वतनी उपर एक सिद्धेश्वर छे तेनी पासें ए विद्या छे. ते सांनली विक्रमादित्य पोताना प्रधानने राज्य नलावी एकाकी ते पर्वत नणी चाल्यो. अनुक्रमें घणां कष्ट सहन करी तें पर्वत उपर गयो. तिहां सिद्धेश्वर योगीने देखी मनमां हर्ष पामी योगीने नमस्कार करी सेवा नक्ति करवा लाग्यो. योगी पण राजानी शुद्ध मनथी सेवा नक्ति देखी तुष्टमान थयो ॥ यतः ॥ विणउ सासणे मूलं, विणउ संजमो तवो॥ विणयाइ विप्पमुक्कस्स, कउ धम्मो कउ तवो ॥ १ ॥ हवे ते अवसरें तिहां सिद्धेश्वरनी पासें बीजो पण परकाया प्रवेशकारिणी विद्यानो अर्थी एक ब्राह्मण प्रवर्त्तमान छे, तेने पण घणा दिवस सेवा नक्ति करतां थया छे. ते पण घणो विनय करे छे, पण तेने कुपात्र जाणी योगी विद्या आपतो नथी ॥ यतः ॥ विद्यया सह मर्त्तव्यं, न तु देया कुशिष्यके ॥ विद्यया लालितोमूर्खः, पश्चात्संपद्यते रिपुः ॥१॥ माटें ते सिद्धेश्वर विक्रमादित्यने तत्काल तुष्टमान थयो, पण घणी सेवा करनार एवा विप्रने तुष्टमान न

थयो. विक्रमादित्यने कहेवा लाग्यो के हे वत्स ! तुं गुणज्ञ छे, राजा जेवो देखाय छे, दूरदेशांतरथी आव्यो देखाय छे, हुं तहारी करेली नक्तिथी संतोष पाम्यो छुं ! माटें परकाया प्रवेशकारिणी विद्या ले. ते वचनो सां नली राजा बे हाथ जोडी बोल्यो के हे स्वामी ! ए विप्रने पण आपनी सेवा करतां घणा दिवस थया, माटें जेम महारी उपर तुष्टमान थया, तेम एनी उपर पण तुष्टमान थइ विद्या आपो. तेवारें सिद्धेश्वर बोल्यो के हे परदुःखनंजक सत्पुरुष ! सर्प्पने दूध पीवराववाथी शो फायदो थाय ? तो पण राजायें घणी प्रार्थना करी प्रणिपत्य करीने ब्राह्मणने पण विद्या अपावी. पछी राजा तथा ब्राह्मण बेहुने विद्या साधवानो विधि कह्यो, ते प्रमाणें विद्या साधी; विद्या सिद्ध करी गुरुनी आज्ञा मागी राजा अने ब्राह्मण बेहु उज्जयणीनी बाहेर आव्या, ते वखत राजायें ब्राह्मणने त्यांज बेसाड्यो अने पोतें राज्यस्थिति जोवा नणी नगरीमांहे आव्यो, तिहां प्रथम प्रजाना समाचार जोइ पछी राज्यमंदिरमां आव्यो. तिहां पट्टहाथीना मरणथी राजलोक आकुल थयेला दीठा. राजा फरी ब्राह्मण पासें आव्यो. विद्यानी परीक्षा करवा सारु पोताना शरीरमांहेथी जीव काहाडी निर्जीव काया करी ते कलेवर विप्रने नलावी अने पोतानो जीव हाथीना खोलिया मांहे जई घाल्यो, तेथी हाथी तत्काल उनो थयो. राजलोक सर्व हर्ष पाम्या. एवामां दुष्ट बुद्धिथी विप्र विचारवा लाग्यो के जो हुं हमणां महारो जीव राजाना शरीरमांहे प्रवेश करावुं, तो राजा बनी राज्यपालुं ? एम विमासी तत्काल विद्यानुं स्मरण करी राजाना शरीरमांहे पोतानो जीव घाल्यो, पो तानी काया प्रज्वन करीने नगरमांहे आव्यो. लोकोयें राजा आव्यो देखी वधामणां कर्यां, राज्यमंदिरमां जइ सनामांहे बेठो, परंतु जातें ब्राह्मण छे माटें राज्यस्थितिनी रीत नात कांइ पण जाणतो नथी. तेने जंगली हरणना जेवो देखी प्रधान प्रमुख चिंतववा लाग्या के ए शुं राजानुं चित्त चलाचल थयुं छे ! अथवा कोइ व्यंतरविशेष राजानुं रूप करी आव्यो छे के शुं थयुं छे ! एम विचारवा लाग्या. पछी जेवारें अंतेउरमां ते ब्राह्मण आव्यो, तेवारें पट्टराणी तो तेने देखतांज मूर्छा पामी तेने घणा उपचार करी दासीयें उगाडी बेठी कीधी, तेवारें कृत्रिम राजा बोल्यो के अहो देवि ! मुजने देखी तमें मूर्छा केम पाम्यां ? ते सांनली राणीने पण तत्काल बुद्धि उपनी, तेथी एवुं बोली

के स्वामी! तमें जेवारें देशांतरें चाल्या हता, तेवारें में गोत्रदेवीने कह्युं हतुं के जो राजा कुशल क्षेमें घरे आवशे, तो हे कुलदेवि! हुं तमारी पूजा कस्या विना नेत्रें करी राजा साहामुं जोइश नही. ते वरांसे में हमणां तमारी सा हामुं जोयुं तेथी मह्वारी उपर देवीनो कोप थयो माटें हवे देवीनी पूजा कस्या विना तमारुं मुख जोइश नही. एम सांजली कत्रिम राजा पाछो सजायें जइ बेठो. तेने हाथीयें दीठो, तेवारें हाथी मनमां चिंतववा लाग्यो जे आ पापी ब्राह्मणें मह्वारी साथें विश्वासघात कीधो छे, पण एनुं जलुं न थाय, मनें पण गुरु आज्ञा उल्लंघननुं पाप लाग्युं, गुरुयें मने वास्यो तो पण में एने विद्या देवरावी तेनुं फल हुं एनो विश्वास करवाथी पाम्यो ॥ यतः ॥ मित्र द्रोही कृतघ्नश्च, यश्चविश्वासघातकः ॥ त्रयोपि नरकं यांति, यावच्चंद्रदिवा करौ ॥ १ ॥ हुं पंमित मूर्ख थयो, अथवा दैववक्र थवाथी मनें कुबुद्धि उप नी, जलुं करतां मातुं थयुं ॥ यतः ॥ दैवे वक्रे जवेत्पुंसां, सुकृतं दुःकृतोपम म् ॥ न सिध्ध्यंति स्वकार्याणि, विधिना रचितान्यपि ॥१॥ सर्व लोकने पुत्र मित्र कलत्रादिक परलोकें गया पछी परायां थाय, पण हुं तो आ जन्ममांज पुत्रादिक सर्वथी विपर्यास पाम्यो, एवुं विमासी आलानस्तंजने उन्मूली ने हाथी वन जणी निकल्यो, लोक तेनी पछवाडे चाल्यां. घणा उपाय कीधा, पण हाथी पाछो वल्यो नही, वनमां जतो रह्यो. लोक पाछां फरी घेर आव्यां. हाथी थाक्यो तेवारें एक वटवृक्ष नीचें जइ उजो रह्यो. ति हां एक पुरुष गोलीथी सूडाने मारतो हतो. ते देखी पोतानो जीव सूडा ना शरीरमांहे घालीने बोल्यो. अरे! बापडा वराक जीव मारवाथी तुजने शुं लाज थवानो छे? माटें तुं मुजने उज्जयणी लइ जा. अने बजारमां ज इ सहस्र दिनारनुं मूल्य करजे. तें तुजने आपीने कोइ पण लइ जाशे. एवुं सांजली आहेडी हर्षवंत थइ सूडाने लइ उज्जयणीयें आवी राजमार्गे जइ उजो रह्यो. जो कोइ मूल्य पूछे, तो तेने सहस्र टका सुवर्ण कहे, ते अव सरें कमलावती राणीनी दासी तिहां आवी, तेणें ते सूडो दीठो. तेणें केटलाएक श्लोक पूछ्या, तेवारें सूडे पण तत्काल अनेक श्लोक जण्या. दासीयें जइ राणीनी आगल सूडाना समाचार कह्या. राणीयें पण दासीने कह्युं के तमें तरत जइने ते सूडो लइ आवो. दासीयें आवी मूल्य आपी सूडो लीधो. वधक, पैसा लइ पोताने घेर गयो. दासी सूडाने राणी पासें

लइ आवी राणी ते सूडाने देखी अत्यंत हर्ष पामी सुवर्णना पंजरामां तेने राख्यो. राणी पोताने हाथे स्नान नोजनादिक कराववा लागी.

हवे प्रस्तावें, सूडो सहसात्कारें अनेक अनेक प्रश्नोत्तरादिक श्लोक नणे. ते जेम के ॥ अयुक्तः प्राणदोलोके, वियुक्तः साधुवल्लनः ॥ प्रयुक्तः सहि विद्वेषी, केवलः स्त्रीषु वल्लनः ॥ १ ॥ तस्योत्तरं ॥ हार ॥ नावार्थः— आकार अक्षरें युक्त होय तो जे पदनो अर्थ लोकने विषें प्राणनो देनारो एवो थाय. तथा वि अक्षरें जो युक्त होय तो जे पदनो अर्थ साधुने वल्लन एवो थाय बे. प्र अक्षरें करि युक्त जो होय तो जे पदनो अर्थ विद्वेषी थाय बे, अने जो केवल एकलुंज पद राखीयें तो तेनो अर्थ स्त्रीने वल्लन एम थाय बे ॥ तेनो उत्तर (हार) हवे हारनी पहेलां आ मेलवीयें तो आहार थाय बे, तो तेथी जगत जीवे बे अने हारथी प्रथम वि मेलवीयें तो विहार थाय बे तो विहार साधुनेज घटे बे, ने जो हारनी प्रथम प्र मेलवीयें तो प्रहार थाय बे तेथि द्वेषीनेज होय बे. अने केवल हारज राखीयें तो स्त्रीने वल्लन एवो पुष्पनी हारज कहेवाय बे ॥ वली सूडो कहे बे ॥ किं जीवियस्स चिह्नं, का नज्जा म्यण रायस्स ॥ का पुप्फाणपहाणं, परणीया किं कुणइ बाला ॥ उत्तरं ॥ सास रइ जाइ ॥

नावार्थः—जीवतरनुं चिन्ह शुं? तो के (सास) मदनराज जे कामदेव तेनी स्त्री कोण तो के (रइ) एटले रति ॥ अने उत्तम पुष्प कयुं? तो के (जाइ) एटले जाइनां पुष्प, अने परणीनें बाला शुं करे बे? तो के (सास रइ जाइ) इत्यादिक प्रश्नोत्तर करतां राणी तथा सूडो बेहु पोताना दिवस निर्गमन करे बे, एकदा राणी प्रत्यें सूडे पूब्युं के तमें ए राजानी सायें बोल्यांज नही ते शामाटें? तेवारें राणी बोली के हे शुकराज! एने देखवाथी म्हारुं चित्त हिंसतुं नथी. न जाणुं कोइ रूप परावर्त्त करी आव्यो बे, के केम बे? माटें ज्यां सुधी म्हारुं मन साक्षी आपतुं नथी, त्यां सुधी एनी सायें हुं संनाषण मात्र पण नही करीश? एम सांनली राणीनुं मन निश्चल जाणी सूडो हर्ष पाम्यो.

एकदा कोइ घरोलीने मूवेली देखी सूडायें तेना शरीरमां पोतानो जीव घाल्यो, तेवारें सूडो मरण पाम्यो. ते देखी राणी मूर्बा पामी. तेने दासीयें वायुथी सावधान करी, तेवारें राणी कहेवा लागी के ए सूडानी

साथें हुं पण काष्ठमां बली मरीश ! कत्रिम राजायें ते वात सांजलीने रा णीनी पासें आवी पूछ्युं के तुं कां सूडानी साथें काष्ठनक्षण करे छे? राणी यें कह्युं के मह्वारा जीवनो एनी साथें मोह्संबंध छे, ते माटें एनी गति ते मह्वारी गति ! तेवारें कत्रिम राजा बोल्यो के तुं काष्ठनक्षण म कर. हुं शुकने सचेतन करुं छुं. एम कही पोतें पर्यंकमां पोढ्यो, राणीनुं मनमना ववा सारु पोतानुं चेतन काह्वाढी शुकना शरीरमां प्रक्षेप्युं. अने पोतें सू डो थयो. ते जोइ विक्रमराजायें तत्काल पोतानो जीव घरोलीना शरीर मांथी काह्वाढीने पोताना मूल शरीरमां प्रक्षेप्यो, अने पोताना देह्मां आवी पोतें राजा थयो. फरीने राणी पासें गयो. राणी पण राजानुं मूल शरीर देखी हर्ष पामी. पछी राणीयें राजा प्रत्यें सर्व वृत्तांत पूछ्युं. राजायें कह्युं के ए वृत्तांत आ सूडो कहेशे. तेवारें सूडे मूलथी सर्व वृत्तांत संजला वीने कह्युं के जे मित्रद्रोह करशे, ते मह्वारी पेठें दुःखी थाशे, अने जे प रोपकार करशे, ते राजानी पेठें सुख पामशे. ते सर्व वात सांजली राणी हर्षवंत थइ. अने मननी च्रांति गइ. एवामां एक व्यवहारीयो मरण पामतो दीठो तेवारें रांजायें ते सूडानो जीव व्यवहारीयानी खोल मांहे राखी सुखी यो कर्यो. एवा सज्जन दुर्जननां लक्षण जाणी सज्जनता आदरवी ॥६४॥

ह्वे गुणिजनना संगनुं वर्णन करे छे.

धर्मं ध्वस्तदयोयशश्च्युतनयोवित्तं प्रमंत्तः पुमान्, का
व्यं निःप्रतिनरुतपः शमदयाशून्योऽल्पमेधाः श्रुतम्॥
वस्त्वालोकमलोचनश्चलमना ध्यानं च वांछत्यसौ, यः सं
गं गुणिनां विमुच्य विमतिः कल्याणमाकांक्षति ॥६५॥

अर्थः—(यः के०) जे (विमतिः के०) निर्बुद्धि (पुमान् के०) पुरुष (गुणिनां के०) गुणवान् पुरुषना (संगं के०) संगने (विमुच्य के०) मूकीने (कल्याणं के०) कल्याणने (आकांक्षति के०) इछे छे. (असौ के०) ए विमति पुरुष, (ध्वस्तदयः के०) गइ छे कृपा जेने एवो छतो (धर्मं के०) पुण्यनी इछा करे छे ? एम जाणवुं. तथा ते (च्युतनयः के०) गतन्याय एवो छतो (यशः के०) यशनी इछा करे छे ? अर्थात् अन्यनो अपकारक छतो कीर्त्तिनी इछा करे छे ? वली (प्रमत्तः के०) आ

जसु छतो (वित्तं के०) धननी इछा करे छे? वली (निःप्रतिभः के०) निर्बुद्धि छतो (काव्यं के०) काव्य करवानी इछा करे छे? वली (शमदयाशून्यः के०) उपशम अने दयायें रहित छतो (तपः के०) तपनी इछा करे छे. वली (अल्पमेधाः के०) अल्पबुद्धिमान् छतो (श्रुतं के०) शास्त्रने जाणवानी इछा करे छे. वली (अलोचनः के०) नेत्र रहित छतो (वस्त्वालोकं के०) घटपटादिक वस्तुने जोवाने इछे छे. (च के०) वली (चलमनाःके०) चंचल चित्त एवो छतो (ध्यानं के०) एकाग्रध्याननी इछा करे छे. अर्थात् पूर्वोक्त वस्तुविना प्रथम कहेला पदार्थो ते प्राणीने प्राप्त थाय नही तेम गुणिना संगविना कल्याण प्राप्त थाय नहीं ॥ ६५ ॥

टीकाः—अथ गुणिसंगं वर्णयन्ति ॥ धर्म्ममिति ॥ यो विमतिः निर्बुद्धिर्गुणिनां गुणवतां मनुष्याणां संगं संसर्गं विमुच्य त्यक्त्वा कल्याणं श्रेय आकांक्षति । असौ विमतिः पुमान् ध्वस्तदयोगतकृपः निर्दयः सन् धर्म्मं पुण्यं वांछति । पुनश्च्युतनयोगतन्यायः अन्यायभाक् सन् यशः कीर्त्तिं वांछति । पुनः प्रमत्तः प्रमादी सन् वित्तं धनं वांछति । पुनर्निःप्रज्ञः प्रज्ञारहितः सन् काव्यं कर्तुं वांछति । पुनः शमेन उपशमेन दयया च हीनोरहितः पुमान् तपोवांछति। पुनरल्पमेधास्तुच्छबुद्धिर्बुद्धिरहितः सन् श्रुतं शास्त्रं पठितुं वांछति । पुनरलोचनो नेत्ररहितः सन् वस्तूनां घटपटादीनां विलोकनं दर्शनं वांछति पुनश्चलमनाः चलचित्तः सन् ध्यानं वांछति । तथा गुणवतां संगं विना कल्याणं न ॥ ६५ ॥

भाषाकाव्यः—सवैया तेइसा ॥ सो करुना बिनु धर्म विचारत, नयन विना लखिवेकुं उमाहे ॥ सो डुरनीति चहे जस हेतु, सुधी बिनु आगमकों अवगाहे ॥ सो हिय सुन्न कवित्त करै, समता बिनु सो तपसों तन दाहे ॥ सो थिरता बिनु ध्यान धरै सठ, जो सतसंग तजे हित चाहे ॥ ६५॥

वली पण गुणीना संगनुं वर्णन करे छे.

हरिणीवृत्तम् ॥ हरति कुमतिं भित्ते मोहं करोति विवेकिताम्, वितरति रतिं सूते नीतिं तनोति गुणावलिम् (विनीततां) ॥ प्रथयति यशोधत्ते धर्म्मं व्यपोहति डुर्गतिम्, जनयति नृणां किं नाभीष्टं गुणोत्तमसंगमः ॥ ६६ ॥

अर्थः-(नृणां के०) मनुष्योने (गुणोत्तमसंगमः के०) गुणें करी उत्तम ज नोनो संग, (किं के०) शुं (अनीष्टं के०) इछितने (नजनयति के०) नथी उत्पन्न करतो? अर्थात् सर्व अनीष्टने उत्पन्न करेज छे. हवे ते गुणोत्तमसंग शुं अनिष्ट करे छे ?' ते कहे छे के (कुमतिं के०) कुबुद्धिने (हरति के०) हरे छे. तथा (मोहं के०) अज्ञानने (भिन्ते के०) भेदे छे. वली (विवेकितां के०) तत्त्वातत्त्वविज्ञानपणाने (करोति के०) करे छे. वली (रतिं के०) सं तोषने (वितरति के०) आपे छे. वली (नीतिं के०) न्यायने (सूते के०) प्रसवे छे. तथा (गुणावलिं के०) गुणश्रेणिने (तनोति के०) विस्तारे छे. (नीतिलतां) एवो पाठ होय तो नीतिलताने विस्तारे छे अने (यशः के०) कीर्त्तिने (प्रथयति के०) विस्तारे छे. वली (धर्मं के०) धर्मने (धत्ते के०) धारण करे छे. वली (दुर्गतिं के०) नरकतिर्यग्गतिने (व्यपोहति के०) टाले छे. एम गुणोत्तम जननो संग ते अनीष्ट पदार्थने आपे छे माटें उत्तम जननोज संग करवो ॥ ६६ ॥

टीकाः-पुनर्गुणिसंगं वर्णयति ॥ हरतीति ॥ नृणां पुंसां गुणैः उत्तमाः गुणोत्त मास्तेषां संगमोनृणां किं किं अनीष्टं वांछितं न जनयति न करोति? अपि तु सर्व्वमनीष्टं जनयति । गुणोत्तमसंगमः कुमतिं कुबुद्धिं हरति दूरीकरोति । पुनर्मोहं अज्ञानं छिन्ते विदारयति । पुनर्विवेकितां तत्त्वातत्त्वविज्ञत्वं करो ति । रतिं संतोषं वीतरति ददाति । पुनर्नीतिं न्यायं सूते जनयति । पुनर्गु णावलिं गुणश्रेणीं तनोति । पाठांतरे तु 'विनीततां तनोति' पुनर्यशः कीर्त्तिं प्रथयति विस्तारयति । पुनर्धर्म्मं धत्ते धरति । पुनर्दुर्गतिं नरकतिर्यग्गतिरूपां व्यपोहति विस्फोटयति । एवं गुणोत्तमसंगमः सर्व्वमनीष्टं जनयति ॥६६॥

भाषाकाव्यः-सवैया इकतीसा ॥ कुमति निकंद होइ महा मोह मंद होइ, जगतमें सुजस विवेक जग हियसों ॥ नीतिको दिढाउ होइ विनैको बढाउ हो इ, उपजै उछाह ज्यों प्रधान पद लियेसों ॥ धर्मको प्रकाश होइ दुर्गतिको नाश होइ, वरते समाधि ज्यों पीयूष रस पियसों ॥ तोष परि पूर होइ दोष दृष्टि दूर होइ, एते गुन होइ सतसंगतिके कियसों ॥ ६६ ॥

वली, पण गुणीना संगनो उद्देश कहे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ लब्धुं बुद्धिकलापमापदमपाकर्त्तुं विहर्त्तुं पथि, प्राप्तुं कीर्तिमसाधुतां विधुवितुं धर्मं समासे वितुम् ॥ रोद्धुं पापविपाकमाकलयितुं स्वर्गापवर्गश्रियम्, चे त्वं चित्त समीहसे गुणवतां संगं तदंगीकुरु ॥ ६७ ॥

अर्थः—(चित्त के०) हे चित्त ! (चेत् के०) जो (त्वं के०) तुं (बुद्धिकलापं के०) बुद्धिसमूहने (लब्धुं के०) प्राप्त थवाने (समीहसे के०) इछा करे छे ? वली जो (आपदं के०) आपत्तिने (अपाकर्त्तुं के०) टालवाने इछा करे छे, तथा जो (पथि के०) न्यायमार्गमां (विहर्त्तुं के०) विचरवानी इछा करे छे, तथा जो (कीर्त्ति के०) कीर्त्तिने (प्राप्तुं के०) प्राप्त थवानी इछा करे छे, वली जो (असाधुतां के०) असौजन्यने (विधुवितुं के०) टालवानी इछा करे छे, तथा जो (धर्मं के०) पुण्यने (समासेवितुं के०) सेववानी इछा करे छे वली जो. (पापविपाकं के०) अशुनकर्म फलने (रोद्धुं के०) रोकवानी इछा करे छे तथा जो (स्वर्गापवर्गश्रियं के०) देवलोकनी अने मोक्षनी लक्ष्मीने (आकलयितुं के०) अनुनव करवानी इछा करे छे (तत् के०) तो (गुणवतां के०) गुणवान् पुरुषोना (संगं के०) संगने (अंगीकुरु के०) अंगीकार कर. अर्थात् गुणिजनना संगथी सर्व प्राप्त थाय छे ॥६७॥

टीकाः—पुनराह ॥ लब्धुं बुद्धिरिति ॥ रे चित्त! चेद्यदि त्वं बुद्धिकलापं बुद्धिसमूहं लब्धुं प्राप्तुं समीहसे वांछति। तत्तदा गुणवतां गुणिनां संगं संसर्गं अंगीकुरु विधेहि। पुनर्यदि विपदं आपदं अपाकर्तुं दूरीकर्त्तुं समीहसे। पुनर्यदि पथिन्याय मार्गे विहर्तुं विचरितुं वांछसि। पुनः कीर्त्ति प्राप्तुं वांछसि। पुनरसाधुतां असौजन्यं विधुवितुं स्फेटयितुं समीहसे। पुनर्यदि धर्मं पुण्यं समासेवितुं कर्तुं समीहसे। पुनर्यदि पापविपाकं अशुनकर्मफलं रोद्धुं समीहसे। पुनः स्वर्गापवर्गश्रियं देवलोकमोक्षलक्ष्मीं आकलयितुं अनुनवितुं समीहसे। तदा गुणवतां संगं कुरु॥६७॥

नाषाकाव्यः—कुंमलियाछंद ॥ कौरा ते मारग गहै, जे गुनिजन सेवंत ॥ ज्ञानकला तिनके जगै, ते पावहिं नव अंत ॥ ते पावहिं नव अंत, समरस ते चित धारहिं ॥ ते अघ आपद हरहिं, धर्मकी रति विस्तारहिं ॥ होहि सहज जे पुरुष, गुनी वारिजके नौरा ॥ ते सुरसंपति लहै, गहै ते मारग कौरा॥६७॥

हवे निर्गुणना संगना दोषो कहे छे.

हरिणीवृत्तम्॥ हिमति महिमांभोजे चंमानिलत्युदयांबुदे, द्विरदति दयारामे (दमारामे) क्षेमक्ष्माभृति वज्रति ॥ समिधति कुमत्यंग्नौ कंदत्यनीतिलतासु यः, किमभिलषता श्रेयः श्रेयः स निर्गुणसंगमः ॥६७॥ इति गुणिसंगप्रक्रमः ॥ १५ ॥

अर्थः—(सः के०) ते (निर्गुणसंगमः के०) निर्गुणिजननो संगम, (श्रेयः के०) कल्याणने (अभिलषता के०) इच्छा करनार एवा पुरुषें (किं के०) शुं (श्रेयः के०) आश्रय करवा योग्य छे ? ना आश्रय करवा योग्य नथीज. ते केहेवो निर्गुणनो संगम छे? तो के (यः के०) जे (महिमांभोजे के०) महत्त्वरूप कमलने विषे (हिमति के०) हिमनी पेठें आचरण करे छे. वली (उदयांबुदे के०) धन, धान्य, प्रताप वृद्धिरूप जे मेघ तेने विषे (चंमानिलति के०) प्रचंमवायुनी पेठें आचरण करे छे. वली (दयारामे के०) दयारूप आराम जे वन तेने विषे (द्विरदति के०) हस्तीनी पेठें आचरण करे छे. अथवा (दमारामे) एवो पाठ होय तो इंद्रियदमनरूप वन तेने विषे हस्ती समानें आचरण करे छे वली (क्षेमक्ष्माभृति के०) कल्याणरूप पर्वतने विषे (वज्रति के०) वज्रनी पेठें आचरण करें छे. वली (कुमत्यग्नौ के०) कुमतिरूप जे अग्नि तेने विषे (समिधति के०) काष्ठनी पेठें आचरण करे छे. तथा (अनीतिलतासु के०) अन्यायवल्लिने विषे (कंदति के०) कंदनी पेठें आचरण करे छे. माटें ए अनीतिनो मूलरूप एवो जे निर्गुणसंगम तेने श्रेयनें इच्छा करनार पुरुषें न आश्रय करवो. आंहिं गिरिशुक अने पुष्पशुकनी कथानो दृष्टांत जाणवो ॥ ६७ ॥ ए गुणिसंगप्रक्रम थयो. ॥ १४ ॥

टीकाः—निर्गुणसंगमदोषमाह ॥ हिमतीति ॥ स निर्गुणसंगमः किमपि श्रेयः कल्याणं अभिलषता वांछता पुरुषेण। किं श्रेयः किं आश्रयणीयः ? नाश्रयणीयः। सः कः? यो महिमाएव महत्वमेवांभोजं कमलं तस्मिन् हिमति। हिमइवाचरति तद्विनाशकत्वात्। पुनर्योनिर्गुणसंगमः उदयएव धन धान्य प्रतापवृद्धिरेवांभोदो मेघस्तत्र चंमानिलति प्रचंमवायुरिवाचरति। पुनर्दया एव आरामो वनं अथवादमाराम इतिपाठे दमएव आरामो वनं तत्र द्विरदति द्विरदवद् गजवदाचरति तदुन्मूलकत्वात्। पुनर्यः क्षेममेव कुशलमे

व ञ्जाभूत् गिरिस्तत्र ,वर्जति वज्रवदाचरति । तच्छेदकत्वात् । पुनर्यः कुम तिरेवाग्निस्तत्र समिंधति । समित् इंधनइवाचरति । तद्वृद्धिहेतुत्वात् । पुनर्यः अनीतिलतासु अन्यायवल्लिषु कंदति कंदइवाचरति । तन्मूलभूतत्वात् । ईदृ शोनिर्गुणसंगमः । श्रेयोवांछता पुरुषेण न श्रेयः नाश्रयणीयः ॥ अत्र गिरिशुकपुष्पशुकयोः कथा ॥ यतः ॥ माताप्येका पिताप्येको, मम त स्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिभिरानीतः, सच नीतो गवाशिभिः ॥ १ ॥ गवा शिनां तु स वचः शृणोति, अहं तु राजन् मुनिपुंगवानाम् । प्रत्यक्षमेतद्भव ताऽपि दृष्टं, संसर्गजादोषगुणा भवंति ॥ इति वचनात् ॥ २ ॥ ६८ ॥ सिंदूरप्रकर ग्रंथ, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, गुणिसंग मप्रक्रमः ॥ इति पंचदशो गुणिसंगमप्रक्रमः ॥ १५ ॥

भाषाकाव्यः—छप्पयछंद ॥ जो महिमा गुन हनै, तुहिन जिम वारिज वारे ॥ जो प्रताप संहरै, पवन जिम मेघ विमारै ॥ जो सम दम दलमलै, द्विरद जिम उपवन खंभै ॥ जो सुछेम छय करै, वज्र जिम शिखर विहंभै ॥ जो कुमति अग्नि इंधन सरिस, कुनयलता दिढ मूल जग ॥ सो दुष्ट संग दुःख पुष्टकर, तजहिं विचछन तासु मग ॥ ६८ ॥

कथाः— सारा नरसाना संगत उपर सूडानी कथा कहे छेः—कोइ एक पोपटनी भार्यायें बे बच्चां जण्यां. तेमां एकनुं नाम गिरिशुक अने बीजानुं नाम पुष्पशुक. ते बेहु महोटा थया. एकदा तेने मूकीने सूडी चणवा गइ. पाछलथी बच्चांने पारांधीयें पकड्यां. गिरिशुकने भिल्लपासें वेच्यो, अने पुष्पशुकने ऋषि पासें वेच्यो ॥ यतः ॥ जो जारिस्सं संगं, करेइ सो तादिसो होइ ॥ कुसुमेहिं सुवसंता, तिलावि तग्गंधिया हुंति ॥ १ ॥ पुनर्यथा ॥ निर्गुणेनापि सत्त्वेन, कर्त्तव्योगुणसंगमः ॥ शशांकसंगतो मूर्ध्नि, धूर्तोरुद्रेण वातमी ॥ २ ॥ एकदा एक राजा घोडा उपर चडी अ सवार थयो ते घोडायें अपहर्यो थको अटवीमां भिल्लना घर आगलथी निकल्यो तेवारें गिरिशुक बोल्यो के हे भिल्ल ! ए लाखीणो माणस जाय छे, तेने लूंटी ल्यो. ते सांभली राजा भयभ्रांत थयो थको नासतो नासतो अनुक्रमें तापसना आश्रम पासें आव्यो, तेने देखीने पुष्पशुक बोल्यो के हे ऋषि ! आ राजा आवे छे तेनी भक्ति करो. ते सांभली तापसें सर्वविधि सा चवी राजानी भक्ति करी. पछी राजायें सूडाने हाथमां बेसारी पूछ्युं के हे

शुक ! में तह्मारां वचन पण सांजल्यां, अने जिल्लना शुडानां वचन पण सांजल्यां, परंतु तुजमां अने तेनामां घणोज अंतर ले ? ते सांजली शुक बोल्यो ॥ यतः ॥ माताप्येका पिताप्येको, मम तस्य च पक्षिणः ॥ अहं मुनिजिरानीतः, स्तु नीतोगवाशिजिः ॥१॥ गवाशिनां वे स गिरः शृणोति, अहं च राजन् मुनिपुंगवानाम् ॥ प्रत्यक्षमेतद्भवतापि दृष्टं, संसर्गजा दोषगुणा जवंति ॥२॥ सर्प्पाः पिबंति पवनं न च डुर्बलास्ते, शुष्कैस्तृणैर्वनगजाबलिनो जवंति ॥ कंदैः फलैर्मुनिगणा गमयंति कालं, संतोषएव पुरुषस्य परं निधानम् ॥३॥ एवां वचन सांजली हर्ष पामी सर्व सैन्य सहित घेर आवीने ते राजा ते दिवसथी सत्संगति करवा लाग्यो. तेम सर्व जव्यजीवोयें सत्संगतिज करवी ॥ इति गिरिशुक पुष्पशुकनो दृष्टांत ॥६७॥ इति सत्संगप्रक्रमः॥१६॥

हवे इंड्रियजय करवा आश्रयी उपदेश कहे ले.

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ आत्मानं कुपथेन निर्गमयितुं यः शूकलाश्वायते, कृत्याकृत्यविवेकजीवितहृतौ यः कृष्णसर्पायते ॥ यः पुण्यडुमखंमखंमनविधौ स्फूर्जत्कुठारायते, तं लुप्तव्रतमुडमिंड्रियगणं जित्वा शुजंयुर्जव ॥ ६९ ॥

अर्थः—हे साधुपुरुष ! (तं के०) ते (इंड्रियगणं के०) पंचेंड्रियसमूहने (जित्वा के०) जीतीने (शुजंयुः के०) शुजयुक्त (जव के०) था. ते पंचेंड्रिय गण केवा ले? तो के (यः के०) जे (आत्मानं के०) पोताना आत्माने (कुपथेन के०) कुमार्गे करी (निर्गमयितुं के०) लइ जवानें (शूकलाश्वायते के०) अडियल अश्वनी पेठें आचरण करे ले. कारण के ते इंड्रियरूप अश्वनो कुमार्गने विषेज गमन करवानो स्वजाव ले. वली (यः के०) जे (कृत्याकृत्यविवेकजीवितहृतौ के०) कृत्य अने अकृत्य तेनो विवेक जे विचार. ते रूप जीवितव्य जे जीवतर तेना हरण करवाने विषे (कृष्णसर्पायते के०) काला सर्पनी पेठें आचरण करें ले. वली (यः के०) जे (पुण्यडुमखंमखंमनविधौ के०) पुण्यरूप जे वृक्ष तेनुं जे वन तेना खंमनविधिने विषे (स्फूर्जत्कुठारायतें के०) प्रकाशमान कुठारनी पेठें आचरण करे ले. वली (लुप्तव्रतमुडं के०) लेदी ले व्रतनी मर्यादा जेणें एवो ले. माटें ते इंड्रियगणनो जय करवो ॥६९॥

टीकाः—अथेंड्रियजयोपदेशमाह ॥ आत्मानमिति ॥ हे साधो! तं इंड्रिय

गणं पंचेंद्रियसमूहं जित्वा विनिर्जित्य गुणंयुः, गुणसंयुक्तो भव ।, तं कं? यः इंद्रियगणः स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्रसमूहः आत्मानं स्वं कुपथेन कुमार्गेण निर्गमयितुं नेतुं शूकलाश्वायते दुर्विनीत अश्वइवाचरति । तस्य कुमार्गगामिस्वज्ञावत्वात् । पुनर्यः इंद्रियगणः कृत्यं च अकृत्यं च कृत्याकृत्ये तयोर्विवेकएव विचारएव जीवितं जीवितव्यं । तस्य हृतौ हरणे कृष्णस र्पायते कृष्णसर्पइवाचरति । पुनर्यः इंद्रियगणः पुण्यमेव डुमस्तेषां खंमं व नं तस्य खंमनविधौ ठेदने स्फूर्जत्कुगरायते कुगरइवाचरति । कथंभूतं इंद्रि यगणं? लुप्तव्रतमुद्रं लुप्ता ज्ञिन्ना व्रतानां मुद्रा मर्यादा येन सः तं ॥ ६ए॥

ज्ञाषाकाव्यः—गीताछंद ॥ जे जगत जिवकों कुपथ पारहिं, वक्र शिष्य त तुरगसें ॥ जे हरहिं परम विवेक जीवन, काल दारुन उरगसें ॥ जे पु न्न विरख कुगार तीखन, गुपत व्रत मुद्रा करै ॥ ते करन सुजट प्रहार ज वि जन, तव सुमारग पग धरै ॥ ६ए ॥

वली पण इंद्रियजयनो उपदेश करे ठे.

शिखरिणीवृत्तम् ॥ प्रतिष्ठां यन्निष्ठां नयति नयनिष्ठां विघटय, त्यकृत्येष्वाधत्ते मतिमतपसि प्रेम तनु ते ॥ विवेकस्योत्सेकं विदलयति दत्ते च विपदम्, पदं तद्दोषाणां करणनिकुरुंबं कुरु वशे ॥ ७० ॥

अर्थः—हे जव्य! तुं (तत् के०) ते (करणनिकुरुंबं के०) इंद्रियसमूहने (वशे के०) वशमां (कुरु के०) कर. ते इंद्रियनिकुरुंब कहेवो ठे? तो के (यत् के०) जे (प्रतिष्ठां के०) महत्त्वने प्रतिष्ठाने (निष्ठां के०) अवसान ते क्षयप्रत्यें (नयति के०) पमाडे ठे. वली जे इंद्रियकुरंब, (नयनिष्ठां के०) न्यायनी स्थितिने (विघटयति के०) स्फोटन करे ठे. वली (अकृत्येषु के०) नहि कर वा योग्य जे अनाचार तेने विषे (मतिं के०) बुद्धिने (आधत्ते के०) धारण करे ठे. वली (अतपसि के०) अविरतिने विषे (प्रेम के०) स्नेहनें (तनुते के०) विस्तारे ठे. वली (विवेकस्य के०) कृत्याकृत्य एटले आ करवा योग्य ठे अने आ करवा योग्य नथी एवा विचारना (उत्सेकं के०) उन्नतपणाने (विदलयति के०) नाश करे ठे. (चके०) वली (विपदं के०) विपत्तिने (दत्ते के०)

आपे छे, माटे ते इंद्रियसमूह पोताने वश करवो. ते इंद्रियसमूह कहेवो छे ? तो के (दोषाणां के०) सर्व दोषोनुं (पदं के०) स्थानक छे ॥७०॥

टीकाः—पुनराह ॥ प्रतिष्ठामिति ॥ नो नव्य ! तत्करणानां इंद्रियाणां निकुरंबं समूहं वशे कुरु वश्यतां नय। आत्मायत्तं विधेहि । तत्किं? यत् करणनिकुरंबं प्रतिष्ठां महत्त्वनिष्ठां अवसानं क्षयं नयति प्रापयति। पुनर्यत् नयनिष्ठां न्यायस्थितिं विघटयति स्फेटयति । पुनर्यत् अकृत्येषु अनाचारेषु मतिं बुद्धिं आधत्ते स्थापयति । पुनः अतपसि अविरतौ प्रेम तनुते स्नेहं कुरुते । पुनर्यत् विवेकस्य कृत्याऽकृत्यविचारस्य उत्सेकं उन्नतत्वं विदलयति विध्वंसयति । पुनर्यत् विपदं आपदं कष्टं दत्ते । तत् करणनिकुरंबं इंद्रियसमूहं स्ववशे कुरु। कथंनूतं इंद्रियनिकुरंबं ? दोषाणां पदं स्थानं ॥७०॥

नाषाकाव्यः—सवैया इकतीसा ॥ एही है कुगतिके निदानी दुःख दोषदानी, इनहिकी संगतिसों संग नार वहियें ॥ इनकी मगनतासों विनोकों विनास होइ, इनहीकी प्रीतिसों अनीति पथ गहियें ॥ येही तप नावकों विमारे दुराचार धारे, इनहीकी तपत विवेक नूमि दहियें ॥ एही इंद्रि सुनट इनही जीते सोइ साधु, इनको मिलापी सोइ महा पापी कहियें ॥७०॥

वळी पण इंद्रियसमूहना जयनो उपदेश करे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तत्रयम् ॥ धत्तां मौनमगारमुज्झतु विधिप्रागल्भ्यमभ्यस्यता, मस्त्वंतर्गण(स्त्वंतर्वण)मागमश्रममुपादत्तां तप स्तप्यताम् ॥ श्रेयः पुंजनिकुंजनंजनमहावातं न चेदिंद्रिय,व्रातं जेतुमवैति नस्मनि हुतं जानीत सर्वं ततः॥७१॥

अर्थः—हे साधु ! (मौनं के०) मौनने (धत्तां के०) धारण कर. वळी (अगारं के०) घरने (उज्झतु के०) त्याग कर. वळी (विधिप्रागल्भ्यं के०) सर्व आचारनुं जे चातुर्य तेने (अभ्यस्यतां के०) अभ्यास कर. वळी (अंतर्गणं के०) गछवासमां अथवा (अंतर्वण) एवो पाठ होय तो वनने विषे (अस्तु के०) हो. वळी (आगमश्रमं के०) सिद्धांतना पठनने (उपादत्तां के०) अंगीकार कर. तथा (तपः के०) तपश्चर्याने (तप्यतां के०) तप. परंतु (चेत् के०) जो वळी (इंद्रियव्रातं के०) इंद्रियसमूहने (जेतुं के०) जीतवाने एटले वश करवाने (नावैति के०) न जाणे छे (ततः

के०) तो (सर्वं के०), पूर्वोक्त सर्व, (भस्मनि के०) राखने विषे (हुतं के०) होमेलुं हुतद्रव्य जेवुं होय तेम वृथा (जानीत के०) जाण. ते केहवो छे इंद्रियव्रात ? तो के (श्रेयःपुंजनिकुंजभंजन के०) पुण्यसमूह रूप जे वन तेना भंजननेविषे (महावातं के०) विटोळीया जेवो छे ॥ ७१ ॥

टीकाः–धत्तामिति ॥ हे साधो ! भवान् मौनं धत्तां कुरुतां। पुनः अगारं गृहं उज्झतु त्यजतु । पुनर्विधिप्रागल्भ्यं सर्वाचारचातुर्यं अभ्यस्यतां कुर्वंतु । अंतर्गणं गछवासमध्ये अथवा अंतर्वणमितिपाठे वनमध्ये अस्तु भवतु । पुनरागमश्रमं सिद्धांतपठनं उपादत्तां अंगीकुरुतां। पुनस्तपस्तप्यतां करोतु। परं चेद्यदि इंद्रियव्रातं इंद्रियसमूहं जेतुं वशीकर्तुं नावैति न जानाति। तदा सर्व्वं पूर्वानुष्ठानं भस्मनि रक्षायां हुतं वृथा जानीत। कथंभूतं इंद्रियव्रातं। श्रेयसां कल्याणानां पुंजएव निकुंजं तस्य भंजने महावातं वातूलसमानं ॥ ७१ ॥

भाषाकाव्यः–वृत्त ऊपर प्रमाणें ॥ मौनके धरैया, गृह त्यागके करैया, विधि रीतिके सधैया, परनिंदासों अपूठे हैं॥ विद्याके अभ्यासी, गिरिकंदरा के बासी, शुचि अंगके आचारी, हितकारी बैन वूठे है ॥ आगमके पाठी, मन लाय महा काठी, भारी कष्टके सहनहार, रमाहूंसों रूठे है ॥ इत्या दिक जीव, सब कारज करत रीतें, इंद्रिनके जीते, बिना सरवंग झूठे हैं ॥७१॥

वळी कांइ विशेष कहे छे.

धर्मध्वंसधुरीणमभ्रमरसावारीणमापत्प्रथा, लंकर्मीणम
शर्मनिर्मितिकलापारीणमेकांततः ॥ सर्वान्नीनमनात्मनी
नमनयात्यंतीनमिष्टं यथा, कामीनं कुमताध्वनीनमज
यन्नक्षौघमक्षेमभाक् ॥७२॥ इतींद्रियदमप्रक्रमः ॥ १६॥

अर्थः–(अक्षौघं के०) इंद्रियोना समूहने (अजयन् के०) नहि वश करतो एवो प्राणी, (अक्षेमभाक् के०) अकल्याणनो भजनारो थाय छे. ते केहवो छे इंद्रियउघ? तो के (धर्मध्वंसधुरीणं के०) धर्मना नाश करवामां मुख्य छे, वळी (अभ्रमरसावारीणं के०) सत्य ज्ञानने आछादन करनार छे, वळी (आपत्प्रथालंकर्मीणं के०) कष्टना विस्तारमां पूर्ण कर्म करनार छे तथा (अशर्मनिर्मितिकलापारीणं के०) अकल्याणना निर्माणने विषे चतुर छे, वळी (एकांततः के०) निश्चयें करी

(सर्वान्नीनं के०) सर्वान्नजक्षक छे, वली (अनात्मनीनं के०) आत्मानो अहितकारक छे, तथा (अनयात्यंतीनं के०) अन्यायने विषे अत्यंत गामी तथा (इष्टे के०) इच्छित वस्तुने विषे (यथाकामीनं के०) स्वेच्छायें वर्त्तनारो छे, तथा (कुमताध्वनीनं के०) कुत्सितमतरूप जे मार्ग तेने विषे पांथीजनसमान छे तेने जित्या शिवाय प्राणी कल्याणनो जजनारो थाय नही ॥ ७२ ॥ इति षोडश इंद्रियदमप्रक्रमः ॥ १६ ॥

टीकाः–पुनर्विशेषमाह ॥ धर्म्मध्वंसेति ॥ अक्षाणां इंद्रियाणां उघं समूहं अजयन् अवशीकुर्व्वन् जनः अक्षेमजाक् अकल्याणजाग् जवति । कथंजूतं अक्षौघं । धर्मध्वंसे धुरीणः मुख्यस्तं । पुनरजमरसस्य सत्यज्ञानस्य आवारीणं आवरणाय समर्थं आवारीणस्तं आछादकं । पुनः कथंजूतं ? आपदां कष्टानां प्रथायां विस्तारणे अलंकर्म्मीणः कर्मक्षयस्तं । पुनः किंजूतं ? अशर्मणां अकल्याणानां दुःखानां निर्मितौ निर्माणे करणे कलापारीणश्चतुरस्तं। पुनः किंजूतं? एकांततोनिश्चयेन सर्व्वान्नीनः सर्व्वान्नजक्षकस्तं । पुनः किंजूतं? न आत्मने हितोऽनात्मनीनः तं आत्मनोऽहितं । पुनः किंजूतं ? अनयान्यायेऽत्यंतीनोऽत्यंतगामी तं । पुनः किंजूतं? इष्टे इष्टवस्तुनि यथाकामं स्वेछया वर्त्तते इति यथाकामिनस्तं । पुनः किंजूतं ? कुमते कुत्सितमते अध्वनीनः पांथस्तं । ईदृशं इंद्रियसमूहं अजयन् सन् अक्षेमजाग् जवति ॥७२॥ यतः ॥ कुरंगमातंगपतंगजृंग, मीना हताः पंचजिरेव पंच ॥ एकः प्रमादी स कथं न हन्यते, यः सेवते पंचजिरेव पंच ॥१॥ इति ॥ सिंदूरप्रकरग्रंथ,व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिजिः ॥ सूरिजिर्विहितायां तु, इंद्रियप्रक्रमोऽजनि ॥ १६ ॥

जाषाकाव्यः–वृत्त ऊपरप्रमाणें ॥ धर्म तरु जंजनकों महामत्त कुंजरसें, आपदा जंमारके जरनकों करोरी हैं ॥ सत्य शील रोकवेकों पौढे परदार जैसें, दुर्गतिको मारग चलायवेकों धोरी हैं ॥ कुमतिके अधिकारी कुनय पथके विहारी, जद्रजाव इंधन जरायवेकों होरी है ॥ मृषाके सहाइ दुर्जावनाके जाइ, ऐसे विषयाजिलाषी जीव अघके अघोरी है ॥ ७२ ॥

कथाः–इंद्रियदमन उपर कथा कहे छे. जरतक्षेत्रे विशालानगरमां चेडो नामें राजा राज्य करे छे. ते परमजिनधर्मी छे, तेने सातपुत्रीमां सुज्येष्ठा तथा चेलणा एवे नामें बे पुत्री छे. तेने मांहोमांहे घणो स्नेह छे, ते जेम के शयन,जोजन, स्नान, दान सर्व एकठां करे. ते गाममां कोइ परिव्राजिका

आवीने पोताना शौचमूल धर्मनां वखाण करती फरे. एकदा ते पारिव्राजिका कन्याना अंतेउरमां गइ. तिहां तेने सुज्येष्ठायें वाद करी जींती निर्भ्रंछीने काहाडी मूकी, ते वखत पारिव्राजिकायें रोष करीने एवो निश्चय कर्यो के ए बालिकाने हुं मंहोटा संकटमां नाखुं! जेथी महारुं वैर वली आवे. एम चिंतवी पछी सुज्येष्ठानुं रूप पाटीयामांहे तादृश चितराव्युं ते रूप श्रेणिक राजाने जई देखाडयुं. ते जोइ श्रेणिक राजायें कामविह्वल थइने चेडाराजा उपर दूत मोकली कन्यानी मागणी करावी, पण चेडायें नाकारो कर्यो.

तेवारें अभयकुमार पोतें श्रेणिकराजानुं तादृश रूप पट्ट उपर चित्रावी, ते लइ विशाला नगरीयें आवी. अंतेउरनी पासें सुगंधीवस्तुनी दुकान मांमी बेठो. जेवारें अंतेउरमांथी सुज्येष्ठानी दासी सुगंधी वस्तु लेवा आवे, तेवारें तेने बहुमूली वस्तु अल्पमूल्यें आपे. अने ते दासीने श्रेणिक राजानुं रूप पण देखाडे. दासीयें रूपने वखाणतां सुज्येष्ठानी आगल वात करी, ते रूप अणावी सुज्येष्ठाने देखाडयुं. ते जोइ मोह पामीने एकांतें श्रेणिक राजा उपर रागिणी थइ.ते वात अभयकुमारें जाणीने एक सुरंग खोदावी ते मांहेथी श्रेणिकने तेडाव्यो, तेनी आगल सुज्येष्ठा पण आवी. पछी जेटलामां सुज्येष्ठा आभरण लेवा पाछी गइ, एटलामां सुज्येष्ठाने जोवा सारु चेलणा ते सुरंगमां आवीने राजाश्रेणिक आगल उभी रही. राजा तेनेज सुज्येष्ठा जाणी तत्काल घोडा उपर चडावीने चालतो थयो.

पाछलथी सुज्येष्ठा पण आभरणनो करंमीयो लइ सुरंगमां आवी, श्रेणिक राजाने जोवा लागी पण राजानें चेलणा सहित दीठो नही, तेवारें पोकार कर्यो, ते चेडाराजायें सांभल्यो, तेवारें वाहार करवा दोड्यो, तेने सुरंगमांहे श्रेणिकराजायें आवतो दीठो, ते वखतें सुलसाना बत्रीश पुत्र आवी उभा रह्या. राजा श्रेणिक चेलणाने लइ नीकली गयो. चेडाराजायें एक बाण मार्यो ते वागवाथी पुत्र पडी गया. समुदाय कर्म लागुं. पछी सुज्येष्ठायें विचार्युं जे में एक चिंतव्युं अने बीजुं थयुं! एम चिंतवी वैराग्यरंग वासित थइ श्रीवीरनी पासें जइ दीक्षा लइ तेने निरतिचारपणे पालवा लागी.

एवा अवसरमां कोइक पेढाल नामें विद्याधर अनेक विद्याउनो निधान छे, ते वृद्धपणुं पाम्यो, तेवारें विद्या देवा योग्य पात्र शोधवा लाग्यो, पण तादृश पात्र कोइ मले नही. जे सुशील कामरहित स्त्री होय वली ब्रह्मचा

रिणी होय, तेना उदरथी जे पुत्र उत्पन्न थाय ते उत्तम जाणवो. तेवा पात्रने विद्या दीधी थकी बहु फलदायक थाय. एम निर्धारी तेवी स्त्री जोवा माटें पेढाल विद्याधर फस्या करे, तेणें एकदा दीक्षानी पालनारी शीलव्रत धरनारी सुज्येष्ठाने दीठी, तेवारें विद्याने बलें अंधकार करी जेम सुज्ये ष्ठाना जाणवामां न आवे, तेवी रीतें तेनी योनिमां भ्रमरानुं रूप करी वीर्य प्रक्षेप्युं. पछी थोडे थोडे तेने गर्भनां चिन्ह प्रगट थवा लाग्यां, पण श्रीमहावीरें तेने निर्विकारी कही तेथी सज्यातर श्रावकें तेने घरमां राखी. तिहां पूर्ण मासें पुत्र प्रसव्यो, तेनुं सात्यकी एवुं नाम दीधुं. ते साध्वीयोने उपासरे महोटो थवा लाग्यो. तिहां जे जे साध्वीयो भणे, ते सर्व सांभलतां थकां तेणें सर्व शास्त्र कंठें करी लीधां.

एकदा कोइ कालसंवर विद्याधर अने सात्यकी श्रीवीरना समोसरणमां बेठा थकां उपदेश सांभले छे. तिहां सात्यकीयें भगवानने कह्युं के महारा ज ! हुं मिथ्यात्वने परहुं करी समुद्रमां नाखी दईश. तेने भगवानें कह्युं के तहाराथी तो उलटुं विशेष मिथ्यात्व प्रचलित थशे. तेटलामां कालसंवर विद्याधरें पूछ्युं के हे भगवन् ! मुझने कोनाथी भय थशे ? ते वारें भगवाने कह्युं के एं सात्यकी थकी तुझने भय थशे ! ते सांभली विद्याधरें विचार्युं जे ए बालकनुं माहारी आगल शुं गजुं ! एम चिंतवी सात्यकीने पगनी ठेश मारीने जतो रह्यो, ते देखी सात्यकीना मनमां महोटो विषाद उपन्यो. पछी सात्यकी जेवारें महोटो थयो, तेवारें पेढालें तेने रोहिणी प्रमुख वि द्याउ शीखवी. ते विद्याउ साधतां कालसंवर विद्याधर तेने अंतराय करवा लाग्यो. परंतु पूर्वजन्मना वचनथी ते विद्या देवी थोडे थोडे अनुक्रमें प्रसन्न थइ. केम के पूर्वभवें विद्यादेवीयें एं सात्यकीने पांच भव पर्यंत विणास्यो हतो, परंतु पांचमे भवें कह्युं हतुं के छठे भवें तुझनें उपक्रमें विद्या सिद्ध थशे. तेमाटें विद्या तत्काल सिद्ध थइ. पण ते वखतें सात्यकीयें पोतानुं मा त्र छ महीनानुं आयुष्य रहेलुं सांभली फरी विद्यादेवीने कह्युं के हे स्वामि नि ! तमे महारी उपर कृपा करी सातमे भवें वहेलां सिद्ध थजो. ते व चनथी सात्यकीने सातमे भवें ते विद्या तत्काल सिद्ध थइ. ते विद्यादेवी नो अत्यंत प्रेम सात्यकी उपर उपन्यो अने कहेवा लागी के ताहारा शरी रमांहे एवुं कोइ स्थानक देखाड के जिहां अमें षोडश विद्यादेवीयो आवी

ने वसीयें ! सात्यकीयें पोतानुं मस्तक देखाड्युं, तेवारें देवीयोयें ललाटमां छिद्र पाडी मांहे प्रवेश कीधो. तिहां छिद्रने स्थानकें त्रीजुं नेत्र कीधुं.

एकदा सात्यकीयें विचार्युं जे मह्रारा पिता पेढालें मह्रारी माता साध्वीनी निंदा करावी छे? एवो रोष लावीने पेढालने मारी नाख्यो. ते स माचार कालसंवर विद्याधरें सांजल्या, तेथी तेणें पण त्यांथी पलायन कीधुं. सात्यकी तेनी पाछल दोड्यो, कालसंवरें आकाशमां त्रण नगरीनी रचना करी घणा काल पर्यंत युद्ध कर्युं. तो पण सात्यकीयें तेने मार्यो. पछी सात्यकी मदोन्मत्त थइ पोतानी इछायें अनेक परस्त्रीयोने जोगववा लाग्यो. साधुने योगें मिथ्यात्व तजी क्षायिक सम्यक्त्व पाम्यो. त्रिसंध्या जिनार्चा करे. एकदा उज्जयणी नगरीयें चंद्रप्रद्योतनराजाना अंतेउरमां प्रवर्त्यो राजायें क्रोध आणीने कह्युं के कोइ सात्यकीने मारनार छे? तेवारें उमया गणिकायें राजा आगल सात्यकीने मारवानी कबुलात आपी. विश्वासघात करी मारी नखाव्यो॥ ए प्रमाणें इंद्रियलोलुपपणुं करवाथी ते बलवान् एवो सात्यकी नाश पाम्यो. माटें इंद्रियो वश राखवी ॥ ७२ ॥

हवे लक्ष्मीनो स्वनाव कहे छे.

निम्नं गछति निम्नगेव नितरां निद्रेव विष्कंनते,
चैतन्यं मदिरेव पुष्यति मदं धूम्येव दत्तेऽधताम् ॥
चापल्यं चपलेव चुंबति दवज्वालेव तृष्णां नय, त्यु
ल्लासं कुलटांगनेव कमला स्वैरं परिभ्राम्यति ॥७३॥

अर्थः—(कमला के०) लक्ष्मी, (निम्नं के०) नीचप्रत्यें (निम्नगाइव के०) नदीनी पेरें (गछति के०) जाय छे. वली ते लक्ष्मी (नितरां के०) अत्यंत (चैतन्यं के०) ज्ञानने (विष्कंनते के०) विनाश करे छे. केनी पेरें? तोके (निद्रेव के०) निद्रानी पेरें. जेम निद्रा अचैतन्य करे छे, तेम लक्ष्मी पण ज्ञाननो नाश करे छे. तथा (मदं के०) अहंकारने (पुष्यति के०) पोषण करे छे. केनी पेरें? तो के (मदिरेव के०) मदिरा जेम छे तेम. अर्थात् जेम मदिरा उन्मत्तताने करे छे तेम लक्ष्मी पण अहंकार जे मद तेने करे छे. वली ते लक्ष्मी (अंधतां के०) अंधपणाने (दत्ते के०) आपे छे. केनी पेरें? (धूम्येव के०) धूमसमूहनी पेरें वली (चापल्यं के०) चंचलपणाने (चुंबति के०) नजे छे.

केनी पेठें? तो के (चपलेव के०) विजलीनी पेठें जाणवुं. तथा (तृष्णां के०) मृग तृष्णाने अने (उल्लासं के०) उल्लासने (नयति के०) पमाडे छे एटले लोज वांछाने वधारे छे. केनी पेठें? तो के (दवज्वालेव के०) वनाग्निनी ज्वालानी पेठें. अर्थात् जेम दवज्वाला तृषाने वधारे छे, तेम लक्ष्मी लोजने वधारे छे. वली लक्ष्मी (स्वैरं के०) स्वेछायें करी (परिभ्रमति के०) परिभ्रमण करे छे. केनी पेठें ? तो के (कुलटांगनेव के०) स्वैरिणी स्त्रीनी पेठें. जेम असती स्त्री स्वेछायें जमे छे, तेम लक्ष्मी पण स्वेछायें भ्रमण करे छे ॥ ७३ ॥

टीका:—पुनर्लक्ष्मीस्वजावमाह ॥ निम्नगेति ॥ कमला लक्ष्मीः निम्नं नीचं प्रति गछति। केव? निम्नगा इव नदीव । यथा नदी नीचं गछति। पुनः नितरां अतिशयेन चैतन्यं ज्ञानं विष्कंजते विनाशयति। केव? निद्रेव यथा निद्रा अचैतन्यं करोति । पुनर्लक्ष्मीर्मदं अहंकारं पुष्यति पुष्णाति। केव? मदिरेव सूरेव यथा मदिरा मदं उन्मत्ततां करोति । पुनः कमला अंधतां दत्ते अंधत्वं करोति। केव? धूम्येव धूमसमूहइव । यथा धूमोऽप्यंधं करोति । पुनर्लक्ष्मीश्चापल्यं चुंबति जजति। केव? चपला इव विद्युदिव । पुनः कमला तृष्णां उल्लासं नयति । लोजवांछां वर्द्धयति । केव? दवज्वाला इव। यथा दवज्वाला तृषां वर्द्धयति । पुनः कमला स्वैरं स्वेछया परिभ्रमति। केव? कुलटांगना इव असती स्त्री इव यथा असती स्त्री स्वेछया भ्रमति तद्वत् ॥७३॥

जाषाकाव्यः—सवैया तेइसा ॥ नीचकि ओर ढरैं सरिता जिम, घूम बढावत नींदकि नांइ ॥ चंचलता प्रगटै चपला जिम, अंध करै जिम धूम कि ऊांइ ॥ तेज करै त्रसना दव ज्यौं मद, ज्यौं मद पोषति मूढकि तांइ॥ ए करतूत करै कमला जग, मोलत ज्यौं कुलटा बिनु सांइ ॥ ७३ ॥

वली धनना दोषो कहे छे.

दायादाः स्पृहयंति तस्करगणा मुष्णंति जूमीभुजो, गृह्णंति छलमाकलय्य हुतजुग्जस्मीकरोति क्षणात् ॥ अंजः प्लावयति क्षितौ विनिहितं यक्षा हरंते हगात्, डुर्वृत्तास्तनया नयंति निधनं धिग्बव्हधीनं धनम् ॥ ७४ ॥

अर्थः—(धनं के०) इव्यने (धिक् के०) धिक्कार हो. ते केहवुं इव्य छे? तो के (बव्हधीनं के०) घणाकने आधीन रहेलुं छे. कोने कोने

आधीन रहेलुं छे? तो के ते धनने (दायादाः के०) गोत्रीया (स्पृहयंति के०) स्पृहा करे छे. वळी तेने (तस्करगणाः के०) चोरना समूहो (मुष्णंति के०) चोरे छे. तथा (नूमीनुजः के०) राजाउ (बलं के०) कांइ पण मिषने (आकलय्य के०).दइने (गृह्णंति के०) ग्रहण करे छे. वळी (हुतनुक् के०) अग्नि (क्षणात् के०) क्षणमात्रमां (नस्मीकरोति के०) नस्म करे छे. अने (अंनः के०) पाणी, (प्लावयति के०) पलाळी नाखे छे. तथा (क्षितौ के०) पृथ्वीने विषे (विनिहितं के०) स्थापन करेलुं जे धन, तेने (यक्षाः के०) व्यंतरो, (हगत् के०) बलात्कारथी (हरंते के०) हरण करे छे. तथा (डुर्वृत्ताः के०) डुराचारी एवा (तनयाः के०) पुत्रो, (निधनं के०) विनाशने (नयंति के०) पमाडे छे. माटें घणा जननी स्पृहायुक्त एवा धनने धिक्कार होजो ॥ ७४ ॥

टीकाः—धनस्य दोषानाह । धनं इव्यं धिक् अस्तु । धिक् निर्नत्सननिंदयोः । किंनूतं ? बव्हधीनं बव्हधीनत्वं । बहवः इबंति । कथं ? दायादाः गोत्रिणः स्पृहयंति ग्रहीतुं वांछंति । पुनस्तस्करगणाश्चोरसमूहाः मुष्णंति चौरयंति । पुनर्नूमीनुजो राजानः छलं आकालय्य मिषं दत्वा गृह्णंति । हुतनुक् वन्हिः क्षणाद्वेगेन नस्मीकरोति ज्वालयित्वा रक्षां करोति । पुनरंनः पानीयं प्लावयति वाहयति । पुनर्यद्धनं क्षितौ विनिहितं स्थापितं सन् यक्षाव्यंतरा हगाद्बलात्कारेण हरंते अपहरंति । पुनर्डुर्वृत्ताः डुराचारास्तनयाः पुत्रा निधनं विनाशं नयंति प्रापयंति । एवं बव्हधीनं धनं धिगस्तु ॥ ७४ ॥

नाषाकाव्यः—वृत ऊपर प्रमाणें ॥ बंधु विरोध करै निशि वासर, नंनन कों नरवइ छल जोवै ॥ पावक दाहत नीर वहावत, व्है हग उंट निशाचर ढोवै ॥ नूतल रक्षत जक्ष हरें करि, कै डुरवृत्ति कुसंगति खोवै ॥ ए उत्पात उठै धनके ढिग, दामधनी कहो क्यों सुख सोवै ॥ ७४ ॥

जे धन छे तेज मोहनुं उत्पादक छे, ते कहे छे.

नीचस्याऽपि चिरं चटूनि रचयंत्यायांति नीचैर्नतिम्,
शत्रोरप्यगुणात्मनोऽपि विदधत्युच्चैर्गुणोत्कीर्त्तनम् ॥
निर्वेदं न विदंति किंचिदकृतज्ञस्यापि सेवाक्रमे, कष्टं
किं न मनस्विनोऽपि मनुजाः कुर्वंति वित्तार्थिनः॥७५॥

अर्थः—(मनस्विनोऽपि के०) मानवंत एटले मोह्या एवा पण (मनुजाः के०) मनुष्यो, (वित्तार्थिनः के०) इव्यार्थी थया बता, (किं कष्टं के०) कया कष्टने (न कुर्वंति के०) नथी करता ? अर्थात् सर्व प्रकार ना कष्टने करेज बे. ते जेमःकेः—वित्तार्थीजनों (नीचस्यापि के०) नीच जन नी आगल, (चटूनि के०) प्रिय एवां वचनोने (चिरं के०) घणा काल (रचयंति के०) बोले बे. तथा (नीचैः के०) नीच पुरुषो साथें (नतिं के०) प्रणामने (आयांति के०) करे बे. तथा (अगुणात्मनोपि के०) निर्गुण एवा पण (शत्रोरपि के०) शत्रुना पण (उच्चैः के०) अतिशयें करी (गुणोत्कीर्त्तनं के०) गुणवर्णनने (विदधति के०) करे बे. वली (अकृतज्ञस्यापि के०) करेला कार्यने न जाणनारा एवा अकृतज्ञ स्वामीना पण (सेवाक्रमे के०) सेवा करवामां (किंचित् के०) जरा पण (निर्वेदं के०) खेदने (नविदंति के०) जाणता नथी. एटले वित्तने वांबनारा जनो पूर्वोक्त सर्व काम करे बे.

टीकाः—धने मोहोत्पादकत्वमाह ॥ नीचस्येति ॥ मनस्विनोमानवंतो दक्षा अपि मनुष्या वित्तार्थिनो इव्यार्थिनः संतः किं कष्टं न कुर्वंति ? अपि तु सर्वं कष्टं कुर्वंति। यथा नीचस्यापि नरस्याग्रे चिरं चिरकालं याचन् चटूनि चटुवचनानि प्रियवचनानि रचयंति जल्पंति । पुनर्नीचैर्नरैः समं नतिं आयांति प्रणामं कुर्वंति । पुनः शत्रोरपि अगुणात्मनोपि निर्गुणस्यापि उच्चैरतिशयेन गुणोत्कीर्त्तनं गुणवर्णनं विदधति । पुनरकृतज्ञस्यांऽपि प्रनोः सेवाक्रमे सेवा करणे किंचित् स्तोकमपि निर्वेदं खेदं न विदंति न जानंति । वित्तवांबकाः संतः ७५

नाषाकाव्यः—सवैया इकतीसा ॥ नीच धनवंत ताहि निरखि असीस देइ, वह न विलोके यह चरन गहतु है ॥ वह अकृतज्ञ नर यह अज्ञता को घर, वह मदलीन यह दीनता कहतु है ॥ वह चित्त कोप ठाने यह वाकों प्रभु माने, वाके कुवचन सब याहिपें सहतु है ॥ ऐसी गति धारे न विचारे कबु गुनदोस, अरथाभिलाषि जीव अरथ चहतु है ॥ ७५ ॥

लक्ष्मीः सर्प्पति नीचमर्णवपयः संगादिवांभोजिनी, संसर्गा
दिव कंटकाकुलपदा न कापि धत्ते पदम् ॥ चैतन्यं विषसन्नि
धेरिव नृणामुज्जासयत्यंजसा, धर्मस्थाननियोजनेन गुणिभि
र्ग्राह्यं तदस्याः फलम् ॥ ७६ ॥ इति लक्ष्मीस्वभावप्रक्रमः ॥ १७ ॥

अर्थः—(लक्ष्मीः के०) लक्ष्मी, (नीचं के०) नीच पुरुषप्रत्यें (सर्पति के०) जाय ढे. शा माटें जाय ढे? तो त्यां उत्प्रेक्षा करे ढे. के (अर्णवपयःसंगादिव के०) समुद्र जलना संगथकी जेम जल ढे, ते नीचगामी ढे तेम लक्ष्मी पण जलसंगथकी नीचगामी थइ ढे. कारण के लक्ष्मीनी उत्पत्ति समुद्र जलथीज ढे, अर्थात् समुद्रजल पिता होवाथी ते नीचगामी ढे. वली लक्ष्मी (क्वापि के०) कोइ पण (पदं के०) स्थानकने (नधत्ते के०) नथी धारण करती. केम के, (अंजोजिनीसंसर्गात् के०) कमलिनीना संयोगथकी (कंटकाकुलपदाइव के०) कांटायें करी व्याप्त ढे पग जेना एवीज जाणीयें होय नही एटले जेम कोइने कांटा वाग्या होय तेने पीडा होवाथी क्यांय पग मांमी सके नही तेम लक्ष्मी पण एकस्थलें रहेती नथी. वली लक्ष्मी (नृणां के०) मनुष्योना (चैतन्यं के०) ज्ञानने (अंजसा के०) अनायासें करी (उल्लासयति के०) गमावे ढे शा माटें? तो के ते (विषसन्निधेरिव के०) विषना सन्निधिपणा थकीज जाणीयें होय नही कारण के विषनुं अने लक्ष्मीनुं स्थानक एक समुद्रज ढे. (तत् के०) ते कारणमाटें (गुणिन्निः के०) गुणिजनोयें (धर्मस्थाननियोजनेन के०) धर्मस्थानमां तेना व्ययने करवे करी (अस्याः के०) आ लक्ष्मीनुं (फलं के०) फल, (ग्राह्यं के०) ग्रहण करवा योग्य ढे. अर्थात् पुण्यकार्यमां जे लक्ष्मी वापरे, ते लक्ष्मीनुं फल पामे ॥७६॥ इति सप्तदश लक्ष्मीस्वनावप्रक्रमः ॥ १७ ॥

टीकाः—उपमानेन श्रीस्वरूपमाह ॥ लक्ष्मीः नीचं सर्पति नीचं जनं प्रतियाति। कस्मात्? उत्प्रेक्ष्यते। अऽर्णवपयः संगात् समुद्रजलसंगमान्नीचगामिन्यनूत्। पुनर्लक्ष्मीः क्वापि पदं स्थानं च न धत्ते न स्थापयति। कीदृशी? अंजोजिनीसंसर्गात् कमलिनीसंयोगादिव। कंटकाकुलपदा कंटकैर्व्याप्तचरणेव ॥ पुनर्लक्ष्मीर्नृणां पुंसां चैतन्यं ज्ञानं अंजसा वेगेनोल्लासयति गमयति। कस्मात् विषसंन्निधेर्विषसामीप्यादिव लक्ष्म्याः विषस्य च समुद्रस्थानत्वात् तस्मात्कारणात् गुणिनिर्जनैर्धर्मस्थाननियोजनेन धर्मस्थानव्ययकरणेनास्याः लक्ष्म्याः फलं ग्राह्यं सफला कर्त्तव्येत्यर्थः ॥ ७६ ॥ सिंदूरप्रकरग्रंथव्याख्यायां हर्षकीर्त्तिनिः ॥ सूरिनिर्विहितायां तु, लक्ष्म्याश्च प्रक्रमोऽजनि॥ १७॥

नाषाकाव्य—वृत्त उपर प्रमाणें ॥ नीचहीकी ओरकुं उमंगी चलै कमलासु, पिता सिंधु सलिल सुनाउ याहि दियो है॥ रहे न सुस्थिर व्है सकंटक चरन याको, वसि कंजमांहि कंजकोसो पद कियो है॥ जाकों मिलै हितसों अचेत

करि मारे तांहि, विषकी बहिन तातें विषको सो हियो है ॥ ऐसी ठगहारी जिन धरमके पथमारी, करिकें सुकृत तिन याको फल लियो है ॥ ७६ ॥

कथाः—अंगदेशने विषे धारापुर नगरनो सुंदर नामें राजा छे, तेनी मदनवल्लभा नामें राणी छे. तेने एक कीर्त्तिपाल, बीजो महीपाल एवे नामें बे पुत्र छे. ते राजा परस्त्रीपराङ्मुख छे, अने राणी पण शीलांगी छे. एकदा मध्यरात्रियें तेनी कुलदेवतायें आवीनें कह्युं के हे राजन्! तुजनें दुर्दशा आवी छे, महोटुं कष्ट प्राप्त थशे? ते सांभलीने राजायें कह्युं के शुभाशुभकर्म जे जीवें कर्यां होय, ते भोगव्या विना छूटको थाय नही ॥ यतः ॥ संपदि यस्य न हर्षो, विपदि विषादोरणेषु धीरत्वम् ॥ तं भुवनत्रयतिलकम्, जनयति जननी सुतं विरलम् ॥ १ ॥ माटें कीधां कर्म भोगव्या विना छूटे नही. एवुं धैर्य धरी प्रधानने राज्य भलावी राजा पोतें तथा स्त्री अने बे पुत्र साथें लइ परदेश भणी चाल्या. एकदा वगडामां कुटुंब सहित राजा सूतो छे ते वखतें पोतानी पासें जे संबल हतुं, ते सर्व चोर लोको लइ गया. पछी वनफलादिकें कुटुंब निर्वाह करतो थको चालतो चालतो पृथ्वीपुरनगरें आव्यो. तिहां कोइ धनसागर व्यवहारीयाना वाडामां रह्यो. राणी लोकोने घेर मजुरी करवा जाय छे तेने स्वरूपवान् देखी मोहित थइ लोको मजुरी वधारे देवा लागा. तिहां विषयी लोकोना प्रसंगथी घणां दुःख सहन कर्यां, फरी भाग्योदय थयो तेवारें पोताने नगरें गया. राज्य पाम्यां, सर्व कुटुंबने मल्यां, सर्व मनोरथ सिद्ध थया. घणो काल सांसारिक सुख भोगवी वृद्धावस्थायें चारित्र लइ छेवट संलेषणा करी देवलोकें गया. ए लक्ष्मीनी चंचलताविषे कथा जाणवी ॥ ७६ ॥ हवे दाननो उपदेश कहे छे.

चारित्रं चिनुते धिनोति विनयं ज्ञानं नयत्युन्नतिम्,
पुष्णाति प्रशमं तपः प्रबलयत्युल्लासयत्यागमम् ॥
पुण्यं कंदलयत्यघं दलयति स्वर्गं ददाति क्रमात्,
निर्वाणश्रियमातनोति निहितं पात्रे पवित्रं धनम् ॥ ७७ ॥

अर्थः—(पवित्रं के०) पवित्र एटले न्यायोपार्जित एवुं (धनं के०) धन, (पात्रे के०) पात्रने विषे (निहितं के०) आरोपण कर्युं छतुं एटले दीधुं छतुं (चारित्रं के०) संयमने (चिनुते के०) वधारे छे. तथा (विनयं के०) विनयना गुणने

(धिनोति के०) वधारे छे. तथा (ज्ञानं के०) श्रुतादिकज्ञानने (उन्नतिं के०) उन्नतिप्रत्यें (नयति के०) पमाडे छे. तथा (प्रशमं के०) उपशमने (पुष्णाति के०) पोषण करे छे. तथा (तपः के०) मास पक्ष क्षपणादिक जे तप तेने (प्रबल यति के०) बलवान् करे छे. एटले पारणादिं योगथकी उत्साह करे छे. तथा (आगमं के०) सिद्धांत पठनादिकने (उल्लासयति के०) प्रबल करे छे. तथा (पुण्यं के०) पुण्यने (कंदलयति के०) उत्पन्न करे छे. (अघं के०) पापने (दलयति के०) खंमन करे छे. तथा (स्वर्गं के०) स्वर्गने (ददाति के०) आपे छे. तथा (क्रमात् के०) अनुक्रमथकी (निर्वाणश्रियं के०) मोक्षरूप लक्ष्मीने (आतनोति के०) विस्तारे छे एटले आपे छे. अर्थात् सुपात्रमां आपेलुं धन, पूर्वोक्त सर्व वस्तुने आपे छे ॥ ७७ ॥

टीकाः—दानोपदेशमाह ॥ चारित्रमिति ॥ पवित्रं न्यायोपार्जितं धनं वित्तं पात्रे सुपात्रे निहितं दत्तं सत् चारित्रं संयमं चिनुते वर्द्धयति । विनयं विनयगुणं धिनोति प्रीणयति । पुनर्ज्ञानं श्रुतादि उन्नतिं नयति प्रापयति । पुनः प्रशमं उपशमं पुष्णाति पोषयति । पुनस्तपोमासक्षपणादि प्रबलयति पारणादियोगाडुत्साहयति । पुनरागमं सिद्धांतपठनादि उल्लासयति प्रबलं करोति । पुनः पुण्यमेव सत्कर्मवनं कंदलयति कंदलायुक्तं करोति । पुनः अघं पापं दलयति खंमयति । पुनः स्वर्गं ददाति । क्रमादनुक्रमेण निर्वाणश्रियं मोक्षलक्ष्मीं आतनोति दत्तं इत्यर्थः । सुपात्रे दत्तं धनं एतानि वस्तूनि करोति ॥ ७७ ॥

नाषाकाव्यः—कवित्त मात्रात्मक छंद ॥ चरन अखंम ज्ञान अति उज्ज्वल, विनयविवेक प्रसम अमलान ॥ अंनघ सुनाउ सुकृत गुनसंशय, उच्च अमर पद बंध विधान ॥ अगम गम्य रम्य तपकी रुचि, उद्धत मुगति पंथ सोपान ॥ ए गुन प्रगट होहिं तिनके घट, जे नर देहिं सुपत्तहिं दान ॥ ७७ ॥

दारिद्र्यं न तमीक्षते न नजते दौर्भाग्यमालंबते,
नाऽकीर्तिर्न परानवोऽनिलषते न व्याधिरास्कंदति ॥
दैन्यं नाद्रियते डुनोति न दरः क्लिश्नंति नैवापदः,
पात्रे योवितरत्यनर्थदलनं दानं निदानं श्रियाम् ॥ ७८ ॥

अर्थः—(यः के०) जे पुरुष, (पात्रे के०) पात्र जनने विषे (दानं के०) दानने (वितरति के०) आपे छे. (तं के०) ते पुरुषने (दारिद्र्यं

के०) दारिद्र्य, (नईक्षते के०) जोतुं नथी, तथा ते पुरुषने (दौर्भाग्यं के०) डुर्भाग्यपणुं, (न भजते के०) सेवतुं नथी. तथा (अकीर्त्तिः के०) अपयश (नालंबते के०) आश्रय करतुं नथी. तथा ते पुरुषने (पराभवः के०) पराभव, (नाभिलषते के०) अभिलाष करतो नथी. तथा (व्याधिः के०) व्याधि, (न आस्कंदति के०) न शोषण करे छे. तथा (दैन्यं के०) दीनता (नाद्रियते के०) आदर करती नथी तथा (दरः के०) भय, ते (नडुनोति के०) नथी पीडतो. तथा (आपदः के०) कष्टो, (नैव क्लिश्नंति के०) नथीज पीडा करतां. ते दान कहेवुं छे? तो के (अनर्थदलनं के०) उपद्रवोने नाश करनारुं छे तथा (श्रियां के०) संपत्तिनुं (निदानं के०) कारणभूत छे. ते माटें सुपात्रने दान जरूर आपवुं ॥ ७८ ॥

टीकाः—पुनर्दानगुणानाह ॥ दारिद्र्यं नेति ॥ यः पुमान् पात्रे सुपात्रे दानं वितरति प्रयच्छति। तं पुरुषं दारिद्र्यं न ईक्षते न पश्यति। पुनस्तं दौर्भाग्यं डुर्भगत्वं न भजते न सेवते। पुनस्तं अकीर्त्तिरपयशो नालंबते नाश्रयति। पुनस्तं पराभवः नाऽभिलषते न वांछति। पुनर्व्याधिर्मांद्यं तं नास्कंदति न शोषयति। पुनर्दैन्यं दीनतां नाद्रियते नाश्रयति। पुनर्दरोभयं न डुनोति न पीडयति। पुनः आपदोव्यसनानि कष्टानि तं न क्लिश्नंति न पीडयंति। यः पात्रे दानं ददाति। किंभूतं दानं? अनर्थानां उपद्रवानां दलनं छेदनं। पुनः किंभूतं श्रियां संपदां निदानं कारणं ॥ ७८ ॥

भाषाकाव्यः—छप्पयछंद ॥ सो दरिद्र दलमलै, तांहि डरभाग न गंजै ॥ सो न लहै अपमान, सो तो विपदा भय भंजै ॥ पिसुन कोइ डुःख देइ, तास तन व्याधि न वढइ ॥ तांहि कुजस परिहरै, सुमुख दीनता न कट्टइ ॥ सो लहै उच्च पद जगत मैं, अघ अनर्थ नाशहि सरव ॥ कहिं कंवरपाल सो धन्य नर, जो सुखेत बोवै दरव ॥ ७८ ॥

वली पण दानना गुणो कहे छे.

लक्ष्मीः कामयते मतिर्मृगयते कीर्तिस्तमालोकते, प्रीतिश्चुंबति सेवते सुभगता नीरोगताऽऽलिंगति ॥ श्रेयःसंहतिरभ्युपैति वृणुते स्वर्गोपभोगस्थिति, मुक्तिर्वांछति यः प्रयच्छति पुमान् पुण्यार्थमर्थं निजम्॥७९॥

अर्थः–(यः के०) जे (पुमान् के०) पुरुष, (पुण्यार्थे के०) पुण्यने अर्थे (निजं अर्थं के०) पोताना धनने (प्रयच्छति के०) आपे छे (तं के०) ते पुरुषने (लक्ष्मीः के०) कमला, ते (कामयते के०) इच्छे छे. तथा तेने (मतिः के०) बुद्धि, (मृगयते के०) खोले छे शोधे छे. तथा (कीर्त्तिः के०) कीर्त्ति (आलोकते के०) जोवे छे तथा तेने (प्रीतिः के०) प्रीति, (चुंबति के०) चुंबन करे छे तथा ते जनने (सुनगता के०) सौनाग्य, (सेवते के०) सेवे छे. तथा (नीरोगता के०) आरोग्यता, ते (आलिंगति के०) आलिंगन करे छे. वली तेने (श्रेयःसंहतिः के०) कल्याणपरंपरा, (अभ्युपैति के०) सन्मुख आवे छे. तथा ते पुरुषने (स्वर्गोपनोगस्थितिः के०) स्वर्गना उपनोगनी पद्धति, (वृणुते के०) वरे छे. तथा (मुक्तिः के०) मोक्ष,(वांछति के०) वांछे छे. माटे द्रव्यने पुण्यने अर्थे अवश्य वापरवुं ॥७९॥

टीकाः–दानगुणानाह ॥ लक्ष्मीरिति ॥ यः पुमान् पुण्याऽर्थे श्रेयोर्थे निजं अर्थं स्वकीयं धनं प्रयच्छति ददाति। तं पुरुषं लक्ष्मीः कमला कामयते वांछति। पुनर्मतिर्बुद्धिस्तं मृगयते अन्वेषति । पुनः कीर्त्तिस्तं आलोकते पश्यति । पुनः प्रीतिरानंदस्तं चुंबति श्लिष्यति । पुनः सुनगता सौनाग्यं तं सेवते नजति। नीरोगता आरोग्यं तं आलिंगति । पुनः श्रेयःसंहतिः कल्याणपरंपरा तं अभ्युपैति सन्मुखमायाति। पुनः स्वर्गोपनोगस्थितिर्देवलोकस्य नोगपद्धतिस्तं वृणुते वरयति । पुनर्मुक्तिर्मोक्षस्तं वांछति । यः पुण्यार्थं निजं अर्थं प्रयच्छति ॥७९॥

नाषाकाव्यः–सवैया इकतीसा ॥ ताहिकों सुबुद्धि वरै, रामा ताकी चाह करै, चंदन स्वरूप व्है सुजस तांहि अरचै ॥ सहज सुहाग पावै, सुरग समीप आवै, वार वार मुगति रमनि तांहि चरचै ॥ तांइके सरीरकों आलिंगत अरोग ताइ, मंगल करै मिताइ प्रीति करै परचै ॥ जोइ नर व्है सुचेत चित्त समता समेत, धरमके हेतकों सुखेत धन खरचै ॥ ७९ ॥

वली पण दाननाज गुण कहे छे.

मंदाक्रांतावृत्तम् ॥ तस्यासन्ना रति रनुचरी कीर्त्तिरुत्कंण्ठिता श्रीः, स्निग्धा बुद्धिः परिचयपरा चक्रवर्त्तित्वऋद्धिः ॥ पाणौ प्राप्ता त्रिदिवकमला कामुकी मुक्तिसंप, त्सप्तक्षेत्र्यां वपति विपुलं वित्तबीजं निजं यः ॥ ८० ॥ इति दानप्रक्रमः ॥१८॥

अर्थः–(यः के०) जे पुरुष, (निजं के०) पोतानुं (विपुलं के०) प्रचुर एवुं (वित्तबीजं के०) वित्तरूप बीजने (सप्तक्षेत्र्यां के०) सात क्षेत्रने विषे एटले १ जिनभुवन, २ जिनबिंब, ३. ज्ञानपुस्तक, ४ चतुर्विध संघभक्ति, ते रूप सात क्षेत्रने विषे (वपति के०) वावे छे. एटले वापरे छे. (तस्य के०) ते पुरुषने (रतिः के०) समाधि (आसन्ना के०) समीप वर्त्तवावाली थाय छे. ढूकडी थाय छे. तथा तेने (कीर्त्तिः के०) कीर्त्ति ते (अनुचरी के०) दासी थाय छे. तथा (श्रीः के०) संपत्ति एटले धनधान्य हिरण्यरूप संपत्ति, ते मलवाने (उत्कंठिता के०) उत्कंठित थाय छे. तथा (बुद्धिः के०) बुद्धि, (स्निग्धा के०) स्नेहवती थाय छे. तथा तेने (चक्रवर्त्तित्वऋद्धिः के०) सार्वभौमपणानी विभूति, (परिचयपरा के०) सुपरिचित थाय छे. तथा तेने (त्रिदिवकमला के०) स्वर्गनी लक्ष्मी, (पाणौ के०) हाथने विषे (प्राप्ता के०) प्राप्त थाय छे. तथा तेने (मुक्तिसंपत् के०) मुक्तिरूप संपत्ति, एटले सिद्धिरमा, ते (कामुकी के०) अभिलाष युक्त थाय छे. माटे सातक्षेत्रने विषे धन वावरवुं ॥ ७० ॥ आंहिं धनाशालिभद्र, चंदनबाला, सागरचंद्रश्रेष्ठिनी कथानो दृष्टांत जाणवो ॥ इति दानप्रक्रमः ॥ १७ ॥

टीकाः–भूयोऽप्याह ॥ तस्येति ॥ यः पुमान् निजं स्वकीयं विपुलं प्रचुरं वित्तमेव बीजं । सप्तक्षेत्र्यां १ जिनभुवन, २ बिंब, ३ पुस्तक, ४ चतुर्विधसंघभक्तिरूपायां वपति । तस्य पुरुषस्य रतिः समाधिरासन्ना समीपवर्त्तिनी स्यात्तथा तस्य कीर्त्तिरनुचरी सेविका स्यात्तथा तस्य श्री संपत् धनधान्य हिरण्यरूपा उत्कंठिता मिलनायोत्कंठिता स्यात्तथा तस्य बुद्धिरौत्पत्तिक्याद्या स्निग्धा स्नेहवती स्यात्तथा तस्य चक्रवर्तित्वऋद्धिः सार्वभौमविभूतिः परिचयपरा सुपरिचिता स्यात्तथा त्रिदिवस्य स्वर्गस्य कमला श्रीः पाणौ हस्ते प्राप्ता संगता स्यात्तथा मुक्तिसंपत् सिद्धिरमा कामुकी साभिलाषा स्यायः सप्तक्षेत्र्यां निजं वित्तबीजं वपति ॥ ७० ॥ अत्र धनाशालिभद्र चंदनबाला सागरचंद्रश्रेष्ठिकथाः ॥ सिंदूरप्रकरग्रंथ, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, दानस्य प्रक्रमोऽजनि ॥१७॥ इति दानप्रक्रमः ॥१७॥

भाषाकाव्यः–मात्रात्मक छंद ॥ ताकि रती फिरती दासी सम, सहसा राजऋद्धि घर आवै ॥ सुमति सदा उपजै ताके घट, सो सुरलोक संपदा पावै ॥ ताकी दिष्टि लखै सिवमारग, सो निरबंध भावना भावै ॥ जो नर त्यागि कपट कूंरा कहि, विधिसों सपत खेत धन बोवै ॥ ७० ॥

कथाः—मणिमंदिर नामें नगर तेमां श्रीकरनामें व्यवहारीयो वसे ले. ते परम श्रीजिनभक्त ले, त्रिसंध्य जिनपूजा आवश्यक करे ले. चतुःपर्वी पोसह करे ले, तेने कुशलवती नामें भार्या ले, ते श्रावकने घेर बे सेवक ले, ते पण श्रावकनी संगतिथी जिनधर्मसेवन करे ले. एकदा ते बेहु सेवक पोतपोतामां वातो करतां बोल्या के ए भाग्यवंत शेठनां त्रणे भव प्रत्यक्ष धन्य जाणवां. ते वाक्य सांभली शेठ हर्षवंत थयो. अन्यदा ते बेहु जण शेठनी साथें देरासरें गया, तिहां शेठ फूल लइ जिनभुवनमां गयो अने ते बे सेवक मांहेलो एक वडेरो सेवक पांच कुंमानां फूल लइ भक्तिपूर्वक जिनपूजा करवा लाग्यो, अने बीजो सेवक उपाश्रयें जइ व्याख्यान सांभलवा बेठो. उपवास करी बे पहोर पछी पोतानी पांतीमां आवेलुं धान्य पीरसावीनें भक्तिपूर्वक रूषीश्वरने वहोराव्युं, मनमांहे पोताने अत्यंत धन्यवाद आपतो रह्यो. एम अनुक्रमें शुभकृत्य करतां आयु पूर्ण थयें बेहु जण मरण पामी कलिंगदेशनो शूरसेन नामें कोइक राजा ले, तेनी वि जया नामें राणीनी कूखें पुत्रपणें जइ उपना. तेमां एकनुं नाम अमरसेन अने बीजानुं नाम वीरसेन पाड्युं, बेहु पुत्र राजाने परमवल्लभ ले, अनुक्रमें सर्वकलाना पारंगामी थया. ते बेहु सौभाग्यनिधान सर्वलोकनें अत्यंत प्रिय थयेला देखीने उरमान मातायें चिंतव्युं जे ज्यां सुधी ए बे पुत्र आहीं हशे, त्यां सुधी म्हारा पुत्रनें राज्य मलशे नहीं.

एकदा राजा वसंतक्रीडाने अर्थें उद्यानें गयो. एवामां राणीयें रात्रिने समयें पोतानुं शरीर नखें करी वलूख्युं, राजा घरें आव्यो, तेवारें राणीने पूछ्युं के तहारुं शरीर कोणें वलूख्युं? तेवारें राणी रोती थकी स्त्रीचरित्र करती बोली के हे स्वामी! ए काम सर्व तमारा कुमरोनुं जाणजो. ए बेहु मदोन्मत्त आवीने मने वलग्या माटें हवे मने माहरे पीयर मोकलो. ए तमारा मानीता पुत्र आगल म्हाराथी रही शकाय नहीं. एवी वात सांभलतांज राजायें चंमालने तेडावीने कह्युं के आ बेहु कुंपात्रोनां मस्तक कापी आज रात्रें म्हारी पासें लावजे. ते सांभली चंमाल बेहु कुमरो पासें गयो, अने राजानो हुकम कही संभलाव्यो. कुमर बोल्या के राजानो आदेश अमारे प्रमाण ले, तुं सुखें ते काम कर. तेवारें चंमालें कह्युं के तमें परदेश भणी जाउ. ए हुं तमारा पुण्यथी कहुं लुं, तेणें तेमज कर्युं,

अने बेहु कुमर छाना जता रह्या. मनमां विचारवा लाग्या के आपणा कर्मनी वातें, के जे आपणी उरमान मातायें आपणने कूडुं कलंक दीधुं. पाछलथीमाताने पण आनंद थयो.

हवे ते बेहु जाई पृथ्वीमां फरता फरता एक अटवीमां रात्रिने समयें कोइ वृक्षनी नीचें विश्राम लेवा माटें रह्या. तिहां अमरसेन सूइ रह्यो अने वयरसेन जागतो बेगे, हवे ते वृक्षनी उपर सूडो सूडी बेगां छे, तेमां सूडी बोली जे आ वृक्षनीचें बेगा छे, तेनुं आतिथ्य करीयें, तेवारें सूडो बोल्यो के हे सूडी! आपणें तिर्यंच छैयें, माटे आपणाथी शुं उपकार थाय! तेवारें सूडी बोली जो उद्यम करीयें तो सर्वसाध्य छे, अने जो तमें उद्यम करो, तो हुं पण सान्निध्य करुं! तेने सूडें कह्युं के तुं कहे ते हुं उद्यम करुं! सूडी बोली के त्रिकूटपर्वत उपर एक सहकार छे, ते एकविद्याधरें मंत्रीने वाव्यो छे, तेमां एक फल एवुं छे के तेनुं जक्षण करवाथी राज्य मले, अनें बीजुं फल एवुं छे के तेनुं जक्षण करे, तेना मुखमांथी प्रतिदिन पांचशें पांचशें सोनामोरो पडे, माटें ते सहकारनां फल लावीने ए बे जणने आपीयें तो परोणागत रूडी थाय. एम विमासी ते कीरयुग्म उड्युं, ते त्रिकूट पर्वतें जइ सहकारनां फल लेइ आवीने कुमरोने आप्यां. प्रजातें फल लइ बेहु जण आगल चाल्या, तेमां अमरसेनें दातण कीधां. पछी राज्य पदवी मलवानुं फल दीधुं. तेणें जक्षण कीधुं फलनो उपचार कह्यो. बीजुं फल बीजे दिवसें दातण करी शूरसेने जक्षण कीधुं. तेवारें तेना मुखमांथी पांचशें दिनारो पडी. ते धनथी आनंद पाम्या. पछी चालतां चालतां सातमे दिवसें कंचनपुरनगरें आव्या, तिहां नगरनी बाहेर वृक्षनी नीचें महोटा जाइनें बेसाडी वयरसेन जोजन लेवा सारु नगरमां आव्यो, ते अवसरें ते नगरनो राजा अपुत्रीयो मरण पाम्यो छे, तेवारें सर्व लोकोयें पंचदिव्यनी अधिवासना कीधी, उद्यानमांहे पंचदिव्यथी अमरसेनने राज्य मल्युं. तेंने हाथी उपर बेसाडी नगरमांहे लाव्या. राज्यपाटें स्थाप्यो. पछी जाइनी शोध करी पण किहांइ दीठो नहीं, अने वयरसेन जाइने राज्य मल्युं सांजलीने कोइ गणिकाने घेर जइ रह्यो. तिहां प्रतिदिवस पांचशें सोनामोर मुखमांथी निकले, ते वेश्याने आपे, अने निश्चिंतपणे वेश्यानी साथें विषयिक सुख जोगवे.

एकदा वृद्ध अक्कायें पोतानी पुत्रीने पूछ्युं के ए तहारो भर्त्तार कोइ पण धंधो कर्या विना क्यांथी द्रव्य लइ आवे छे? तेवारें वेश्यायें वयरसेनने पूछ्युं. वयरसेनें स्त्रीनो मर्म्म अजाणते थके सर्व पोतानी साचे साची हकीगत कही. ते प्रमाणें वेश्यायें अक्कानी आगल कह्युं. तेवारें अक्कायें औषध आपी वमन कराव्युं, तेमांथी गोटली काहाडी लीधी, प्रभातें वयरसेन दातण करी खोंखारो करवा लाग्यो पण मुखमांथी सोनामोर पडी नही, पछी द्रव्यहीन जाणी अक्कायें घरमांथी बाहेर कहाढी मूक्यो, तेवारें चिंतातुर थको वनमां वृक्षनी नीचें जइ बेठो.

तिहां रात्रिने समयें चार चोरने पोतपोतामां वाद करता देखी कुमर पण चोरनी पेठें चोर थइने तेनी साथें जइ मल्यो अने ते चोरने विवाद करवानो व्यतिकर पूछ्यो, तेवारें चोर बोल्या के अमें बार वर्ष पर्यंत महोटो प्रयास करीने तेमां एक चांखडीनो जोडो, बीजो दंड, अने त्रीजी कंथा, ए त्रण वस्तु एक सिद्धपुरुष पासेंथी पाम्या छैयें. ते सांभली कुमर बोल्यो के ए निर्जीव वस्तु माटें तमें आटलो क्लेश शा वास्ते करो छो? एमां छे शुं? तेवारें चोर बोल्या के ए वस्तुमां महोटो प्रभाव छे, कारण के ते सिद्ध पुरुषें छ महिना पर्यंत देवता आराध्यो, त्यारें तेणे संतुष्ट थइने आकाशगामिनी विद्या माटे चांखडी दीधी, अने ए दंड छे ते सर्व शस्त्रनो निवारण करनार छे, तथा त्रीजी कंथा जे छे, ते दिनदिन प्रत्यें पांचशें सोनामोरनी आपनारी छे, माटें ए त्रणे वस्तुनी अमने वहेंचण करी आपतो अमारो विवाद मटी जाय. तेने कुमरें कह्युं के तमें दूर जइ बेसो. हुं विचार करीने तमोने वहेंची आपुं. पछी कुमरें लब्ध लक्ष्मीनी पेरें कंथा पहेरी अने दंड हाथमां धारण कर्यो. तथा चांखडी पगमां पहेरीने आकाशें उडी गयो. पाछलथी चोर विलखा थया थका अन्यत्र स्थानकें जता रह्या.

कुमर पण देशांतर जइ पांच दिवसें पाछो तेहीज गाममां आव्यो, तिहां दररोज पांचसो सोनामोर तेने कंथा आपे, ते लइ वाटमां विलास करतो फरे. तेने गणिकायें दीठो, त्यारें तेनी पासें आवी पोतानो अपराध खमावी अक्कायें तेने पोताने घेर आण्यो. कुमर पण गणिकानो विश्वास न करतो कंथाने कोइ व्यवहारीयाने घेर मूकी पोते वेश्याने घरे रह्यो थको तेनी साथें विषय संबंधी सुखविलास भोगवे छे.

एकदा वळी गणिकायें अक्काना कहेवाथी वयरसेन कुमरने पाडुकानुं वृत्तांत पूछ्युं, तेनो कुमरें खरेखरो हारद कह्यो. तेणें जइ अक्काने कह्यो. अक्का युक्ति करी वयरसेन प्रत्यें कहेवा लागी के हे वत्स ! ताहारा वियोग थी निरंतर म्हारी पुत्री मूर्छा पामती, तेवारें में समुद्रमध्यें जे यक्षनुं देह रुं छे, तेनी यात्रा करवानी प्रतिज्ञा कीधेली छे, पण तिहां जवाइ शकातुं नथी. ए महोटुं संकट छे. ते वात कुमरें सत्य मानीने अक्काने साथें लइ चांखडी पहेरी यक्षना मंदिरें जइ द्वार आगल चांखडी उतारी मांहे गयो. एटलामां पाछलथी चांखडी उपाडीने अक्का पोताने घेर जती रही. कुम र आवी जूवे छे, तो चांखडी अने अक्का बेहु दीठां नहीं. तेवारें अक्कानुं कर्त्तव्य जाणी विलखो थयो. सर्व स्थलें अक्काने जोइ पण क्यांही दीठी नही. तेवारें कुमर त्यांज बेट उपर अटकी रह्यो.

एवामां एक विद्याधर तिहां आव्यो. तेणें कुमरने पूछ्युं के तुं क्यांथी आव्यो छो ? कुमरें तेने सर्व वृत्तांत कह्युं. विद्याधर बोल्यो के तुं चिंता म कर. हुं तुजने ताहरे स्थानकें पहोंचाडीश ! ज्यांसुधी हुं यक्षनी यात्रा करि आवुं, त्यांसुधी तुं इहां रहेजे. अने आ मोदक प्रमुख आपुं छुं, ते तुं भूख लागे तेवारें खाजे. पण पेला वृक्षनी नीचें जइश नहीं ? एम कहि विद्या धर यक्षने देहरे गयो.

पाछलथी कुमरें जइ ते वृक्षनुं फूल तोडी सूंघ्युं, एटले तरतज ते गधेडो बनी गयो, जे महोटानुं कह्युं न करे, ते दुःखी थाय.

पन्नरदिवसने अंतरें ते विद्याधर आव्यो, तेणे कुमरने गर्दभाकारें दीठो, तेवारें बीजा वृक्षनुं फूल सूंघाडीने फरी स्वाभाविक जेवो हतो तेवो मनु ष्य कर्यो. कुमरें ते बेहु वृक्षनां फूल लइ पोतानी गांठें बांध्यां, पछी विद्याधरें तेने तिहांथी उपाडीने कांचनपुरें जइ मूक्यो. फरी अक्कायें दीठो, तेवारें कहेवा लागी के हे स्वामी ! तमें केवी रीतें आव्या ? कुमरें कह्युं के हुं देवताना प्रभावथी अहीं आव्यो छुं. तेने वली पण अक्का कपट वच नें करी घेर तेडी आवी अने कहेवा लागी के हे स्वामी ! तमें देहरामांहे गया, एटलामां कोइएक देवतायें आवीने चांखडी सहित मुजने उपाडीने समुद्रमां नाखी दीधी. हुं महोटा कष्टें मरती मरती घेर आवी छुं. कुमर बोल्यो के म्हारी उपर यक्षें तुष्टमान थइने घणुं द्रव्य मुजने आप्युं. तथा

वली बे औषधियो आपी, तेमां एक औषधिना योगथी नवयौवनपणुं प्राप्त थाय, ते सांभली अक्का बोली जो म्हारी उपर उपकार करी नवयौवनपणुं मने बकसो, तो मने सर्वेनी उशीयाल, ताबेदारी टली जाय. तेने कुमरें तत्काल एक फूल सूंघाडयुं जेथी अक्का तत्काल रासभी थइ गइ, तेनी उपर कुमर चढी बेठो अने हाथमां पूर्वोक्त दंम लइ ते रासभीने नगरमांहे सर्वत्र फेरववा लाग्यो. दंमना प्रहारें, माथामां मारीने आकुल व्याकुल करी. ते जोइ सर्व गणिकाउयें एकत्र मली राजा आगल जइ फरियाद करी. राजायें तरत कुमरने पकडवा माटें घणा शीपाइयो मोकल्या, ते सर्वेने दंमना योगथी कुमरें जीती लीधा, ते वात सेवकोयें जइने राजानी आगल कही, तेवारें राजायें पोतानुं सर्व सैन्य तेने पकडवा माटें मोकल्युं, तेने पण कुमरें जीती लीधुं.

पछी राजायें अनुमानथी उलख्यो जे आ म्हारो भाइ छे? तेवारें तेने जइ पगें लाग्यो. ते जोइ सर्व लोकें जाण्युं जे आ तो राजानो भाइ छे. एम दीठाथी सर्व हर्षवंत थया अने अक्काना कपटनी वात सर्व तेना मुखथी सांभली सहु कोइ कहेवा लाग्यां के आ कूटणी अत्यंत लोभ करवा गइ तो रासभी थइ. पछी कुमरें गोटली तथा चांखडी प्रमुख जे कांइ पोतानी वस्तुउ तेणे लीधेली हती, ते तेनी पासेंथी पाछी लइ शिखामण आपी. रासभी टाली दीधी अने स्वाभाविक रूप करी दीधुं.

कुमरोयें केटलाक काल पर्यंत तिहांज राज भोगव्युं. पछी पितायें तेडावीने बेहु पुत्रोने जुदा जुदा देशोनां राज्य आप्यां, ते बेहुभाइउयें सला हसंपथी भोगव्यां. बेहु भाइ साथें रह्या, वृद्धावस्थायें ज्ञानीना उपदेशथी वैराग्य पामी दीक्षा लइ आयु पूरण थये मरण पामी देवलोकें गया॥ इति दान पूजाविषय अमरसेन वीरसेन कथा संपूर्ण॥८०॥

हवे तपनो उपदेश करे छे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तत्रयम्॥ यत्पूर्वार्जितकर्मशैलकुलिशं यत्कामदावानल, ज्वालाजालजलं यदुग्रकरणग्रामाहिमंत्राक्षरम्॥ यत्प्रत्यूहतमःसमूहदिवसं यल्लब्धिलक्ष्मीलता, मूलं तद्विविधं यथाविधि तपः कुर्वीत वीतस्पृहः॥८१॥

अर्थः–(वीतस्पृहः के०) गइ छे स्पृहा जेने एवो छतो एटले नीयाणादिकें रहित छतो (तद्विविधं के०) तेनाना प्रकारनां (तपः के०) तपने (यथाविधि के०) शास्त्रोक्तविधियें करी (कुर्वीत के०) करे. ते केहवुं तप छे? तो के (यत्पूर्वार्जितकर्मशैलकुलिशं के०) जे पूर्वजन्में उपार्जन करेलां कर्मो तेज शैल जे पर्वत तेने विषे वज्रसमान छे. जेम पर्वतने छेदवामां वज्र बलवान् होय छे, तेम जाणवुं. अर्थात् कर्मरूप पर्वत तेने छेदवामां वज्रसमान छे वली (यत् के०) जे तप, (कामदावानलज्वालाजालजलं के०) कामरूप जे दावानल तेनी ज्वालानी जे जाल तेनो जे समूह तेने विषे जल समान छे, तथा (यत् के०) जे तप, (उग्रकरणग्रामाहिमंत्राक्षरं के०) दारुण एवो जे इंद्रियसमूह ते रूप अहि जे सर्प तेने मंत्राक्षरसमान छे, तथा (यत् के०) जे तप,(प्रत्यूहतमःसमूहदिवसं के०) विघ्नरूप जे अंधकारसमूह तेने विषे दिवस समान छे, तथा (यत् के०) जे तप, (लब्धिलक्ष्मीलतामूलं के०) संपत् तेज लता तेना उत्पन्न थयेला मूलसमान छे, माटें ते तप सर्व जनोयें करवुं ॥ ८१ ॥

टीकाः–अथ तपस उपदेशद्वारमाह ॥ यदिति ॥ वीता गता स्पृहा वांछा यस्य स वीतस्पृहः सन् वांछा निदानादिरहितः सन् तद्विविधं तपः कुर्वीत कुर्यात् । तत्किं? यत्तपः पूर्वे भवेऽर्जितानि उपार्जितानि यानि कर्माणि तान्येव शैलाः पर्वतास्तेषु कुलिशं वज्रं । तेषां छेदकत्वात् । पुनर्यत्तपः कामएव दावानलो दवाग्निस्तस्य ज्वालानां जालः समूहस्तत्र जलं तद्विनाशकत्वात् । पुनर्यत्तपः उग्रो दारुणो यः करणानां इंद्रियाणां ग्रामः समूहः सएवाहिः सर्पस्तस्य मंत्राक्षरं सर्पमंत्रस्य बीजं । पुनर्यत्तपः प्रत्यूहाएव विघ्नाएव तमसोंऽधकारस्य समूहस्यं तत्र दिवसं दिनं । तन्नाशकत्वात् । पुनर्यत्तपोलब्धिलक्ष्मी संपदेव लता वल्ली तस्याः मूलं उत्पादनकंदं । तद्विविधं नानाप्रकारं यथाविधि तपः कुर्वीत ॥ ८१ ॥

भाषाकाव्यः–छप्पयछंद ॥ जो पूरवकृत कर्म, पिंड गिरिदलन वज्रधर ॥ जो मनमथ दवज्वाल, माल संहरन मेघझर ॥ जो प्रचंड इंद्रिय भुयंग, थंभन सुमंत्र वर ॥ जो विभाव संतमस पुंज, खंडन प्रभातकर ॥ जो लबधि वेलि उपजत घन, तासु मूल दिढता सहित ॥ सो सुतप अंग बहु विधि डुविध, करहिं विबुध वांछारहित ॥ ८१ ॥

वली पण तपनो महिमा कहे बे.

यस्माद्विघ्नपरंपरा विघटते दास्यं सुराः कुर्वते, कामः
शाम्यति दाम्यतींद्रियगणः कल्याणमुत्सर्प्पति॥ उन्मी
लंति महर्ध्यः कलयति ध्वंसं चयः कर्मणाम्, स्वाधी
नं त्रिदिवं शिवं च भजति श्लाघ्यं तपस्तन्न किम्॥ ८१॥

अर्थः—(तत् के०) ते (तपः के०) तप, (किं के०) शुं (श्लाघ्यं के०) वखाणवा योग्य, (न के०) नथी ? ना वखाणवा योग्य बेज. केम श्लाघ्य बे ? तो के (यस्मात् के०) जे तपथकी (विघ्नपरंपरा के०) कष्टोनी पंक्ति (विघटते के०) नाश पामे बे. तथा जे तपथकी (सुराः के०) देवताउ, (दास्यं के०) दासपणाने (कुर्वते के०) करे बे. वली जे तपथकी (कामः के०) काम (शाम्यति के०) शांति पामे बे. वली जे तपथकी (इंद्रियगणः के०) इंद्रियोनो गण, (दाम्यति के०) दमने प्राप्त थाय बे. वली जे तपथकी (कल्याणं के०) कल्याण जे बें, ते (उत्सर्पति के०) प्रसरे बे. वली जे तप थकी (महर्ध्यः के०) तीर्थंकरादिसंपत्तियो, (उन्मीलंति के०) विकासने प्राप्त थाय बे. वली जे तपथकी (कर्मणां के०) ज्ञानावरणीयादिककर्मनो (चयः के०) समूह, (ध्वंसं के०) नाशने (कलयति के०) पामे बे. वली जे तपथकी, (त्रिदिवं के०) स्वर्ग अने (भजति के०) भजे बे (च के०) वली (शिवं के०) मोक्ष (स्वाधीनं के०) स्वाधीन जेम होय तेम थाय बे. माटें ते तप वखाणवा लायक नथी शुं ? अर्थात् वखाणवा लायकज बें ॥ ८१ ॥

टीकाः—तपःप्रभावमाह ॥ यस्मादिति ॥ तत्तपः किं श्लाघ्यं न प्रशस्यं न ? अपि तु श्लाघ्यमेव तत्किं ? यस्मात्तपसो विघ्नपरंपरा कष्टश्रेणिर्विघटते विलयं याति । पुनः सुरादेवादास्यं दासत्वं कुर्व्वते । पुनर्यस्मात्कामः शाम्यति उपशमं याति । पुनः इंद्रियगणः पंचेंद्रियसमूहो दाम्यति दमं प्राप्नोति । पुनर्यस्मात्तपसः कल्याणं श्रेयउत्सर्प्पति प्रसरति । पुनर्यस्मान्महर्ध्यस्तीर्थंकरादिसंपदः उन्मीलंति विकसंति । पुनर्यस्मात् कर्मणां ज्ञानावरणीयादीनां चयः समूहो ध्वंसं नाशं कलयति प्रयाति । पुनर्यस्मात्तपसः त्रिदिवं स्वर्गः च पुनः शिवं मोक्षः स्वाधीनं स्वायत्तं स्यात्तत्तपः किं श्लाघ्यं न स्यात् ? ॥ ८१॥

भाषाकाव्यः—सवैय्या इकतीसा॥ जाके आदरत महारिद्धिसों मिलाप होइ, म

दन अप्याप होइ, कर्म वन दाहियें ॥ विघन विनास होइ गिरवान दास होइ, ग्यानको प्रकास होइ, जौं समुद्र थाहियें ॥ देव पद खेल होइ, मंगलसों मेल होइ, इंद्रिनकी जेल होइ, मोखपंथ गाहियें ॥ जाकी ऐसी महिमा, प्रगट कहै कौंरपाल, तिहुं लोक तिहुं काल सो तप सराहियें ॥८२॥

कांतारं न यथेतरोज्वलयितुं दक्षोदवाग्निं विना,
दावाग्निं न यथेतरः शमयितुं शक्तोविनांभोधरम् ॥
निष्णातः पवनं विना निरसितुं नान्योयथांभोधरम्,
कर्मौघं तपसा विना किमपरं हर्तुं समर्थस्तथा ॥८३॥

अर्थः– (यथा के०) जेम (कांतारं के०) वनने (ज्वलयितुं के०) बालवाने (दवाग्निंविना के०) दावाग्निविना (इतरः के०) बीजो (दक्षः के०) माह्यो (न के०) नथी. वली.ते (दावाग्निं के०) दावाग्निने (शमयितुं के०) शमन करवाने (अंभोधरंविना के०) मेघ विना (इतरः के०) बीजो (शक्तः के०) समर्थ (न के०) नथी. वली (यथा के०) जेम (अंभोधरं के०) मेघने (निरसितुं के०) टालवाने (पवनंविना के०) पवनविना (अन्यः के०) बीजो (न के०) न (निष्णातः के०) निपुण होय. (तथा के०) तेम (कर्मौघं के०) कर्मसमूहने (हर्तुं के०) छेदवाने (तपसाविना के०) तपविना (अपरं के०) बीजो (किं के०) शुं (समर्थः के०.) समर्थ होय ? ना होयज नहिं ॥ ८३ ॥

टीकाः–अन्यश्च ॥ कांतारमिति ॥ यथा कांतारं वनं ज्वलयितुं दावाग्निं विना इतरोऽन्यो दक्षोन। पुनर्यथा दावाग्निं शमयितुं विध्यापयितुं अंभोधरं मेघं विनाऽपरः शक्तो न समर्थो न । पुनर्यथांऽभोधरं मेघं निरसितुं दूरीकर्तुं पवनं विनाऽन्यो न निष्णातो न निपुणः । तथैव कर्मौघं कर्मसमूहं हंतुं छेत्तुं तपसा विनाऽन्यत्किं समर्थं? अपितु न किमपि । किंतु तप एव कर्माणि हर्तुं समर्थः ८३

भाषाकाव्यः–सवैया तेइसा ॥ ज्यौं वर कानन दाहनकों दव, पावकसो नहिं दूसरो दीसै ॥ ज्यौं दव आग बुझै न ततछन, जो न अखंमित मेघ वरीसै ॥ ज्यौं प्रगटै नहिं जौं लगि मारुत, तौं लगि घोरघटा नहि खीसे ॥ त्यौं घटमें तपवज्र विना दृढ, कर्म कुलाचल और न पीसे ॥ ८३ ॥

वली पण तपनो महिमा कहे छे, स्रग्धरावृत्तम् ॥

॥ संतोषस्थूलमूलः प्रशमपरिकरः स्कंधबंधप्रपंचः, पंचाक्षीरोध शाखः स्फुरदभयदलः(स्फुटविनयदलः) शीलसंपत्प्रवालः ॥ श्रद्धांभःपूरसेकाद्विपुलकुलबलैश्वर्यसौंदर्यभोगः, स्वर्गादिप्राप्तिपुष्पः शिवसुखफलदः स्यात्तपःपादपोऽयम्॥७४॥ इति तपःप्रक्रमः ॥१०॥

अर्थः–(अयं के०) आ (तपःपादपः के०) तपरूप जे वृक्ष, ते (शिवसुखफलदः के०) शिवसुखना फलने देनारो (स्यात् के०) होय. ते केहवो तपःपादप छे? तो के (संतोषस्थूलमूलः के०) संतोष जे मूर्छात्याग, तेज छे स्थूलमूल जेनुं एवो तथा (प्रशमपरिकरः के०) क्षमा तेज छे परिकर जेने एवो तथा (स्कंधबंधप्रपंचः के०) आचारादि जे श्रुतस्कंधरूप, तेनी बंध जे रचना ते रूप छे विस्तार जेनो एवो तथा (पंचाक्षीरोधशाखः के०) पंचेंद्रियनो जे रोध ते रूप छे शाखाउ जेमां एवो तथा (स्फुरदभयदलः के०)देदीप्यमान एवुं जे अभयदान ते रूप छे पत्र जेमां एवो अथवा (स्फुटविनयदलः) एवो पाठ होय तो स्फुट छे विनयरूप पत्र जेमां एवो तथा (शीलसंपत्प्रवालः के०) ब्रह्मचर्यव्रतरूप छे प्रवाल एटले नवपल्लव जेमां एवो तथा (श्रद्धांभःपूरसेकात् के०) श्रद्धारूप जलनो जे पूर तेनुं जे सिंचवुं तेथकी (विपुलकुलबलैश्वर्यसौंदर्यभोगः के०) विस्तीर्ण एवां कुल, बल, ऐश्वर्य, अने सौंदर्य ते रूप छे भोग जेने एवो छे अथवा विपुलकुलबलैश्वर्य रूप जे विस्तार तेनो छे भोग जेमां एवो छे तथा (स्वर्गादिप्राप्तिपुष्पः के०) स्वर्गादि जे देवलोक, ग्रैवेयक, अनुत्तरविमान, तेनी जे प्राप्ति तेज छे पुष्प जेमां एवोजे तपोवृक्ष, ते शिवसुखफलने आपे छे॥७४॥ आंहिं वसुदेवहरिकेशीबलनी कथानो दृष्टांत ग्रहण करवो.

टीकाः–पुनराह ॥ संतोषइति ॥ अयं तपएव पादपो वृक्षः शिवसुखफलदः स्यात् शिवसुखान्येव फलानि ददातीति मोक्षफलदाता स्यात् । किंभूतस्तपःपादपः? संतोषोमूर्छात्यागएव स्थूलं पुष्टं मूलं यस्य सं। पुनः किंभूतः? प्रशमक्षमा एव परिकरः परिवारो यस्य स। पुनः किंभूतः? स्कंधा आचारांगादि श्रुतस्कंधास्तेषां बंधो रचना एव प्रपंचो विस्तारो यस्य स। पुनः किंभूतः? पंचानां अक्षाणां इंद्रियाणां समाहारः पंचाक्षी। पंचाक्ष्याःरोध एव शाखा यस्य स। पुनः किंभूतः? स्फुरत् देदीप्यमानं अभयं अभयदानमेव

दलत्वं यस्य स। अथवा स्फुटविनयदलः स्फुटानि प्रकटानि विनयरूपाणि दलानि पत्राणि यस्य स। पुनः किंनूतः? शीलसंपदेव ब्रह्मव्रतमेव प्रवाला नवपल्लवायस्य स। पुनः किंनूतः? श्रद्धारुचिः सैवांजः पानीयं तस्याः पूरस्तेन सेकः सिंचनं तस्मात् विपुलानि विस्तीर्णानि कुलबलैश्वर्यसौंदर्याण्येव नोगो यस्यस। अथवा विपुलकुलबलैश्वर्यमेवं नोगो विस्तारोयस्य स। पुनः किंनूतः? स्वर्गादीमां देवलोकग्रैवेयकानुत्तरविमानानां प्राप्तिरेव पुष्पाणि यस्य स। ईदृशस्तपएव पादपोवृक्षः स शिवसुखमेव फलं ददाति ॥७४॥ अत्र नंदिषेण वसुदेव हरिकेशीबलकथा ॥ सिंदूरप्रकराख्यस्य, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिनिः ॥ सूरिनिर्विहितायां तु, तपसः प्रक्रमोऽजनि ॥ इति तपःप्रक्रमः ॥१ए॥

नाषाकाव्यः—बप्पयबंद ॥ सुदिढ मूल संतोष, प्रसम गुन प्रबल पेढ ध्रुव ॥ पंचाचार सु साख, सील संपति प्रवाल हुव ॥ अनय अंग दल पुंज, देव पद पुहप सुमंमित ॥ सुकृत नार विस्तार, नाव सिव सुफल अखंमित ॥ परतीति धार जल सिंचि किय, अति उतंग दिन दिन पुषित ॥ जयवंत जगत यह सुतप तरु, मुनि विहंग सेवहिं सुखित ॥ ७४ ॥

कथाः—तप उपर नंदीषेण मुनिनो दृष्टांत जाणवो. जेणें बार हजार वर्ष तपस्या करी अंत्यावस्थायें अणसण लइ पोतानुं दौर्नाग्य संनारी तपना प्रनावथी आवते नवें स्त्रीवल्लन थाउं! एवुं नीयाणुं बांधी काल करी देवलोकें गयो. तिहांथी च्यवीने समुद्रविजयनो लघुनाइ वसुदेव नामें थयो, तिहां गतजन्मना तपःप्रनावथी ७२००० स्त्रीनुं पाणिग्रहण कर्युं. एवी रीतें तपना फलथी विशेष सुख नोगवी यावत् अंत्यावस्थायें शुन नावमां रही काल करी देवलोकें पहोतो, माटें सर्व नव्यजीवें श्रीनंदीषेणनी पेठें क्षमा सहित तप करवुं ॥ इति तपउपरि नंदिषेणमुनिकथा ॥ ७४ ॥

हवे शुननावनो उपदेश करे बे.

शार्दूलविक्रीडितवृत्तद्वयम् ॥ नीरागें तरुणीकटाक्षितमिव त्यागव्यपेतप्रनो, सेवाकष्टमिवोपरोपणमिवांनोजन्मनामश्मनि ॥ विष्वग्वर्षमिवोषरक्षितितले दानार्हदर्चातपः, स्वाध्यायाध्ययनादि निःफलमनुष्ठानं विना नावनाम् ॥ ७५ ॥

अर्थः—(नावनां विना के०) एक शुनन्नावनाविना (दानार्हदर्चा के०) सुपात्र दान, जिनपूजन, अने (तपःस्वाध्यायाध्ययनादि के०) तप, स्वाध्यायनुं अध्ययन तेज छे आदिमां जेने एवुं (अनुष्ठानं के०) अनुष्ठान ते सर्व (निःफलं के०) निष्फल थाय छे. केनी पेठें ? तो के (नीरागे के०) रागरहित एवा पुरुषने विषे (तरुणीकटाक्षितमिव के०) युवतीकटाक्ष विक्षेपज जेम, एटले नीरागी पुरुषने जेम स्त्रीना कटाक्षनो विक्षेप व्यर्थ थायछे. तेम आहिं पण जाणवुं. वली केनी पेठें ? तो के (त्यागव्यपेतप्रनौ के०) दान रहित स्वामीनेविषे (सेवाकष्टंइव के०) सेवाकष्ट जे छे तेज जेम. एटले दान न आपनार पुरुषनी पासें सेवाकष्ट ते जेम व्यर्थ थाय छे, तेम जाणवुं. वली केनी पेठें ? तो के (अश्मनि के०) पाषाणनेविषे (अंनोजन्मनां के०) कमलोनुं (उपरोपणमिव के०) वाववुंज जेम. वली केनी पेठें तोके (उषरक्षितितले के०) क्षारनूमिने विषे अथवा पर्वतने विषे (विष्वग्वर्षमिव के०) चोतरफ मेघनीवृष्टिज जेम. एटले क्षारनूमिने विषे अथबा पर्वतने विषे चारे तरफ पडनारो मेघ जेम निःफल थाय तेम नावना विना सर्व अनुष्ठान निष्फल थाय ॥ ७५ ॥

टीकाः—नावोपदेशमाह ॥ नीरागे इति ॥ नावनां शुनन्नावं विना दानार्हदर्चा तपः स्वाध्यायाध्ययनादि सर्व्वं अनुष्ठानं क्रियाकरणं निःफलं स्यात्। दानं च अर्हदर्चा देवंजिनपूजा च तपश्च स्वाध्यायश्च ते आदौ यस्य तत् दानजिनपूजातपः सिद्धांतपठनादिकं नावं विना निःफलं। किमिव ? नीरागे पुरुषे तरुणीकटाक्षितमिव युवतीकटाक्षविक्षेपणमिव । यथा नीरागे तरुणीकटाक्षा निःफलाः। पुनः किमिव ? त्यागव्यपेतप्रनौ। दानरहिते कृपणे स्वामिनि सेवाकष्टं इव अदातरि स्वामिनि सेवाकष्टं निःफलं। पुनः किमिव ? अश्मनि पाषाणे आनोजन्मनां कमलानां उपरोपणं वापनं इव। यथा पाषाणोपरि कमलवापनं निःफलं। पुनः किमिव ? उषरक्षितितले उषरनूमौ विष्वग्वर्षमिव यथोषरनूमौ पर्व्वते मेघवर्षणं निःफलं ॥ तथा शुनन्नावनां विना सर्वा क्रिया निःफला ॥ ७५ ॥

नाषाकाव्यः—ज्यौं नीराग पुरुषके सन्मुख, पुरकामिनि कटाछ करि झठी ॥ ज्यौं धन त्याग रहित प्रनु सेवत, ऊसरमें वरिषा जिम वूठी ॥ ज्यौं शिलमांहि कमलको बोवन, पवन पकरि ज्यौं बंधिय मूठि ॥ ए कर तूति होइ जिम निःफल, त्यौं बिनु नाव क्रिया सब फूठी ॥ ७५ ॥

वली पण शुनजावोपदेश करे छे.

सर्वं ज्ञीप्सति पुण्यमीप्सति दया धित्सत्यघं मित्सति,
क्रोधं दित्सति दानशीलतपसां साफल्यमादित्सति ॥
कल्याणोपचयं चिकीर्षति नवांजोधेस्तटं लिप्सते,
मुक्तिस्त्रीं परिरिप्सते यदि जनस्तद्भावयेद्भावनाम् ॥ ७६ ॥

अर्थः—(यदि के०) जो (जनः के०) मनुष्य, (सर्वं के०) सर्व वस्तु ने (ज्ञीप्सति के०) जाणवाने इछे छे, जो वली (पुण्यं के०) धर्मने (ईप्सति के०) इछे छे, जो वली (दयां के०) दयाने (धित्सति के०) धारण करवाने इछे छे, जो वली (अघं के०) पापने (मित्सति के०) मानवानें इछे छे, जो वली (क्रोधं के०) क्रोधने (दित्सति के०) खंडन करवाने इछे छे, जो वली (दानशीलतपसां के०) दान, शील, तपना (साफल्यं के०) साफल्यने (आदित्सति के०) ग्रहण करवाने इछे छे, जो वली (.कल्याणोपचयं के०) कल्याणसमूहने (चिकीर्षति के०) करवाने इछे छे, जो वली (नवांजोधेस्तटं के०) जव जे संसार ते रूप जे समुद्र तेना तटने (लिप्सते के०) पामवाने इछे छे, जो वली (मुक्तिस्त्रीं के०) मुक्तिरूप स्त्रीने (परिरिप्सते के०) आलिंगन करवानें इछे छे (तत् के०) तो (जावनां के०) शुजजावनाने (जावयेत् के०) जावना करे ॥७६॥

टीकाः—पुनराह ॥ सर्व्वेति ॥ यदि जनो लोकः सर्व्वं वस्तु ज्ञीप्सति ज्ञातुं इछति । पुनर्यदि जनः पुण्यं धर्म्मं ईप्सति वांछति । पुनर्यदि जनो दयां कृपां धित्सति धर्तुमिछति । पुनर्यदि अघं पापं मित्सति मातुं इछति। पुनर्यदि क्रोधं दित्सति खंमितुं इछति। पुनर्यदि दानशीलतपसां साफल्यं सफलत्वं आदित्सति गृहीतुमिछति । पुनर्यदि कल्याणोपचयं कुशलं वृद्धिं चिकीर्षति कर्तुमिछति । पुनर्यदि जवांजोधेः संसारसमुद्रस्य तटं पारं लिप्सते लब्धुं मिछति। पुनर्यदिमुक्तिस्त्रीं सिद्धिरमणीं परिरिप्सते आलिंगितुं इछति जनस्तदा जावनां शुजजावं जावयेत् कुर्यादित्यर्थः ॥ ७६ ॥

जाषाकाव्यः—सवैय्या इकतीसा ॥ पूरव करम दहै, सरवज्ञ पद लहै, गहै पुण्यपंथ फिरि पापमें न आवनां ॥ करुनाकी कला जागे, कठिन कषा

य भागै, लागै दान सील तप सफल सुहावनां ॥ पावै भवसिंधु तट खोले मोख द्वारपट, समै साधि धर्मकी धरामें करे धावनां ॥ एते सब काज करे अलखकों अंग धरे, चेली चिदानंदकी अकेली एक भावना ॥ ७६ ॥

वली फरीने पण कांइक विशेष कहे छे.

पृथ्वीवृत्तम् ॥ विवेकवनसारिणीं प्रशमशर्मसंजीविनीम्, भवार्णवमहातरीं मदनदावमेघावलीम् ॥ चलाक्षमृगवागुरां गुरुकषायशैलाशनिम्, विमुक्तिपथवेसरीं भजत भावनां किं परैः ॥ ७७ ॥

अर्थः—हे भव्यजनो! (भावनां के०) शुभभावनाने (भजत के०) सेवन करो (परैः के०) बीजा कष्टानुष्ठानोयें करी (किं के०) शुं ? कांहीं ज नहिं. अर्थात् शुभभाव रहित अनुष्ठानो करवाथी शुं ? कांहीज नहिं. ए भावना केहवी छे ? तो के (विवेकवनसारिणीं के०) कृत्याकृत्यविचार रूप जे वन ते वनमां कुल्या रूप, तथा वली (प्रशमशर्मसंजीविनीं के०) उपशम सुखने जीवन करनारी तथा (भवार्णवमहातरीं के०) संसार समुद्रने विषे महोटा नावसमान, तथा (मदनदावमेघावलीं के०) काम देव रूप जे वनाग्नि तेने विषे मेघसमान, तथा (चलाक्षमृगवागुरां के०) चंचल एवी जे इंद्रियो ते रूप जे मृग तेने विषे मृगजालपाशबंधनरूप, तथा (गुरुकषायशैलाशनिं के०) महोटा चार कषायरूप जे पर्वत तेने विषे वज्रसमान, तथा (विमुक्तिपथवेसरीं के०) मुक्तिमार्गने विषे भार वाहकत्वें अर्थात् रस्तामां जातां भारवाहन करनारी खच्चर घोडी समान छे, माटें हे भव्यजनो! एवी शुभभावनाने तमें करो ॥ ७७ ॥

टीकाः—पुनर्विशेषमाह । विवेकेति ॥ भो भव्याः! भावनां शुभपरिणाम रूपां भजत सेवध्वं । परैः अन्यैः कष्टानुष्ठानैः शुभभावनारहितैः किं? न किंचिदित्यर्थः । कथंभूतां भावनां ? विवेकः कृत्याकृत्यविचारएव वनं तत्र सारिणीः कुल्याः तां । पुनः प्रशमशर्मणः उपशमसुखस्य संजिविनीं जीवनकर्त्रीं । पुनः भवएव संसार एव अर्णवः समुद्रस्तत्र महातरीं माहानावां । पुनः किंभूतां? मदनएव दावो दावाग्निस्तत्र मेघस्यावलीं श्रेणिं । पुनः किंभूतां? चलानि चंचलानि यानि अक्षाणि इंद्रियाण्येव मृगा हरिणा

स्तेषु वागुरां मृगजालपाशबंधनरूपां । पुनः कीदृशीं? गुरुर्गरिष्ठश्चतुःकषायरूपएव शैलःपर्वतः तत्र अशनिं वज्रं । पुनः किंनूतां? विमुक्तेः सिद्धेः पंथास्तत्र वेसरीं अश्वतरीं । तद्भारवाहकां । तस्माद्भजनावनामेव कुर्वंतु ॥८७॥

नाषाकाव्यः—वृत्त ऊपर प्रमाणें ॥ प्रसमके पोषवेकों, अमृतकी धारासम, ज्ञानवन सींचवेकों नारी नीर नरी है ॥ चंचल करन मृग बंधवेकों वागुरा सी, काम दावानल नासिवेकों मेघऊरी है ॥ प्रबल कषाय गिरि नंजवेकों वज्रगदा, नौसमुद्र तरवेकों पोढी महातरी है ॥ मोखपंथ गाहिवेकों वेसरी बिलायतकी, ऐसी शुद्धनावना अबंध ढार ढरी है ॥ ८७ ॥

वली पण कहे छे.

शिखरिणीवृत्तम् ॥ घनं दत्तं वित्तं जिनवचनमभ्यस्तमखिलम्, क्रियाकांडं चंडं रचितमवनौ सुप्तमसकृत् ॥ तपस्तीव्रं तप्तं चरणमपि चीर्णं चिरतरम्, नचेच्चित्ते नावस्तुषवपनवत्सर्वमफलम् ॥ ८८ ॥ इति नावनाप्रक्रमः ॥ २० ॥

अर्थः—(घनं के०) घणुं (वित्तं के०) इव्य, (दत्तं के०) पात्रजनने दीधुं, तथा (अखिलं के०) समग्र (जिनवचनं के०) जिनागमरूप शास्त्र (अभ्यस्तं के०) नण्युं, तथा (चंडं के०) नयंकर एवुं (क्रियाकांडं के०). क्रियाकांड ते लोचादि (रचितं के०) कर्युं. तथा (असकृत् के०) वारंवार (अवनौ के०) पृथ्वीने विषे (सुप्तं के०) शयन कर्युं तथा (तीव्रं के०) तीव्र एवुं (तपः के०) बार प्रकारनुं जे तप तेने (तप्तं के०) तप्युं, तथा (चरणमपि के०) चारित्र पण (चिरतरं के०) घणाककालपर्यंत (चीर्णं के०) सेवन कर्युं. परंतु (चित्ते के०) चित्तने विषे (नावः के०) शुननाव, (नचेत् के०) जो न होय तो (सर्वं के०) पूर्वोक्त सर्व (तुषवपनवत् के०) तुष जे फोतरां तेने खांडवानी पेठें (अफलं के०) निष्फल जाणवुं ॥८८॥ अहिं नावना नाववा विषे मरुदेवी माता, नरत महाराज, एलायचीपुत्र तथा प्रसन्नचंद्रराजर्षि, तेनी कथाउनो दृष्टांत लेवो ॥ ते कथाउ सर्व प्रसिद्ध छे ॥ इति नावनाप्रक्रमः ॥२०॥

टीकाः—पुनराह ॥ घनमिति ॥ घनं प्रचुरं वित्तं धनं पात्रेन्योदत्तं पुनरखिलं समस्तं जिनवचनं जिनागमरूपं अभ्यस्तं पठितं । पुनश्चंडं नीमं क्रियाकांडं लोचादि रचितं कृतं । पुनरवनौ नूमौ असकृद्वारं सुप्तं शयनं कृ

तं । पुनस्तीव्रं दुःकरं तपस्तप्तं तपः कृतं । पुनश्चरणं चारित्रं चिरतरं बहुकालं चीर्णं सेवितं । परं चेद्यदि चित्ते भावो न । शुनभावना नास्ति । तदा तुषव पनवत् सर्व्वं पूर्वोक्तं विफलं स्यात् ॥ ९८ ॥ अत्र मरुदेवीभरतएलायचीपुत्र प्रसन्नचंद्रराजर्षीणां कथाः ॥ 'सिंदूरप्रकराख्यस्य; व्याख्यायां, हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, भावनाप्रक्रमोऽजनि ॥ इति भावनाप्रक्रमः ॥ २० ॥

भाषाकाव्यः—आभानकछंद ॥ गहि पुनीत आचार, जिनागम जोव नां ॥ करि तप संयम दान, भूमिका सोवनां ॥ ए करनी सब विफल, होहि विनु भावना ॥ ज्यों तुस बोए हाथ, कछू नहिं आवनां ॥ ८८ ॥

कथाः—इहां भाव उपर इलायचीपुत्रनी कथा जाणवी. जे नटवी उपर मोह्यो थको नाटकीयापणुं अंगीकार करी पछी राजाने रीजववा माटें वांसना अग्रभागें नाचतां साधुना दर्शनथी भावना भावतो वांसनी उपर रह्यो थको केवलज्ञान पाम्यो छे, इत्यादि कथा प्रसिद्ध छे. माटें भाव विना सर्व अनुष्ठान व्यर्थ जाणवुं ॥ उक्तं च ॥ घनं दत्तं वित्तं जिनवचन मभ्यस्तमखिलं क्रियाकांडं चंडं रचितमवनौ सुप्तमसकृत् ॥ तपस्तीव्रं तप्तं चरणमपि चीर्णं चिरतरं, न चेच्चित्ते भावस्तुषवपनवत् सर्वमफलम् ॥

हवे वैराग्यने कहे छे.

हरिणीवृत्तम् ॥ यदशुभरजःपाथोदृप्तेंद्रियद्विरदांकु शम्, कुशलकुसुमोद्यानं माद्यन्मनःकपिशृंखला ॥ विरतिरमणीलीलावेश्म स्मरज्वरभेषजम्, शिवपथ रथस्तद्वैराग्यं विमृश्य भवाऽभयः (भवाऽभवः)॥८९॥

अर्थः—हे मुनि ! (तत् के०) ते (वैराग्यं के०) वैराग्यने (विमृश्य के०) विचारीने (अभयः के०) संसार भयरहित (भव के०) था. ते कयो वैराग्य ? तो के (यत् के०) जे वैराग्य (अशुभरजः के०) पाप रूप जे रज तेनेविषे (पाथः के०) जलरूप छे. तथा (दृप्तेंद्रियद्विरदांकु शं के०) मदोन्मत्त एवी जे इंद्रियो ते रूप जे हाथीयो, तेमने विषे अंकु श समान छे. वली (कुशलकुसुमोद्यानं के०) कुशलतारूप जे फूल तेमनो उद्यान एटले वनरूप छे. वली ते वैराग्य (माद्यन्मनःकपिशृंखलां के०)

मदोन्मत्त एवुं जे मन ते रूप जे वांदर, तेने बांधवामां सांकल समान ळे. वली (विरतिरमणीलीलावेश्म के०) देशविरति सर्वविरतिरूप जे स्त्री तेमने क्रीडा करवानुं गृह ळे. वली (स्मरज्वरभेषजं के०) कामदेवरूप जे ताव तेने औषधसमान ळे. वली (शिवपथरथः के०) मोक्षमार्गने विषे रथ समान ळे. माटे ते वैराग्यने विचारीने संसारजय रहित था. अने जो (नवानवः) एवो पाठ होय तो नव एटले संसार ते रहित था. एम जाणवुं ॥ ७ए ॥

टीकाः—अथ वैराग्यमाह ॥ नो मुने ! तद्वैराग्यं विमृश्य चिंतयित्वाऽनयः संसाररहितोनव तत्किं ? यत् वैराग्यं अशुनं पापमेव रजोधूलिस्तत्र पाथो जलं। तडुपशामकत्वात्। पुनर्दृप्तानि इंद्रियाण्येव द्विरदा गजास्तेषां अंकुशमिवांकुशं वश्यकरं। पुनः किंनूतं ? कुशलमेव कुसुमानि तेषां उद्यानं पुष्पारामं। पुनर्यत् वैराग्यं माद्यन्मदोन्मत्तो यो मनःकपिर्वानरस्तस्य शृंखला निगडबंधनं। पुनर्यत् विरतिरमणीलीलावेश्म देशविरतिसर्व्वविरतिरेव स्त्रीः तस्यां क्रीडागृहं। पुनर्यत् स्मरएव ज्वरस्तस्यौषधं कामज्वरौषधं। पुनर्यत् शिवपथरथः मोक्षमार्गे रथसमानः। तद्वैराग्यं विमृश्य विचार्य अनयः संसारनयरहितोनव नवानवइति पाठे नवरहितोनव ॥ ७ए ॥

नाषांकाव्यः—सवैय्या इकतीसा ॥ अशुनता धुलि हरवेकों नीरपुर सम, विमल विरति कुलवधुको सोहाग है ॥ उदित मदनज्वर नाशवेकों ज्वरांकुश, अक्षगजथंननकों अंकुशको दाग है ॥ चंचल कुमन कपि रोकवेकों लोहफंद, कुसल कुसुम उपजायवेकों बाग है ॥ सूधो मोख मारग चलायवेकों नामी रथ, ऐसो हितकर नवनंजन विराग है ॥ ७ए ॥

वली पण वैराग्यज कहे ळे.

वसंततिलकावृत्तम् ॥ चंमानिलस्फुरितमब्दचयं दवार्चि,
वृक्षव्रजं तिमिरमंमलमर्कबिंबम् ॥ वज्रं महीध्रनिवहं नय
ते यथांतम्, वैराग्यमेकमपि कर्म तथा समग्रम् ॥ ए० ॥

अर्थः—(यथा के०) जेम (चंमानिल के०) प्रचंम एवो अनिल जे वायु तेनुं (स्फुरितं के०) स्फुरण एटले चालवुं ते (अब्दचयं के०) मेघघटाने (अंतं के०) अंतप्रत्यें (नयते के०) पमाडे ळे. वली जेम (दवार्चिः के०) दावाग्निनी ज्वाला, (वृक्षव्रजं के०) वृक्षना समूहने नाश पमाडे ळे. वली जेम (अर्क

बिंबं के०) सूर्यबिंब (तिमिरमंमलं के०) अंधकारना मंमलने नाश पमाडे बे. वली जेम (वज्रं के०) वज्र (मदीध्रनिवहं के०) पर्वतसमूहने नाश पमाडे बे. (तथा के०) तेम (समग्रं के०) समग्र एवुं (कर्म के०) कर्म तेनें (एकमपि के०) एक एवुं पण (वैराग्यं के०) वैराग्य ने बे ते नाश पमाडे बे ए०

टीकाः—पुनराह ॥ चंमानिलेति ॥ यथा चंमानिलस्फुरितं प्रचंमवायुस्फूर्जितं अब्दचयं मेघघटां अंतं विनाशं नयते प्रापयति। पुनर्यथा दावार्चिर्दावाग्निर्वृक्षसमूहं अंतं प्रापयति पुनर्यथा अर्कबिंबं सूर्यबिंबं तिमिरमंमलं अंधकार समूहं अंतं नयते। पुनर्यथा वज्रं इंद्रायुधं महीध्रनिवहं पर्व्वतसमूहं अंतं विनाशं नयते प्रापयति। तथा एकमपि वैराग्यमेव समग्रं कर्म अंतं नयते ॥ए०॥

नाषाकाव्यः—आनानकबंद ॥ ज्यों समीर गंनीर, घनाघन बय करै ॥ वज्र विनासै शिखर, दिवाकर तम हरै ॥ ज्यों दव पावक पूर, दहै वनकुंज कों ॥ त्यों नंजै वैराग्य कर्मके पुंजकों ॥ ए० ॥

वली पण कहे बे.

शिखरिणीवृत्तम् ॥ नमस्या देवानां चरणवरिवस्या
शुनगुरो, स्तपस्या निःसीमक्रमपदमुपास्या गुणव
ताम्॥ निषद्याऽरण्ये स्यात् करणदमविद्या च शिव
दा, विरागः क्रूरागः क्षपणनिपुणोऽतः स्फुरति चेत् ए१

अर्थः—(चेत् के०) जो (अंतः के०) हृदयने विषे (विरागः के०) वैराग्य, (स्फुरति के०) स्फुरे बे, तोज (देवानां के०) अरिहंतादि देव तेने करेलो (नमस्या के०) नमस्कार ते पण (शिवदा के०) मोक्ष देनारो (स्यात् के०) थाय. तथा (शुनगुरोः के०) सारा गुरुनी (चरणवरिवस्या के०) चरणसेवा ते पण त्यारेंज मोक्षदायी थाय, तथा (निःसीमक्रमपदं के०) अत्यंत श्रमनुं स्थानक एवुं (तपस्या के०) तप पण त्यारेंज मोक्षदायी थाय बे. तथा (गुणवतां के०) ज्ञानादिक गुणें करी युक्त एवा जननी (उपास्या के०) सेवा ते पण त्यारेंज मोक्ष देनारी थाय. तथा (अरण्ये के०) वनने विषे (निषद्या के०) स्थिति एटले रहेवुं ते पण त्यारेंज मोक्ष देनारी थाय. (च के०) तथा (करणदमविद्या के०) इंद्रियदमननी विद्या पण त्यारेंज मोक्षदायक थाय. अर्थात् ज्यारें हृदयने

विषे वैराग्य उत्पन्न थाय, त्यारेंज पूर्वोक्त सर्ववानां थाय. ते वैराग्य केहेवो ठे? तो के (क्रूरागःकृपणनिपुणः के०) क्रूर एवो जे अपराध तेने कृपण एटले टाळवामां निपुण ठे ज्ञाह्यो एटले ॥ ए१ ॥

टीकाः—पुनराह ॥ नमस्येति ॥ चेद्यदि अंतश्चित्ते विरागो वैराग्यमेव स्फुरति वर्त्तते तदा देवानां नमस्या नमस्करणं शिवदा मोक्षदायिनी मोक्षदायकी स्यात् । पुनः जगुरोश्चरणवरिवस्या चरणयोः सेवा तदा शिवदा स्यात् । पुनरत्यंतश्रमपदं ईदृशी तपस्या तपस्तदेव शिवदा स्यात् । पुनः गुणवतां ज्ञानादिगुणयुक्तानां उपास्या सेवापि तदेव शिवदा स्यात् । पुनररण्ये वने निषद्या स्थितिस्तदेव शिवदा स्यात् । पुनः करणदमविद्या इंद्रियदमनविधिरपि तदेव शिवदः स्यात् । यदि अंतर्मध्ये वैराग्यं जवति । कथंजूतोविरागः? क्रूरागःकृपणनिपुणः क्रूरं घोरं आगोऽपराधस्तस्य कृपणे कृपणकरणे निपुणश्चतुरः ॥ ए१ ॥

जाषाकाव्यः—कवित्त मात्रा० ॥ कीनी तिने सु देवकी पूजा, तिन गुरु चरन कमल मन लायो ॥ सो वनवास वस्यो निसिवासर, तिन गुनवंत पुरुष गुन गायो ॥ तिन तप लियो कियो इंद्रिय दम, सो पूरन विद्या पढि आयो ॥ सब अपराध गए ताकों तजि, जिन वैराग रूप धन पायो ॥ ए१ ॥

वळी विरक्तगुणो कहे ठे.

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ जोगान् कृष्णजुजंगजोगविषमान् राज्यं रजःसन्निजम्, बंधून् बंधनिबंधनानि विषयग्रामं विषान्नोपमम् ॥ जूतिं जूतिसहोदरां तृणमिव स्त्रैणं विदित्वा त्यज, न्स्तेष्वासक्तिमनाविलोविलजते मुक्तिं विरक्तः पुमान् ॥ ए२ ॥ इति वैराग्यप्रक्रमः ॥ २१ ॥

अर्थः—(विरक्तः के०) वैराग्ययुक्त एवो (पुमान् के०) पुरुष, (मुक्तिं के०) मुक्तिने (विलजते के०) प्राप्त थाय ठे. शुं करीने प्राप्त थाय ठे? तो के (जोगान् के०) शब्दादिक जोगोने (कृष्णजुजंगजोगविषमान् के०) कृष्ण सर्पना देह समानविषम एवाने (विदित्वा के०) जाणीने तथा (राज्यं के०) आधिपत्यने राज्यने (रजःसंनिजं के०) धूळिसमान जाणीने तथा (बंधून् के०) स्वजनने (बंधनिबंधनानि के०) बंधनना कारणरूप जाणीने

तथा (विषयग्रामं के०) विषयसमूहने (विषान्नोपमं के०) विषमिश्रित अन्न समान जाणीने तथा (भूतिं के०) ऋद्धिने (भूतिसहोदरीं के०) विभूतिनी बेहेन् एटले भस्मनी सदृश.जाणीने तथा (स्त्रैणं के०) स्त्रीसमूहने (तृणमिव के०) तृण जेम होय तेम जाणीने मुक्तिने पामे छे. हवे ते पुरुष केहवो छे ? तो के (तेषु के०) ते पूर्वोक्त पदार्थोने विषे (आसक्तिं के०) आसक्तिने (त्यजन् के०) त्याग करतो एवो छे. वली केहवो छे ते पुरुष? तो के (अनाविलः के०) रागद्वेषादिकें करी अनाकुल छे. एटले स्वछ छे ॥ ए२ ॥ इति वैराग्यप्रक्रमः ॥ २१ ॥

टीकाः—विरक्तगुणानाह ॥ भोगानिति ॥ विरक्तो वैराग्ययुक्तः पुमान् मुक्तिं विलभते सिद्धिं प्राप्नोति । किं कृत्वा? भोगान् शब्दादीन् कृष्णश्चासौ भुजंगः सर्प्पस्तस्य भोगः शरीरं तद्वत् विषमान् भीमान् विदित्वा ज्ञात्वा। तेषु आसक्तिं अत्यभिलाषं त्यजन् । पुनः राज्यं आधिपत्यं रजःसन्निभं धूलिसदृशं मत्वा त्यजन् । पुनर्बंधून् स्वजनान् कर्मबंधस्य निबंधनानिकारणानि मत्वा पुनर्विषयग्रामं विषयसमूहं विषान्नोपमं विषमिश्रितान्नसमं मत्वा । पुनर्भूतिं ऋद्धिं भूतिसहोदरां भस्मभगिनीं रक्षासदृशीं मत्वा । पुनः स्त्रैणं स्त्रीणां समूहं तृणमिव तृणसदृशं विदित्वा तेषु आसक्तिं अत्यऽभिलाषं त्यजन्। कथंभूतो विरक्तः पुमान्? अनाविलः रागद्वेषाद्यनाकुलः ॥ए२॥

भाषाकाव्यः—सवैया इकतीसा ॥ जाकों भोगभाव दिसै कारे नागकेसी फन, राजको समाज दीसे जैसे रजकोष है ॥ जाको परिवारकों बढाउ घेरा बंध सूझे, विषे सुखसोंजकों विचारें विषपोष है ॥ लिखै यों विभूति ज्यों भसमकों विभूति कहै, वनिताविलासमें विलोके दिढ दोष है ॥ ऐसो जानि त्यागे यह महिमा वैराग ताकी, ताहीकों वैराग सही ताके ढिग मोख है ॥ ए२ ॥

कथाः—हवे वैराग्य उपर कथा कहे छे. कांचनपुरनगरें विक्रमसेन राजा छे, तेनी पांचशें राणी छे, तेहज नगरमां एक नागदत्त नामें शेठ वसे छे. तेने विष्णु नामें भार्या महास्वरूपवती छे. तेने एकदा गोंखमां बेठां थकां राजायें दीठी, तेवारें सेवको मोकली बोलावी लइने बलात्कारें अंतेउरमां मोकली दीधी. नागदत्तशेठें अनेक उपाय कस्या, पण कोइ रीतें राजा तेनी स्त्रीने मूके नही. तेवारें नागदत्त स्त्रीथी विव्हल थयो थको वनमां जतो रह्यो.

हवे राजा पण ते स्त्री उपर मोह्यो थको बीजी सर्व स्त्रीयोने तृणप्राय जाणवा लाग्यो. पांचशें स्त्रीयो सर्व एमज बेसी रही, तेवारें ते स्त्रीयोयें कामण टुमणादिक प्रयोगथी विष्णु राणीने मारी नाखी. तेने मरण पामेली देखीने राजा तेने पगे वलगी रह्यो, पण मोहदशाथी जूदो न थाय. तेनो पग मूके नही. पछी कोइ प्रपंचथी प्रधान ते राणीने अग्निसंस्कार करवा लइ गयो. पण जेवारें अग्नितीरें मूकी, तेवारें राजा राणीने अणदेखतो थको प्रधान प्रत्यें कहेवा लाग्यो के महारी वल्लभाने लइ आव. प्रधान पण राजाने तिहां लइ जइने राणीनुं कलेवर देखाड्युं. ते जोइ राजा मनमां वैराग्य पाम्यो अने विचार्युं जे आ राणीना शरीरमां अत्यंत सुरभिगंध हतो, ते दुरभिगंध थयो ! तथा मुखकमल चंद्रमा जेवुं हतुं ते शोषाइने नहिं तेवुं थयुं ! अने नेत्र, बाहु, गलस्थल, इत्यादि अंग पूर्वें जे हतां, ते सर्व बगडी गयां ! इत्यादि स्वरूप सर्व अनित्य जाणी राणीने अग्निसंस्कार करी दीक्षा लइ. उग्र तप तपीने त्रीजे देवलोकें देवता थयो.

तिहांथी चवी रत्नपुर नगरें जिनधर्म्मा नामें शेठ थयो अने पूर्वेलो नागदत्तशेठ ते एक ब्राह्मणने घेर पुत्रपणे उपनो, तेनुं नाम अग्निशर्मा पाड्युं, ते वृद्धावस्थायें संसार त्यागी त्रिदंडी तापस थयो, बे बे मासें पारणुं करे, ते अनेक देश भ्रमण करीने शिष्योना परिवार सहित एकदा प्रस्तावें फरी रत्नपुर नगरें आव्यो, तेने राजायें अत्याग्रह पूर्वक पारणुं कराववा माटें निमंत्रणा करी, तेवारें तापसें पूर्वजन्मना वेरथी राजाने कह्युं के जो जिनधर्मी शेठ पोतानी पीठ उपर भोजन करावे, तो हुं पारणुं करुं ? एवी महारी इच्छा छे. राजायें ते वात कबूल करी जिनधर्म्मीश्रेष्ठीने तेडी तेनी पुंठ मंडावी. तेनी उपर तापस चढी बेठो. अने त्रांबानुं भाजन पर मान्नथी भरी लाव्या, ते पण शेठनी पीठ उपर राख्युं. तापस जमवा बेठो पछी उष्ण अन्नना योगें शेठनो वांसो तप्यो, अने महावेदना थवा मांडी. तेवारें शेठें मनमां चिंतव्युं जे में जन्मांतरें ए ऋषिने संताप्यो हशे, तेथी ए हमणां मने संताप करे छे, माटें कीधेलां कर्म भोगव्या विना कांइ छूटे नही ! हवे तापस जमी रह्या पछी भाजन उपाड्युं तो शेठना वांसा नी खाल नीकली पडी, महावेदनाक्रांत थइ पोताने घेर आवी सर्व जीवा योनि खमावी अनशन व्रत लइ मरण पामी सौधर्मेंद्र थयो. अने त्रिदं

मीयो मरण पामी तेज इंद्रनो ऐरावत हाथी थयो. ते हाथी मरण पामी घणो संसार परिभ्रमण करी सीताक्ष नामें गुह्यक थयो. अने सौध र्मेंद्र पण तिहांथी चवी हस्तिनागपुरें अश्वसेन राजाने घरे पुत्र पणे उप नो. मातायें चौद सुपन दीठां. जन्म्या पछी सनत्कुमार नाम दीधुं. ते बी जना चंद्रमानी पेरें वधतो अनुक्रमें यौवनावस्था पाम्यो. अत्यंत रूपवा न् सौभाग्यवान् थयो. तेनो महेंद्र नामें कोइ मित्र छे, तेनी साथें अनेक प्रकारनी रमत क्रीडा करवा लाग्यो.

एकदा वसंतक्रीडा करवा माटें मित्रनी साथें उद्यानमां गयो, ते अवस रें राजाने माटें अपूर्व अश्व कोइ परदेशथी भेट लइ आव्यो, ते अश्वने राजायें कुमरनी पासें वनमां मोकल्यो. कुमर पण ते घोडा उपर चढी घ णी वार घोडाने फेरव्यो पण जेवारें तेनी लगाम खेंची तेवारें ते घणोज दोड्यो, अने क्षणएकमांहे ते वन मूकीने आगल जतो रह्यो, ते समाचार अश्वसेन राजायें जाण्या. तेवारें सैन्य लइने तेने जोवा निकल्यो. सर्वत्र जोयो पण क्यांहि न मलवाथी राजा रुदन करतो पाछो घेर आव्यो.

तेवारें प्रधान आवी राजाने नमस्कार करी आज्ञा मागीने देशांतर ज वा निकल्यो. ते केटलेक दिवसें कौबेरी नगरीयें गयो, तिहां सरोवरनी पाल उपर बेसी वनफल खाइ पाणी पीधुं, एकक्षण बेठो. एटलामां वेणु, वीणा, मृदंग, झल्लरी प्रमुखनो नाद सांभल्यो तेने अनुसारें आगल जवा लाग्यो. आगल अनेक जनथी परवस्यो थको कुमरने बेठेलो दीठो, तेवारें प्रधानें आश्चर्य पामीने कुमरने नमस्कार कस्यो. आलिंगनथी बेहु जण म ल्या, कुमरें पोताना अर्धासनें बेसाड्यो. तदनंतर क्षेमकुशल पूछ्यां.

पछी कुमरें भ्रूसंज्ञायें करी पोतानी भार्याने कह्युं, ते प्रधानप्रत्यें बोली के हे सत्पुरुष! तहारा मित्रने घोडायें वनमांहे अपहस्यो ते जेवारें वाग ढी ली मूकी तेवारें घोडो उभो रह्यो अने तत्काल मरण पाम्यो तथा कुमर मूर्छायें वृक्षनी छायानीचें पड्यो तेने वृक्षना अधिष्ठायक देवतायें जल आणी छांट्युं. तेथी कुमर सावधान थइ वनदेवता प्रत्यें पूछतो हवो के तमें कोण छो? तारे तेणें कह्युं के हुं वनाधिष्ठायिक देवता छुं. खीर समु द्रना पाणीथी में तुजने सावधान कीधो, तेवारें कुमरें कह्युं के हे देव! मु जने मानसरोवर देखाडो, तो तिहां हुं स्नान मज्जन करुं के जेथी सकल

रोग निवारण थाय! अने शीतल थाउं! देवता तिहां लइ गयो, पछी कु मरें स्नान कीधुं. तृषा अने मार्गनो श्रम जें हतो ते टाल्यो.

एवामां पूर्वजन्मना वैरी यक्षें दीठो, चिरकाल पर्यंत तेनी साथें युद्ध थयुं. कुमरें तेने जीत्यो. बीजा देवताउयें हर्षित थइने कुमर उपर फूलनी वृष्टि करी. तिहां भानुवेग विद्याधरनी आठ कन्याउ परण्यो. पछी कुमरने ते विद्याधर वैताढ्य पर्वतें लइ गयो. तिहां पण घणी कन्याउनुं पाणिग्रहण कर्युं. अने सुखथी तिहां रह्यो. जे माटें पुण्यवंत पुरुष ज्यां जाय त्यां सुख पामे.

एकदा ते वैरी यक्षें गृहमांथी उपाडीने वनमांहे मूकी दीधो. तिहांथी आगल चालतां एक मंदिर दीठुं. तेनी सातमी भूमियें चढ्यो, तेवारें रु दन करती एवी एक कुमरी दीठी. कुमरें तेने बोलावी पूछ्युं के हे सुभ गि! तुं रुदन शा माटें करे छे? त्यारें कन्या बोली के अहो सुभग! सांकेत पुरपाटणें सुराष्ट्रराजा छे, तेनी सुनंदा नामें हुं पुत्री छुं. वली जेवारें हुं यौवनावस्थाने पामी, तेवारें म्हारा पितायें संकल्प कर्यो जे ए म्हारी पु त्री हुं सनत्कुमारने परणावीश! पण एक दिवसें कोइक विद्याधरें मने तिहांथी अपहरीने इहां आणी छे. हवे म्हारी शी गति थाशे? कुमर बो ल्यो, के तुं भय राखीश नही. सनत्कुमार ते हुंज छुं. एवी वात करे छे, एट लामां ते कन्यानो हरण करनार विद्याधर पण त्यां आवी पहोतो, तेनुं अने कुमरनुं मांहोमांहे युद्ध थयुं. कुमर जीत्यो अने सुनंदानुं पाणिग्रहण क र्युं. वली जे विद्याधरने जीत्यो तेने पण प्रथम ऋषीश्वरें कहेलुं हतुं ते उ परथी पोतानी पुत्री कुमरने परणावी, अनेक विद्याउ आपी ने वैताढ्य पर्वतें लइ गयो. तिहां श्रीशांतिनाथजीना अनेक बिंब वंदाव्यां. तिहांथी निकलीने अमें आज आहीं तमोने मल्या छैयें.

इत्यादि वार्त्ता मंत्रीश्वर आगल कहीने पछी तिहांथी अंतेउर तथा मं त्री सहित चाल्या, ते हस्तिनागपुरें आव्या. पुत्र आव्यो सांभलीने पिता घणोज प्रमोद पाम्यो. पछी पुत्रनो राज्याभिषेक करीने पितायें श्रीधर्मना थना शिष्यनी पासेंथी दीक्षा लीधी.

पाछल सनत्कुमार छ खंड पृथ्वी साधीने राज्य सुख भोगववा लाग्यो. इंद्रें धनद भंडारीनी साथें छत्र, चामर, मोकल्यां. बे चामर, बे पावडी, एक मुकुट, बे देवदुष्य वस्त्र, बे कुंडल, नक्षत्रमाला, हार, सिंहासन, दे

वतानां गायन, तथा अप्सरा. ए सर्व आणी दीधां. बत्रीश हजार राजायें मली राज्याभिषेक कीधो. एम चक्रवर्त्तीनी पदवी भोगवतो रहे छे.

एकदा सौधर्मेंद्र सभामां बेठां थकां सनत्कुमार चक्रीनुं रूप वखाण्युं ते सर्व देवोयें यथातथ्य करी मान्युं. परंतु बे मिथ्यात्वी देवो हता, ते इंद्रनुं वचन अणमानता परीक्षा करवा माटें ब्राह्मणनो वेश धारण करी चक्रीना द्वार आगल आवी द्वारपालने कहेवा लाग्या के अमें दूर देशांतरथी रूप जोवा सारु आव्या छैयें. ते वखत चक्रवर्त्ती पोताना शरीरें उवटणुं करावता हता. तिहां द्वारपालनी आज्ञा मागी ब्राह्मणनेरूपें देवोयें आवी रूप जोयुं. तेथी हर्ष पामी कहेता हवा के अमारो जन्म सफल थयो. चक्रवर्त्तीयें कह्युं के हुं मज्जन करी जमीने राजसभायें बिराजुं, तेवारें आवजो. राजाना कहेवा प्रमाणें सभामां पण ते देवो, रूप जोवा आव्या. तेवारें मनमां विषाद पामी मस्तक धूणाववा लाग्या. चक्रवर्त्तीना पूछवाथी देवोयें कह्युं के तमारुं शरीर हमणां रोगें ग्रसित थवाथी पूर्वेनुं रूप पलटाइ गयुं छे. इत्यादि वृत्तांत कही स्वस्थानकें गया. सनत्कुमारें यौवनादि वस्तुने अथिर जाणी विजयंधर सूरि पासें दीक्षा लीधी. छमास पर्यंत अनुराग धरतां सैन्य प्रमुख सर्व परिकर साथें फस्या. परंतु सनत्कुमारें कांइ तेनी तरफ जोयुं पण नही. पछी सर्व कोइ पोतपोताने घेर पाछा आव्या.

हवे चक्रवर्त्तीना शरीरें क्रमें क्रमें वधतां वधतां महारोगोत्पत्ति थइ, ते सातशें वर्ष पर्यंत भोगवी कठिण तपस्या करता रह्या, तेना प्रभावथी अनेक लब्धियो उपनी. वली पूर्वेनी पेरें सौधर्मेंद्रें सनत्कुमार साधुनी तपस्या तथा रोग संबंधि कष्ट सहन करवानी प्रशंसा करी, ते न मानतां फरी देवतायें आवी परीक्षा करवा माटें वैद्योपचार करवा संबंधी अनेक उपदेश कस्या. परंतु ऋषीश्वर लगार मात्र पण मग्या नही. अने कष्ट सहन करवामां तत्पर रह्या. देवता पण साधुने वांदी ऊपर फूलनी वृष्टि करी स्वस्थानकें गया. सनत्कुमार साधु अंत्यावस्थायें अनशन व्रत लइ काल करी सात सागरोपमने आउखे त्रीजे देवलोकें देवता थया. देवस्थिति पूर्ण थयें अनुक्रमें केटलाक मनुष्य तथा देवना भव करी केवलज्ञान उपार्जी मोक्ष सुख पामशे. ए एकवीशमा वैराग्योपदेशप्रक्रमने विषे सनत्कुमारनी कथा कही ॥

हवे ब काव्यें करी सामान्य उपदेश कहे छे.

उपजातिवृत्तम्॥जिनेंद्रपूजा गुरुपर्युपास्तिः,सत्त्वानुकंपा शुभपात्रदानम्॥ गुणानुरागः श्रुतिरागमस्य,नृजन्मवृक्षस्य फलान्यमूनि॥९३॥

अर्थः—(नृजन्मवृक्षस्य के०) मनुष्यजन्मरूप वृक्षनां (अमूनि के०) आ हवे कहेवाशे ते (फलानि के०) फलो छे. ते फलो कहे छे. तिहां प्रथम तो (जिनेंद्रपूजा के०) श्रीवीतराग प्रभुनी पूजा करवी ते, तथा बीजुं (गुरुपर्युपास्तिः के०) गुरुनी उपासना करवी ते. तथा त्रीजुं (सत्त्वानुकंपा के०) सर्व प्राणिमात्र उपर दया राखवी ते. तथा चोथुं (शुभपात्रदानं के०) शुभपात्रने विषे दान देवुं ते. तथा पांचमुं (गुणानुरागः के०) गुणीने विषे प्रीति राखवी ते. छठुं (आगमस्य के०) शास्त्रनुं (श्रुतिः के०) श्रवण करवुं ते.. एटलां फलो मनुष्य जन्मवृक्षनां छे. अर्थात् एटलां शुभकृत्यो करवा थकी मनुष्यजन्म सफल थयो जाणवो ॥९३॥

टीकाः—अथ सामान्योपदेशमाह ॥ जिनेंद्रेति ॥ नृजन्मवृक्षस्य मनुष्यजन्मतरोरमूनि फलानि । एतैः कृत्वा मनुष्यजन्म सफलं भवति । अमूनि कानि? प्रथमं तावज्जिनेंद्रपूजा श्रीवीतरागदेवस्य पूजा कार्या । पुनर्गुरूणां पर्युपास्तिः सेवा । पुनः सत्त्वानां जीवानां अनुकंपा दया कार्या । पुनः शुभपात्रे दानं । पुनर्गुणेषु अनुरागः गुणग्रहणं कार्यं । पुनरागमस्य सिद्धांतस्य श्रुतिः श्रवणं कार्यं । एभिः कृत्वा मनुष्यजन्म सफलं स्यात् ॥ ९३ ॥

भाषाकाव्यः—सवैय्या तेईसा ॥ कै परमेसुरकी अरचा विधि, सो गुरुकों उपसर्ग न कीजें ॥ दीन विलोकि दया धरियें चित्त, प्रासुक दान सुपत्तहिं दीजें ॥ गाहक व्है गुनकों गहियें, रुचिसों जिन आगमको रस पीजें ॥ ए करनी करियें गृहमें वसि, यों जगमें नर भौफल लीजें ॥ ९३ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ त्रिसंध्यं देवार्चां विरचय चयं प्रापय
यशः, श्रियः पात्रे वापं जनय नयमार्गं नय मनः ॥ स्मरक्रोधाद्यारीन् दलय कलय प्राणिषु दयाम्, जिनोक्तं
सिद्धांतं शृणु वृणु जवान्मुक्तिकमलाम् ॥ ९४ ॥

आर्थः—हे भव्यप्राणी! (त्रिसंध्यं के०) प्रभात, मध्यान्ह अने सायंकाल, तेने विषे (देवार्चां के०) श्रीवीतरागनी पूजाने (विरचय के०) कर. तथा

(यशः के०) कीर्त्तिने, (चयं के०) वृद्धि प्रत्यें (प्रापय के०.) पमाड. तथा (श्रियः के०) लक्ष्मीना (पात्रे के०) सुपात्रने विषे (वापं के०) वाववाने (जनय के०) उत्पन्न कर. तथा (मनः के०) मनने (नयमार्गं के०) न्याय मार्ग प्रत्यें (नय के०) पमाड. वली (स्मरक्रोधाद्यारीन् के०) काम, क्रोध, मान, माया, लोन्न, ए आदि शत्रुउने (दलय के०) खंमन कर. तथा (प्राणिषु के०) प्राणिमात्रनें विषे (दयां के०) दयाने (कलय के०) कर. तथा (जिनोक्तं के०) जिनप्रणीत एवा (सिद्धांतं के०) सूत्र सिद्धांतने (शृणु के०) श्रवण कर. ए पूर्वोक्त सर्वे करीने (जवात् के०) वेगें करी (मुक्तिकमलां के०) मोक्षरूप लक्ष्मीने (वृणु के०) वर ॥९४॥

टीकाः–त्रिसंध्यमिति ॥ त्रिसंध्यं त्रिकालं प्रन्नाते मध्यान्हे सायं च देवार्चां श्रीवीतरागपूजां विरचय कुरु । पुनर्यशः कीर्त्तिं चयं वृद्धिं प्रापय । श्रियोलक्ष्म्याः पात्रे सुपात्रे वापं जनय वपनं कुरु । पुनर्मनश्चित्तं नयमार्गं न्यायमार्गं प्रति नय । पुनः स्मरक्रोधाद्यारीन् काम क्रोध मान माया लोन्नाद्यान् शत्रून् दलयं खंमय । पुनः प्राणिषु जीवेषु दयां कलय कुरु । पुनर्जिनोक्तं अर्हत्प्रणीतं सिद्धांतं सूत्रं शृणु । एतानि कृत्वा जवात् वेगात् मुक्तिकमलां शिवश्रियं वृणु वरय ॥ ९४ ॥

नाषाकाव्यः–हरिगीतबंद ॥ जो करे साधि त्रिकाल सुमिरन, जासु जस जग विस्तरे ॥ जो सुने परमागम सुरुचिसों, नीति मारग पग धरे ॥ जो निरखि दीन दया प्रयुंजे, काम क्रोधादिक हरे ॥ जो सुधन सपत सुखेत खरचे, ताहिं सिवसंपति वरे ॥ ९४ ॥

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥ कृत्वाऽर्हत्पदपूजनं यतिजनं नत्वा विदित्वाऽऽगमं, हित्वा संगमधर्मकर्मठधियां पात्रेषु दत्वा धनम् ॥ गत्वा पद्धतिमुत्तमक्रमजुषां जित्वांऽतरारिव्रजम्, स्मृत्वा पंचनमस्क्रियां कुरु करक्रोडस्थमिष्टं सुखम् ॥ ९५ ॥

अर्थः–हे श्राद्धजन ! एटलां वानां करीने (इष्टं के०) वांछित एवा (सुखं के०) सुखने (करक्रोडस्थं के०) हस्तोत्संगगत एटले हाथमां तथा खोलामां रहे एवाने (कुरु के०) कर. शुं करीने कर ? तो के (अर्हत्पदपूजनं के०) श्रीवीतराग नगवानना पदपूजनने (कृत्वा के०) करीने तथा (यतिजनं के०) साधु जनने

(नत्वा के०) नमस्कार करीने तथा (आगमं के०) सिद्धांतने (विदित्वा के०) जाणीने अथवा सांनलीने तथा (अधमैकर्मठधियां के०) पापासक्त बुद्धि वाला जनोना (संगं के०) संगने (हित्वा के०) त्याग करीने तथा (पात्रेषु के०) सुपात्रने विषे (धनं के०) धनने (दत्वा के०) आपीने तथा (उत्तम क्रमजुषां के०) उत्तम मार्गना सेवनार जनोना (पद्धतिं के०) मार्गप्रत्यें (गत्वा के०) जइने तथा (अंतरारिव्रजं के०) अभ्यंतरना वैरिसमूहने (जित्वा के०) जीतीने तथा (पंचनमस्क्रियां के०) पंचपरमेष्ठिनमस्कार मंत्रने (स्मृत्वा के०) स्मरण करीने तथा एमनुंज ध्यान करीने इच्छित सुखने करो त्संगप्राप्त कर. एटले कर जे हाथ अने उत्संग जे खोलो तेनेविषे प्राप्त कर॥९५

टीकाः—कृत्वाऽर्हतिति ॥ नो श्राद्ध ! एतानि कृत्वा इष्टं वांछितसुखं कर क्रोडस्थं हस्तोत्संगगतं कुरु। करोत्संगप्राप्यं कुरु। किं कृत्वा ? अर्हत्पदपूजनं वीतरागचरणपूजां कृत्वा। पुनर्यतिजनं साधुजनं नत्वा । पुनरागमं सिद्धांतं विदित्वा ज्ञात्वा श्रुत्वा। पुनः अधमैकर्मठधियां पापासक्तबुद्धीनां संगं संसर्गं त्यक्त्वा परित्यज्य । पुनः पात्रेषु निजं धनं वित्तं दत्वा। पुनः उत्तमक्रमजुषां उत्तममार्गसेविनां पद्धतिं मार्गं प्रति गत्वा अनुश्रित्य पुनरंतरारिव्रजं अंत रंगारिषड्वर्गं आभ्यंतरं वैरिसमूहं जित्वा । पुनः पंच नमस्क्रियां नमस्कारमंत्रं स्मृत्वा ध्यात्वा इष्टं सुखं करोत्संगप्राप्यं कुरु ॥ ९५ ॥

नाषाकाव्यः—वस्तुछंद ॥ देव पूजहिं देव पूजहिं रचहिं गुरु सेव ॥ पर मागम रुचि धरहिं, तजहिं दुष्ट संगति तत्तछन ॥ गुनिसंगति आदरहिं, करहिं त्याग दुरजन्न नन्नं ॥ देहि सुपत्तहिं दान नित, जपहिं पंच नवका र ॥ ए करनी जे आचरहिं, ते पावहिं नवपार ॥ ९५ ॥

हरिणीवृत्तम् ॥ प्रसरति यथा कीर्त्तिर्दिक्षु क्षपाकरसोद
रा,ऽभ्युदयजननी याति स्फातिं यथा गुणसंततिः ॥
कलयति यथा वृद्धिं धर्मः कुकर्महतिक्षमः, कुशल
सुलभे न्याये कार्यं तथा पथि वर्त्तनम् ॥ ९६ ॥

अर्थः—हे प्राणी ! (न्याये के०) न्यायोपपन्न एवा (पथि के०) मार्गने विषे (तथा के०) तेवी रीतें (वर्त्तनं के०) वर्त्तन (कार्यं के०) करवा योग्य ठे. केवी रीते ? तो के (यथा के०)जेम (दिक्षु के०) चारेदिशाउमां(क्षपाकरसो

दरा के०) चंद्रकिरणसमान उज्ज्वल एवी (कीर्त्तिः के०) कीर्त्ति (प्रसरति के०) प्रसरे छे, वली (यथा के०) जेम (अभ्युदयजननी के०) उदयने करनारी एवी (गुणसंततिः के०) गुणश्रेणि, (स्फातिं के०) विस्तारने (याति के०) पामे छे. तथा वली (यथा के०) जेम (कुकर्महतिक्षमः के०) पापहननने विषे समर्थ एवो (धर्मः के०) धर्म, (वृद्धिं के०) वृद्धिने (कलयति के०) प्राप्त थाय छे. ते न्याय मार्ग केहवो छे ? तो के (कुशलसुलभे के०) चतुर पुरुषोयें सुलभ छे ॥ ९६ ॥

टीकाः—प्रसरतीति ॥ न्याय्ये न्यायोपपन्ने पथि मार्गे तथा प्रवर्त्तनं कार्यं तथा प्रवृतिः कार्या । यथा दिक्षु चतुर्षु दिक्षु कृपाकरसोदरा चंद्रकिरणवदुज्ज्वला कीर्त्तिः स्फुरति विस्तरति । पुनर्यथा अभ्युदयजननी उदयकारका गुणसंततिर्गुणश्रेणिः स्फातिं याति विस्तारं व्रजति । पुनर्यथा कुकर्महतौ पापहनने क्षमः समर्थो धर्म्मो वृद्धिं कलयति वृद्धिं प्राप्नोति । तथा न्याय्ये पथि न्यायमार्गे प्रवर्त्तनं कार्यं । कथंभूते न्याय्ये पथि ? कुशलैश्चतुरपुरुषैः सुलभः सुप्रापः सुखेन लभ्यस्तस्मिन् ॥ ९६ ॥

भाषाकाव्यः—दोहा ॥ गुन अरु धर्म सुथिर रहै, जस प्रताप गंभीर ॥ कुशल वृक्ष जिम लहलहै, तिहिं मारग चलो वीर ॥ ९६ ॥

शिखरिणीवृत्तद्वयम् ॥ करे श्लाघ्यस्त्यागः शिरसि गुरुपादप्रणमनम्, मुखे सत्या वाणी श्रुतमधिगतं च श्रवणयोः ॥ हृदि स्वच्छा वृत्तिर्विजयि भुजयोः पौरुष महो, विनाप्यैश्वर्येण प्रकृतिमहतां मंडनमिदम् ॥ ९७ ॥

अर्थः—(अहो के०) आश्चर्य छे के (प्रकृतिमहतां के०) स्वभावें करी उत्तम एवा जनोने (विनाप्यैश्वर्येण के०) साम्राज्यविना पण (इदं के०) आ हवे केहेवाशे ते (मंडनं के०) भूषण छे. ते शुं भूषण छे ? तो के (करे के०) हाथने विषे (त्यागः के०) दान तेज (श्लाघ्यः के०) श्लाघ्य छे. पण कंकणादि भूषण मंडन नथी. तथा (शिरसि के०) मस्तकने विषे (गुरुपादप्रणमनं के०) गुरुजनना पदने विषे प्रणाम तेज मंडन छे, परंतु मुकुटतिलकादि नथी. (च के०) तथा (मुखे के०) मुखने विषे (सत्या के०) सत्य एवी (वाणी के०) वाणी तेज मंडन छे परंतु तांबूलादि नथी. तथा (श्रवणयोः के०)कानने विषे (अधिगतं

के०) नएयुं एवुं (श्रुतं के०) सिद्धांत तेज मंमन छे, परंतु कुंमलादि नथी. (हृदि के०) हृदयने विषे (स्वच्छा के०) निर्मल एवी (वृत्तिः के०) व्यापार तेज मंमन छे, परंतु हारमालादि नथी. तथा (भुजयोः के०) बेहु हाथने विषे (विजयि के०) जयनशील एवुं (पौरुषं के०) पुरुषार्थ तेज मंमन छे, परंतु केयूरादि नथी. अर्थात् महान् पुरुषोने धनादि विना पण आपूर्वोक्त सर्व मंमन रूप छे ८७

टीकाः—करइति ॥ अहो आश्चर्ये प्रकृतिमहतां स्वभावेनोत्तमानां पुंसां ऐश्वर्येण साम्राज्येन विनाऽपि इदं मंमनं अस्ति । इदमिति किं ? करे हस्ते त्यागोदानं श्लाघ्यः मंमनं न कंकणादि । पुनः शिरसि गुरूणां पादयोश्चरणयोः प्रणमनं नमस्कारकरणं मंमनं न मुकुटतिलकादीनि । मुखे सत्या वाएयेव मंमनं न तांबूलादि । श्रवणयोः कर्णयोः अधिगतं पठितं श्रुतं शास्त्रमेव मंमनं न कुंमलादि । हृदि हृदये स्वच्छा निर्मला वृत्तिर्व्यापारएव मंमनं न हारमालादि । भुजयोर्बाह्वोर्विजयि जयनशीलं पौरुषं पराक्रमो धर्मविषये य छलं तदेव मंमनं न केयूरादि । महतां पुंसां धनं विनापि दयैव मंमनं ॥८७॥

भाषाकाव्यः—कवित्त मात्रात्मक ॥ वंदन विनय मुकुट शिर उप्पर, सुगुरु वचन कुंमलयुग कान ॥ अंतरशत्रु विजय भुजमंमन, मुगति माल उर गुन अमलान ॥ त्याग सहज कर कटक विराजत, शोभित सत्य सबद मुख पान ॥ भूखन तजहिं तहूं तन मंमित, यातें संत पुरुष परधान ॥८७॥

भवारएयं मुक्त्वा यदि जिगमिषुर्मुक्तिनगरीम्, तदानीं
मा कार्षीर्विषयविषवृक्षेषु वसतिम्॥ यतश्छायाप्येषां
प्रथयंति महामोहमचिरा, दयं जंतुर्यस्मात्पदमपि न
गंतुं प्रभवति ॥८८॥ इति सामान्योपदेशप्रक्रमः॥२२॥

अर्थः—हे श्रावकजन ! (यदि के०) जो (भवारण्यं के०) संसाररूप अटवीने (मुक्त्वा के०) मूकीने (मुक्तिनगरीं के०) मोक्षनगरी प्रत्यें (जिगमिषुः के०) जवाने इछतो एवो तुं छो, (तदानीं के०) त्यारें तो (विषयविषवृक्षेषु के०) विषयरूप जे विषवृक्षो तेने विषे (वसतिं के०) निवासने (माकार्षीः के०) म कर. (यतः के०) जे कारण माटें (एषां के०) ए विषयविषवृक्षोनी (छायापि के०) छाया पण (महामोहं के०) महोटा अज्ञानने (प्रथयति के०) विस्तारे छे. जेम बीजी पण विषवृक्षोनी छाया

छे, ते महोटी मूर्च्छाने उत्पन्न करे छे. अने (यस्मात् के०) जे महामोह थकी (अयं के०) आ (जंतुः के०) जीव, (अचिरात् के०) वेगें करी (पद मपिगंतुं के०) एक पगलुं पण चालवाने (नप्रभवति के०) समर्थ थातो नथी. अर्थात् स्थावरपणाने प्राप्त थाय छे ॥८७॥ इति सामान्योपदेशप्रक्रमः॥२२॥

टीकाः—भवारण्यमिति ॥ भो श्राद्ध! भवारण्यं संसाररूपां अटवीं मुक्त्वा त्यक्त्वा यदि मुक्तिनगरीं सिद्धिपुरीं प्रति जिगमिषसि गंतुकामोऽसि तदानीं विषयाएव विषवृक्षास्तेषां वसतिं निवासं माकार्षीः मा कृथाः। कुतः? यतोयस्मात् कारणात् एषां विषयविषवृक्षाणां छायाऽपि महामोहं महदज्ञानं प्रथयति विस्तारयति । अन्येषामपि विषवृक्षाणां छाया महामोहं महतीं मूर्च्छां जनयति । यस्मान्महामोहादयं जंतुः प्राणी अचिराद्वेगात् पदमपि गंतुं एकं पादमपि चलितुं न शक्नोति । किंतु? स्थावरत्वं प्राप्नोति ॥ ८७ ॥ सिंदूरप्रकरग्रंथ, व्याख्यायां हर्षकीर्त्तिभिः ॥ सूरिभिर्विहितायां तु, सामान्यप्रक्रमोऽजनि ॥२२॥ इति सामान्योपदेशप्रक्रमः ॥२२॥

हवे एक काव्यें करी ग्रंथनुं समर्थन करे छे.

उपजातिवृत्तम् ॥ सोमप्रभाचार्यमभा च यन्न, पुंसां त
मःपंकमपाकरोति ॥ तदप्यमुष्मिन्नुपदेशलेशे, निश
म्यमानेऽनिशमेति नाशम् ॥८८॥ इति ग्रंथसमर्थनम् ॥

अर्थः—(सोमप्रभा के०) चंद्रनीकांति(च के०) वली (अर्यमभा के०) सूर्यनी कांति ते (पुंसां के०) पुरुषोना (यत् के०) जे (तमःपंकं के०) अंधकाररूप जे कचरो तेने (नअपाकरोति के०) नथी नाश करती. (च के०) परंतु (तदपि के०) तादृश एवो पण अज्ञान अने पापरूप कचरो ते (अमुष्मिन् के०) आ सिंदूरप्रकराख्यनामा (उपदेशलेशे के०) उपदेशनो लेश ते (निशम्यमाने के०) सांभले छते (अनिशं के०) रात्रि दिवस एटले निरंतर (नाशं के०) नाशनें (एति के०) पामे छे. अर्थात् आ सिंदूरप्रकर सांभलवाथी तम जे पाप अने अज्ञान ते नाशने पामे छे. आ श्लोकमां 'सोमप्रभा' ए पदथी ग्रंथकर्त्तायें पोतानुं सोमप्रभाचार्य एवुं नाम पण सूचव्युं छे ॥८८॥

टीकाः—अथ समर्थयति ॥ सोमप्रभेति ॥ सोमप्रभा चंद्रकांतिश्च पुनः अर्यमभा सूर्यप्रभाऽपि पुंसां यत्तमःपंकं अंधकारकर्दमं न अपाकरोति न

दूरीकरोति । तदपि तादृशमपि तमःपंकं अज्ञानपापं अमुष्मिन् सिंदूर प्रकराख्ये॰उपदेशलेशे निशम्यमाने श्रूयमाणे सति अनिशं निरंतरं नाशं एति क्षयं याति । एतत् श्रवणात्तमः पापं च याति । अत्र सोमप्रभाचार्य इति ग्रंथकृता स्वनामापि सूचितम् ॥ ९९ ॥ इति ग्रंथसमर्थनम् ॥

हवे एक श्लोकथी प्रशस्ति कहे छे ॥

मालिनीवृत्तम् ॥ अभजदजितदेवाचार्यपट्टोदयाद्रि, द्युमणिविजयसिंहाचार्यपादारविंदे॥ मधुकरसमतां यस्तेन सोमप्रभेण, व्यरचि मुनिपराज्ञा सूक्तमुक्तावलीयम् ॥ ॥ १०० ॥ इति प्रशस्तिः ॥ इति सिंदूरप्रकरः समाप्तः ॥

अर्थः-(तेन के०) ते (सोमप्रभेण के०) सोमप्रभनामा (मुनिपराज्ञा के०) मुनिप जे मुनिश्रेष्ठ तेमना जे राजा एवा सूरीश्वर तेमणें (इयं के०) आ (सूक्तमुक्तावली के०) सु नाम शोभायमान प्रस्तावंवालां उक्त एटले काव्य ते रूप मुक्ता जे मोतीयो तेनी आवली जे पंक्ति ते (व्यरचि के०) विरचित करी. ते कया सोमप्रभाचार्य ? तो के (यः के०) जे (अजितदेवाचार्यपट्टोदयाद्रि के०) अजितदेवनामा आचार्यना पट्टरूप उदयाचलने विषे (द्युमणि के०) सूर्यसमान एवा जे (विजयसिंहाचार्य के०) विजयसिंहाचार्य तेना (पादारविंदे के०) चरणारविंदने विषे (मधुकरसमतां के०) भ्रमरनी समानताने (अभजत् के०) भजता हवा ॥१००॥ ए प्रशस्ति कही ॥ इति सिंदूरप्रकरस्य बालावबोधः समाप्तः ॥

टीकाः-अथ प्रशस्तिमाह ॥ अभजदजितदेवेति ॥ तेन सोमप्रभेण मुनिपराज्ञा मुनिपाःमुनिश्रेष्ठास्तेषां राजा सूरीश्वरस्तेन मुनिपराज्ञा सूरीश्वरेण इयं सूक्तमुक्तावलिः सूक्तान्येव सुभाषितान्येव शोभनप्रस्तावकाव्यान्येव मुक्ता मौक्तिकानि मुक्ताफलानि तेषामावलिः श्रेणिः व्यरचि विरचिता । तेन केन ? यः सोमप्रभः अजितदेवनामाचार्यस्य पट्टएव उदयाद्रिरुदयाचलः तत्र द्युमणिः सूर्यसमानोविजयसिंहाचार्यस्तस्य पादारविंदे चरणकमले मधुकरसमतां भ्रमरतुल्यतां अभजत् प्राप । अर्थात् पूर्वमजितदेवाचार्यस्तस्य सोमप्रभाचार्यस्तेनेयं सिंदूरप्रकरनामा सूक्तमुक्तावली व्यरचि कृता ॥१००॥ इति प्रशस्तिः॥ इति श्रीसिंदूरप्रकराख्यग्रंथस्य हर्षकीर्त्तिसूरिविरचिता व्याख्या समाप्ता॥

नापाकाव्यः—सवैय्या इकतीसा ॥ गहै जे सुजनरीति, गुनीसों निवाहै प्रीति, सेवा साधै गुरुकी, विनैसों कर जोरिकें ॥ विद्याको विसन धरै, पर तिय संग हरै, डुर्जनकी संगतिसों, बैठे मुख मोरिकें ॥ तजे लोकनिंद्य काज, पूजे देव जिनराज, करै जे करणि थिर, उमंग बहोरिकें ॥ तेही जीव सुखी होहिं, तेहि मोखमुखी होहिं, तेही होइ परम, करमफंद तोरिकें ॥९८॥

वृत्त ऊपर प्रमाणें ॥ पर निंदा त्याग करु, मनमें वैराग धरु, क्रोध मान माया लोन, च्यारो परिहर रे॥ हिरदेमें तोष गहु, समतासों सीरो रहु, धरमको नेद लहु, खेदमें न पर रे ॥ करमकों वंस खोउ, मुगतिको पंथ जोउ, सुकृतको बीज बोउ, डुरितसों मर रे ॥ अरे नर ऐसो होहि, वार वार कहुं तोहि, नांहि तौ सिधार नैया, निगोद तेरो घर रे ॥ ९९ ॥

कवित्त मात्रात्मक ॥ आलस त्यागु जागु नर चेतन, बल संनारु मति करहु विलंब ॥ इहां न सुख लवलेश जगतमहिं, निंब विरखमहिं लगै न अंब ॥ तातें तूं अंतर विपक्ष हरु, करु विलक्ष निज अक्षकदंब ॥ गहु गुन ज्ञान बैठ चारित रथ, देहि मोख मग सनमुख बिंब ॥ १०० ॥

अथ अन्नोग कवित्त मात्रात्मक ॥ जैन वंस सर हंस सितंबर, मुनिपति अजितदेव अति आरज ॥ ताके पट्ट वादिमदनंजन, प्रगटे विजयसिंह आचारज ॥ ताके पट्ट नए सोमप्रन, तिन्है गिरंथ कियो हितकारज ॥ जाके पढत सुनत अवधारत, होइ पुरुष जे पुरुष अनारज ॥ १०१ ॥ दोहा ॥ नाम सूक्तमुक्तावली, द्वाविंशति अधिकार ॥ सत सिलोक परधान सब, इति गरंथ विस्तार ॥ १०२ ॥ कौंरपाल बनारसी, मित्रयुगल इक चित्त ॥ तिन गरंथ नापा कियो, बहुविधि छंद कवित्त ॥१०३॥ सोलहसें इक्यानवें, रितु ग्रीषम वैसाख ॥ सोम वार एकादशी, कर नक्षत्र सित पाख ॥ १०४॥ आ नापा करनारें बीजी टीका उपरथी रचना करेली देखाय छे जे माटें कोइ कोइ स्थलें अर्थमां क्वचित् फेर दीठामां आवे छे. अने छेहलां बे काव्यनो अर्थ फेरव्यो छे.

इति सोमप्रनाचार्यविरचित सिंदूरप्रकरः (सूक्तमुक्तावलि) ग्रंथ हर्षकीर्त्ति सूरिकृत युक्ति, व्याख्या अन्यपंमितकृत बालावबोध संयुत, बनारसीदासकृत नापाकाव्यसहितः समाप्तः ॥ समाप्तोयं ग्रंथः ॥

॥ अथ ॥

॥ श्रीहेमचंद्राचार्य कृतं श्रीवीतराग स्तुतिः प्रारभ्यते ॥

तत्र

॥ प्रस्तावनानामा प्रथम प्रकाशः ॥

॥ यः परात्मा परं ज्योतिः,परमः परमेष्ठिनाम् ॥ आदित्यवर्णं तमसः,परस्तादामनंति यम् ॥१॥ नावार्थः–(यःपरात्मा के०) जे नगवान् परमात्मा, (परंज्योतिः के०) परब्रह्म तेजोरूप तेज (परमेष्ठिनां परमः के०) जे अर्हन्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधुरूप पंचपरमेष्ठि ते मध्यें उत्कृष्ट ले. अने सूर्यसमान प्रकाशवाला एवा (यं के०) जे नगवानने (तमसःपरस्तात् के०) पापथकी किंवा अंधकार जे तमोगुणादि ते थकी पर एवानें (आमनंति के०) ज्ञानी पुरुषो कहे ले ॥ १ ॥

॥ सर्वे येनोदमूल्यंत, समूलाः क्लेशपादपाः ॥ मूर्ध्ना यस्मै नमस्यंति, सुरासुरनरेश्वराः ॥ २ ॥ नावार्थः–(येन के०) जे नगवंतें (समूलक्लेशपादपाः के०.) जे राग द्वेष मोहरूप जे वृक्ष ते समूल उन्मूलन कस्या, अने जे नगवानने देव, दैत्य अने नरेश्वर मस्तकें करी नमस्कार करे ले ॥ २ ॥

॥ प्रावर्त्तंत यतो विद्याः, पुरुषार्थप्रसाधिकाः ॥ यस्य ज्ञानं नवद्भावि, नूतनावाऽवनासकृत् ॥३॥ नावार्थः–(यतः के०) जे नगवानथी चौदपूर्वरूप मुख्यवृत्तियें मोक्षने साधन करनारी एटले मोक्ष साधनशील एवी विद्याउ उत्पन्न थइयो. अने जे नगवंतनुं ज्ञान, वर्तमान कालना, तथा आगल थनारा अने पूर्वें थइ गयेला जे पदार्थो तेउने प्रकाश करनारुं ले ॥ ३ ॥

॥ यस्मिन् विज्ञानमानंदं, ब्रह्म चैकात्मतां गतम् ॥ स श्रद्धेयः स च ध्येयः, प्रपद्ये शरणं च तम् ॥४॥ नावार्थः–अने जे नगवंतने विषे विशिष्ट ज्ञान अने बीजुं आनंदकारक जे परब्रह्म स्वरूप, ते एकरूपताने पामेलुं ले. ते नगवान् पंमितोयें श्रद्धा करवा योग्य ले. अने तेज ध्यान करवा योग्य ले. ए माटें हुं तेमनाज शरणनो अंगीकार करुं छुं ॥ ४ ॥

॥ तेन स्यां नाथवां स्तस्मै, स्पृहयेयं समाहितः ॥ ततः कृतार्थोनूयासं, नवेयं तस्य किंकरः ॥ ५ ॥ नावार्थः–हुं, ते परमेश्वरज (नाथवान् के०) जेनें माथे धणी ले एवो थाउं ? अने समाधिप्रत्यें प्राप्त थयो थको ते न

गवंतनी हुं स्पृहा एटले इच्छा करुं? अने ते भगवंतथीज हुं कृतार्थ था उं? अने तेनो किंकर पण थाउं? ॥ ५ ॥

॥ तत्र स्तोत्रेण कुर्यां च,पवित्रां स्वां सरस्वतीम् ॥ इदं हि भवकांतारे, जन्मिनां जन्मनः फलम् ॥६॥ . भावार्थः—अने हुं ते भगवंतने विषे स्तवनें करीने मारी पोतानी वाणीने पवित्र करुं. कारण के भगवाननुं स्तवन करवुं एज भवाटवीने विषे प्राणीना जन्मनुं फल छे ॥ ६ ॥

॥ क्वाहं पशोरपि पशु,र्वीतरागस्तवः क्व च ॥ उत्तितीर्षुररण्यानीं, पद्भ्यां पंगुरिवास्म्यतः ॥७॥ भावार्थः—परंतु पशु करतां पण (पशुः के०) अज्ञानी एवो हुं क्यां!! अने श्रीवीतरागनी स्तुति क्यां!!! एटले वीतरागनी स्तुति, मने अत्यंत दुर्घट छे, वली ए माटे पांगलां जेवो हुं छुं. पांगलो जेम पोताना चरणें करी माहा अरण्यने उल्लंघन करवानी इच्छा करे, तेम हुं भगवाननी स्तुति करवानी इच्छा करनारो छुं ॥ ७ ॥

॥ तथापि श्रद्धामुग्धोऽहं,नोपालंभ्यःस्खलन्नपि ॥ विशृंखलापि वाग्वृत्तिः, श्रद्दधानस्य शोभते ॥८॥ भावार्थः—तथापि पंमितपुरुषोयें, स्तुतिमध्यें विपर्यास पामनारा मने आ श्रद्धायें करीने भोलो छे, पंमिताभिमानी नथी,एम जाणी दोषास्पद गणवो नही. अने एवुं पण छे,के श्रद्धा धारण करनारा पंमितमानी पुरुषनी पूर्वापर संबंध रहित एवी पण वाग्वृत्ति शोभा पामे छे ॥ ८ ॥

॥ श्रीहेमचंद्रप्रभवात्, वीतरागस्तवादितः॥कुमारपालभूपालः, प्राप्नोतु फलमीप्सितम् ॥९॥ भावार्थः—हवे फलश्रुति कहे छे.—श्रीहेमचंद्रथी जेनी उत्पत्ति छे एवा आ वीतराग स्तवें करीने कुमारपाल नामा राजा, इच्छित फलने पामो ॥ ९ ॥ इति श्रीवीतरागस्तवे प्रस्तावनानामक प्रथमप्रकाशः समाप्तः ॥१॥

॥ अथ सहजातिशयनामा द्वितीय प्रकाशः ॥

॥ प्रियंगुस्फटिकस्वर्ण, पद्मरागांजनप्रभः ॥ प्रभो तवाधौतशुचिः, कायः कमिव नाक्षिपेत् ॥१॥ भावार्थः—हे प्रभो! (प्रियंगु के०) प्रियंगु नामक नीलवर्णवल्ली, स्फटिकरत्न, सुवर्ण, आरक्त एवुं पद्मरागरत्न, अने काजल, एउना सरखी छे कांति जेनी एवो अने अप्रक्षालित छतां पण पवित्र, एवो तमारो देह, कया पुरुषना मनने आश्चर्य करनार नथी? अर्थात् सर्व कोइ पण तमने अवलोकन करी आश्चर्य पामे छे ॥ १ ॥

॥ मंदारदामवन्नित्य,मवासितसुगंधिनि ॥ तवांगे भृंगतां यांति, नेत्राणि

सुरयोषिताम् ॥ २ ॥ जावार्थः—हे प्रजो ! निरंतर कल्पवृक्षना पुष्पनी मालानी पेठें कर्पूरादिकोना लेपन विना पण सुगंधयुक्त एवा तमारा शरीरने विषे देवांगनाउनां नेत्रो चमरताने पामे छे॰॥ २ ॥

॥ दिव्यामृतरसास्वाद, पोषप्रतिहता इव ॥ समाविशंति ते नाथ, नांगे रोगोरगव्रजाः ॥३॥ जावार्थः—हे नाथ ! तमारा शरीरने विषे, रोगरूप जे सर्पोना समूहो, ते प्रवेश करता नथी. कारण के ते जाणे दिव्य एवा अमृतरसना आस्वादने करीने प्राप्त थयेली जे पुष्टता तेणें करी प्रतिहत करेलाज होय नहिं ! माटें प्रवेश करता नथी. ए उत्प्रेक्षा करी छे ॥ ३ ॥

॥ त्वय्यादर्शतलालीन, प्रतिमाप्रतिरूपके ॥ क्षरत्स्वेदविलीनत्व, कथापि वपुषः कुतः ॥ ४ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! दर्पणने विषे प्रतिबिंबित जे मूर्त्ति तेना सरखा जे तमें, ते तमारे विषे देहथी गलित थनारा स्वेद एटले परसेवानां विलीन पणानी वार्त्ता पण क्यांथी प्राप्त थशे ? नहीज थाय. अर्थात् तमारे तो ते स्वेदादिक कांही नथी माटे ते वात्त पिण केम घटे ? ॥४॥

॥ न केवलं रागमुक्तं,वीतराग मनस्तव ॥ वपुःस्थितं रक्तमपि,क्षीरधारा सहोदरम् ॥ ५ ॥ जावार्थः—हे वीतराग ! केवल तमारुं मनज (रागमुक्तं के॰) विषयोनी रागतायें रहित छे, एवुं नथी. परंतु तमारा शरीरने विषे रहेनारुं रक्त एटले रुधिर पण (रागमुक्तं के॰) आरक्ततायें रहित होतुं थकुं दूधनी धारा सरखुं शुच्र छे. कारण के तीर्थंकरनुं रक्त पण दूध सरखुं उज्ज्वल होय छे. एम प्रसिद्धज छे ॥ ५ ॥

॥ जगद्विलक्षणं किं वा, तवान्यद्वक्तुमीश्महे ॥ यदविस्रमबीजत्सं, शुच्रं मांसमपि प्रजो ॥६॥ जावार्थः—हे प्रजो ! वली तमारा सर्व जगत्थी विलक्षण एवा अन्यस्वरूपने वर्णन करवा माटें अमें शुं समर्थ थनारा छैयें ? ना कदापि थनार नथी. कारण के हे प्रजो ! तमारुं मांस पण डुर्गंधरहित अने अबीजत्स एवुं अने शुच्र उज्ज्वलवर्णयुक्त देदीप्यमान छे ॥ ६ ॥

॥ जलस्थलसमुद्भूताः, संत्यज्य सुमनःस्रजः ॥ तव निःश्वाससौरज्य,मनुयांति मधुव्रताः ॥ ७ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! जलने विषे अने स्थलने विषे उत्पन्न थयेली उत्तम पुष्पोनी मालाने पण समस्त पणायें तजीने तमारा श्वासोश्वास संबंधि सुगंध प्रत्यें सर्व जमरो, अनुगमन करे छे. एवो तमारो सुगंधमय श्वास छे ॥ ७ ॥

॥ लोकोत्तरचमत्कार, करी तव जवस्थितिः ॥ यतोनाहारनीहारौ, गोचरौ चर्म्मचक्षुषाम् ॥८॥ जावार्थः—हे नाथ! जे कारण माटें तमारो आहार अने नीहार,ते चर्मचक्षु वाळा मनुष्य तिर्यंचने दृष्टिविषय थता नथी. ते कारण माटें तमारा जन्मनी स्थिति (लोकोत्तरचमत्कारकरी के०) सर्व लोकोने अत्यंत विस्मय करनारी ने ॥८॥ इति सहजातिशयद्वितीयप्रकाशः॥२॥

॥ अथ कर्मक्षयातिशय नामा तृतीय प्रकाशः ॥

॥ सर्वाजिमुख्यतोनाथ,तीर्थकृन्नामकर्मजात् ॥ सर्वथा सन्मुखीनस्त्व, मानंदयसि यत्प्रजाः ॥ १ ॥ जावार्थः—हे नाथ! जे कारण माटें सर्व प्रकारें सन्मुख एवा तमो, तीर्थंकर नाम कर्मथी उत्पन्न थयेला (सर्वाजिमुख्यतो के०) सर्वाजिमुखपणाथकी एटले चार मुखपणाथकी सजाने विषे सर्व लोकोने आनंद पमाडो गे. अर्थात् तमोने तीर्थंकर नाम रूप कर्मे करीने सर्वाजिमुख्य एटले चतुर्मुखपणुं प्राप्त थयुं ने. ए माटें सर्व प्रजाने सन्मुख एवा तमो सर्व प्रकारें करीने आनंद उत्पन्न करो गे ॥ १ ॥

॥ यद्योजनप्रमाणेपि, धर्मदेशनसद्मनि ॥ संमांति कोटिशस्तिर्यग्,नृदेवाः सपरिञ्चदाः ॥ २ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! जे तमारा योजन प्रमाण एवा धर्मोपदेशना समवसरणने विषे परिवार सहित कोटि प्रमाण एवा (तिर्यग्नृदेवाः के०) तिर्यंच, मनुष्य अने देवो ते सुखें करीने समाय ने ॥ २ ॥

॥तेषामेव स्वस्वजाषा,परिणाममनोहरम् ॥ अप्येकरूपं वचनं, यत्ते धर्माऽवबोधकृत् ॥३॥ जावार्थः—हे नाथ! तमारुं धर्मना अवबोधने करनारुं एक सरखुं एवुं पण जे वचन, ते तिर्यग् मनुष्य अने देवादिकोने पोतपोतानी जाषायें परिणाम पामीने मनोहर लागे ने. अर्थात् तमारुं वचन सर्व कोइ पोतपोतानी जाषामां समजे ने माटें सर्वने बोध रूप थाय ने ॥ ३ ॥

॥ साग्रेपि योजनशते, पूर्वोत्पन्नागदांबुदाः ॥ यदंजसा विलीयंते, त्वद्विहारानिलोर्मिजिः ॥४॥ जावार्थः—हे नाथ! जे कारण माटें तमारा विहार रूप वायुना तरंगें करी एकसो पच्चीश योजन पर्यंत, पूर्वें उत्पन्न थयेला जे रोगरूप मेघ, ते वेगें करीने विदीर्ण थाय ने. अर्थात् वायुयें करी जेम मेघ नाश पामे ने, ते प्रमाणें तमारा विहारें करीने आसपास सवासो योजन पर्यंतवसनारा लोकोना रोग नाश पामे ने ॥ ४ ॥

॥ नाविर्भवंति यद्भूमौ, मूषकाः शलभाः शुकाः ॥ क्षणेन क्षितिपक्षिप्ता, अनीतय इवेतयः ॥ ५ ॥ भावार्थः—हे नाथ! तमाराथी पृथ्वीनेविषे उंदर, (शलभाः के०) टीड, अने शुक इत्यादिक (ईतयः के०) उपसर्गो ते, राजायें क्षणमात्रमां निराकरण करेला अन्यायो जेम प्रगटज थता नथी तेम तमारा विहारथी उंदरादिक प्रगटज थता नथी ॥ ५ ॥

॥ स्त्रीक्षेत्रपद्रादिभवो, यद्वैराग्निः प्रशाम्यति ॥ त्वत्कृपापुष्करावर्त्त, वर्षादिव भुवस्तले ॥६॥ भावार्थः—हे नाथ! तमाराथी आ भूतलनेविषे स्त्री, क्षेत्र, ग्राम इत्यादिकथी उत्पन्न थयेलो वैररूप अग्नि, ते उपशांतिने पामे छे. ते जाणें तमारी कृपारूप मेघनी वृष्टियें करीनेज ते वैररूप अग्नि शांत थतो होय नहिं! एम भासे छे. ए उत्प्रेक्षा जाणवी ॥ ६ ॥

॥ त्वत्प्रभावे भुवि भ्राम्य, त्यशिवोछेदडिंडिमे ॥ संभवंति न यन्नाथ, मारयो भुवि भारयः ॥७॥ भावार्थः—हे नाथ! जे कारणमाटे पृथ्वीतलनेविषे अकल्याणने उछेदकारि एवुं पटहवाद्यरूप तमारुं पराक्रम, स्फुरण पामे छते सर्व जगतने शत्रुरूप एवा माहामारीनामक रोगो पण उत्पन्न थता नथी ॥७॥

॥ कामवर्षिणि लोकानां, त्वयि विश्वैकवत्सले ॥ अतिवृष्टिरवृष्टिर्वा, भवे यन्नोपतापकृत् ॥ ८ ॥ भावार्थः—हे नाथ! जे कारणमाटें सर्वजगतने वत्सल अने वांछितवस्तुनी वृष्टि करनार एवा आप छते अतिवृष्टि अने अनावृष्टि पण सवाशो योजनमां लोकोने उपताप करनारी थती नथी ॥८॥

॥ स्वराष्ट्रपरराष्ट्रेभ्यो, यत्क्षुद्रोपद्रवा द्रुतं ॥ विद्रवंति त्वत्प्रभावा, त्सिंहनादादिव द्विपाः ॥९॥ भावार्थः—हे प्रभो! जे स्वचक्र अने परचक्रथी उत्पन्न थनारा क्षुद्रोपद्रव, ते तमारा सामर्थ्यें करीने सिंहनादथी हाथीयो जेम जलदी पलायन करे छे तेम ते उपद्रवो पण नाश पामे छे ॥ ९ ॥

॥ यत् क्षीयते च दुर्भिक्षं, क्षितौ विहरति त्वयि ॥ सर्वाद्भुतप्रभावाढ्ये, जंगमे कल्पपादपे ॥१०॥ भावार्थः—हे नाथ! जे कारणमाटें सर्वेने आश्चर्यकारक एवा प्रभावें करीने प्रकृष्ट अने केवल जंगम एटले चलित कल्पवृक्ष एवा तमें पृथ्वीतलने विषे विहार करे छते (दुर्भिक्षं के०) जे दुष्काल, ते पोतेंज नाश पामे छे ॥ १० ॥

॥ यन्मूर्ध्नः पश्चिमे भागे, जितमार्तंडमंडलम् ॥ माभूद्वपुर्दुरालोक, मितीवोत्पिंडितं महः ॥११॥ भावार्थः—हे नाथ! तमारा मस्तकना पश्चिमना

गनेविषे जेणे सूर्यनुं मंमल जीत्युं ले एवुं जे (उत्पिंमितं के०) एक ठेकाणें एकतुं थयुं नामंमलनुं तेज ले ते जाणे तमारुं शरीर, लोकने दुःखें करी अवलोकन करवाने योग्य न थइ शके एवुं ले, तो पण सुखें करीज लोकोने जोवा योग्य थाय. ए माटेंज होय नहिं शुं? एं उत्प्रेक्षा जाणवी ॥ ११ ॥

॥ स एष योगसाम्राज्य, महिमा विश्वविश्रुतः ॥ कर्मक्षयोत्थो नगवन्, कस्य नाश्चर्यकारणम् ॥१२॥ नावार्थः—हे नगवन्! सर्वजगत्मध्ये प्रख्यात अने कर्मक्षयथी उत्पन्न थयेला एवा आं तमारा योगसाम्राज्यनो महिमा, ते कोने आश्चर्यनो कारण नथी? सर्वेने पण आश्चर्यनो कारण ले ॥ १२ ॥

॥ अनंतकालप्रवित, मनंतमपि सर्वथा ॥ त्वत्तोनाऽन्यः कर्मकक्ष,मुन्मूलयति मूलतः ॥१३॥ नावार्थः—हे नाथ! तमाराथी बीजो कयो पुरुष, अनंत कालें करी निविडीनूत थयेला अने सर्वप्रकारें करी अंत रहित एवा कर्मवनने समूल उन्मूलन करशे? अर्थात् कोइ पण करनार नथी ॥ १३ ॥

॥ तथोपाये प्रवृत्तस्त्वं, क्रियासमनिहारतः ॥ यथानिष्ठन्नुपेयस्य, परां श्रियमशिश्रियः ॥१४॥ नावार्थः—हे नाथ! तमें क्रियासमनिहारें करीने एटले क्रियाना अत्यादरें करीने मोक्षोपायनेविषे तेवी रीतें प्रवृत्त थया लो, के जेवी रीतें तमें मोक्षनी उत्तमलक्ष्मीने न इच्छा करनारा होवा ठतां, पण मोक्षलक्ष्मीयें आश्रय करेलां लो एटले मोक्षलक्ष्मीना निरनिलाषी एवा तमें लो तो पण तमारो आश्रय मोक्षलक्ष्मीज स्वतः करे ले ॥ १४ ॥

॥ मैत्रीपवित्रपात्राय, मुदितामोदशालिने ॥ कृपोपेक्षाप्रतीक्ष्याय, तुन्यं योगात्मने नमः ॥ १५ ॥ नावार्थः—ए माटें (मैत्री के०) परहित चिंता तेनुं पवित्र एवुं पात्र अने परसुखतुष्टि अने गुणना पक्षपातें करी शोनायमान, तथा कारुण्य अने मध्यस्थपणुं, एणें करी पूज्य अने योगरूप एवा जे तमें ते तमने नमस्कार हो ॥१५॥ इति कर्मक्षयातिशयनामातृतीयप्रकाशः३

॥ अथ सुरकृतातिशयनामा चतुर्थ प्रकाशः ॥

॥ मिथ्यादृशां युगांतार्कः, सुदृशाममृतांजनम् ॥ तिलकं तीर्थकृल्लक्ष्म्याः, पुरश्चक्रं तवैधते ॥ १ ॥ नावार्थः—हे नाथ! मिथ्यादृष्टिने प्रलयकालना सूर्य सरखुं तापकारक अने सम्यग् दृष्टिने अमृतांजन सरखुं तथा तीर्थंकरनी लक्ष्मीना तिलक सरखुं एवुं तमारा अग्रनागने विषे धर्मचक्र शोने ले १

॥ एकोयमेव जगति, स्वामीत्याख्यातुमुच्छ्रिता ॥ उच्चैरिंद्रध्वजव्याजात्, तर्जनी जृंनविद्विषा ॥ २ ॥ जावार्थः—हे नाथ! (जृंनविद्विषा के०) इंद्र जे तेणें अतिउच्च एवा इंद्रध्वजना मिषें करीने (तर्जनी के०) पोताना अंगुठानी पासेंनी आंगली आंणे ऊर्ध्व करेली होय नहिं? एटले इंद्रेंज जाणें सर्व जगतनेविषे आ एकज स्वामी बे, एवुं कथन करवा माटेंज पोतानी आंगली ऊर्ध्व करेली होय नहिं? एम ते इंद्रध्वज जासे बे. ए उत्प्रेक्षा बे ॥२॥

॥ यत्र पादौ पदं धत्त, स्तव तत्र सुराऽसुराः ॥ किरंति पंकजव्याजा, च्छ्रियं पंकजवासिनीम् ॥३॥ जावार्थः—हे नाथ! तमारां चरण जे स्थानने विषे न्यास धरे बे एटले स्थापन थाय बे, ते स्थानें सुर अने असुर, कमलने मिषें करीने कमलवासिनी एवी लक्ष्मीनेंज विस्तार करे बे .अर्थात् तमारा पगतलें सुवर्णमय नवकमलनी रचैना करे बे ॥ ३ ॥

॥ दानशीलतपोजाव, नेदाद्धर्म्मं चतुर्विधम् ॥ मन्ये युगपदाख्यातुं, चतुर्वक्रोऽजवद्भवान् ॥ ४ ॥ जावार्थः—तमें दान, शील, तप अने जाव ए नेदें करीने चार प्रकारना धर्मने एकठा समकालें कथन करवा माटें चतुर्मुखज थया के शुं? एम हुं मानुं बुं ॥ ४ ॥ ,

॥ त्वयि दोषत्रयात्रातुं, प्रवृत्ते नुवनत्रयीम् ॥ प्राकारत्रितयं चक्रु, स्त्रयोपि त्रिदिवौकसः ॥५॥ जावार्थः—हे नाथ! तमें नुवनत्रयनें राग, द्वेष, मोहरूप दोषत्रयथी रक्षण करवा माटें प्रवृत्त थये बतें नवनपति, ज्योतीषि अने वैमानिक एवा त्रण प्रकारना देवो पण त्रण प्राकारने करता हवा ॥ ५ ॥

॥ अधोमुखाः कंटकाः स्यु, र्धात्र्यां विहरतस्तव ॥ नवेयुः संमुखीनाः किं, तामसास्तिग्मरोचिषः ॥ ६ ॥ जावार्थः—हे नाथ! पृथ्वीने विषे आपें विहार करे बते सर्व कंटक अधोमुख थाय बे. ए विषे दृष्टांत कहे बे के, रात्रिने विषे संचार करनारा जे घूअडादिक जीव ते, जेनो प्रकाश तीक्ष्ण बे एवा सूर्यनी संमुख थाय बे शुं? अर्थात् थता नथी ॥ ६ ॥

॥ केशरोमनखश्मश्रु, तवावस्थितमित्ययम् ॥ बाह्योपि योगमहिमा, नाप्तस्तीर्थंकरैः परैः ॥७॥ जावार्थः—हे नाथ! तमारां मस्तकसंबंधी केश, शरीरसंबंधी रोम; हाथ तथा पगना नख अने (श्मश्रु के०) दाढी मुंब, ए सर्व एकस्थितियें रहे बे. एटले वृद्धि पामतां नथी. एवो आ बाह्य रहेलो तमारो योगमहिमा, ते पण अन्य जे बुद्ध कपिलादिक तीर्थंकर, तेउने प्राप्त थयो नथी ॥७॥

॥ शब्दरूपरसस्पर्शा, गंधाख्याः पंच गोचराः ॥ नजंति प्रातिकूल्यं न, त्वदग्ने तार्किकाइव ॥८॥ नावार्थः—हे नाथ! शब्द,रूप, रस,स्पर्श अने गंधनामक जे पांचविषयो,ते तमारा अग्रनागने विषे प्रतिकूलपणे आचरण करता नथी. ए विषे दृष्टांत कहेछे. (तार्किकाइव के०) पंचतार्किक एटले पंच दर्शन प्रामाणिक,ते जेम तमारी आगल प्रतिकूलपणे आचरण करता नथी? अर्थात् तीर्थंकरनीपासें कुत्सितशब्दरूपादिक अने अन्य दर्शनो प्रतिकूल थाता नथी.

॥ त्वत्पादावृतवः सर्वे,युगपत्पर्युपासते ॥ आकालकृतकंदर्प्प, साहायिकनयादिव ॥ए॥ नावार्थः—हे नाथ! सर्वऋतु एकसाथें अनुकूलपणे तमारा चरणने सेवन करे छे;ते जाणे अनंतकाल पर्यंत करेलुं जे (कंदर्प के०) कामदेवतेनुं साहाय्य,तेना नयें करीनेज सेवन करे छे के शुं? अर्थात् छए ऋतुउ एम जाणे छे के अमें घणा दिवस कामदेवनुं सख्य कर्युं,तेनुं माहापाप लाग्युं ते पाप केम मटशे? माटे कामदेवनो जय करनार श्रीवीतरागने शरणे जइयें! एम मानी ते आपवीतरागने शरणेज जाणे आवेलीयो होय नहि? ए उत्प्रेक्षा जाणवी॥

॥सुगंध्युदकवर्षेण,दिव्यपुष्पोत्करेण च ॥ नाविल्वत्पादसंस्पर्शां, पूजयंति नुवं सुराः ॥१०॥ नावार्थः—हे नाथ! सर्वदेवो,सुगंध युक्त एवा उदकनी वृष्टियें करी अने दिव्यपुष्पोना समुदायें करी समवसरण संबंधी नूमिने पूजे छे; ते जाणे आगल तमारो पादस्पर्श थइ ते नूमि पवित्र थनार छे, माटें पूजन करवा लायक छे; एम जाणीनेज पूजन करे छे के शुं? ए उत्प्रेक्षा छे॥

॥जगत्प्रतीक्ष्य त्वां यांति,पक्षिणोपि प्रदक्षिणम् ॥ का गतिर्महतां तेषां, त्वयि ये वामवृत्तयः ॥११॥ नावार्थः—हे जगत्पूज्य! पक्षीयो पण तमनें प्रदक्षिणनावें करी गमन करे छे; एम छतां ते माहांतोनी शी गति थशे? जे माहांतो तमारे विषे वामपार्श्ववृत्ति छे अथवा शब्दछलें करीने प्रतिकूलवृत्ति छे जेनी एवा छे. अर्थात् ते महंत छे तो पण तमारे विषेप्रतिकूलवृत्ति होवाथी तेउनी कया प्रकारनी गति थशे? ते जाणवामां आवतुं नथी ॥ ११ ॥

॥पंचेंड्रियाणां दौःशील्यं,क्व नवेद्भवदंतिके ॥ एकेंड्रियोपि यन्मुंच,त्यनिलः प्रतिकूलताम् ॥१२॥ नावार्थः—हे नाथ! तमारा समीपनागने विषे पंचेंड्रियें युक्त एवा पुरुषनुं ङःशीलपणुं क्यांथी थशे? अर्थात् क्यांहि पण थनारुं नथी. कारण के एकेंड्रिय एवो वायु पण,तमारी प्रतिकूलतानो त्याग करे छे. एटले वायु पण पृष्ठानुयायीज थाय छे. अर्थात् एकेंड्रिय एवो अज्ञानी

वायु छे, तें पण ज्यारें तमारेविषे प्रतिकूलता छोडे छे, तो ज्ञानाधिक्यवान् पंचेंद्रिय जीव शुं प्रतिकूल थाय? ना थायज नहिं ॥१२॥

॥ मूर्ध्ना नमंति तरव, स्त्वन्माहात्म्यचमत्कृताः॥ तत्कृतार्थं शिरस्तेषां, व्यर्थं मिथ्यादृशां पुनः ॥१३॥ भावार्थः—हे नाथ! तमारा माहात्म्यें करीने चमत्कारनें पामेला एवा वृक्षो,पोताना मस्तकें करीने तमने नमे छे. ते कारणमाटें ते वृक्षोनुं मस्तक (कृतार्थं के०) सफल जाणवुं. परंतु मिथ्या दृष्टियोनुं तमने न नमनारुं जे मस्तक छे, ते निष्फल जाणवुं ॥ १३ ॥

॥ जघन्यतः कोटिसंख्या, स्त्वां सेवंते सुराऽसुराः ॥ भोग्यसंभारलभ्यार्थे, न मंदा अप्युदासते ॥ १४ ॥ भावार्थः—हे नाथ! सामान्यथकी कोटिसंख्या प्रमाण सुर अने असुरो,तमने सेवे छे. कारण के भोग्यसमुदायें करी प्राप्त थवाने योग्य जे अर्थ ते विषे (मंदाअपि के०) आलसु पण उदासी न थता नथी ॥ १४ ॥ इति सुरकृतातिशय नामक चतुर्थः प्रकाशः ॥४॥

॥ अथ प्रातिहार्यनामा पंचम प्रकाशः ॥

॥ गायन्निवालिविरुतै, र्नृत्यन्निव चलैर्दलैः ॥ त्वद्गुणैरिव रक्तोसौ, मोदते चैत्यपादपः ॥१॥ भावार्थः—हे नाथ! आ समवसरणने विषे देवोयें करेलो जे चैत्यनामक अशोकवृक्ष, ते आनंद पामे छे. केवी रीतें आनंद पामे छे? तो के भ्रमरोना गुंजारवें करीनें जाणे गीत गान करतोज होय नहि! अने चंचल एवां पत्रोयें करीने नृत्य करतोज जाणे होय नहि! अने तमारा गुणें करीने अनुरक्त थयेलोज जाणे होय नहि! एम आनंद पामेलो देखाय छे ॥ १ ॥

॥ आयोजनं सुमनसो,ऽधस्तान्निक्षिप्तबंधनाः ॥ जानुदघ्नीः सुमनसो, देशनोर्व्यां किरंति ते ॥ २ ॥ भावार्थः—हे नाथ! (सुमनसः के०) देवताओ, ते तमारी देशनाभूमिनें विषे एक योजन पर्यंत, जेओनां दींटां अधो भागें करेलां छे एवां पुष्पोने जानुप्रमाण, विस्तारे छे ॥ २ ॥

॥ मालवकौशिकीमुख्य, ग्रामरागपवित्रितः ॥ तव दिव्योध्वनिः पीतो, हर्षोद्ग्रीवैर्मृगैरपि ॥ ३ ॥ भावार्थः—हे नाथ! मालवकौशिक प्रमुख ग्रामोयें करी मनोहर एवा रागविशेष,तेणें करी पवित्रित एटले पवित्र करेलो अर्थात् प्रशस्त मनोहर जे राग, तेणें उत्तम प्रकारें करी गान करे

नो एवो जे तमारो दिव्य वाणीरूप ध्वनि ते, हर्षे करी जेणें ग्रीवा ऊर्ध्व करेली ले एवा हरिणादि वनचर जीवोयें पण (पीतः के०) पान कस्यो ले. अर्थात् श्रवण कराय ले ॥ ३ ॥

॥ तवेंडुधामधवला, चकास्ति चमरावली ॥ हंसालिरिव वक्राब्ज, परिचर्यापरायणा ॥ ४ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! चंड्कांति सरखी निर्मल एवी चमरावली, तमारा पार्श्वनागने विषे तमारा मुखकमलनी सेवा करवा माटें तत्पर एवी हंसश्रेणीज जाणे होय नहिं ! एवी शोने ले ॥ ४ ॥

॥ मृगेंड्रासनमारूढे, त्वयि तन्वति देशनाम् ॥ श्रोतुं मृगाः समायांति, मृगेंड्मिव सेवितुम् ॥ ५ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! सिंहासनने विषे आरूढ एवा तमें, धर्मदेशनाने विस्तार करवा लागे उते, (मृगाः के०) सर्व वनचर जीवो ते धर्मदेशनानें श्रवण करवा माटें आवे ले, ते जाणे मृगादि वनचरजीवो वनमध्यें सिंहने सेवन करवा माटेंज प्राप्त थया होयं नहिं ! एम नासे ले. ए उत्प्रेक्षा ले ॥ ५ ॥

॥ नासां चयैः परिवृतो, ज्योत्स्नानिरिव चंड्मः ॥ चकोराणामिव दृशां, ददासि परमां मुदम् ॥ ६ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! कांतिना समुदायें करी आसपास सेवन करेला एवा तमें चंड्रिकायें परिवृत एवो चंड् जेम चकोरपक्षीयोनी दृष्टिने परमानंद उत्पन्न करे ले, तेम तमें पण देशनाने श्रवण करनारा लोकोनी दृष्टिने परम आनंद उत्पन्न करो गे ॥ ६ ॥

॥ डुंडुनिर्विश्वविश्वेश, पुरोव्योम्नि प्रतिध्वनन् ॥ जगत्याप्तेषु ते प्राज्यं, साम्राज्यमिव शंसति ॥ ७ ॥ नावार्थः—हे विश्वविश्वेश ! तमारा अग्रनागमां आकाशने विषे नादने उत्पन्न करनारो जे डुंडुनि, ते सर्व जगत्मध्यें नीरागी पुरुषोने विषे पण तमारा उत्कृष्ट एवा साम्राज्यने जाणे कथन करतो होय नहिं ! एम नासे ले. ए पण उत्प्रेक्षा ले ॥ ७ ॥

॥ तवोर्ध्वमूर्ध्वं पुण्यर्द्धि, क्रमसब्रह्मचारिणी ॥ उत्रत्रयी त्रिनुवन, प्रनुत्वप्रौढिशंसिनी ॥ ८ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमारा मस्तकने विषे एक उपर बीजुं, तेनी उपर त्रीजुं, एवा क्रमें करी रहेनारी जे उत्रत्रयी ले, ते पुण्यलक्ष्मीयें करी उत्तरोत्तर वृद्धि पामनारो जे अनुक्रम, तेनी (सब्रह्मचारिणी के०) सरखी होती थकी तमारुं जे त्रिनुवननुं प्रनुत्व, तेनी प्रौढताने कथन करती उती रहे ले ॥ ८ ॥

॥ एतां चमत्कारकरीं, प्रातिहार्यश्रियं तव ॥ चित्रीयंते न के दृष्ट्वा, नाथ मिथ्यादृशोपि हि ॥ ९ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! आ पूर्वोक्त, तमारीं चैत्यवृक्षादिक चमत्कारकारक एवी अष्ट, महाप्रातिहार्यनी लक्ष्मीने अवलोकन करी मिथ्यादृष्टि एवा पण कया पुरुषो आश्चर्य करशे नहि ? अर्थात् सर्वे पण आश्चर्य पामशे ॥ इति अष्ट प्रातिहार्यनामक पंचम प्रकाशः समाप्तः॥ ५ ॥

॥ अथ प्रतिपक्षनिरासनामा षष्ठ प्रकाशः ॥

॥ लावण्यपुण्यवपुषि, त्वयि नेत्रामृतांजने ॥ माध्यस्थ्यमपि दौःस्थ्याय, किं पुनर्द्वेषविप्लवः ॥ १ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! लावण्यें करी जेनुं शरीर पवित्र छे, अने नेत्रोने अमृतांजन एटले सिद्धांजन सरखा एवा जे तमें ते तमारे विषे मध्यस्थ भाव जे छे, ते पण दुःखने माटे थाय छे, तो पछी द्वेषें करीज तमने संकट करवो, ते दुःखरूप थाय, एमां तो शुंज कहेवुं ? ॥ १ ॥

॥ तवापि प्रतिपक्षोस्ति, सोपि कोपादिविप्लवः ॥ अनया किं वदंत्यापि, किं जीवंति विवेकिनः ॥ २ ॥ भावार्थः—केटलाएक एम कहे छे के, हे नाथ ! तमारे पण शत्रु छे अने ते कोपादिकें करीने विडंबित छे, एटले महा भयंकर छे. एवी वात सांभलीने, विचारनिपुण एवा जे पुरुषो, तेउ जीवे शुं ? अर्थात् नज जीवे. केम के विवेकी जीवो छे ते तमारे माथे शत्रु छे, एम सांभलतांज प्राणनो पण त्याग करशे पण तमारे शत्रु छे एवुं ते कदापि माननार नथी ॥ २ ॥

॥ विपक्षस्ते विरक्तश्चेत्, स त्वमेवाथ रागवान् ॥ न विपक्षोविपक्षः किं, खद्योतोद्युतिमालिनः ॥ ३ ॥ भावार्थः— हे नाथ ! तमारे शत्रुने मित्र बेहुए नथी कारण के जो तमारो शत्रु नीरागी छे एम कहीयें तो तमारा शिवाय बीजो कोइ नीरागी नथी. अने हवे तमारो शत्रु जो सरागी छे एम कहीयें तो ते शत्रु नथी. ए उपर दृष्टांत कहे छे. खद्योत नामक कीट छे ते सूर्यनो शत्रु होय शुं ? अर्थात् नथी. सूर्यना तेज आगल तेनुं हीनपणुं छे. एवुं अहीं पण जाणवुं ॥ ३ ॥

॥ स्पृहयंति त्वद्योगाय, यत्तेपि लवसप्तमाः ॥ योगमुद्रादरिद्राणां, परेषां तत्कथैव का ॥ ४ ॥ भावार्थः— हे नाथ ! जे कारण माटें अनुत्तर विमानवासी एवा देवो पण तमारा योगने माटें इछा करे छे, तो प्रसन्नमुखत्वादि जे योगमुद्रा तेणे करी रहित एवा अन्य हरिहरादिक जे छे, तेउने

योगनी वार्त्ता पण क्यांथीज प्राप्त थशे? अर्थात् प्रसन्नमुखत्वादि योगनी मुद्रा पण ते हरिहरादिकोने नथी तो ते योग तो तेने क्यांथीज होय? ॥४॥

॥ त्वां प्रपद्यामहे नाथ, त्वां स्तुमस्त्वामुपास्महे ॥ त्वत्तोहि न परस्त्राता, किं ब्रूमः किमु कुर्महे ॥ ५ ॥ भावार्थः—हे नाथ! अमें तो तमें जे नाथ, तेनोज अंगीकार करीयें छैयें. अने तमारी स्तुति करीयें छैयें. तथा तमारी उपासना करीयें छैयें. कारण के, तमाराथी बीजो कोइ रक्षण करनारो नथी, ए माटें अमें बीजुं शुं बोलीयें! अने शुं करीयें! ॥ ५ ॥

॥ स्वयं मलीमसाचारैः,प्रतारणपरैः परैः॥ वंच्यते जगदप्येतत्, कस्य फूत्कुर्महे पुरः ॥ ६ ॥ भावार्थः—हे नाथ! स्वतः जेनो अति मलीन आचार छे, अने बीजाने फसाववामां तत्पर एवा अन्य हरिहरादिकोयें आ सर्व जगत् पण फसाव्युं छे. ए अमें कोनी आगल पोकार करीयें? ॥६॥

॥ नित्यमुक्तान् जगज्जन्म, स्थेमक्षयकृतोद्यमान् ॥ वंध्यास्तनंधयप्रायान्, कोदेवांश्चेतनः श्रयेत् ॥७॥ भावार्थः—हे नाथ! कयो सचेतन पुरुष एवी रीतना हरिहर देवोनो आश्रय करे? अर्थात् कोइ पण जीव करेज नहिं. हवे ते देव कहेवा छे? तो के निरंतर मुक्तिपदने प्राप्त थयेला, अने वली जगत्नी उत्पत्ति,स्थिति अने संहारने विषे उद्युक्त, ए कारण माटे ते वंध्यापुत्र सरखा छे,. एटले जे नित्यमुक्त सिद्ध छतां वली जगतनी उत्पत्त्यादिक करे छे, माटे ते वंध्यापुत्र सरखाज जाणवा ॥७॥

॥ कृतार्था जठरोपस्थ, दुःस्थितैरपि देवतैः ॥ भवादृशान्निन्हुवते, हाहा देवास्तिकाः परे ॥ ८ ॥ भावार्थः— हे देव! बीजा केटलाएक आस्तिक एटले तीर्थिक (हाहाइतिखेदे के०) अरे शुं कहेवुं ? अने केवा खेदनी वात छे? के तमारा सरखा देवोने निंदे छे!!! हवे ए आस्तिकजनो केवा छे? तो के जठर (पेट) अने उपस्थ (शिश्न) एणें करी दुःखित एवा पण देवोयेंज कृतकार्य थया एम माननारा छे ॥ ८ ॥

॥ खपुष्पप्रायमुत्प्रेक्ष्य, किंचित्मानं प्रकल्प्य च ॥ संमांति देहगेहे वा, न गेहे नर्दिनः परे ॥ ए ॥ भावार्थः—बीजा केटलाएक तीर्थिक, पोताना घरमध्येंज शूर थका कांइक हरिहरादिकोयें कहेलां आकाशपुष्प सरखां न होनार अने अविद्यमान एवा खोटां साधननी संभावना करी अने वली बीजा अनुमाननी पण कल्पना करीने पोतानोज मत खरो छे! एवा

गर्वे करीने देह, अने घर, एटले विषे पण समाता नथी. अर्थात् अति गर्विष्ट थाय छे ॥ ए ॥

॥ कामरागस्नेहरागा, वीषत्करनिवारणौ ॥ दृष्टिरागस्तु पापीयान्, दुरुछेदः सतामपि ॥ १० ॥ भावार्थः–हे नाथ ! (कामराग के०) स्त्रीराग अने (स्नेहराग के०) पुत्रादिक राग, ते सुकर छे निवारण जेनुं एवा छे, पण (दृष्टिरागः के०) पोताना मतनो अनुराग ते महापापी छे, ए माटे ते राग, सज्जनोनें पण दुःखें करीने छेदवाने योग्य छे ॥ १० ॥

॥ प्रसन्नमास्यं मध्यस्थे, दृशौ लोकपृणं वचः ॥ इति प्रीतिपदे बाढं, मूढास्त्वय्यप्युदासते ॥ ११ ॥ भावार्थः–हे नाथ ! तमारुं प्रसन्न एवुं मुख, मध्यस्थपणुं धारण करनारी दृष्टि, अने लोकोने तृप्त करनारुं एवुं वचन, एवा प्रकारें करीने अत्यंत प्रीतिना स्थानकरूप तमारे विषे पण मूढ पुरुषो उदासीन थाय छे, आ केवडुं महोटुं आश्चर्य छे ? ॥ ११ ॥

॥ तिष्ठेद्वायुर्द्रवेदद्रि, र्ज्वलेज्जलमपि क्वचित् ॥ तथापि ग्रस्तोरागाद्यै, र्नाप्तोभवितुमर्हति ॥ १२ ॥ भावार्थः–हे नाथ ! कदाचित् वायु पण स्थिर थाय, तेमज पर्वत पण द्रवरूप थाय, अने जल पण प्रज्ज्वलित थाय, परंतु रागादिकोयें ग्रस्त एवो पुरुष (आप्त के०) नीराग थवा योग्य होतो नथी ॥ १२ ॥ इति प्रतिपक्षनीरासनामाः षष्ठ प्रकाशः ॥ ६ ॥

॥ अथ जगत्कर्तृनिरासनामा सप्तमप्रकाशः ॥

॥ धर्माधर्मौ विना नांगं, विनांगेन मुखं कुतः ॥ मुखाद्विना नवक्तृत्वं, तच्छास्तारः परे कथं ॥ १ ॥ भावार्थः–हे नाथ ! (धर्माधर्मौविना के०) पुण्य पाप विना शरीरज होतुं नथी; कारण के धर्मे करीने सुंदर अने अधर्मे करीने कुत्सित एवुं शरीर थाय छे. अने ए शरीरविना मुख केम उत्पन्न थाय ? अर्थात् नज थाय. अने मुखविना वक्तृत्व एटले वाचकत्व न होय, ते कारणमाटे अन्य जे ईश्वरादिक देव, ते वली बीजाने शिक्षा देनारा केम थशे ? तेउने धर्माधर्मादिकना अभावें करीने मुखादिकनो पण अभावज छे, एटले तेउं उपदेश करवामाटें अशक्यज छे ॥ १ ॥

॥ अदेहस्य जगत्सर्गे,प्रवृत्तिरपि नोचिता ॥ न च प्रयोजनं किंचित्,स्वातंत्र्यान्न पराज्ञया ॥ २ ॥ भावार्थः–हे नाथ ! देहरहित जे पुरुष, तेने

जगत्सृष्टिनें विषे प्रवृत्ति करवी ते पण योग्य नथी, ए मार्टे तेनुं जगत्नें विषे स्वतंत्रपणुं ठे माटे कांइ पण करवानुं प्रयोजन नथी. अने बीजानी आज्ञायें पण तेनी प्रवृत्तिनुं निरुपयोगिपणुंज जाणवुं. अर्थात् बेहु प्रकारनुं प्रयोजन अदेहधारी ईश्वरने होय नहि ॥ २ ॥

॥ क्रीडया चेत्प्रवर्त्तेत, रागवान् स्यात् कुमारवत् ॥ कृपयाथ सृजेत्तर्हि, सुख्येव सकलं सृजेत् ॥ ३ ॥ नावार्थः—हवे जो ते अदेहवान् ईश्वर, जगत्ने विषे क्रिडायें प्रवृत्त थाय तो पठी राजपुत्रादिकनी पेठें आसक्त थाय. अथवा जो ते केवल लोकोनी दयायेंज जगत् सृजवा प्रवृत्त थाय, तो तारें सर्व जगतनें सुखवालुंज उत्पन्न करे ? ॥ ३ ॥

॥ दुःखदौर्गत्यदुर्योनि, जन्मादिक्लेशविह्वलम् ॥ जनं तु सृजतस्तस्या, कृपालोः का कृपालुता ॥ ४ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! दुःख, दुर्गति, दरिद्रपणुं, दुष्टयोनिने विषे जन्म, इत्यादिक क्लेशें करीने व्याकुल एवा लोकने उत्पन्न करनारा अने कृपालु कहेवाता एवा ते अदेह ईश्वरनी दयालुता शुं ठे ? अर्थात् कांइज नथी ॥ ४ ॥

॥ कर्मापेक्षः सचेत्तर्हि, न स्वतंत्रोऽस्मदादिवत् ॥ कर्मजन्ये च वैचित्र्ये, किमनेन शिखंमिना ॥ ५ ॥ नावार्थः—हवे जो ते ईश्वर, कर्मनेविषे (अपेक्षायुक्त के०) जेनुं जेवुं शुन्न किंवा अशुन्न कर्म होय, तेने तेवुं सुख दुःखादिक उत्पन्न करनार ठे, तो ते ईश्वर, अमारी सरखोज स्वतंत्र नथी, तो ते कर्मवश जाणवो. पठी कर्म करीनेज सुखदुःखादि विचित्रपणुं उत्पन्न थाय ठे, एम ठे, तो पठी विश्वकर्तृपणे करी कहेला नपुंसक सरखा ते ईश्वरें करी शुं कर्तव्य ठे ? अर्थात् कांइ कर्त्तव्य नथी ॥ ५ ॥

॥ अथ स्वन्नावतोवृत्ति, रवितर्क्या महेशितुः ॥ परीक्षकाणां तर्ह्येष, परीक्षाक्षेपडिंडिमः ॥६॥ नावार्थः—अथवा महेश्वरनी स्वन्नावें करीनेज (वृत्तिः के०) जगतत्सृष्टिनी प्रवृत्ति विचारवा योग्य नथी. ते विषे शुं हेतु ठे ? एम शंका करियें तो कहेजे ईश्वरनो स्वतंत्रपणानो स्वन्नाव ठे तेज हेतु ठे तो ए स्वन्नावरूप हेतुज, परीक्षा करनाराउनी परीक्षाना आक्षेप माटे डंको जाणवो. एटले कोइपण परीक्षा करशो नहीं, एवो अर्थ सूचवनारो डंको जाणवो. ए नावार्थ ठे ॥ ६ ॥

॥ सर्वन्नावेषु कर्तृत्वं, ज्ञातृत्वं यदि संमतम् ॥ मतं नः संति सर्वज्ञा, मुक्ताः

कायभृतोपि चं ॥ ७ ॥ भावार्थः—हवे जो सर्व पदार्थोनेविषे कर्तृत्व अने ज्ञातृत्व अंगीकार करेलुं होय, तो ते अमोने मान्यज छे. कारण के जेउ सर्वज्ञपुरुष छे, तेउ मुक्तिपदनेविषे रहेनारा अने देहधारी होइने विहार ना करनार पण छे ॥ ७ ॥

॥ सृष्टिवादकुहेवाक, मुन्मुच्येत्यप्रमाणकम् ॥ त्वच्छासने रमंते ते, येषां नाथ प्रसीदसि ॥८॥ भावार्थः—हे नाथ! तमें जे जन उपर प्रसाद करो छो,तेज जन पूर्वोक्त रीतियें प्रत्यक्षादि प्रमाणरहित एवा जगत्ना कर्तृत्वादि वादनो जे कुत्सित अभिलाप तेने तजीने तमाराशासनने विषे प्रीति धारण करे छे ॥ ८ ॥ इति सप्तम प्रकाशः ॥ ७ ॥ श्लोकसंख्या ॥ ७५ ॥

॥ अथैकांतवादनिरासनामाऽष्टमप्रकाशः ॥

॥ सत्त्वस्यैकांतनित्यत्वे, कृतनाशाकृतागमौ ॥ स्यातामेकांतनाशेपि, कृतनाशाकृतागमौ ॥१॥ भावार्थः—अन्यना मतें एकांतवाद अने श्रीजिननामतें स्याद्वाद, ए माटें एकांतवादना निराकरणमाटे कहे छे. (सत्त्वस्य के०) संपूर्ण घटपटादिक वस्तुने एकांतपणायें शाश्वत पणानो अंगीकार करे छते कुंभारादिकें करेला जे घटादिक तेना नाशनो प्रसंग आवे अने नित्यने करणत्वनो अयोग छे, माटे अकृतनी प्राप्ति थाय, अने अकृतनी प्राप्तिनो तो अभाव छे, ए माटे ए वात घटती नथी. ए मलीने आ बे दोषनो संभव छे, माटे एकांतनित्यपक्ष पण बनतो नथी. तेमज सर्व वस्तु स्वरूपनुं अत्यंत क्षणिकत्वपण कृतनाश अने अकृतागम एनो प्रसंग आवे छे माटे बनतुं नथी ॥ १ ॥

॥ ए प्रमाणें अचेतन वस्तुस्वरूपनो निर्णय करीनें हवे सचेतन आत्मस्वरूपनुं कथन करे छे.

॥ आत्मन्येकांतनित्ये स्या,न्न भोगः सुखदुःखयोः ॥ एकांता नित्यरूपेपि, न भोगः सुखदुःखयोः ॥ २ ॥ भावार्थः—एकांतत्वें करीने नित्य एवा आत्माने विषे सुख अने दुःख एउनो भोग एटले विपाक थाय नही, तो एकनेज सुखनो किंवा दुःखनो भोग थशे. कारण के, नित्यनुं एकरूपत्व छे. तेम वली एकांत नित्यरूपमां पण एकांतत्वें करीने अनित्य छतां पण आत्माने विषे सुखदुःखनो भोग थनार नहि. जे कारण माटें, जे समयें सु

खनोग थाय छे, तेज समयें दुःखनोग बनतो नथी. अने क्षणिकने तो बे क्षणनी अवस्थिति होवानो अनाव छे. माटे ए बे प्रकारना दोषें करीने आत्माने विषे एकांते अनित्यत्व बनतुं नथी ॥ २ ॥

॥ वली पण दोषांतर कहे छे ॥

॥ पुण्यपापे बंधमोक्षौ, न नित्यैकांतदर्शने ॥ पुण्यपापे बंधमोक्षौ, ना नित्यैकांतदर्शने ॥ ३ ॥ नावार्थः—पुण्य अनें पाप एटले धर्म अने अधर्म ए एकतायें करीने नित्यरूप नथी. कारण, जे पुण्यनो कर्ता ते पुण्यनोज कर्ता, परंतु ते पापनो कर्ता नथी. अने नित्यने तो एक स्वनावत्व छे; माटे पुण्यपापने निन्नत्व छे. तेमज धर्म अने अधर्म, ए एकांतें करीने नित्य नथी. कारण नित्यने एक स्वरूपत्वछे; अने ते धर्माधर्म एकांतें करीने अनित्यरूप नथी. कारण, जे समयें पुण्य करे छे, तेज समये पाप करतो नथी. क्षणिकने बे समयने विषे स्थितिनो अनाव छे. तेमज बंध अने मोक्ष, ए पण एकांतें करीने नित्य देखाता नथी. कारण, जेने बंध, तेनोज कालां तरे मोक्ष थाय छे. अनें क्षणिकने तो कालांतर स्थितिनो अनाव छे ॥ ३ ॥

॥ फरी एकांतपक्षने विषे सर्व पदार्थोंनो आश्रय करीनें दोषांतर कहेवा माटें कहे छे ॥

॥ क्रमाक्रमाभ्यां नित्यानां, युज्यतेऽर्थक्रिया नहि ॥ एकांतक्षणिकत्वे पि, युज्यतेऽर्थक्रिया नहि ॥ ४ ॥ नावार्थः— एकांतें करीने नित्य एवा पदार्थोंने क्रमें करीने अने अक्रमें करीने अर्थक्रियाकारित्व संनवतुं नथी. कारण, नित्यएक स्वनावनें क्रमनो अनाव छे; अने अक्रम कहीयें तो एक कालेंज सर्व क्रियानुं अकरण थशे. अने बीजे कालें क्रियाना अकरणत्वें करीने अपदार्थत्वनो प्रसंग प्राप्त थशे. तेम एकांत क्षणिकत्वमां पदार्थोंनुं क्रमाक्रमे करीनें अर्थ क्रियाकारित्व बनतुं नथी. कारण, क्षणिकने क्रमाक्रमनो अनाव छे, अने अक्रमपक्षने विषे क्षणिकने एककालें सर्वकालमां थनारी क्रियाकरवानां सामर्थ्यनो अनाव छे ॥ ४ ॥

॥ एवा परमतना दोषोने प्रगट देखाडीने हवे पहोताना मतनुं स्व रूप कहेवा माटें कहे छे ॥

॥ यदा तु नित्यानित्यत्व, रूपता वस्तुनोनवेत् ॥ यथाह्नगवन्नेवं, तदा दोषोस्ति कश्चन ॥ ५ ॥ नावार्थः—हे नगवन्, तमें जे प्रकारें क

रीने पदार्थोनी मुख्यरूपें करी नित्यता अने पर्यायरूपें करीने अनित्यता, कही छो,ते प्रमाणें पदार्थमात्रने जेवारें नित्यानित्य रूपता कहीयें, ते समयें कृतनाश, अने अकृतागम इत्यादिक कांइ पण दोष प्राप्त थनार नथी ॥५॥

॥ ते विषे दृष्टांत कहे छे ॥

॥ गुडोहि कफहेतुःस्या, न्नागरं पित्तकारणम् ॥ द्वयात्मनि न दोषोस्ति, गुडनागरभेषजे ॥६॥ भावार्थः—गोळ जे छे ते निश्चयें करीने कफकारक छे अने शुंठ जे छे, ते पित्तकारक छे; परंतु ते उभयात्मक गोळ अने शुंठ, ए बे साथें मळ्यां थकां एहनो औषधने विषे कफ अने पित्तपणानो दोष नथी; तेमज अहीयां स्याद्वादमां पण जाणवुं ॥ ६ ॥

॥ कोइ कहेशे के एक ठेकाणें नित्यत्व अने अनित्यत्व ए विरुद्ध छे? तो तेना प्रतिषेधने माटें कहे छे ॥

॥ द्वयं विरुद्धं नैकत्र, सत्प्रमाणप्रसिद्धतः ॥ विरुद्धवर्णयोगोहि, दृष्टोमेचकवस्तुषु ॥ ७ ॥ भावार्थः—एक ठेकाणें रहेनारुं नित्यानित्यरूप द्वय पण विरुद्ध नथी. कारण के ते रूडा प्रत्यक्षप्रमाणें प्रसिद्ध छे. ते क्यां छे? एम कोइ कहे तो, नीळपीतादिवर्णें करीने मिश्रित जें काबरचितरी वस्तु तेने विषे नीळपीतादिक विरुद्धवर्णनो संयोग प्रत्यक्ष सर्वेने देखायज छे ॥ ७ ॥

॥ विज्ञानस्यैकमाकारं, नानाकारं करंबितम् ॥ इच्छंस्ताथागतः प्राज्ञो, नानेकांतं प्रतिक्षिपेत् ॥ ८ ॥ भावार्थः—हे नाथ! नानाप्रकारना आकारें करीने मिश्रित, एवो ज्ञाननो एक जे प्रतिभास, तेने इच्छनारो निपुण जे बौद्ध ते, स्याद्वादनो प्रतिक्षेप करवा माटें समर्थ नथी, अर्थात् स्याद्वादना खंडन करवाने समर्थ थतो नथी ॥ ८ ॥

॥ चित्रमेकमनेकं च, रूपं प्रामाणिकं वदन् ॥ योगोवैशेषिकोवापि, नानेकांतं प्रतिक्षिपेत् ॥ ९ ॥ भावार्थः—तेमज नैय्यायिक अथवा वैशेषिक ते पण प्रामाणिक अने एक एवाने अनेकरूप चित्रविचित्र बोलता थका स्याद्वादने प्रतिक्षेप करवा माटें समर्थ थता नथी ॥ ९ ॥

॥ इच्छन् प्रधानसत्त्वाद्यै,र्विरुद्धं गुंफितं गुणैः ॥ सांख्यः संख्यावतां मुख्यो, नानेकांतं प्रतिक्षिपेत् ॥ १० ॥ भावार्थः—(संख्यावतां के०) दक्षपुरुषो मध्ये मुख्य पणाने मानतो एवो सांख्य ते, सत्त्व, रज अने तमोरूपथी भिन्नस्वभाव एवा जे गुणो,तेणें रचित एवा प्रधान प्रकृतिनामक तत्त्वने इच्छतो

थको (अनेकांतं के०) स्याद्वादनी, निंदा करवा माटें समर्थ नथी ॥१०॥

॥ विमतिः संमतिर्वापि, चार्वाकस्य न मृग्यते ॥ परलोकात्ममोक्षेषु, यस्य मुह्यति शेमुषी ॥ ११ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! (चार्वाकस्य के०) चार्वाकनामा नास्तिकनी (विमतिः के०) विसंवाद अने संवाद तेउनुं अमें अवलोकन पण करता नथी. कारणके, चार्वाकनी बुद्धि, परलोक, आत्मा, अने मोक्ष, एउने विषे मोह पामे छे, एटले मूढ थाय छे ॥ ११ ॥

॥ तेनोत्पादव्यये स्थेम, संभिन्नं गोरसादिवत् ॥ त्वदुपज्ञं कृतधियः, प्रपन्ना वस्तु वस्तु सत् ॥१२॥ भावार्थः—हे नाथ! ते परमत दोष दर्शनना कारणें करीने चतुरपुरुषो, तमें वर्णन करेली जे परमार्थें करीने प्रशस्त एवी चेतनाचेतनात्मकवस्तु ते अंगीकार करता हवा. ते वस्तु केवी छे ? तो के उत्पत्तियें, विनाशें अने स्थिरत्वें भेद पामेली एटले उत्पाद, व्यय अने ध्रौव्ययुक्त एवो अर्थ छे जेमां एवी. ए उपर दृष्टांत कहे छे. के जेम एक पण गोरस त्रण प्रकारें करीने भिन्न होय छे॥ उक्तं च ॥ पयोव्रतोन दध्यत्ति न पयोत्ति दधिव्रतः॥ अगोरसव्रतोनोभे, तस्माद्वस्तु त्रयात्मकम् ॥१२॥ इत्यष्टमप्रकाशः ८

॥ अथ कलिस्तवनामा नवम प्रकाशः ॥

॥ यत्राल्पेनापि कालेन, त्वद्भक्तेः फलमाप्यते ॥ कलिकालः स एकोस्तु, कृतं कृतयुगादिभिः ॥ १ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! जे कलिकालने विषे थोडे पण कालें करीने तमारी सेवानुं फल प्राप्त थाय छे, ते एक कलिकालज अमोने हो. ते कृत जाणे युगादिकालेंज थयुं एम अमे मानशुं तो पछी ते कालें शुं कर्त्तव्य छे? कांइ कर्त्तव्य नथी ॥ १ ॥

॥ सुषमातोऽदुःषमायां, कृपा फलवती तव ॥ मेरुतोमरुभूमौ हि, श्लाघ्या कल्पतरोः स्थितिः ॥ २ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! सुषम काल करतां दुःषमकालने विषे तारी कृपा फलवाली थाय छे. ए उपर दृष्टांत कहे छे. जे कारण माटे मेरुपर्वत करतां मरु देशने विषे कल्पवृक्षनी जे स्थिति, ते निश्चयें करी श्लाघ्य एटले वखाणवा योग्य होय ॥ २ ॥

॥ श्राद्धःश्रोता सुधीर्वक्ता, युज्येयातां यदीश तत् ॥ त्वच्छासनस्य साम्राज्य, मेकछत्रं कलावपि ॥ ३ ॥ भावार्थः— (ईश के०) हे स्वामिन ! (श्राद्धः के०) धर्मविचार करनार श्रोता, अने (सुधीः के०) निपुण एवा

धर्मविचार करनार वक्ता, ए बन्ने जो एक ठेकाणें मले, तो आ कलि कालने विषे पण तमारा शासननुं एकछत्र एवुं साम्राज्य छे. एम जाणवुं ॥ ३ ॥

॥ युगांतरेपि चेन्नाथ, भवंत्युछृंखलाः खलाः ॥ वृथैव तर्हि कुप्यामः, कलये वामकेलये ॥ ४ ॥ भावार्थः—हे नाथ! जो कलियुगथी अन्य जे कृतादिक युग तेने विषे पण निरंकुश एवा खल होय, तो अमें जेनी क्रीडा प्रतिकूल छे एवा कलिकालने माटें व्यर्थज कोप करीयें छैयें ॥ ४ ॥

॥ कल्याणसिद्ध्यै साधीयान्, कलिरेव कषोपलः ॥ विनाग्निं गंधमहिमा, काकतुंडस्य नैधते ॥५॥ भावार्थः—हे नाथ! मोक्षनीसिद्धिने माटें अथ वा शब्दछलथी सुवर्णसिद्धिने माटें कलिकाल, एज (कषोपलः के०) अत्यं त प्रशंस्य कसोटीनो पाषाण जाणवो. अर्थात् जेम कसोटीयें सुवर्णनी प रीक्षा थाय छे, तेम कलियें मोक्षनी सिद्धिनी परीक्षा थाय छे. अहिं दृष्टांत कहे छे. जेम अग्नि विना कृष्णागरुना गंधनो महिमा एटले सुगंधनुं गुरु त्व वृद्धि पामतुं नथी, कारण के ते तो अग्नियेंज वृद्धि पामे छे. तेम कलि कालें धर्मनो महिमा वृद्धि पामे छे. ए भावार्थ जाणवो ॥ ५ ॥

॥ निशि दीपोऽबुधौ द्वीपं, मरौ शाखी हिमे शिखी ॥ कलौ डुरापः प्रा प्तोयं, त्वत्पादाब्जरजःकणः ॥ ६ ॥ भावार्थः—हे नाथ! जेम रात्रिने वि षे दीप, तथा समुद्रने विषे द्वीप एटले बेट, तथा मरुदेशने विषे वृक्ष, तथा हिमने विषे अग्नि जेम प्राप्त थाय, तेम डुष्प्राप एवो तमारा पदकमलनो रजःकण, कलिकालने विषे मने प्राप्त थयेलो छे ॥ ६ ॥

॥ युगांतरेषु भ्रांतोऽस्मि, त्वद्दर्शनविना कृतः ॥ नमोऽस्तु कलये यत्र, त्वद्दर्शनमजायत ॥ ७ ॥ भावार्थः—हे नाथ! हुं तमारा दर्शन रहित थको कृतयुगादिकने विषे भ्रांतियुक्त करेलो छुं. माटें जे कलियुगने विषे तमारुं दर्शन थयुं, ते कलियुगने मारो नमस्कार हो ॥ ७ ॥

॥ बहुदोषोदोषहीना, त्वत्तः कलिरशोभत ॥ विषयुक्तो विषहरा, त्फणीं इव रत्नतः ॥ ८ ॥ भावार्थः—हे नाथ! जेमां बहुदोषो छे एवो पण कलिकाल, दोषें रहित एवा तमारा योगें करीने शोभायुक्त थयो छे. ए विषे दृष्टांत कहे छे. के जे, विषें करी युक्त एवो जे सर्पश्रेष्ठ ते, विषहरण कर नारा मस्तकसंबंधी जे रत्न तेणें करीने जेम शोभे छे. तेम आ कलि पण शोभे छे ॥ ८ ॥ इति कलिस्तवनामा नवम प्रकाशः समाप्तः ॥ ९ ॥

॥ अथ अद्भुतस्तवनामा दशम प्रकाशः ॥

॥ मत्प्रसत्तेस्त्वत्प्रसाद, स्त्वत्प्रसादादियं पुनः ॥ इत्यन्योऽन्याश्रयं भिंधि,प्र सीद जगवन्मयि ॥१॥ भावार्थः—हे नाथ ! (मत्प्रसत्तेः के०) मारा प्रसन्न पणा थकी (त्वत्प्रसादः के०) तमारो अनुग्रह थाय बे,अने मारी प्रसन्नता, तमारा अनुग्रहें करी थाय बे. एवो जे अन्योऽन्याश्रयरूप दोष बे,एटले एक, एक विना होय नहि. तेने तमें नाश करो. अने हे जगवन् ! तमेंज मारे विषे प्रसन्न थाउ. अर्थात् तमें मारी प्रसन्नताप्रत्यें अवलोकन करशो नही ॥१॥

॥ निरीक्षितुं रूपलक्ष्मीं, सहस्राक्षोपि न क्षमः ॥ स्वामिन् सहस्रजि ह्वोपिं, शक्तो वक्तुं न ते गुणान् ॥ २ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! सहस्रलोच न एवो इंद्र पण तमारा रूपनी शोजाने निश्शेषपणें अवलोकन करवा स मर्थ थतो नथी. तेमज हे स्वामिन् ? जेने सहस्रजिह्वा बे, एवो जे पुरुष ते पण तमारा गुणोनुं वर्णन करवाने समर्थ थतो नथी ॥ २ ॥

॥ संशयान्नाथ हरसे, ऽनुत्तरस्वर्गिणामपि ॥ अतःपरोपि किं कोपि,गुण स्तुत्योऽस्ति वस्तुतः ॥३॥ जावार्थः—हे नाथ ! तमें अनुत्तरविमानवासी एवा देवोना पण संदेहने निराकरण करो बो. एटले अनुत्तरविमानवासी देवोनें संदेह उत्पन्न थये बते तेमने अन्य स्थानकें गमनागमननो अजाव बे, एमाटें तेउ तिहांज रहीने मनमांहे संदेह करे बे. ते संदेहयुक्त एवा दे वोने जगवान् सर्वज्ञ,तमो अहींयांज रह्या बता जाणीने ते देवोना प्रत्युत्त रने मनोवगणायें करीने परिणमावो बो. त्यार पबी ते देवताउ अवधिज्ञानें करी आप नामनःस्वरूप ज्ञानथी प्रत्युत्तरने पण जाणे बे. ए माटें हे नाथ ! आ गुण करतां अपर कोइ पण गुण वस्तुताथी स्तवन करवा यो ग्य आ जगमांहे बे शुं ? अर्थात् नथीज ॥ ३ ॥

॥ इदं विरुद्धं श्रद्धत्तां, कथमश्रद्दधानकः ॥ आनंदसुखसक्तिश्च, विरक्तिश्च समं त्वयि ॥४॥ जावार्थः—हे नाथ ! तमारे विषे एक कालेंज परमानंद सुखनी आसक्तता अने संसारथी वैराग्य, एवा आ विरुद्धपणुं जासनारा ह्यने (अश्रद्दधानकः के०) श्रद्धाने न धारण करनारो पुरुष, ते श्रद्धायें के म अंगीकार करे? अर्थात् करे नहीं ॥ ४ ॥

॥ नाथेयं घट्यमानापि, डुर्घटा घटतां कथम् ॥ उपेक्षा सर्वसत्त्वेषु,परमा

चोपकारितां ॥५॥ नावार्थः—हे नाथ ! सर्व प्राणीमात्रने विषे माध्यस्थ्य अने सर्व प्राणिमात्रने विषे उत्कृष्ट उपकारकर्तृत्व, ए स्थिति, संज्ञाव्यमान बे तोपण महाडुर्घट बे. ते माटें ते बेहु वात तमारे विष केम् घटे ? ॥ ५ ॥

॥ द्वयं विरुद्धं नगवंस्तव नान्यस्य कस्यचित् ॥ निर्ग्रंथता परा या च, या चोच्चैश्चक्रवर्त्तिता ॥६॥ नावार्थः—हे नगवन् ! परस्पर अघटमान, जे हवे कहे शुं एवां बे वानां तमनेज बे, बीजा कोइने नथी. ते कयां बे वानां? तो के एक तो उत्कृष्ट (निर्ग्रंथता के०) निष्परिग्रहता अने बीजुं अत्यंत (चक्रवर्त्तिता के०) धर्मचक्रवर्तित्व. अर्थात् ए बेहु तमारा विना बीजा कोइने नथी ॥६॥

॥ नारकाअपि मोदंते, यस्य कल्याणपर्वसु ॥ पवित्रं तस्य चारित्रं, को वा वर्णयितुं क्षमः ॥७॥ नावार्थः—हे नाथ ! जे तमारा च्यवनादिक पंच कल्याण पर्व तेने विषे नरकवासी जीवो पण आनंदने पामे बे. तेवा तमारा चरित्रने वर्णन करवा माटें अमारा सरखो कयो जन समर्थ थाय ? ॥७॥

॥ शमोद्भुतोद्भुतं रूपं, सर्वात्मसु कृपाद्भुता ॥ सर्वाद्भुतनिधीशाय, तुभ्यं नगवते नमः ॥८॥ नावार्थः—हे नाथ ! आश्चर्यकारक अद्भुत तमारुं रूप, अने सर्व प्राणिमात्रने विषे अद्भुत एवी तमारे दया बे. ए माटें संपूर्ण आश्चर्यने उत्पन्न करनारा जे गुणो तेना केवल महानिधान अने नगवान् एवा तमोने म्हारो नमस्कार हो ॥८॥ इत्यद्भुतस्तवनामा दशमप्रकाशः ॥१०॥

॥ अथ महिमास्तव नामा एकादशप्रकाशः ॥

॥ निघ्नन् परीषहचमू, मुपसर्गान् प्रतिक्षिपन् ॥ प्राप्तोसि शमसौहित्यं, महतां कापि वैदुषी ॥१॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें (परीषहचमूं के०) क्षुधा, तृषा, इत्यादिक बावीश परिसहनी सेनाने अत्यंत हणता थका अने देव, मनुष्य, तिर्यंच एउयें करेला उपड्वोनो प्रतिक्षेप करता थका शमें करीने जे सौहित्य एटले सुसमाहितत्व, ते प्रत्यें प्राप्त थया बो. ए माटें उत्तम पुरुषनी जे निपुणता, ते वचनातीत बे ॥ १ ॥

॥ अरक्तोभुक्तवान्मुक्ति, मद्विष्टोहतवान् द्विषः ॥ अहो महात्मनां कोपि, महिमा लोकडुर्लनः ॥ २ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें विषयोने विषे अरक्त होता थका मुक्तिनो उपनोग करता हवा. अने द्वेष रहित होता थका अंतरंग शत्रुने जीतता हवा. अहो इति आश्चर्ये !! महात्मा जे

गुरुपुरुष, तेनो डुर्लज एवो जे महिमा ते लोकोने अनिर्वचनीय छे ॥ २ ॥

॥ सर्वथा निर्जिगीषेण, नीतनीतेन वाऽऽगसः ॥ त्वया जगत्त्रयं जिग्ये, महतां कापि चातुरी ॥ ३ ॥ • नावार्थः–हे नाथ! सर्वप्रकारें करीने जेने जयनी इब्राज नथी, एवा अने अपराधथी नय पामेला करतां पण नय पामेला एवा तमोयें पोताना गुणोयें करीने त्रैलोक्य जीत्युं छे. आ उपरथी एवुं सिद्ध थाय छे के, माहात्मा पुरुषोनी चतुरता अनिर्वचनीय छे ॥ ३ ॥

॥ दत्तं न किंचित्कस्मैचि, न्नात्तं किंचित्कुतश्चन ॥ प्रनुत्वं ते तथाप्येत, त्कला कापि विपश्चिताम् ॥ ४ ॥ नावार्थः–हे नाथ! तमें कोइने कांइ पण प्रसादें करीने धनकनकादिक दीधुं नथी, अने कोइथी रोपें करी दंमादिक कांइ पण ग्रहण कर्युं नथी, तथापि तमारुं सर्वलोकने विषे प्रसिद्ध एवुं आधिपत्य वर्त्ते छे, ते कारणमाटे विचक्षण पुरुषनी कोइएक कलानी कुशलता अनिर्वचनीयज छे ॥ ४ ॥

॥ यद्देहस्यापि दानेन, सुकृतं नार्जितं परैः ॥ उदासीनस्य तन्नाथ, पादपीठे तवाऽलुठत् ॥ ५ ॥ नावार्थः–हे नाथ! तमाराथी अन्य एवा तीर्थिकोयें देहना त्यागें करीने पण जे पुण्य संपादन नथी कर्युं, ते पुण्य, सुकृतसंपादनविषे उदासीन एवा पण तमारा पादपीठना अग्रनागने विषे अलुंठत् केतां आलोटलुं हतुं ॥ ५ ॥

॥ रागादिषु नृशंसेन, सर्वात्मसु कृपालुना ॥ नीमकांतगुणेनोच्चैः, साम्राज्यं साधितं त्वया ॥ ६ ॥ नावार्थः–हे नाथ! वली तमें अत्यंत साम्राज्यने स्ववशमां संपादन करेलुं छे. ते तमें कहेवा छो? तो के रागादिकने विषे निर्दयपणुं अने सर्व प्राणिमात्रने विषे कृपाशीलता, तथा अंतरंग शत्रुना दमननेविषे नयंकरपणुं अने संयमादिक पालवाने वषे सुंदरपणुं एवा छो. ॥ ६ ॥

॥ सर्वे सर्वात्मनाऽन्येषु, दोषास्त्वयि पुनर्गुणाः ॥ स्तुतिस्तवेयं चेन्मिथ्या, तत्प्रमाणं सनासदः ॥ ७ ॥ नावार्थः–अन्य जे हरि हरादिक देव, तेउने विषे सर्वप्रकारें करीने दोषो छे, अने हे नाथ! तमारेविषे सर्वात्मतायें करी नीरागादिक गुणोरहेला छे. आ में करेली तमारी गुणस्तुति जो मिथ्या होय, तो ए विषे सनासद प्रमाण छे. एटले सनासदो जे कहेशे तेज सत्य छे ॥ ७ ॥

॥ महीयसामपि महा, न्महनीयोमहात्मनाम् ॥ अहो मे स्तुवतःस्वामी,

स्तुतेर्गोचरमागमत् ॥८॥ नावार्थः—अहो इति आश्चर्ये! हे नगवन् स्वामी, एवा तमें अने स्तुति करनारो एवो जे हुं,ते मारा स्तुतिविषयने विषे आवता हवा. ते तमें केहवो छे? तो के अत्यंतमहान्मध्यें पण महान् अने महात्मा एवा जे गुरुपुरुषो तेनी मध्यें पणं पूज्य छो ॥८॥ इत्येकादश प्रकाशः ॥११॥

॥ अथ वैराग्य स्तवनामा द्वादश प्रकाशः ॥

॥ पट्वभ्यासादरैः पूर्वं, तथा वैराग्यमाहरः ॥ यथेह जन्मन्याजन्म, तत्सा त्मीनावमागमत् ॥१॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें पूर्वजन्मने विषे उत्तम अन्यासना आदरें करीने तेवो वैराग्य संपादन कस्यो छे,के जे आ जन्मने विषे पण ते वैराग्य, तमारा जन्मदिवसथी मांमीने सहजधर्मने पाम्यो छे.

॥ दुःखहेतुषु वैराग्यं,न तथा नाथ निस्तुषम् ॥ मोक्षोपायप्रवीणस्य, य था ते सुखहेतुषु ॥ २ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! मोक्षोपायनूत जे संतोषा दिक साधनो, तेने विषे निपुण एवा जे तमें ते तमने दुःखहेतु जे इष्टवि योगादिक तेनेविषे तेवो अत्यंत निस्तुष वैराग्य नथी,जेवो सुखहेतु जे इष्ट संयोगादिक, तेने विषे निस्तुष वैराग्य छे? ॥ २ ॥

॥ विवेकशाणैर्वैराग्य, शस्त्रं शातं तथा त्वया ॥ यथा मोक्षेपि तत्साक्षा, दकुंठितपराक्रमम् ॥ ३ ॥ नावार्थः—हे नाथ! तमें विवेकरूप शस्त्रघर्षण यंत्रें करीने वैराग्यरूप शस्त्र एवुं तीक्ष्ण कस्युं छे, के जेवुं ते वैराग्यशस्त्र मो क्षेपि केतां मोक्षने विषे पण अथवा शब्दछलें करी मूके थके पण, स्पष्टप णे अकुंठित छे पराक्रम जेनुं एवुं छे ॥ ३ ॥

॥ यदा मरुन्नरेंद्रश्री, स्त्वया नाथोपनुज्यते ॥ यत्र तत्र रतिर्नाम, वि रक्तत्वं तदापि ते ॥ ४ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें जे प्रस्तावने विषे (मरुत् के०) देव अने (नरेंद्र के०) राजा, एउनी लक्ष्मी उपनोग करा य छे, ते प्रस्तावने विषे पण तमारी जे ते स्थलें रति, ते समाधि एवे नामें करीने वैरागपणुंज रहे छे ॥ ४ ॥

॥ नित्यं विरक्तंकामेन्यो, यदा योगं प्रपद्यसे ॥ अलमेनिरिति प्राज्यं, त दा वैराग्यमस्ति ते ॥ ५ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें जे समयें निरंतर म नोज्ञ एवा शब्दादिक विषयोथी विरक्त थका चारित्रयोगनो अंगीकार करो छो, ते समयें तमारे ते विषयें करीने शुं? अर्थात् कांहिं नहिं. एवो तमा रे विषे अति श्रेष्ठ वैराग्य रहेलो छे ॥ ५ ॥

॥ सुखे दुःखे नवे मोक्षे, यदौदासीन्यमीशिषे ॥ तदा वैराग्यमेवेति, कुत्र नासि विरागवान् ॥ ६ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें जे समयें सुख, दुःख नव अने मोक्षने विषे औदासीन्य धारण करो बो,ते समयें पण तमने वैराग्यज रहे बे. ए माटें तमें कया कालें कया स्थलें वैराग्यवान् नथी ? अर्थात् सर्वे कालें सर्वस्थलें वैराग्यवानज बो ॥ ६ ॥

॥ दुःखगर्ने मोहगर्ने,वैराग्ये निष्ठिताः परे॥ ज्ञानगर्ने तु वैराग्यं,त्वय्येवात्मतां गतम् ॥ ७ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! अन्य एवा संसारी जीव, दुःखगर्नित वैराग्यने विषे अने मोहगर्नित वैराग्यने विषे निष्ठा प्रत्यें पामेला बे, अने तमारे विषे ज्ञानगर्नित एवो वैराग्य एकाश्रयताने पामेलो बे. अर्थात् तमारा जेवो वैराग्य कोइने नथी ॥ ७ ॥

॥ औदासीन्येपि सततं, विश्वविश्वोपकारिणे ॥ नमोवैराग्यनिघ्नाय, तायिने परमात्मने ॥ ८ ॥ नावार्थः—ए माटें निरंतर उदासीनत्वं बते पण संपूर्ण जगत् उपर उपकार करनारा, वैराग्यतत्पर अने सर्व प्राणिमात्रनुं रक्षण करनारा एवा परमात्मा जे तमें ते तमने मह्वारो नमस्कार हो॥ ८॥ इति वैराग्यस्तवनामा द्वादशः प्रकाशः ॥१२॥

॥ अथ. हेतुनिरासनामा त्रयोदश प्रकाशः ॥

॥ अनाहूतसहायस्त्वं, त्वमकारणवत्सलः ॥ अनन्यर्थितसाधुस्त्वं, त्वमसंबंधबांधवः ॥ १ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! तमें न. बोलाव्या बता पण सखा प्रमाणें आचरण करनारा, अने कारण विना हितकर्ता, अने प्रार्थना न कस्या बता पण परकार्य साधन करनारा बो. अने संबंधविनाना बांधव बो॥

॥ अनक्तस्निग्धमनस,ममृजोज्ज्वलवाक्पथम् ॥ अधौतामलशीलं त्वां, शरण्यं शरणं श्रये ॥ २ ॥ नावार्थः—एमाटें अन्यंग विनाज जेनुं मन स्नेहयुक्त बे, अने मलापकर्षण विना जेनो वचनमार्गनिर्मल बे, अने प्रक्षालन कस्या विनाज जेनो स्वनाव निर्मल बे, एवा शरण जवा योग्य जे तमें, ते तमारा शरणनो हुं आश्रय करुं बुं ॥ २ ॥

॥ अचंमवीरव्रतिना, शमिना समवर्त्तिना ॥ त्वया काममकुट्यंत, कुटिलाः कर्मकंटकाः ॥ ३ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! शांत बता पण सुनटव्रतवाला अने (शमिनासमवर्त्तिना के०) शमशील अने शत्रुमित्रादिकोने

विषे समानरूपें. करीने वर्तनारा एवा तमें अत्यंत कुटिल एवा कर्मरूप कांटाउ तोडी नाख्या ढे ॥ ३ ॥

॥ अजवाय महेशाया, गदाय नरकच्छिदे ॥ अराजसाय ब्रह्मणे, कस्मैचिद्भवते नमः ॥ ४ ॥ जावार्थः—नहीं जव केतां शंकर अथवा नथी जव केतां जन्म जेने ते अजव कहियें ए अजव एवा (महेशाय के०) ईश्वर अथवा त्रिजुवनना स्वामी, अने नथी गदा नामनुं आयुध अथवा नथी गद एटले रोग जेने एवा, वली नरक जे नरकयातना तेना ढेद करनारा एवा अने नथी रजोजाव एटले विषयाजिलाष जेने एवा तथा (ब्रह्मणे के०) पर ब्रह्मस्वरूप एवा कोइ एक अलक्ष्यस्वरूप जे तमें, तेने मह्वारो नमस्कार हो. आ ठेकाणें शिव, विष्णु, ब्रह्मा न ढतां पण तेउनां अन्य कार्यें करी नामधारण करनारा जगवान् कह्या. ए विरोधाजास अलंकार ढे. एम जाणवुं ॥ ४ ॥

॥ अनुषितफलोदग्रा, दनिपातगरीयसः ॥ असंकल्पितकल्पद्रो, स्त्वत्तो फलमवाप्नुयाम् ॥ ५ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! सिंचन करया विना ज फलोयें करीने अद्भुत, पतनरहित ढतां अत्यंत महान्, अने असंकल्पित एवा पण मनोरथने पूर्ण करनार, कल्पवृक्ष एवा जे तमें, ते तमाराथी हुं अजीष्ट फलने पामुं ! ॥ ५ ॥

॥ असंगस्य जिनेशस्य, निर्ममस्य कृपात्मनः ॥ मध्यस्थस्य जगत्त्रातु, रनंकस्तेस्मि किंकरः ॥ ६ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! जेने धन कनकादिकनो परिग्रह नथी, सामान्यकेवलीना (ईशस्य के०) स्वामी, ममतारहित, अने जेनुं चित्त कृपारूप ढे, अने बीजाउनी अपेक्षायें रहित, अने सर्व जगत्ना त्राता एवा जे तमें ते तमारो त्रिशूलपातादिक चिन्हरहित एवो हुं सेवक ढुं ॥

॥ अगोपिते रत्ननिधा, ववृते कल्पपादपे ॥ अचिंत्ये चिंतारत्ने च, त्वय्यात्माऽयं मयार्पितः ॥ ७ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! नहिं ढांकेलो एवो जे रत्ननो निधि, अने नहि सेवन करेलो एवो जे कल्पवृक्ष, अने चिंतन करवा माटें अशक्य एवो जे चिंतामणि, ते समान जे तमें, ते तमारे विषे में आ मह्वारो आत्मा समर्पण कर्यो ढे ॥ ७ ॥

॥ फलानुध्यानवंध्योऽहं, फलमात्रतनुर्जवान् ॥ प्रसीद यत्कृत्यविधौ, किंकर्त्तव्यजडे मयि ॥ ८ ॥ जावार्थः—हे नाथ ! हुं फलनी चिंतवनायें रहित ढुं, अने तमें फलरूप शरीर ढो, ए माटें कये समयें शुं करवुं ? ए विषे मूर्ख

एवो जे हुं, ते मारे विषे, मारे शुं करवुं जोइयें? ते वातमां मारी उपर प्रसाद करो ॥ ८ ॥ इति हेतु निरासनामकंत्रयोदशः प्रकाशः ॥ १३ ॥

॥ अथ योगस्तवनामा चतुर्दशः प्रकाशः ॥

॥ मनोवचःकायचेष्टाः, कष्टाः संहृत्य सर्वथा ॥ श्लथत्वेनैव नवता, मनःशल्यं वियोजितम् ॥ १ ॥ नावार्थः—हे नाथ! तमें अमायासें करीने ज कष्टकारक एवा मन, वचन, अने देह, एउनां व्यापाररूप क्रियाउने सर्वप्रकारें करी संवृत करीने मनोरूपशल्यनुं प्रथक्करण कर्युं बे ॥ १ ॥

॥ संयतानि न चाक्षाणि,नैवोछृंखलितानि च ॥ इति सम्यक्प्रतिपदा, त्वयेंड्रियजयः कृतः ॥ २ ॥ नावार्थः—उत्तमप्रकारनुं जेनुं ज्ञान बे एवा जे तमें ते तमें, पोतपोताना विषयोनेविषे प्रवृत्त एवी कर्णादि पंचेंड्रियोने अत्यंत संयमित न करी, अने अत्यंत विषयासक्त पण न करी. कारण के शुनाशुन पदार्थरूप विषयोनेविषे हर्ष अने विषाद, एउनुं त्यागपणुं बे. माटें हे नाथ! तमें पूर्वोक्त रीतें इंड्रियजय कर्यो बे ॥ २ ॥

॥ योगस्याष्टांगता नूनं, प्रपंचः कथमन्यथा ॥ आबालनावतोप्येष,तव सात्म्यमुपेयिवान् ॥३॥ नावार्थः—हे नाथ! अध्यात्मयोगनी पण अष्टांगता बे. ते कये प्रकारें अष्टांगता बे? तो के यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा अने समाधि ते रूप विस्तार,निश्चयें करीने बेज. (अन्यथा के०) जो एम अष्टांगता प्रपंच न होय तो आ योग, बालपणाथी पण तमारा स्वरूपना संहितपणां प्रत्यें केम प्राप्त थाय? अर्थात् प्राप्त थायज नहीं ॥ ३ ॥

विषयेषु विरागस्ते, चिरं सहचरेष्वपि ॥ योगे सात्म्यमदृष्टेपि, स्वामिन्निदमलौकिकम् ॥ ४ ॥ नावार्थः—हे स्वामिन्, चिरकालसहचर एवा मनोज्ञशब्दादिक विषयोमां अपने, आपमां अध्यात्मयोग न दीसतां बतां पण सहज नावें करीने वैराग्य बे, ए केवल अलौकिकज बे कारण के लोकमध्यें तो दृष्टने विषे राग थाय, पण अदृष्टमां तो राग होतो नथी ॥४॥

॥ तथा परे न रज्यंत, उपकारपरे परे ॥ यथापकारिणि नवा,नहो सर्वमलौकिकम् ॥ ५ ॥ नावार्थः—हे नाथ! जेवा तमें अपकार करनारा जनोने विषे स्नेहयुक्त बो, तेवा अन्यलोक, उपकार विषे तत्पर एवा पण अन्य

जनने विषे स्नेहयुक्त थता नथी. ते माटें अहो ! ! ! आ सर्व (अलौकिकं के०) तमारुं चरित्र लोकोत्तर छे ॥ ५ ॥

॥ हिंसकाअप्युपकृता, आश्रिताअप्युपेक्षिताः ॥ इदं चित्रं चरित्रं ते, के वा पर्यनुयुंजताम् ॥ ६ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! तमें हिंसा करनारा पुरुषो पण, स्वर्गादिकने विषे पहोंचाडीने उपकारसंयुक्त कर्या; अने सेवापर एवा पण श्रेणिकादिक पुरुषो (उपेक्षिताः के०) उपेक्षित कर्या. एटले तेउनी नरकगति निवारण करी नहीं. तस्मात् हे नाथ! आ पूर्वोक्त तमारा आश्चर्य कारक चरित्रने विषे कया पुरुषोने पूछीयें ? अर्थात् कोण पुरुष त्वत्सदृश आचरण करवा माटें समर्थ छे ? कोइ नथी ॥ ६ ॥

॥ तथा समाधौ परमे, त्वय्यात्मा विनिवेशितः ॥ सुखी दुःख्यस्मि नास्मीति, यथा न प्रतिपन्नवान् ॥ ७॥ भावार्थः—हे नाथ! तमें उत्कृष्ट समाधिने विषे तेवे प्रकारें करीने आत्मा स्थापन कर्यो छे के, हुं सुखसंयुक्त छुं, अथवा दुःख संयुक्त छुं ! ए कांइ जाणता नथी ॥ ७ ॥

॥ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं,त्रयमेकात्मतां गतम् ॥ इति ते योगमाहात्म्यं, कथं श्रद्धीयतां परैः ॥८॥ भावार्थः—हे नाथ! (ध्याता के०) ध्यान करनार, (ध्यानं के०) शुभाशुभपरिणामरूप मननो व्यापार, तेमज (ध्येयं के०) ध्यान करवाने योग्य एवुं परमात्मस्वरूप, ए त्रणे पण एकात्मतायें करी तमारे विषे प्राप्त थएलां छे, माटें तमारुं (योगमाहात्म्यं के०) योगप्रभुत्व ते, (परैः के०) अन्य जे अमारा सरखा जन, तेउएं केवी रीतें श्रद्धायें ग्रहण थाय? अर्थात् अन्य पुरुषोयें पण तमारुं योगमाहात्म्य अतर्क्य छे ॥८॥ इति योग स्तवनामा चतुर्दशप्रकाशः समाप्तः ॥१४॥

॥ अथ भक्तिस्तवनामा पंचदशः प्रकाशः ॥

॥ जगज्जैत्रागुणास्त्रात, रन्ये तावत्तवासताम् ॥ उदात्तशांतया जिग्ये, मुद्रयैव जगत्त्रयी ॥१॥ भावार्थः—हे त्रातः! कहेतां हे रक्षक ! तमारा जगत्ने जीतनारा अन्य गुण तो प्रथम दूर रहो, परंतु उद्भट होइने शांत एवी तमारी आकृतियेंज आ त्रिभुवनने जीत्युं छे ॥ १ ॥

॥ मेरुस्तृणीकृतोमोहा, त्पयोधिर्गोष्पदीकृतः ॥ गरिष्ठेभ्योगरिष्ठोयैः, पाप्मभिस्त्वमपोहितः ॥ २ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! जे पापी पुरुषोयें, सर्व

मध्यें श्रेष्ठ अने गुरुना पण अत्यंत गुरु एवा जे तमें ते तमारी निंदा करी; तो ते पापी पुरुषोयें मोहें करीने एटले अज्ञानें करीने मेरु पर्वत पण तृण सरखो गण्यो. अने समुद्रने पण गोष्पद सरखो गण्यो; एवुं जाणवुं. अर्थात् तमारी निंदा करनारा प्राणी अति मूर्ख जाणवा.॥ २.॥

॥ च्युतश्चिंतामणिः पाणे, स्तेषां लब्धा सुधा मुधा ॥ येस्ते शासनसर्वस्व, मज्ञानैर्नात्मसात्कृतम् ॥ ३ ॥ नावार्थः–हे नाथ, जे ज्ञानरहित एवा पुरुषोयें तमारी आज्ञानुं रहस्य अंगीकार कर्युं नहिं; ते पुरुषना हस्तथी चिंतामणिज भ्रष्ट थयो, किं वा ते पुरुषोने प्राप्त थएलुं अमृत व्यर्थ गयुं. एम जाणवुं ॥ ३ ॥

॥ यस्त्वय्यपि दधौ दृष्टि,मुल्मुकाकारधारिणीम् ॥ तमाशुशुक्षणिः साक्षा, दालप्यालमिदं हि वा ॥ ४ ॥ नावार्थः–हे नाथ! जे जन तमारे विषे ज्वलितकाष्ठना आकारने धारण करनारी एटले क्रोधें आरक्तवर्ण एवी दृष्टिने धारण करे ले, तेने आशुशुक्षणिः, एटले अग्नि, एवुं साक्षात् कहि स्तुतिकर्त्ता (अलं के०) पूर्ण थयुं एम कहि रहि गयो. अर्थात् स्तुतिकर्ता पुरुष, तेने अग्नि बालो. एवुं कहेवा माटें प्रथम प्रवृत्त थयो,परंतु तेने अग्नि एम कहिने बालो एवुं नाशसूचक क्रियापद कहेवुं ए ठीक नही एम विचार करी तेने अग्नि एटलुंज बोली आगल स्तब्ध रही गयो ॥ ४ ॥

॥ त्वच्छासनस्य साम्यं ये, मन्यंते शासनांतरैः ॥ विषेण तुल्यं पीयूषं, तेषां हंत हतात्मनाम् ॥५ ॥ नावार्थः–हे नाथ ! जे पुरुषो, तमारा शासनने परशासननी साथें समान माने ले, ते जनने (पीयूषं के०) अमृत,ते विष सरखुं ले, (हंत के०) ए म्होटा खेदनी वात ले! वली ते जन कहेवा जाणवा ? तो के निंदा करवा योग्य ले मन जेनुं एवा जाणवा ॥ ५ ॥

॥अनेडमूकानूयासु,स्ते येषां त्वयि मत्सरः ॥ शुनोदर्काय वैकल्य,मपिपापेषु कर्मसु ॥६॥ नावार्थः–हे नाथ! जे पुरुषोने तमारेविषे अत्यंत द्वेषप्राप्त थयो, ते पुरुषो,कर्ण अने वचन एबेएं रहित थाउ. अने ए प्रकारना कथन करनारना पापकर्मने विषे जे व्यंगत्व थाय,ते पण शुनफलने माटें ले.॥६॥

॥ तेन्योनमोंजलिरयं, तेषां तान् समुपास्महे ॥ त्वच्छासनामृतरसैर्यैरात्मा सिंच्यतान्वहम्॥ ७ ॥ नावार्थः–हे नाथ! जे जनोयें तमारा शासनरूप अमृतरसें प्रतिदिवस पोतानो आत्मा सिंचन कर्यो ले, ते जनोने न

मस्कार हो. अने ते जनोने आ में करसंपुट करेलो छे. अने हे नाथ! अमें ते जनोने सेवीयें छैयें ॥ ७ ॥

॥ भुवे तस्यै नमोयस्यां, तव पादनखांशवः ॥ चिरं चूडामणीयंते, ब्रूमहे किमतः परम् ॥ ८ ॥ भावार्थः—हे नाथ! जे भूमिने विषे तमारा चरणनखनां किरणो, चिरकाल पर्यंत (चूडामणीयंते के०) रत्नकाभरण सरखां आचरण करे छे; ते भूमिने अमारो नमस्कार हो. हे नाथ! अमें ए पछी शुं भाषण करीयें? कारण के जे तमारा चरणनखें स्पर्श करेली एवी भूमि छे तेने पण अमे नमस्कार करीयें छैयें ॥ ८ ॥

॥ जन्मवानस्मि धन्योस्मि, कृतकृत्योस्मि यन्मुहुः ॥ जातोस्मि त्वद्गुण ग्राम, रामणीयकलंपटः ॥ ९ ॥ भावार्थः—हे नाथ! जे कारण माटें हुं वारं वार तमारा गुणसमुदायनुं जे मनोहर पणुं,तेने विषे (लंपटः के०) तत्पर एवो छुं, ते कारण माटें हुं सफलजन्मा छुं, हुं (धन्यः के०) वखाणवा योग्य छुं अने हुं कृतकृत्य छुं एटले कृतकार्य थयो छुं ॥९॥ इति श्री भक्तिस्तव नामा पंचदशः प्रकाशः ॥ १५ ॥

॥ अथात्मगर्हास्तवनामा षोडश प्रकाशः ॥

॥ त्वन्मतामृतपानोत्था,इतः शमरसोर्मयः ॥ पराणयंति मां नाथ,परमानंदसंपदम् ॥ १ ॥ भावार्थः—हे नाथ! (इतः के०) आ एक पार्श्वभाग थकी शमरसना जे तरंगो ते, मने परमानंदनी संपत्तिप्रत्यें पमाडे छे. ते शमरसना तरंगो केहेवा छे? तो के तमारा मतरूपज जे अमृतपान छे, तेनाथी उत्पन्न थयेला छे ॥ १ ॥

॥ इतश्चानादिसंसार, मूर्छितोमूर्छयत्यलम् ॥ रागोरगविषावेगो, हताशः करवाणि किम् ॥ २ ॥ भावार्थः—हे नाथ! (इतः के०) आ बीजा पार्श्वभागथी अनादिसंसारनी वासनायें वृद्धि पामेला एवा विषयरूप सर्पना विषनो वेग, मनें अत्यंत मूर्छाने पमाडे छे. माटें (हताशः के०) जेनी आशा भंगथई छे; एवो जे हुं ते शुं करुं? ॥ २ ॥

॥ रागाहिगरलाऽऽघ्रातोऽ, कार्षं यत्कर्म वैशसम ॥ तद्वक्तुमप्यशक्तोस्मि, धिङ्मे प्रछन्नपापिनः ॥ ३ ॥ क्षणं सक्तः क्षणं मुक्तः, क्षणं क्रुद्धः क्षणं क्षमी ॥ मोहाद्यैः क्रीडयेवाहं, कारितः कपिचापलम् ॥ ४ ॥ भावार्थः—

हे नाथ! हुं, राग एज कोइ एक सर्प, तेने विषे मूर्छित होतो थको, पर दारागमनादिक जे दुष्ट कर्म तेनें करतो हवो,ते कर्म कहेवां छे ? तो के ते कर्मने कहेवा पण हुं असमर्थ छुं. माटें गुप्तपापी एवो जे हुं, तेने धिक्कार हो ॥ ३ ॥ हे नाथ! मोहादिकोयें मनें मर्कट सरखी चापल्यदशाप्रत्यें पमाडेलो छे. ते केवी रीतें ? तो के—अन्य पुरुषोयें क्रीडायेंकरी जेवी रीतें वानरने चापल्य करावाय छे? तेथी केवो हुं थयो छुं,तो के आ संसारने विषे क्षणमात्र आसक्त, अने क्षणमात्र मुक्त, क्षणमात्र क्रोधायमान अने क्षण मात्र क्षमावान् ए प्रकारना चापल्यप्रत्यें मनें मोहादिकोयें पमाडेलो छे ॥४॥

॥ प्राप्यापि तव संबोधिं, मनोवाक्कायकर्म्मजैः ॥ दुश्चेष्टितैर्मया नाथ, शिरसि ज्वालितोऽनलः ॥ ५ ॥ त्वय्यपि त्रातरि त्रात, यन्मोहादिमलिम्लुचैः ॥ रत्नत्रयं मे ह्रियते, हताशोहा हतोस्मि तत्॥ ६ ॥ भावार्थः—हे नाथ ! तमारा सम्यक् धर्मने पामीने पण मन,वाणी अने काय एउंना व्यापारथकी उत्पन्न थएलां जे दुष्कर्मो तेणें करी मारा मस्तकने विषे में अग्नि प्रज्ज्वलित कर्यो छे. अर्थात् हवे ते अग्नि मने अत्यंत ताप उत्पन्न करे छे ॥५॥ हे त्रातः के०) हे रक्षण करनारा !, तमें रक्षक छतां मोहादिक चोरोयें मारुं (रत्नत्रयं के०) ज्ञान दर्शन चारित्ररूप, अथवा देव, गुरु धर्मरूप रत्नत्रय हरण कर्युं,एटले हा इतिखेदे जेनी आशा नष्ट थएली छे एवो हुं थयो छुं ॥६॥

॥ भ्रांतस्तीर्थानि दृष्टस्त्वं, मयैकस्तेषु तारकः ॥ तत्तवांघ्रौ विलग्नोस्मि, नाथ तारय तारय ॥ ७ ॥ भवत्प्रसादेनैवाहं, मियतीं प्रापितो भुवं ॥ औदासीन्येन नेदानीं, तव युक्तमुपेक्षितुम् ॥८॥ भावार्थः—हे नाथ ! हुं नाना प्रकारना तीर्थोनेविषे भ्रमण करतो हवो, परंतु ते सर्वतीर्थोने विषे में, संसारसमुद्रथी तारनारा एवा एक तमनेज अवलोकन कर्या. माटें हुं तमारा चरणकमलने विषे लग्न थयो छुं. ए माटें हे नाथ! तमें मने तारो, तारो ॥७॥ हे नाथ ! तमारे प्रसादें करीनेज हुं आ मनुष्य जन्मादिक भूमिकाप्रत्यें प्राप्त थयो छुं, ते माटें सांप्रतकालें उदासीन धर्मे करीने तमने मारी उपेक्षा करवी, ते योग्य नथी ॥ ८ ॥

॥ ज्ञाता तात त्वमेवैक,स्त्वत्तोनान्यः कृपापरः ॥ नान्योमत्तः कृपापात्र, मेधि यत् कृत्यकर्मठः ॥ ए ॥ भावार्थः—हे तातः ! तमेंज एक निपुण छो. तमाराथी बीजो कोइ दयापर नथी, अने मारा करतां बीजुं कोइ कृपा

करवाने गरीब-पात्र नथी, ए माटें तमें जे कृत्य करवामाटें योग्य गो, ते कृत्य करीने वृद्धि पामो ॥ए॥ इत्यात्मगर्हास्तवनामा षोडशः प्रकाशः॥१६॥

॥ अथ शरणगमननामा सप्तदशः प्रकाशः ॥

॥ स्वकृतं डुःकृतं गर्हन्, सुकृतं चानुमोदयन् ॥ नाथ त्वच्चरणौ यामि, शरणं शरणोज्झितः ॥ १ ॥ मनोवाक्कायजे पापे, कृतानुमतिकारिते ॥ मे मिथ्या डुःकृतं नूया, दपुनःक्रिययान्वितम् ॥२ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! आश्रयें रहित एवो हुं, पोतें करेलां पापोनी निंदा करतो थको अने पुण्यनुं अनुमोदन करतो थको तमारा चरणप्रत्यें शरण आव्यो बुं ॥ १ ॥ हे नाथ ! मारा स्वतः करवायें अने बीजा पासें करावृवे करीने उत्पन्न थयेलां जे कायिक, वाचक अने मानसिक पापो, तेनेविषे फरीने तेम न थाय, तेवी क्रिया युक्त एवुं डुष्कर्म मिथ्या हो. अर्थात् मिथ्याडुक्कड हो ॥ २ ॥

॥ यत्कृतं सुकृतं किंचि,द्रत्नत्रितयगोचरम् ॥ तत्सर्वमनुमन्येऽहं, मार्गमात्रानुसार्यपि ॥ ३ ॥ सर्वेषामर्हदादीनां, योयोर्हत्वादिकोगुणः ॥ अनुमोदयामि तं तं, सर्वं तेषां महात्मनाम् ॥४॥ नावार्थः—हे नाथ ! में, ज्ञान, दर्शनचारित्र विषयक जे कांइ पुण्य कर्युं होय,ते सर्वने केवलआचारमात्रने अनुसरनारो एवो पण हुं अनुमोदन करुं बुं ॥३॥ हे नाथ ! संपूर्ण अर्हदादिकोना एटले अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने सर्व साधुएउना अर्हत्त्व सिद्धत्वादिक जे जे गुणो बे, ते संपूर्ण एवा अर्हदादिक महात्माउना गुणो प्रत्यें हुं अनुमोदन करुं बुं ॥ ४ ॥

॥ त्वां त्वत्फलनूतान् सिद्धां, स्त्वच्छासनरतान्मुनीन् ॥ त्वच्छासनं च शरणं, प्रतिपन्नोस्मि नावतः ॥५॥ क्षमयामि सर्वान् सत्त्वान्, सर्वे क्षाम्यंतु ते मयि ॥ मैत्र्यस्तु तेषु सर्वेषु, त्वदेकशरणस्य मे ॥ ६ ॥ नावार्थः—हे नाथ ! हुं तमाराप्रत्यें अने तमारा फलनूत एटले तमारी उपासना करीने सिद्ध थयेला जे सिद्ध अने तमारा मतने विषे आसक्त एवा जे मुनियो, अने तमारुं जे शासन, ए सर्वप्रत्यें नावें करीने शरणें आव्यो बुं ॥५॥ हे नाथ ! हुं आ एकेंड्रियादिकथी मांमीने पंचेंड्रिय पर्यंत सर्वप्राणीयोने क्षमा करवानी प्रार्थना करुं बुं. ते सर्व प्राणीयो मने क्षमा करो. जेने तमेंज एक शरण गो एवो जे हुं,ते मारे सर्वप्राणीउने विषे मैत्री केतां हितबुद्धि थाउ॥६॥

॥ एकोहं नास्ति मे कश्चि, न्न चाहमपि कस्यचित् ॥ त्वदंह्रिशरणस्थ स्य, मम दैन्यं न किंचन ॥ ७ ॥ यावन्नाप्नोमि पदवीं, परां त्वदनुभा वजाम् ॥ तावन्मयि शरण्यत्वं, मामुंचः शरणं श्रिते ॥ ८ ॥ भावार्थः– हे नाथ ! हुं एक बुं, मारे बीजो कोइ नथी, अने हुं पण कोइनो संबंधी नथी, ए माटें हे नाथ! तमारा चरणनेविषे शरणें आवेला मने कांहिं पण दीनपणुं नथी ॥ ७ ॥ हे नाथ ! हुं ज्यां सुधी तमारे प्रभावें करीने प्राप्तथयेली उत्कृष्ट एवी जे मोक्षपदवी. ते प्रत्यें प्राप्त थयो नथी, त्यां सुधी हे भगवन् ! शरणागत रक्षणपणाने तमें बोडशो नहि. अर्थात् शरणें आवे लो जे हुं तेनो त्याग करशो नहिं ॥ इति सप्तदश प्रकाशः ॥ ८ ॥

॥ अथ कठोरोक्तिस्तवनामाष्टादशः प्रकाशः ॥

॥ न परं नाम मृद्वेव, कठोरमपि किंचन ॥ विशेषज्ञाय विज्ञप्यं, स्वामिने स्वांतशुद्धये ॥ १ ॥ ॥ न पक्षिपशुसिंहादि, वाहनासीनविग्रहः ॥ न नेत्र वक्त्रगात्रादि,विकारविकृताकृतिः ॥ २ ॥ भावार्थः–वली कोमलामंत्रणथी कहे बे के,हे स्वामिन् ! विशेष निपुण एवा जे तमें स्वामी,ते आपने माटें के वल अत्यंत कोमलजविज्ञापना करवी योग्यबे एम नथी ? तो कांइक पण कठोर विज्ञापना करीयें ? कारण के कठोरविज्ञापनायें पोताना अंतःकरणनी शुद्धि थाय बे ॥ १ ॥ हे नाथ ! तमें पक्षि, पशु, सिंहादिकवाहनने विषे बेठेलो जेनो देह बे एवा नथी,अने नेत्रें करीने तथा मुखें करीने अने शरीरा दिकना विकारें करीने जेनी आकृति बीभत्स अमंगल बेएवा पण नथी ॥२॥

॥ न शूलचापचक्रादि, शस्त्रांककरपल्लवः ॥ नांगनाकमनीयांग, परिष्वं गपरायणः ॥ ३ ॥ ॥ न गर्हणीयचरित, प्रकंपितमहाजनः ॥ न प्रकोप प्रसादादि, विडंबितनरामरः ॥ ४ ॥ भावार्थः–अनें तमें शूल,चाप,चक्र, इत्यादिक चिन्ह जेने विषे बे,एवा हस्तपल्लवें करी युक्त पण नथी; अने स्त्रीनुं जे सुंदर अंग, तेना आलिंगनने माटें तत्पर, एवा पण तमें नथी ॥ ३ ॥ अने निंद्य एवा आचरणे करी अत्यंत कंपने पमाडेला बे महाजन केतां शिष्टजनो जेणें,एवा पण तमें नथी; तेमज अत्यंत कोप किंवा प्रसाद,तेणें करी जेणें नर अने अमरने,विडंबन करेला बे; एवा पण तमें नथी ॥४॥

॥ न जगज्जननस्थेम, विनाशविहितादरः ॥ न लास्यहास्यगीतादि

विप्लवोपप्लुतस्थितिः ॥ ५ ॥ ॥ तदेवं सर्वदेवेभ्यः, सर्वथा त्वं विलक्षणः ॥ देवत्वेन प्रतिष्ठाप्य, कथं नाम परीक्षकैः ॥ ६ ॥ ॥ भावार्थः- अने सर्व जगतनी उत्पत्ति, पालन अने नाश-ए करवा माटे जेणें आदर कर्यो छे, एवा पण तमें नथी. अने नाटक, हास्य, गायन-इत्यादिक दुश्चेष्टितोयें करीने जेनो आचार दुष्ट छे; एवा पण तमें नथी ॥ ५ ॥ वली कोमला मंत्रणाथी कहे छे के हे नाथ ! ते माटें परीक्षा करनारा पुरुषोयें तमारुं देवरूपत्वें करीने केम प्रतिस्थापन करवुं ? कारण के तमें कहेवा छो ? तो के (एवं के०) ए पूर्वोक्त प्रकारें करीने सर्व लोक प्रसिद्ध, पशु सिंहादिवाहन रहित, सर्व हरिहरादिक देवोथी सर्वप्रकारें करी विलक्षण कहेतां भिन्न रूपज छो.

॥ अनुश्रोतः सरत्पर्णं,तृणकाष्ठादि युक्तिमत् ॥ प्रतिश्रोतःश्रयद्वस्तु, कया युक्त्या प्रतीयताम् ॥७॥ ॥अथवाऽलं मंदबुद्धि,परीक्षकपरीक्षणैः ॥ ममापि कृतमेतेन,वैयात्येन जगत्प्रभोः ॥८॥ भावार्थः-ए विषे दृष्टांत कहेवा माटें कहे छे. हे नाथ ! पर्ण केतां पांदडां; तृण अने काष्ठादिक वस्तुउ, जलप्रवाहनीसाथे वहे छे,एज योग्य छे. पछी ते तृण काष्ठादिक वस्तुउ प्रतिश्रोतः केतां जलप्रवाहनी सन्मुख गमन करनारी कोण युक्तियें प्रतीति प्रत्यें आवे ? अर्थात् कोइ पण युक्तियें ते तृणादिक वस्तुउनी प्रवाह सन्मुख गमन करवानी प्रतीति आवे नहिं ॥७॥ हे प्रभो ! अथवा तुच्छबुद्धि एवा परीक्षकोनी परीक्षायें बस. तथा हे जगत्प्रभो ! मारुं पण तमारी परीक्षाना पिष्टपेषण विषे जे उद्धतपणुं, तेणें हवे पूर्ण थयुं. कारण के तमारुं ज्ञान जे लक्षण तेज तमारी योग्यताने कहे छे, माटें निरर्थक विचारनो उपयोग शा माटे करवो ! हवे ते कयुं लक्षण ? ते आगलना श्लोकें करीने कहे छे ॥ ८ ॥

यदेवं सर्वसंसारि, जंतुरूपविलक्षणम् ॥ परीक्षंतां कृतधिय, स्तदेव तव लक्षणम् ॥ ९ ॥ ॥ क्रोधलोभभयाक्रांतं, जगदस्माद्विलक्षणः ॥ न गोचरोमृदुधियां, वीतराग कथंचन ॥ १० ॥ भावार्थः-हे नाथ ! आ पूर्वोक्त प्रकारें करीने जे संपूर्ण संसारी प्राणीना स्वरूपथी भिन्न तमारुं लक्षण छे, तेने निपुण पुरुषो, परीक्षायें जाणे छे ॥ ९ ॥ हे नाथ ! आ सर्वजगत् क्रोध, लोभ अने भय एउयें व्याप्त छे, अने वीतराग एवा तमें तो आ सर्व जगतथी भिन्न होता थका कोइ पण प्रकारें करीने कोमल बुद्धि पुरुषोने पण गोचर एटले प्रत्यक्ष थता नथी ॥ १० ॥ इत्यष्टादश प्रकाशः॥ १८ ॥

॥ अथ आज्ञास्तवनामा एकोनविंशतितमः प्रकाशः ॥

॥ तव चेतसि वर्त्तेह, मिति वार्तापि दुर्लजा ॥ मच्चित्ते वर्त्तसे चेत्त्व, मलमन्येन केनचित् ॥ १ ॥ निगृह्य कोपतः कांश्चि, कांश्चित्तुष्ट्यानुगृह्य च ॥ प्रतार्यंते मृदुधियः, प्रलंजनपरैः परैः ॥ २ ॥ जावार्थः—हे नाथ! हुं तमारा चित्तने विषे रहुं बुं, एवी वार्त्ता पण अति दुर्लज ले. परंतु हे नाथ! तमें जो मारा चित्तने विषे रहेता हो, तो पली बीजा कोइ पण साधनें करी शुं कर्त्तव्य ले? अर्थात् कांइ नहिं ॥ १ ॥ हे नाथ! प्रतारणने विषे तत्पर एवा अन्य हरिहरादिक देवोयें कोमलबुद्धि एवा पुरुष फसाव्या ले. ते केवी रीतें फसाव्या ले? तो के केटला एक लोकोने कोपें करीने अने केटला एक लोकोने तुष्टि अने पोताना अनुग्रह प्रत्यें पमाडीने फसाव्या ले ॥

॥ अप्रसन्नात्कथं प्राप्यं, फलमेतदसंगतम् ॥ चिंतामण्यादयः किंतु, फलंत्यपि विचेतनाः ॥ ३ ॥ वीतराग सपर्यात, स्तवाज्ञापालनं परम् ॥ आज्ञाराद्धा विराद्धा च, शिवाय च जवाय च ॥४॥ जावार्थः—कोइक शंका करे के जगवान् श्री वीतराग कोइने पण प्रसन्न नथी अने अप्रसन्न पण नथी. एमाटें तेनाथी उपासकोने फलप्राप्ति केम थशे? ए शंकानो परिहार करतो थको दृष्टांत कहे ले के, अप्रसन्न एवा देवगुरु इत्यादिकोथी फलप्राप्ति थवा माटें केम शक्य थशे? एवुं जे बोलवुं, ते असंगत ले. कारण के चेतनरहित एवां पण चिंतामणि, कल्पवृक्ष, अने दक्षिणावर्त्त शंखादिक ते सर्व फल देतां नथी शुं? ना देज ले ॥३॥ हे वीतराग! तमारी पूजा करवा करतां तमारी आज्ञानुं पालन करवुं ए उत्कृष्ट ले. कारण के, तमारी आज्ञाना पालन करवाथी मोक्षप्राप्ति थाय ले; अने खंमन करवाथी संसार वृद्धि थाय ले ॥४॥

॥ आकालमियमाज्ञा ते, हेयोपादेयगोचरा ॥ आश्रवः सर्वथा हेय, उपादेयश्च संवरः ॥५॥ आश्रवोजवहेतुः स्यात्, संवरोमोक्षकारणम् ॥ इतीयमार्हती मुष्टि, रन्यदस्याः प्रपंचनम् ॥६॥ हे नाथ! कर्मबंधनहेतु जे आश्रव, ते सर्व प्रकारें करीने तजवो, अने कर्मलेदननो उपाय एवो जे संवर, ते सर्वथा ग्रहण करवो. माटें (हेय के०) तजवा योग्य अने (उपादेय के०) ग्रहण करवा योग्य ले विषय जेनो एवी प्रसिद्ध जे तमारी आज्ञा ते अनादि सिद्ध ले ॥ ५ ॥ आश्रव ए संसारनुं कारण अने संवर ए

मोक्षनुं कारण जाणवुं. एवुं सूचववा माटेंज अर्हत् संबंधिनी मुष्टि एटले ग्रंथि छे. ए विना जे सर्व कथन, ते अर्हद्ग्रंथिनो विस्तार छे ॥ ६ ॥

॥ इत्याज्ञाराधनपरा, अनंताः परिनिर्वृताः ॥ निर्वांति चान्ये क्वचन, निर्वास्यंति तथाऽपरे ॥ ७ ॥ हित्वा प्रसादनादैन्य, मेकयैव त्वदाज्ञया ॥ सर्वथैव विमुच्यंते, जन्मिनः कर्मपंजरात् ॥ ८ ॥ भावार्थः—हे नाथ! ए प्रकारनी आज्ञाना आराधनमां तत्पर एवा अनंत जीवो, मोक्षने पामता हवा. अने केटलाएक जन, महाविदेहादिकने विषे मोक्षने पामे छे. तेमज बीजा केटलाएक आगल मोक्षने पामशे ॥ ७ ॥ हे नाथ! प्राणी जे छे, ते तमारी प्रसन्नता विषे याचनारूप दीनपणानो त्याग करीनें एक तमारीज जे आज्ञा तेणें करीनेज सर्व प्रकारथी ते पोतें कर्मरूप पांजरामांथी मुक्त थइ जाय छे ॥ ८ ॥ इत्येकोनविंशतितमः प्रकाशः॥ १९ ॥

॥ अथ वीतराग स्तवनामा विंशतितमः प्रकाशः॥

॥ पादपीठलुठन्मूर्ध्नि, मयि पादरजस्तव ॥ चिरं निवसतां पुण्य, परमाणुकणोपमम् ॥ १ ॥ मद्दृशौ त्वन्मुखासक्ते, हर्षबाष्पजलोर्म्मिभिः ॥ अप्रेक्ष्यप्रेक्षणोद्भूतं, क्षणात्क्षालयतां मलम् ॥ २ ॥ भावार्थः—हे नाथ! तमारा चरणपीठने विषे जेनुं मस्तक लुठन पामेलुं छे एवो जे हुं, ते मारे विषे पुण्यपरमाणु कणनी जेने उपमा छे एवी तमारी पादरज, घणा काल पर्यंत वास करो ॥ १ ॥ हे नाथ! तमारा मुखने विषे आसक्त एवी माहारी दृष्टि; हर्षें करी प्राप्त थएला अश्रुजलना तरंगें करीने अवलोकन करवा माटें अयोग्य एवा पुरुषोना अवलोकनें करी उत्पन्न थएला (मलं के०) पापने अथवा शब्दछलें करी ते थएला अनास्थारूप कर्दमने क्षणमात्रमां क्षालन करो ॥ २ ॥

॥ त्वत्पुरोलुठनैर्भूया, न्मद्भालस्य तपस्विनः ॥ कृतासेव्यप्रणामस्य, प्रायश्चित्तं किणावलिः ॥ ३ ॥ मम त्वद्दर्शनोद्भूता, श्चिरं रोमांचकंटकाः ॥ तुदंतां चिरकालोत्था, मसद्दर्शनवासनाम् ॥ ४ ॥ भावार्थः—हे नाथ! सेवन करवाने अयोग्य एवा पुरुषोने जेणें नमस्कार कर्यो छे; एवुं तुछ जे महारुं मस्तक, तेने तमारी आगल लुठनें करीने किणावलिरूप प्रायश्चित्त थाउ ॥ ३ ॥ हे नाथ! घणे कालें करीने थएलुं जे तमारुं दर्शन, तेथी

करी उत्पन्न थएला जे मारा रोमांचकंटक, ते चिरकाल उत्पंन्न थएली जे कुदर्शनवासना, तेनें नाश करो ॥ ४ ॥

॥ त्वद्वक्त्रकांतिज्योत्स्नासु, निपीतासु सुधास्विव ॥ मदीयैर्लोचनांनोजैः, प्राप्यतां निर्निमेषता ॥ ५ ॥ त्वद्रास्यलासिनी नेत्रे, त्वदुपास्तिकरौ करौ ॥ त्वद्गुणश्रोत्रिणीश्रोत्रे, नूयास्तां सर्वदा मम ॥ ६ ॥ नावार्थः–हे नाथ! मारां नेत्ररूप रात्रिविकासी कमलें, तमारा मुखचंद्रनी कांतिरूप अमृतनुंज जाणें पान होय नहिं तेवुं प्राशन करे छते ते नेत्रकमलोयें (निर्निमेषता के०) मेषोन्मेषरहितपणुं अथवा देवतापणुं पाम्युं छे ॥५॥ हे नाथ! मारां नेत्रो तमारा मुखना अवलोकनने विषे निरंतर विलासशील थाउ. एटले तत्पर थाउ. अने म्हारा हस्त, तमारी सेवा करनारा थाउ; अने म्हारा कर्ण, निरंतर तमारा गुणनुं श्रवण करनारा थाउ ॥ ६ ॥

॥ कुंगपि यदि सोत्कंग, त्वद्गुणग्रहणं प्रति ॥ ममैषा नारती तर्हि, स्वस्ते तस्यै किमन्यया ॥ ७ ॥ तव प्रेष्योस्मि दासोस्मि, सेवकोस्म्यस्मि किंकरः ॥ उमिति प्रतिपद्यस्व, नाथ नातः परं ब्रुवे ॥ ८ ॥ नावार्थः–हे नाथ! आ मारी वाणी, तमारी स्तुति करवा माटें कुंगित थइ छती पण तमारा गुणग्रहण प्रत्यें जो उत्कंग युक्त छे तो आ वाणीनुं कल्याण थाउ. तमारा गुणविषे उत्कंगित न होनारी वाणीयें शुं कर्त्तव्य छे? अर्थात् कांइ नथी. एटले तमारा गुणरहित जे वाणी होय, ते वाणी निष्फल जाणवी ॥७॥ हे नाथ! हुं तमारो प्रेष्य छुं, दास छुं, सेवक छुं अने किंकर छुं. आहिं प्रेष्य, दास, सेवक, किंकर, एं सर्वशब्द कर्मकरवाचक छे. तेमाटें हे नाथ! पूर्वोक्त प्रेष्यादिशब्दयुक्त जे हुं, ते मारो अंगीकार करो. हुं हवे पछी आगल कांइ बोलतो नथी; एथी अधिक बोलवा हुं समर्थ नथी॥८॥

॥ श्रीहेमचंद्रप्रनवा, द्वीतरागस्तवादितः ॥ कुमारपालनूपालः, प्राप्नोतु फलमीप्सितम् ॥ ए ॥ नावार्थः–ए कारण माटें कुमारपालराजा, आ वीतरागना स्तवथी इच्छित फलने पामो. ते वीतरागस्तवं केहवो छे? तो के श्रीहेमचंद्रप्रनवात् एटले हेमचंद्रसूरिथी छे (प्रनवात् के०) उत्पत्ति जेनी, एवो छे ॥ ए ॥ इति वीतरागस्तवनामा विंशतितमः प्रकाशः ॥२०॥ इत्याचार्य श्रीहेमचंद्रसूरिविरचित बालावबोधसहितः श्रीवीतरागस्तवः संपूर्णः ॥

॥ श्रीगौतमगुरुभ्यो नमः ॥

अथ

॥ संक्षिप्त बालावबोध सहिता श्रीगौतमपृछा प्रारभ्यते ॥

तत्र

प्रथम बालावबोधकर्त्ता मंगलाचरण करे छे.

॥ नत्वा वीरजिनं बाला, वबोधोलिख्यते मया ॥ श्रीमद्गौतमपृछाया, वाचनार्थं विशेषतः ॥१॥ श्रीसोमसुंदर श्री, मुनिसुंदरमहिशालराजेंद्राः ॥ श्रीसोमदेवगुरवो, जयंति जिनकल्पवृक्षसमाः ॥ २ ॥

हवे प्रथम ग्रंथकर्त्ता मंगलाचरण मातें गाथा कहे छे.

॥ नमिऊण तिछनाहं, जाणंतो तहय गोयमो नयवं ॥ अबुहाण बोह णछं, धम्माधम्मं फलं वुछे ॥ १ ॥ नावार्थः—तीर्थना नाथ एवा श्रीमहावीर नगवानने नमस्कार करीने श्रुतकेवली एवा श्रीगौतमस्वामी पोतें चार ज्ञानना धणी श्रुतज्ञानना बलें करी असंख्याता नव संबंधि संदेहने पोतें जाणता छता पण अबोध जीवोने बोध थवाने अर्थें अडतालीश पृछायें करी पुण्य पापनुं फल श्रीमहावीर देवप्रत्यें पूछता हवा ॥ १ ॥

हवे दश गाथायें करी अडतालीश पृछानां नाम कहे छे.

॥ नयवं सच्चिय निरयं, सच्चिय जीवो पयाइ पुण सग्गं ॥ सच्चिय किं तिरिएसु, सच्चिय किं माणुसो होइ ॥ २ ॥ सच्चिय जीवो पुरिसो, सच्चिय इछी नपुंसउ होइ ॥ अप्पाऊ दीहाऊ, होइ अनोगी सनोगी य ॥ ३ ॥ केणव सुहउ जायइ, केणव कम्मेण दूहउ होइ ॥ केणव मेहाजुत्तो, डुम्मेहो कह नरो होइ ॥ ४ ॥ कह पंमिउत्ति पुरिसो, केणव कम्मेण होइ मुरकत्तं ॥ कह धीरु कह नीरू, कह विज्जा निप्फला सफला ॥ ५ ॥ केणव नासइ अछो, कह वा संमिलइ कह थिरो होइ ॥ पुत्तो केण न जीवइ, बहु पुत्तो केण वा बहिरो ॥ ६ ॥ जच्चंधो केण नरो, केण विज्जुत्तं न जिम्मइ नरस्स ॥ केणव कुष्ठी कुज्जो, केणव कम्मेण दासत्तं ॥ ७ ॥ केण दरिद्दो पुरिसो, केणव कम्मेण ईसरो होइ ॥ केणव रोगी जायइ, रोग विहूणो हवइ केण ॥ ८ ॥ कह हीणंगो मूउ, केणव कम्मेण टूंटउ पंगू ॥ केणव रूवो जायइ, रूव विहूणो हवइ केण ॥ ९ ॥ केणव बहुवेयणत्तो, केणव

कम्मेण वेयण विमुक्को ॥ पंचिंदिउवि होइ, केणव एगिंदिउ होइ ॥ १० ॥ संसारो कहवि थिरो, केणव कम्मेण होइ संखित्तो ॥ कह संसार तरिउं, सिद्धिपुरं पावए पुरिसो ॥ ११ ॥ इति ॥

जावार्थः—हे जगवन्! (सच्चियनिरयं के०) सएव एटले तेज जीव नरकें केम जाय? वली २ तेहीज जीव स्वर्गें पण केम जाय? वली ३ तेहीज जीव तिर्यंच केम थाय? वली ४ तेहीज जीव मनुष्य जन्म पण केवी रीतें पामे? ॥२॥

वली हे जगवन्! ५ तेहीज जीव पुरुष केम थाय? ६ तेहीज जीव स्त्री केम थाय? ७ तेहीज जीव नपुंसक केम थाय? वली तेहीज जीव अल्पायुष्य वालो केम थाय? ए वली तेहीज जीव महोटा आयुष्यवालो केम थाय? १० वली तेहीज जीव जोगरहित केम थाय? ११ वली तेहीज जीव, महोटा जोग जोगवनारो केम थाय ॥ ३ ॥

वली हे जगवन्! १२ कया कर्मना उदयथी जीव सौजाग्यवंत थाय? १३ वली कया कर्मने योगें जीव डुर्जागी थाय? १४ वली कया कर्मने योगें जीव, (मेहाजुत्तो के०) मेधा जे बुधि तेणे करी युक्त एटले बुद्धिमान् थाय? १५ वली कया कर्मनेयोगें जीव हीन बुद्धिवालो थाय? ॥ ४ ॥

वली १६ कया कर्में करी पुरुष पंमित थाय? तथा १७ कया कर्मने योगें मूर्ख थाय? तथा १० कया कर्मने योगें धीर साहसिक थाय? अने १ए कया कर्मने योगें जीरु एटले बीकण थाय? तथा २० कया कर्मने योगें जणेली विद्या निःफल थाय? अने २१ कया कर्मने योगें जणेली विद्या सफल थाय? ॥ ५ ॥

वली हे जगवन्! २२ कया कर्मने योगें प्राप्त थयेली लक्ष्मी जती रहे? अने २३ कया कर्मने योगें घणी लक्ष्मी प्राप्त थाय? २४ वली कया कर्मने योगें तें पुरुषने थयेला पुत्रो जीवता न रहे? २५ तथा कया कर्मने योगें घणा पुत्रो थाय? तेमज २६ कया कर्मने योगें जीव बहेरो थाय? ६

वली २७ कया कर्मने योगें ते जीव, जात्यंध थाय? तथा २० कया कर्मने योगें जीवने जमेलुं अन्न पचे नहिं? एटले अपचो अजीर्ण थाय? तथा २ए कया कर्मने योगें जीव कोढ रोगवालो एटले कोढीयो थाय? अने ३० कया कर्में करी जीव कूबडो थाय? तथा ३१ कया कर्मने योगें ते जीव, दासपणुं पामे? ॥ ७ ॥

वली ३२ कया कर्मे करी जीव दरिद्री थाय? तथा ३३ कया कर्मना उदयथी जीव धनवंत थाय? तथा ३४ कया कर्मे करी ते जीव रोगी थाय? तथा ३५ कया कर्मने योगें जीव नीरोगी थाय? ॥ ८ ॥

वली ३६ कया कर्मने योगें जीव हीन अंगवालो थाय? तथा ३७ कया कर्मने उदयें जीव, मुंगो तथा बोबडो थाय? तथा ३८ कया कर्मने उदयें जीव ठूंठो थाय, तथा ३९ कया कर्मने योगें जीव पांगलो लंगडो थाय? तथा ४० कया कर्मे करी जीव घणो स्वरूपवंत थाय? तथा ४१ कया कर्मे करी हीन रूपवालो एटले रूपरहित थाय? ॥ ९ ॥

वली ४२ कया कर्मे करी जीव अत्यंत वेदनायें करी पीडित थको रहे? तथा ४३ कया कर्मथकी जीव वेदना रहित थको शातामां होय? तथा ४४ कयाकर्मे करी जीव पंचेंद्रियपणुं पामे? अने ४५ कया कर्मे करी जीव, एकेंद्रियपणुं पामे? ॥ १० ॥ वली ४६ कया कर्मने योगें जीव, घणो काल संसारमां स्थिर थको रहे? तथा ४७ कया कर्मने योगें पुरुष संसारमां स्वल्प काल रहे, तथा ४८ कया कर्मने योगें जीव संसार समुद्र तरिने मोक्ष नगरप्रत्यें जाय? ॥ ११ ॥

॥ हवे गौतमस्वामी ए अडतालीश प्रश्न प्रत्यें पूछी पछी ते प्रश्नना उत्तरनी जिज्ञासावंतथका वली पण कहे छे ॥

॥ सव्वजगजीव बंधव, सवन्नू सव्वदंसण मुणिंद ॥ सवं साहुसु भयवं, कस्सव कम्मस्स फल मेयं ॥ १२ ॥. भावार्थः—हे भगवन्! तुं सर्व जगत वासी जीवोनो बांधव छो,वली सवन्नू एटले सर्वज्ञ छो,अर्थात् सर्ववस्तुनो जाण छो, तथा सव्वदंसण एटले सर्ववस्तुनो देखवा वालो छो, तथा केवल ज्ञानें करी सर्व मुनियोमां भगवान् एटले इंद्र छो,माटें में जे जे प्रश्न पूछ्यां, ते सर्व, कया कया कर्मनां फल छे? ते सबंधी सर्व वात कहो ॥ १२ ॥

एवं पुछो भयवं, तियसिंद नरिंद नमिय पयकमलो ॥ अह साहिउं पयत्तो, वीरोमहुराइ वाणीए ॥ १३ ॥ भावार्थः—ए प्रकारनी पृछा श्रीगौतम स्वामीयें कह्या पछी तियसिंद एटले त्रिदश जे देवता तेना इंद्र अने नरिंद जे राजाउ तेजेना पद्कमलने नमे छे एवा श्रीवीर भगवान् ते मधुरी वाणीयें करी प्रश्नना उत्तर प्रत्यें कहेवा माटें पयत्तो एटले प्रवर्त्त्या ॥ १३ ॥

इहां परमेश्वरनी वाणी सांभलतां थकां जीवने कष्ट, भूख, तृषा, जा

एवामां आवे नहिं. ते ऊपर कोइ एक वृद्धस्त्रीनी एटले मोशीनी कथा कहे ले:—एक गाममां कोइ वणिक रहे ले, तेने घेर एक मोकरी चाकर ले, ते घरनुं वेयावच्च करे ले. एकदा ते मोकरी इंधण लेवा माटें वनमां गइ. ते मध्यान्हें जूख अने तृषायें पीडाणी, तेथी थोडांक इंधण लइने पाली घेर आवी. तेनें देखीने शेठें कह्युं के अरे मोशी! आजे इंधण थोडां केम लावी? वली बीजां इंधण लइ आव. ते सांजली फरी तेवीज पाली वनमां गइ, ते पण बपोरनो वखत हतो तेथी लू अने तापनें सहन करती थकी काष्ठजारी ऊपाडी चाली. मार्गमां एक मूलनुं काष्ठ नीचें पडी गयुं तेने उपाडवा लागी, एटलामां श्रीवीर जगवाननी वाणी सांजलवामां आवी, तेथी तिहांज ऊनी रही, तेने योगें जूख तृषा अने तापनी वेदना तेने जाणवामां न आवी. अने धर्मदेशना सांजली हर्ष पामती सांजे घेर आवी. तेने शेठें घेर आववामां असूर थयानुं कारण पूछ्युं, तेवारें तेनी आगल खरेखरी वार्त्ता कही संजलावी. तेवारें शेठें पण तेणें श्रीमहावीरना वचन सांजल्यां, तेथी ते थिविरामां धर्मनो गुण जाणीने तेने बहुमान दीधुं. तेने योगें ते सुखी थइ. ए रीतें परमेश्वरनी वाणी सांजलवाथी डुःख टली जाय ले. उक्तं च ॥ दोहो ॥ जिनवरवाणी जे सुणे, नर नारी सुविहाण ॥ सूक्ष्मबादर जीवनी, रक्षा करे सुजाण ॥ १ ॥ पदाद्य ह्रें नमीयें. ए श्रीजिनवाणी महिमा ऊपर मोकरीनी कथा कही.

हवे वीर जगवान् कहे ले के हे गौतम! जे प्रश्न तुं मुजने पूछे ले, ते सर्व वानां एकज जीव पोतें पोताने कर्मने वश थयो थको पामे ले, जे कर्म स्वरूप हुं तुजने कहुं लुं, ते सांजल. एम कही हवे जगवान् पूर्वोक्त अडतालीश प्रश्नोना उत्तर कहे ले. तिहां प्रथम जीव कया कर्मने योगें करी नरकें जाय? तेनो उत्तर त्रण गाथायें करी कहे ले.

॥ गाथा ॥ जे घायइ सत्ताइं, अलियं जंपेइ परधणं हरइ ॥ परदारं चिय वंचइ, बहुपाव परिग्गहासत्तो ॥ १५ ॥ ॥ चंमो माणी थिद्धो, मायावी निठुरो खरो पावो ॥ पिसुणो संगह सीलो, साहूणं निंदउ अहमो ॥ १६ ॥ आलप्पाल पसंगी, डुठ्ठो बुद्धिइ जो कयग्घो य ॥ बहुडुरक सोग पउरे, मरिउं नरयम्मि सो जाइ ॥ १७ ॥ जावार्थः—जे १ (सत्ताइं के०) जीवोनी (घायइ के०) घात करे एटले जीवहिंसा करे, तथा २ (अलियं जं

पेइ के०) अलिक एटले जूठुं वचन बोले, तथा जे ३ पारका धननुं हरण करे, एटले चोरी करे, तथा जे ४ परदारं एटले पारकी स्त्री सार्थे गमन करे, तथा जे ५ घणा पापपरिग्रहने विषे आसत्तो एटले आसक्त होय. ए रीतें पांच अणुव्रतने जे विराधे, ते. जीव. नरकनुं आयुष्य बांधे ॥ १५ ॥ तथा जे ६ चंमो एटले प्रकृतियें अत्यंत रीसाल होय, ७ माणी एटले मानी अहंकारी होय, धिट्ठो एटले धृष्ट ते कोइने नमे नहीं, ८ मायावी कपटी होय. ए निठुरो निष्ठुर ते कठोर चित्तवालो होय, १० खर ते रौद्रस्वभाववालो होय, ११ पावो एटले पापी होय, १२ पिशुन एटले पारकी चाडी करनारो होय, १२ दुर्जनता परायण होय, १३ अतिपाप हेतु वस्तुनो संग्रहशील होय, १४ साधुनी निंदा करे, उपलक्षणथी साधुनो प्रत्यनीक होय, १६ अधम नीचस्वभाववालो होय ॥ १६ ॥ आलप्पाल एटले असंबंध वचन बोले, १७ दुष्टबुद्धिवालो होय, १८ तथा जे कृतघ्न होय एटले करेला उपकारने न जाणे, (सो के०) ते जीव, मरण पामीने प्रचुर एटले घणां दुःख अने शोक तेणे करीने भरेला एवा नरकने विषे जाय ॥ १७ ॥

इहां प्रथम हिंसा आश्रयी आठमो.सुभूम नामा चक्रवर्त्ती घणा पापोयें करीने नरकें गयो. तेनी कथा कहे छेः—वसंतपुरी नगरीना वनमध्यें एक आश्रमें जमदग्नि तापस रहेतो हतो, ते, घणां कष्ट सहन करतो तपस्या करे, शिवनुं ध्यान हृदयमां धारण करे, तेना योगें ते तापस सर्वत्र प्रसिद्धताने पाम्यो. एकदा देवलोकने विषे एक धन्वंतरि नामें देव तापसभक्त मिथ्यादृष्टि छे,अने बीजो विश्वानर नामें देव, जिनभक्त सम्यक्दृष्टि छे. ए बेहु मित्र छे ते बेहु मित्र शूरतापणे पोतपोताना अंगीकार करेला धर्मनां वखाण करवा लाग्या. एकें कह्युं के श्रीजिनधर्म समान कोइ धर्म नथी तो बीजायें कह्युं के शिव धर्म समान बीजो कोइ धर्म नथी. पछी बेहु देवोयें एवो ठेराव कर्यो जे आपणे बेहु धर्मना गुरुउनी परीक्षा करीयें? ते वखतें जिनधर्मी देव बोल्यो के श्रीजिनधर्म मांहेलो जे जघन्य नवीन दीक्षित गुरु होय, तेनी परीक्षा करीयें. अने शिवधर्ममांहे जे चिरंतनकालनो महातपस्वी गुरु होय, तेनी परीक्षा करीयें, ते उपरथी सारा नरसानी समजण तरत पडशे ! एवो निश्चय करी ते बेहु देवो पृथ्वीतल उपर आव्या.

॥ ते वखत मिथिलानगरीना पद्मरथराजा, राज त्यागीने चंपानगरीयें

श्रीवासुपूज्य स्वामी पासेंथी तरतनी दीक्षा लेइने वल्यो हतो, तेने रस्ता मां आवतो देखीने प्रथम तेनीज परीक्षा करवा माटें अनेक प्रकारनां मिष्टान्न भात पाणी सरस बनावीने तेने देखाड्यां. ते साधु भूख्यो तरस्यो हतो, तथापि तेणें ते मिष्टान्ननें असुजतां जाणी लीधां नही. पोताना साहसथी चल्यो नही. तेवारें ते देवोयें एक रस्ते कांटा कांकरा विकूर्व्या, अने एक तरफना रस्ता उपर घणा न्हानां न्हानां देडकां विकूर्व्यां, तो पण ते महात्मा देडकां तरफना मार्गने छांमीने जे रस्ते कांटा कांकरा हता, ते रस्तेथी चालवा लाग्यो, तेने जो पण कांटाने योगें पगमांथी लोहीनी धारा चाली जाय छे, तो पण क्षोभ पाम्यो नहिं. ते पछी त्रीजी परीक्षामां ते साधुनी आगल देवोयें गीत नाटक कर्यां, स्त्रीयोनां रूप बनावीने क्षोभवी जोयो, तो पण ते क्षोभाणो नहिं. तेवारें चोथी परीक्षा करवा माटें वली ते देवो निमित्तियानां रूप विकूर्वी साधुनी पासें आवीने कहेवा लाग्या के हे महात्मन्! अमें निमित्तशास्त्रना बलथी कहीयें छेयें जे तमारुं आयुष्य हजी घणुं छे, माटें हमणां यौवनावस्थायें भोग भोगवी, पछी वृद्धावस्थामां चारित्र लइ तप करजो. ते सांभली साधु बोल्या के हे सिद्धपुरुषो! जो म्हारुं आयुष्य घणुं हशे, तो हुं घणा काल पर्यंत चारित्र पालीश ! तेथी घणा कर्मनी निर्जरा थशे ! वली हमणां लघुवयमां तप थइ शकशे, परंतु जरा अवस्था प्राप्त थया पछी कांइ विशेष तप थाय नहीं ! एवी ते साधुनी दृढता जोइ देवो हर्ष पामी जिनधर्मनी प्रशंसा करवा लाग्या.

हवे ते बेहु देवो आगल जतां वनमांहे घणा कालनुं तप करता, मोटी जटावाला, एकांत ध्यानें रहेला एवा जमदग्नि नामक तापसने दीठो. तेनी परीक्षा करवाने अर्थें ते बेहु देवो, चकला अने चकलीनुं रूप धारण करी ते ऋषिनी दाढीना वालमांहे मालो करी रह्या. एवामां चकलो मनुष्यनी भाषायें चकलीने कहेवा लाग्यो के हुं हिमवंतपर्वतें जइ आवुं, तिहां सुधी तुं इहां रहेजे ? ते वात चकलीयें न मानी अने कहेवा लागी के तुं तिहां जइने बीजी कोइ चकली साथें आसक्त थइ जा. तो म्हारा शा हवाल थाय ? तेवारें चकलो बोल्यो के जो फरी नहीं आवुं तो म्हारा उपर गोहत्या, स्त्रीहत्यादिकनुं पाप छे. इत्यादि वातो कही. परंतु चकलीयें कांहि मान्युं नहिं, अने कहेवा लागी के जो तुं कोइ चकली सा

थें यारी करें तो आ ऋषिनुं जेटलुं पाप ठे, ते सर्व पाप तह्मारी ऊपर पडे. एवी रीतनी प्रतिज्ञा कर, तो तुजने जवा दउं.

ते वात सांजलतांज जमदग्नि तापस रीशें जराणो थको दाढीमूठमां हाथ नाखी, ते बेहुने पकडीने पूठवा लाग्यो के अरे! हुं कठिण तप करीने पापोनो नाश करुं छुं, तेम ठतां तमें मुजनें पापी कहीने केम बोलावो ठो? तेवारें चकली बोली के हे ऋषि! तमें कोप म करो. अने आंपणुं शास्त्र जूउ. कह्युं ठेके ॥ अपुत्रस्यं गतिर्नास्तिं, स्वर्गोनैव च नैव च ॥ तस्मात् पुत्रमुखं दृष्ट्वा, स्वर्गं गह्वंति मानवाः ॥ १ ॥ माटें अपुत्रीयाने गति नथी अने स्वर्ग पण नथी अने तमें पण अपुत्रीया ठो, तेथी तमारी गति किहां ठे? ते वात ऋषियें सत्य करी मानी लीधी. अने विचार्युं जे कोइक स्त्रीं सार्थे पाणिग्रहण करीने पुत्र उपजावुं! पठी तपनो त्याग करीने कोष्टिक नगरें जितशत्रु राजानी घणी पुत्रीयो ठे, एवुं सांजली विचारवा लाग्यो के चालं तेनी पासें जइ हुं कन्यानी याचना करुं! ए रीतें ऋषिने चलायमान थयेला जोइने मिथ्यात्वी देव जे हतो, तेणें श्रावकधर्म अंगीकार कर्यो.

हवे तापस, राजापासें कन्यानी याचना करवा गयो, तिहां राजा आसनथी उठी साहामो आव्यो. ऋषियें कन्यानी मागणी करी तेवारें राजायें तापसने कह्युं के मह्मारी सो पुत्रीयो ठे तेमां जे तमारी वांठा करे, तेने तमें अंगीकार करो. ते सांजली ऋषि पण अंतेउरमां गयो. तिहां ते कन्याउ तेनें जटाधारी, दूबलो, जीख मागीने खावावालो, धोला केशवालो, असंस्कारी शरीरवालो देखी थुंकीयो तेथी ते ऋषि,रोषित थइ पोताना तपने प्रजावें करी ते सर्व कन्याउने कूबडी अने कुरूपिणी करी तुरत पाठो वल्यो. तिहां आंगणा आगल धूलमां रमत करती एवी राजानी एक पुत्री दीठी. तेने हाथमां बीजोरुं लइ कहेवा लाग्यो के हे रेणुका! तुं मुजने वांठे ठे? तेवारें ठोकरीयें बीजोरां तरफ पोतानो हाथ घाल्यो ते देखी ऋषियें जाण्युं जेए मुजने वांठे ठे,एम विचारी तेने ऊपाडी लइ गयो. राजा पण शापना जयथी बीहीतो थको सहस्र गोकुल तथा दास दासी सहित ते कन्या ऋषिने दीधी, ऋषीयें बीजी सो कन्याने पोतानी सालियोना स्नेहथी तपने बलें कूबडापणुं टाली सारी कीधी. ए रीतें सर्व तपस्या गमावीने ते कन्याने वनमां आश्रमस्थानकें लइ आव्यो. तिहां लाली पाली यौवनवय

प्राप्त करी महास्वरूपवान् थयेली जोइ,तेनी साथें अग्निनी साखें फरी पाणिग्रहण कीधुं. ऋतुकालें तेने कहेवा लाग्यो के हुं एक चरु मंत्रें करी साधी तुजने आपुं के जेथी तहारे घणोज रुडो एवो ब्राह्मण पुत्र थाशे! तेने रेणुकायें कह्युं के मंत्रें करी बे चरु साधजो. जेथेकी एक ब्राह्मण पुत्र थाय, अने बीजो क्षत्रियपुत्र थाय. केम के क्षत्रिय पुत्र महारी बहेन जे हस्तिनापुरें परणी छे तेने आपशुं. पछी ऋषियें बे चरु मंत्रें साधीने स्त्रीने आप्या. तेवारें रेणुकायें चिंतव्युं जे महारो पुत्र क्षत्री महाशूरवीर थाय तो हुं आ जंगलमां रहेवाथी छूटुं! एवा हेतुथी क्षत्रिय औषध पोतें खाइ गइ अने ब्राह्मण औषध पोतानी बहेनने माटें हस्तिनापुरें मोकल्युं. तेणीयें खाधुं.

हवे धूलीना ढगलामां रमत करती हती माटें एनुं नाम रेणुका पाडी दीधुं. तेने राम एवे नामें पुत्र थयो अने बहेनने कृतवीर्य एवे नामें पुत्र थयो. एवामां अतिसार रोगें करी पीडित एवो एक विद्याधर ते आश्रमें आव्यो. ते अतिसारना प्रभावथी आकाशगामिनी विद्या भूली गयो. तिहां ते विद्याधरनी रामें घणी औषधादिक संबंधी सार संभाल कीधी, तेथी ते विद्याधरें हर्षवंत थइने रामने परशु नामें विद्या आपी. तेने रामें साधी लीधी. तेने योगें ते परशुराम एवे नामें जगत्मां प्रसिद्ध थयो. देवताधिष्ठित कुठार प्रहरण लइने फरतो रह्यो.

हवे एकदा जमदग्निनी आज्ञा लइने रेणुका पोतानी बहेनने मलवा माटे हस्तिनापुरें गइ. तिहां रेणुकाने पोतानी साली जाणीने अनंतवीर्य राजा तेनी हांसी मश्करी करवा लाग्यो. अने रेणुकानुं घणुं सुंदररूप जोइ राजा कामातुर थइ निरंकुशपणे रेणुका साथें विषय सेववा लाग्यो. तेना योगथी रेणुकाने वली एक पुत्र थयो. पछी जमदग्नि ते पुत्र सहित रेणुकाने पोताने आश्रमें तेडी लाव्यो अने तेने पुत्र सहित दीठी,तेवारें परशुरामें क्रोधमां आवी परशुयें करी तरत पोतानी माता तथा भाइना मस्तको छेदी नाख्यां. ते वात सांभली अनंतवीर्य राजा क्रोधें भर्यो थको सेना लइ आवी जमदग्निना आश्रमने बालीने त्रोडी फोडी नाख्यो अने सर्व तापसोने त्रास पमाड्या. ते तापसोनो ककलाट सांभली परशुराम तिहां आव्यो, तेणें अनंतवीर्यने मारी नाख्यो. प्रधान लोकोयें ते वात सांभलीने अनंतवीर्यना पुत्र कृतवीर्यने हस्तिनापुरनी गादीयें बेसाड्यो. तेणें एक

दिवसें पोतानी माताना मुखथी बाप मार्यानुं वैर जाणी आश्रमें जइ ज मदग्नि ऋषिने मारी नाख्यो, ते वात परशुरामें सांजली तेवारें हस्तिनापुरें आवीने कृतवीर्यने मारी पोतें राजगादीयें बेगो, ते वखत कृतवीर्यनी तारा नामें राणी सगर्जा हती, ते परशुरामना जयथी नाशीने वनमां गइ. तेनी उप र कोइ तापसें दया आणीने पोताना आश्रमना जोंयरामां बुपावी राखी. ति हां तेणीयें चौद सुपन सूचित पुत्रने जन्म आप्यो. तेनुं नाम सुजूम पाड्युं.

हवे परशुरामें क्षत्रीयो ऊपर रोष करी फरी फरी सात वखत निःक्षत्री पृथ्वी कीधी, जिहां क्षत्री होय तिहां परशुरामनो कुहाडो जाज्वलमान थाय. एकदा जे स्थानकें राणी बूपी पेठेली ठे, ते आश्रमें आवतां परशु रामनो कुहाडो जाज्वलमान थयो, तेवारें परशुरामें तापसोने पूठ्युं के इहां कोइ क्षत्री ठे? तेवारें तापसो बोल्या के गृहस्थावासमां अमें सर्व क्षत्री हता, तेवारें तेने ऋषियो जाणी ठोडी दीधा. एम परशुरामें सर्वक्षत्रियोने मारीने तेमनी दाढाउ लइने एक थाल जर्यो. एकदा परशुरामें ठानुं कोइ निमित्तियाने पूठ्युं के मारुं मरण केवी रीतें थाशे? तेवारें निमित्तियायें कह्युं के जेना देखवाथी आ दाढाउ खीररूप थाशे, अने आ ते खीरने सिंहासन ऊपर बेसीने जे जमशे, तेना हाथथी तारुं मरण थाशे.

ते वात सांजली परशुरामें एक दानशाला मंमावी तेनी आगल एक सिंहासन रचाव्युं अने दाढाउनो थाल सिंहासन ऊपर रखाव्यो.

एवा अवसरें वैताढ्यपर्वत ऊपर मेघनाद नामा विद्याधरें पोतानी पु त्रीनो वर कोण थाशे? ते माटें निमित्तियाने पूठ्युं. निमित्तियायें सुजूम वर बताव्यो, तथा सर्व तेनी हकीगत कही संजलावी, तेवारें ते विद्याधर पोतानी पुत्री लइने सुजूमना आश्रमें आव्यो, तिहां पोतानी पुत्री सुजू मने परणावी दीधी. अने पोतें पण सुजूमनो सेवक थइ रह्यो.

एकदा सुजूमें पोतानी माताने पूठ्युं के हे माता! पृथ्वी शुं आटलीज ठे? तारे तेने मातायें कह्युं के पृथ्वी तो घणीज ठे. तेमां एक माखीना पांख जेटली जगामां आ आश्रम ठे. तेमां आपणे परशुरामना जयथकी रह्या ठैयें! तथा आपनी पोतानी राजजूमि हस्तिनापुर ठे. इत्यादि सर्ववृत्तांत कही संजलाव्युं. ते सांजली सुजूम रीशें जराणो जोंयराथी बाहिर निकल्यो अने मेघनाद विद्याधर सहित हस्तिनापुरमां जिहां दानशाला ठे, तिहां

गयो. तेनी नजर पडतांज क्षत्रीनी दाढानो थाल खीररूप थयो. तेने ज
मवा लाग्यो, ते जोइ परशुरामना रखवाला ब्राह्मणो तेने मारवा माटें
दोड्या, तेमने मेघनाद विद्याधरें त्रास पमाडी मारी नाख्या. परशुराम
पण ते वात सांभली तिहां आव्यो. अने सुभूमने मारवा माटें परशु च
लाव्यो,ते परशु सुभूमनी दृष्टियें पडतांज अंगारानी माफक उलवाइ गयो,
अने सुभूमें परशुरामनी ऊपर थालज उपाडीने मूक्यो, ते थाल फीटीने
चक्ररत्न थयो, तेणें परशुरामनुं मस्तक छेदी नाख्युं.

पछी जेम परशुरामें सात वार निःक्षत्री पृथ्वी करी, तेम परशुरामना
वैरी सुभूमें एकवीश वार निर्ब्राह्मणी पृथ्वी कीधी, कोइ पण जाणमां रही
गयो एवो ब्राह्मण जीवतो राख्यो नहिं. चक्ररत्नने बलें छ खंड पृथ्वी साधी
ने चक्रवर्त्ती थयो. पछी लोभनो वाह्यो थको धातकी खंडनुं भरत क्षेत्र सा
धवा माटें लवणसमुद्रमांहे चर्मरत्न ऊपर कटक चडावीने लवणसमुद्रमां
हे चालतो थको वचमां अधिष्ठित सर्व देवोयें सहाय आपवाने पडतो मू
क्यो, तेथी समुद्रमां बूडी मरण पामी अनेक जीवहिंसाना पातकें करी
सातमी नरकें गयो ॥ इति जंतुघात विषे बहुपाप परिग्रहासक्त सुभूमच
क्रीनी कथा समाप्त ॥

॥ हवे बीजा प्रश्ननो उत्तर एक गाथायें करी कहे छेः— ॥

॥ गाथा ॥ तव संजम दाण रउ, पयईए भद्दउ किपालूउ ॥ गुरुवयण
रउ निच्चं, मरिउं देवेसु सो जाइ॥ १७॥ भावार्थः—जे जीव, तप,
संयम अने दान तेने विषे रक्त होय,सहज प्रकृतियें भद्रक परिणामी हो
य, कृपालु दयावंत होय, गुरुना वचन उपर निरंतर रक्त होय, गुरुना क
ह्या प्रमाणें चाले, ते जीव मरीने देवलोकमां जइ ऊपजे ॥ १७ ॥ जेम
आनंद श्रावक तपस्या करी प्रतिमा आदरी, दान देइ, श्रीमहावीरदेव गु
रुना वचन ऊपर निरंतर रक्त, दयावंत, भद्रक परिणामी थको, अवधिज्ञा
न पामी देवपदवी पाम्यो, माटें ए बीजा उत्तरंआश्रयी आनंद श्राव
कनी कथा कहे छे.

वाणिज्य नामा ग्रामें जितशत्रु राजा राज्य करे छे. तिहां आनंद ना
में गृहस्थ रहे छे. तेनी शिवनिंदा नामें स्त्री छे. घरमां बार क्रोड सुवर्ण छे,
दश हजार गायनुं एक गोकुल, एवां चार गोकुल छे, वली ते गामथी ईशा

न खूणें कोल्लाग ग्रामें आनंद श्रावकना सगां सणीजा संबंधी घणा वसे छे.

एवामां एकदा तिहां द्युतिपलाश नामा वनने विषे,श्रीमहावीर स्वामी आवी समोसस्था. तेमने जितशत्रु राजा अने आनंद गृहस्थादि वांदवा माटें आव्या. तिहां श्रीवीरजगवान्नी धर्मदेशना सांजलीने आनंदें श्राव कनां बार व्रत पडिवज्यां, तेमां पांचमा परिग्रह परिमाणव्रतने विषे चार क्रोड सुवर्ण थापण राखवुं, चार क्रोड व्याजें आपवुं, अने चार क्रोड व्यापार माटें राखवुं. एम सर्व मली बार क्रोड सुवर्ण अने एक गोकुल मां दश हजार गाय होय तेवा चार गोकुल गायोनां राख्यां. तेमज खेतर खेडवा माटें पांचशें हल मोकलां राख्यां, तथा पांचशें शकट बाहिर देशां तर मोकलवा योग्य अने पांचशें शकट,घरनां कामकाज करवा योग्य खे त्रमांथी धान्य काष्ठ अने तृणादि लाववा माटें राख्यां. तथा जलमार्गें जो परदेशें जाउं तो.चार वहाण अने चार वहाण क्षेत्रथी धान्यादि लाववा माटे. ए रीतें आठ वहाण फेरववा राख्यां. तथा स्नान करी राते धोतीयें अंगलू हण करवुं ऊपरांत अंगलूहणानो नियम कस्थो, तथा नीला जेठीमधनुं दांतण करवुं, तथा क्षीरामलक फल टाली बीजा फलना नियम कस्था, तथा शतपाक अने सहस्रपाक ए बे तेल मर्दन करवाने मोकलां राख्यां. बीजा तेलना नियम कस्था, तथा शिलारस अने अगरना धूप टाली बी जा धूपना नियम कस्था, जाइफूल अने कमलिनी, ए बे जातिनां फूल टा ली बीजा पुष्पना नियम कस्था, कानना आजरण तथा नामांकित मुद्रिका टाली बीजा आजरण राखवाना नियम लीधा. आठ पाणी जराय एवा पाणीना घडाथी स्नान करवुं, तथा गहूंचूर्णनी पीठी करवी.

बे श्वेतपटकूल टाली बीजा वस्त्रना नियम लीधा. चंदन, अगरु, कुं कुम, ए त्रण टाली बीजा विलेपन करवाना नियम लीधा. मग प्रमुखनी खीचडी तथा तंडुलनी खीर तेमज उज्ज्वली खांमथी जरेला उंचा मेंदानां अने घणा घृतथी तलेलां एवां पक्वान्न खावां, उपरांत नियम लीधा. डा क्षादिक नीली काष्ठ पेया टाली बीजी पेयाना नियम लीधा, सुगंधिमय कल्मशालिमो कूर टाली बीजा उदनना नियम लीधा. अडद अने मग टा ली बीजा विदलना नियम लीधा. शरत्काल संबंधी गायनां घृत टाली बीजा घृतना नियम लीधा, तूंबक मंमूकी अने वत्थुलना शाक टाली बीजा

शाकना नियम लीधा, वडां पूर्णादिक टाली बीजा धान्य शाकना नियम लीधा, आकाशथुं पाणी टाली बीजा पाणी पीवाना नियम लीधा, एलची लविंग कस्तूरी कंकोल कपूर जायफल, ए पांच वस्तुयें करी संस्कारित जे तंबोल ते टालीने बीजा तंबोल खावाना नियम लीधा, जे कांइ प्रथमथीज घरमां वस्तु छे, घरवखरी छे तेनी उपरांत परिग्रह राखवाना नियम कस्या. ए पांचमा तथा सातमा व्रतसंबंधी वात कही, तेम बीजा पण सर्व व्रतना यथायोग्य नियम लइ श्रीमहावीरने वांदीने घेर आव्यो. शिवनिंदा स्त्रीयें पण श्रीमहावीर पासें आवी तेमज आनंदनी पेठें श्राविकाधर्म अंगीकार कस्यो. बेहु जणायें चौद वर्ष पर्यंत ए रीतें श्रावकधर्म पाल्यो. जो कोइ देव मनमां द्वेष धरि चलाववा आवे तो पण चले नहि. एवो निश्चल थयो.

पछी आनंदश्रावकने प्रतिमा आराधवानो मनोरथ थयो, तेवारें सर्व कुटुंबनी आज्ञा लइने कोल्लागग्रामें पौषधशाला करावी. महोटा पुत्रने घरनो भार सोंपी, सर्व सज्जनने जमाडी हकीगत कहीने पौषधशालायें जइ महातप करतो थको अगीयार प्रतिमाना आराधन करवामां प्रवर्त्यो. ॥ उक्तं च ॥ दंसण वय सामाइय, पोसह पडिमा अबंभ सच्चित्ते ॥ आरंभ पेस उद्दिठ, वज्जए समणभूए अ ॥ १ ॥ एवी रीतें प्रतिमानुं आराधन करता थका आनंदनुं शरीर अत्यंत डुर्बल थयुं.

एम धर्मजागरण करतां अनशननो मनोरथ उपनो, तेवारें संलेषणा करी अनशन लीधुं, तेपछी अवधिज्ञान उपनुं. एवामां श्रीमहावीरस्वामी आवी उद्यानें समोसस्या, तेवारें श्रीगौतमस्वामी छठने पारणे भिक्षाने अर्थें नगरमां जइ अन्न पाणी वहोरीने पाछा वलतां कोल्लागग्राम तरफ घणा लोक जातां देखी गोतमस्वामीयें पूछ्युं के आ लोको क्यां जाय छे ? तेवारें कोइएकें जवाब आप्यो के हे महाराज! आनंद श्रावकें अनशन कर्युं छे, तेमने वांदवा जाय छे ते सांभली श्रीगौतमस्वामी पण आनंदश्रावकने वंदाववा माटें तिहां गया. तेमने आव्या जोइने आनंदश्रावक अत्यंत हर्ष पाम्यो थको कहेवा लाग्यो के हे महाराज ! हुं ऊठी शकतो नथी माटें तमें ढूकडा पधारो तो आपना पगने हुं महारा मस्तकें करी फरसुं ! ते सांभली श्रीगौतमस्वामी ढूकडा बेठा. तेवारें आनंद श्रावकें त्रिधा शुद्धें करी मस्तक पगें लगाडीने वांद्या, अनें पूछ्युं के महाराज ! गृहस्थने अवधिज्ञान उप

जे ? श्रीगौतमस्वामी बोल्या के हा ऊपजे. तेवारें आनंदें कह्युं के मुऊने त मारा प्रासादथी अवधिज्ञान उपनुं छे, ते केटलुं ऊपनुं छे? तोके पूर्व, दक्षिण अने पश्चिम दिशायें समुद्रमांहे पांचशें योजन पर्यंत देखुं छुं. अने उत्तरदिशियें हिमवंत पर्वत पर्यंत देखुं छुं. तथा ऊंचुं सौधर्मदेवलोक लगें अने नीचुं पहेली नरकपृथ्वीना लोलुआ नरकावासा लगें देखुं छुं. ते सांजली श्रीगौतमस्वामी बोल्या के गृहस्थनें एटलुं अवधिज्ञान ऊपजे नही. माटे तमें मिछामि डुक्कड द्यो. आनंदें कह्युं के सत्य कहेवानुं मिछामि डुक्कड देवाय नहीं. श्रीगौतमस्वामीयें कह्युं के एटलुं अवधि गृहस्थपणे न ऊपजे, तेवारें आनंदें कह्युं के तमेंज मिछामि डुक्कड द्यो. ते वात सांजली श्रीगौतमस्वामी शंका पांमता श्रीमहावीर पासें आवी जातपाणी आलोइ पछी पूछवा लाग्या के हे जगवन्! आनंदश्रावक मिछामिडुक्कड दीये के हुं दउं? जगवानें कह्युं के हे गौतम! तुंज मिछामिडुक्कड दे. जेमाटें आनंदने एटलुं ज अवधिज्ञान उपनुं छे. तेवारें श्रीगौतमस्वामीयें आनंद श्रावक पासें आवीने मिछामि डुक्कड दीधुं. अने आनंदने खमाव्यो. वीश वर्ष पर्यंत श्रावकधर्म पालीने पहेले सौधर्मदेवलोकें अरुणाज विमानें चारपल्योपमने आउखे देवतापणे जइ ऊपनो. तिहांथी चवी महाविदेहक्षेत्रें उपजी तिहां चारित्र लइ मोक्षें जाशे. ए बीजा प्रश्नना उत्तर ऊपर आनंदश्रावकनी कथा कही.

ए रीतें नरक स्वर्गपणुं पामवा आश्रयी बे प्रश्न कह्या. हवे तिर्यंच अने मनुष्यपणुं पामवा आश्रयी बे पृछा करी, तेनो उत्तर बे गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ कज्जछी जो सेवइ, मित्तं कज्जे कएवि संवयई ॥ कूरो गूढमईउ, तिरिक्कं सो होइ मरिऊणं ॥ १९ ॥ अज्जव मद्दव जुत्तो, अकोहणो दोस वज्जिउ मछो ॥ नय साहुगुणेसु ठिउ, मरिउं सो माणुसो होइ ॥ २० ॥

जावार्थः—(जो के०) जे कज्जछी एटले पोताना कार्यनो अर्थी थको मित्रनी सेवा करे, ते कार्य (कएवि के०) कृतेपि एटले सिद्ध थया पछी मंत्रने संवयइ एटलें विहडे विखोडे एवो क्रूर परिणामनो धणी होय. गूढमईउ एटले गूढमतिवालो होय अर्थात् पोताना हृदयनी वात कोइनी आगल कहे नही, ते जीव मरीने तिर्यंच थाय. जेम अशोककुमरें मायायें करी मित्रद्रोह कीधो, जेथकी विमलवाहन कुलगरनो हाथी थयो ॥ १९ ॥ तथा आर्यव एटले सरलचित्त वालो होय, मार्दव एटले मान रहित निर

हंकारी होय, अक्रोधि क्षमावंत होय, दोषवर्जित एटले जीवघातादि दोष रहित होय, ' मध्यस्थो नयसाधुगुणेषुस्थितः ' एटले सुपात्रने दान दीये, न्यायवंत होय, महात्मा साधुना गुण वखाणे ते जीव मरण पामीने मनुष्य थाय, जेम सागरचंद मरीने पहेलो कुलगर विमलवाहन थयो ॥२०॥

हवे ए बे प्रश्ना उपर सागरचंद्र शेठ अने अशोकदत्तनी मली एकज कथा कहे छेः—यथा महाविदेहक्षेत्रने विषे अपराजिता नगरीयें ईशानचंदराजा राज्य करे छे. तिहां चंदनदास एवे नामें श्रेष्ठी वसे छे ! तेने गुणवंत एवो सागरचंद्र नामा पुत्र छे. ते सरल चित्तवालो निरंतर धर्मी अने आचारें करी निर्मल छे. तेने अशोकदत्त नामें मित्र छे; ते मायावी छे. मनमां कपटी कूडो छे. एकदा वसंतमास आवे थकें राजानो आदेश थयो जे आजे वसंतक्रीडा करवाने माटें सर्वलोकें वनमांहे आववुं. ते वात सांजलीने सागरचंद्र तथा अशोकदत्त ए बेहु वनमां गयां. अने राजा पण परिवार सहित वनमां आव्यो. एम लाखोगमे लोक तिहां एकठां थयां. सर्व स्थलें गीत, गान, नाटक, जूलणादि कौतुक सर्वलोक करवा लाग्या. ते अवसरें राखो राखो. एवो कलकलाट शब्द सांजल्यो. ते वारें सागरचंद्र नजीक होवाथी तरवार हाथमां लइने तिहां गयो, तो चोरोयें अपहराती एवी पुण्यजद्र शेठनी दीकरी प्रियदर्शनाने दयामणी दीठी. तेने सागरचंद्रें बलें करी मूकावी. ते वात सागरदत्तना पिता चंदनदासें सांजली जेवारें पुत्र घेर आव्यो तेवारें पितायें शिखामण दीधी, जे हे वत्स ! उद्धतपणुं न करीयें, कुलनी मर्यादा प्रमाणें बल फोरवीयें, द्रव्यने अनुसारें वेश पहेरीयें, कुसंगति परहरीयें, महोटानो विनय सेवीयें, वडायें कहेलां चार वचन सहन करीयें, तो महत्त्व पामीयें. माटें तुं तहारो जे अशोकदत्तमित्र छे, तेनी संगति टालीने श्रीजिनधर्मनुं पालन कर. एवी पितानी शीखामण सांजली सागरचंद्र बोल्यो के हे तातजी! जेम लाज जाय ते वात हुं नहीं करुं. एवा पुत्रना वचनथी पिता हर्ष पाम्यो.

हवे पुण्यजद्रशेठें पण सागरचंद्र कुमरनो उपकार जाणीने पोतानी प्रियदर्शना कन्या महोटा महोत्सवथी कुमरने परणावी बेहुनो विधात्रायें रूडो समागम मेलव्यो. कुमर कुंवरी बेहु सुखें समाधें रह्यां.

एकदा सागरचंद्र ग्रामांतरें गयो, तेवामां अशोकदत्त तिहां मित्रने घरे

आवी मायायें करी प्रियदर्शनानें स्नेह देखाडतो कहेवा लाग्यो के आवो आपणे स्नेह संबंध करीयें ? ते वात सांजलतां स्त्रीनें क्रोध उपनो. तेथी तेने घरथी बाहार काहाढी मूक्यो. बांहिर निकलतां रस्तामां सागरदत्त पण ग्रामांतरथी आवतो तिहां सांहामो मल्यो;तेने अशोकदत्तें कह्युं जे तमारी स्त्री महारी साथें स्नेह करवा तत्पर थइ तेने में निषेधी छे. तेवात सांजली सागरचंदें विचारीने कह्युं के अघटित कार्य करवुं योग्य नही. घेर आव्यो, तेंवारें स्त्रीना मुखथी मित्रनुं स्वरूप सर्व जाण्युं. ते वखत विचार्युं जे महारा बापें कह्युं हतुं जे तहारा मित्रनी तुं सोबत करीश नही. ते वात सत्य थइ. एम निर्धारी धर्मकार्य करवाने प्रवर्त्तमान थयो. पोतानी लक्ष्मी सात क्षेत्रें वावरतो थको रह्यो. अनुक्रमें स्त्री जरतार बेहु ज्ञण काल करी जंबुद्वीपना जरतक्षेत्रें दक्षिण खंडमें गंगा अने सिंधु बेहु नदीनी वच्चें त्रीजा आरामांहे पल्योपमने आठमे जागें थाकते नवशें धनुष्य प्रमाण शरीर वाला युगलियां थयां.. तिहां कल्पवृक्ष मनोवांछा पूर्ण करे छे. अल्पकषायवाला थयां. मांहोमांहे बेहुने घणो स्नेह थयो. अने अशोकदत्त मित्र पण मरीने तिहांज चार दांत वालो हाथी थयो, ते हाथीयें जमतां जमतां एकदा तेणे बेहु युगलियांने दीठां,तेवारें पाछला स्नेहना वशथी बेहुने सूंढथी ऊपाडीने पोतानी पीठ ऊपर चडावी लीधां, तेथी ते युगलीयानुं विमलवाहन एवुं नाम प्रसिद्ध थयुं. आर्यव गुणना प्रतापथी सातकुलगरमां ए प्रथम कुलगर थयो. अने अशोकदत्त मायायें करी तिर्यंच थयो. ए मनुष्य तथा तिर्यंचपणुं पामवा आश्रयी सागरचंद तथा अशोकदत्तनी कथा कही ॥

हवे स्त्री मरण पामीने पुरुषपणुं पामे अने पुरुष मरण पामीने स्त्रीपणुं पामे, ए बे पृच्छाना उत्तर बेहु गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ संतुठ्ठा सुविणीआ, अज्जवजुत्ता य जा थिरा निच्चं ॥ सच्चं जंपइ महिला, सा पुरिसो होइ मरिऊणं ॥ २१ ॥ ॥ जो चवलो सढजावो, माया कवडेहिं वंचए सयणा ॥ नयकस्सयवीसस्सइ, सो पुरिसो महिलया होइ ॥२२॥ जावार्थः—जे स्त्री संतोषवान् होय,रूडी विनीत होय, सरल चित्तवाली होय, स्थिरस्वजाववाली होय, सत्य वचन बोलनारी होय, ते स्त्री मरीने पुरुषपणुं पामे ॥ २१ ॥ जे पुरुष चपलस्वजावी होय, शठ होय, कदाग्रही होय, माया कपट करी सगासंबंधिने वंचें ठगे, वली

कोइनो विश्वासघात करे, ते पुरुष मरण पामीने परजवें स्त्री थाय ॥ २१ ॥

हवे ए बेहु उत्तर ऊपर पद्म पद्मिनीनी कथा कहे ठेः—स्वस्तिमती नगरीयें न्यायसार नामें राजा राज्य करे ठे. ते नगरमां एक पद्मनामें शेठ सत्यवादी अने संतोषी वसे ठे. तेनी स्त्री पद्मिनी एवे नामें महारूपवंत ठे, परंतु कर्मना योगें मुखरोगें करी पीडाती थकी काहलस्वरवाली ठे. ते असत्यवादी अने मायावी ठे, शेठें स्त्रीनो मुखरोग मटाडवा माटें घणा उपचार कस्या, पण कोइ रीतें गुण थयो नहिं, एकदा ते स्त्री कपटें करी जर्त्तारने कहेवा लागी के हे महाराज! मने सारुं न थयुं माटें तमें सुखें बीजी स्त्री परणो. तेनें शेठें कह्युं के म्हारे परमसंतोष ठे, माटे ए वात कहीश नही.

एकदा शेठ जुना उद्याने देह चिंताने अर्थे गयो. तिहां मेघनी वृष्टिथी निधान प्रगट थयुं. तेने देखी शेठ तिहांथी उठीने घेर जतो रह्यो. तिहां दूकडो कोटवाल ऊनो हतो, तेणे निधान दीठो अने राजाने जइ कह्युं के पद्मशेठ वनमां निधान प्रगट थतो देखी घेर जतो रह्यो, तेवारें राजायें कोटवालने कह्युं के ए शेठ पाठलथी धन लेवा गयो हशे, माटें तुं फरी तिहां जइ ठानो रहीने जोइ आव्य. कोटवाल फरी तिहां गयो, पण शेठने तिहां दीठो नहीं. तेवारें वली राजानी आगल आवीने कह्युं के स्वामी! शेठ कांइ निधान लेवा आव्यो नहीं. एवुं सांजली राजायें शेठने तेडावी पूछ्युं के, तमें निधान शा वास्तें नहिं लीधो? शेठें कह्युं हे महाराज! म्हारी पासें अखूंट निधान पड्यो ठे, तो फ्ली बीजा निधानने हुं शुं करुं? राजायें पूछ्युं के कयो तमारी पासें निधान ठे? तेवारें शेठें कह्युं के म्हारी पासें संतोषरूप अक्षयनिधान ठे, ते सांजली राजा घणोज रीज पाम्यो अने शेठने निर्लोजी जाणी नगरशेठनी पदवी आपी.

एकदा प्रस्तावें उद्यानमांहे श्रुतकेवली पधास्या. तेमने राजा तथा पद्मशेठ मली वांदवा गया. धर्मदेशना सांजल्यानंतर शेठें गुरुने पूछ्युं के हे महाराज! मुजने अत्यंत सत्य अने संतोष रुच्यो ठे तेनुं कारण शुं? अने म्हारी स्त्रीने मुखरोगें करी काहलस्वर थयो ठे? तेनुं पण कारण मुजने कहो?

एवुं शेठनुं बोलवुं सांजलीने गुरु तेमना पाठला जव कहेता हवा. के एज नगरमां नागशेठ असत्यवादी, असंतोषी अने मायावी रहेतो हतो तेनी नागिला नामें स्त्री ते माया रहित तथा सत्य संतोषने धारण करनारी हती.

एकदा नागशेठनो कोइक नागमित्र नामें मित्र देशांतर जतो हतो, तेनी स्त्री चपल हती तेना जयथी पोताना पुत्रने कही नागशेठनी स्त्री नागिलानेज साक्षी राखी पोतानुं सुवर्ण,नागशेठनी पासें थापण मूक्युं, अने पोतें देशांतर गयो तिहां घणुं धन उपार्जन करी पाछो वलतां मार्गमां चोर लोकोयें धाड पाडी तेने मारी नाख्यो,ते वात तेनी स्त्री तथा पुत्रें सांजली. तेवारें घणो दुःखित थइ शोक करवा लाग्या. अनुक्रमें केटला एक दिवस पछी ते शेठना पुत्रें पोताने पितायें राखेली थापण नागशेठनी पासेंथी मागी.. तेवारें शेठ ना कबूल थयो, अने कहेवा लाग्यो के म्हारी पासें तम्हारा पितायें कांइ पण थापण राखी नथी.

नागमित्रना पुत्रें राजानी आगल जइ ते वात कही. राजायें पूछ्युं के तम्हारी पासें कोइ साक्षी छे ?. तेणें कह्युं के नागशेठनी स्त्री नागिला साक्षी छे. तेवारें राजायें प्रथम शेठने तेडी पूछ्युं. पण तेणें कह्युं के म्हारी पासें एने बापें कांइ थापण मूकी नथी. पछी राजायें नागिलाने तेडावीने पूछ्युं, तेवारें नागिला विचारवा लागी जे एक बाजु तड अने एक बाजु वाघ, ए न्याय म्हारे थयो छे. केम के एक पासें जरतार छे, वली उत्तम स्त्रीनी ए रीत छे, जे जरतारने प्रतिकूल न थावुं. अने बीजी रीतें विचारुं तो सत्य वचन लोपाइ जाय छे ? ते आ जवें अने परजवें महादुःखनुं देवावालुं थाय ! एम चिंतवी छेवट निर्धार्युं जे साचुं बोलतां जे थवानुं हशे, ते थाशे. अमृत पीवाथी मरण थवानुं नथी. एम विचारी खेरे खरी सत्य वात राजा आगल कही दीधी. ते वचनथी राजा घणोज हर्षायमान थयो. अने नागशेठनी पासेंथी थापण अपावीने मूकी दीधो. अने तेनी स्त्रीने उत्तम वस्त्रोनी पहेरामणी आपी विदाय करी. पछी नगरनी स्त्रीयो मध्यें नागिला सत्य बोलनारपणें प्रसिद्धताने पामी. एकदा नागशेठने घेर मासखमणने पारणे कोइ ऋषि आव्या, तेने जाव सहित फासु अन्न पाणी वहोराव्यां, तेथी बेहु जणें शुजकर्म उपार्जन कर्युं अनुक्रमें तिहां आयु पूर्ण थये छते ते नागिलानो जीव मरण पामीने तुं इहां पद्मशेठ पणे आवी उपनो छो. अने नागशेठ मरण पामी कपटने योगें इहां तम्हारी पद्मिनी स्त्री थइ छे. जीजथी कूडुं बोल्यो, तेथी मुखरोग अने काहलस्वर थयो छे. ए रीतें पाछलो जव सांजली वैराग्य पामी बेहु जण दीक्षा लइ

मोहें पहोतां ॥ दोहो ॥ जीनें साचूं बोलीयें, राग द्वेष करि दूर ॥ उत्तम शुं संगत करो, लाने जिम सुखपूर ॥ जीराबलांनाम पदाद्याक्षरैः ॥ ए पांचमा अने बछा बे उत्तर आश्चर्यी पद्म पद्मिनीनी कथा कही ॥ ५ ॥ ६ ॥

हवे सातमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ अस्स वसह पसुउं, जो लंबइ वंधियं पि हु करइ ॥ सो स व्वाण निहीणो, नपुंसउ होइ मरिऊणं ॥२३॥ नावार्थः—जे पुरुष (अस्स के०) घोडा अने (वसह के०) वृषन एटले बलद तथा बोकडा प्रमुख पशुउने (लंबइ के०) लांछे, आंक देवरावे, नाक वींधे, गल कंबल कापे, श्रोत्र कापे, ते जीव सर्व मनुष्योमांहे हीणो अधम जाणवो अने मरीने नपुंसक थाय ॥ २३ ॥ जेम गोत्रासें अनेक जीवना अवयव छेद्या, तेथी घणा नव लगें नपुंसकपणुं पाम्यो, ते गोत्रासनी कथा कहे छे.

वणिकग्रामें मित्रदेव राजा राज्य करे छे. तेनी श्रीदेवी नामें पट्टराणी छे. एकदा तिहां श्रीवर्द्धमान जिन समोसर्या. बार पर्षदा मली धर्मदेशना सांनलीनें सर्व हर्षवंत थया. तिहां श्रीमहावीरना प्रथम शिष्य अने सात हाथ प्रमाण शरीर वाला, अक्षीणमहाणसी प्रमुख अनेक लब्धिना धारक एवा श्रीगौतमस्वामी ते छठने पारणें श्रीमहावीरने आदेशें पात्रां पडिलेहीने वणिकग्रामें वहोरवा माटें आव्या. तिहांथी वहोरी पाछा वलतां मार्गमां घणा राउलजनें वींटेलो अने आकरा बंधने वांधेलो एवो एक पुरुष दीठो. ते केवो दीठो ? तो के जेना कान, नाक, होठ, जीन छेद्यां छे, जेनुं धूलथी शरीर खरड्युं छे, अने तिल तिल जेटलुं तेना शरीरनुं मांस छेदी छेदी तेने खवरावे छे. एवो दयामणो, अने दुःखीयो देखी, ए पापनुं फल छे, एम जाणी मनमां वैराग्य आणीने श्रीमहावीरपासें आवी इरियावहि पडिक्कमी, नात पाणी आलोइने पूछवा लाग्या के हे नगवन् ! केवा प्रकारना रौद्र कर्म करीने ए पुरुष एवो महा दुःखीयो थयो छे ? तेवारें नगवान् बोल्या के हे गौतम ! सांनल.

हस्तिणाउर नगरें सुनंदराजा राज्य करे छे. ते गाममां गायोने बेसवा माटे लोकोयें एक मांडवो करावेलो छे ते गायो बाहेर जंगलमांथी तृणादिक चरी पाणी पीने सांजनी वखतें मंडपमां आवी सुखें बेसे. ते गाममां कोइ नीम नामें पुरुष रहे छे. तेनी उत्पला नामें स्त्री छे. तेनो पुत्र गोत्रा

स नामें छे. ते बालपणाथकीज महादुष्ट, धीर, निर्दयी, पापी, जीवघातनो करनार छे. एकदा रात्रिनी वखतें सर्वलोक सूता पछी ते गोत्रास पोताना हाथमां काती लइने गायोना मांमवामां आव्यो. तिहां केटलिएक गायोना पूछ, कान, नाक, होव, जीन, स्तन, उहाडा, पग प्रमुख अवयव छेदी ना ख्या. एवुं पाप करी पांचशें वर्षनुं आयु पाली मरण पामीने बीजी नरकने विषे जइ नारकीपणे ऊपनो ॥ उक्तंच ॥ दोहो ॥ घोडा बलद समारीया, कीधा जीवविणास ॥ पुण्यविहूणा जीव ते, पामे नरकनिवास ॥१॥ पछी ते गोत्रासनो जीव नरकना महा अघोर दुःख नोगवी तिहांथी मरण पामीने आ नगरमां सुमित्र शेठनी सुनद्रा नामें वांजणी स्त्रीने घेर पुत्र पणे ऊपन्यो छे. तेने जन्मतां वार उकरडा ऊपर नाखी दीधो. वली तिहांथी ऊपाडी लावीने उझित एवुं नाम दीधुं छे. ते जेवारें महोटो थयो, तेवारें सुमित्रशेठ धन उपार्जवा माटे एने साथें लेइ प्रवहणें चढयो. कर्मवशें संवर्त्तक वायरे करी प्रवहण नांग्युं. तिहां सुमित्रशेठ देवशरण थयो. अने उझितपुत्र घरे आव्यो. पिताना मरणनी वात संनलावी तेथी सुनद्रा शेठाणी पण शोक संताप करती मरण पामी पाछलथी छोकरो दुराचारी पापीष्ट थयो. ते वात सज्जनोयें जाणीने एने घरथी बाहिर काहाढी मूक्यो. गाममां फरतो साते दुर्व्यसन सेवन करे सर्व अनर्थनुं मूलरूप थयो. हमणां एणे राजानी मानीती महारूपवंत, कलावान्, सर्वदेशोनी नाषा जाणनारी एवी कामध्वजानामें वेश्या छे, तेनी साथें राजाने घणो स्नेहसंबंध छे, तेना घरमां प्रवेश करतो ए उझितपुत्रने राजाना माणसोयें दीठो. तेवारें तेने बांधीने राजा आगल लाव्या. ते राजायें एने विडंबना करेली छे, ते विडंबना करीने मारी नाखशे. मरीने वली पहेली नरकने विषे जइ नारकी पणे उपजशे! तिहांथी मरीने नपुंसक थशे. एम घणा नव पर्यंत नपुंसक पणे दुःख वेठशे! एम जाणी निर्लंछन कर्म न करवुं. ए सातमा प्रश्नना उत्तर आश्रयी गोत्रासनी कथा कही ॥

हवे आठमी पृछानो प्रत्युत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ मारेइ निद्दयमणो, परलोअं नेव मन्नए किंचि ॥ अइसंकिलिठ कम्मो, अप्पाऊसो नवे पुरिसो ॥२४॥ नावार्थः—जे निर्दय मन थको जीवने मारे, स्वर्ग मोक्ष प्रमुख परलोकने किंचित्मात्र पण माने नही, अने

जे जीव अतिसंक्लिष्ट विरुद्ध कर्म्मोने आचरे, ते जीव, परभवें अल्पायुष्य वालो थाय ॥ १४ ॥ जेम उज्जयणी नगरीयें समुद्रदत्त शेठनी भार्या धारिणी डुराचारी हती, ते यज्ञदत्त नामा चाकरनी साथें आसक्त थइ थकी कर्मकरनी साथें मलीने पोताना पुत्र शिवकुमारनो द्रोह करवा चिंतव्यो ते सर्वेने मराव्युं अने पोतें पण मरण पामी. आगल घणा भवें अल्पायु पाम्युं. माटें इहां शिवकुमार अने यज्ञदत्तनी कथा कहे छेः—

उज्जयणी नगरीयें समुद्रदत्तशेठ वसे छे. तेनी धारिणी नामा स्त्री छे, तेने शिवकुमार नामें पुत्र छे, अने यज्ञदत्त नामें कर्मकर छे. एकदा समुद्रदत्त शेठने रोग उपनो तेथी ते मरण पामी. पाछल तेना बेटायें मृत कार्य कस्यां. कर्मने योगें धारिणी राणी पहेला यज्ञदत्तकर्मकरनी साथें लुब्ध थइ. जे भणी यौवनावस्थामां इंड्रियोने जीतवुं माहाडुर्लभ छे. तेमां पण कामने जीतवो वली विशेष दोहिलो छे. पछी ते वात लोक विरुद्ध जाणीने शिवकुमार तेने वारे, तो पण माता माने नहि.

एकदा धारिणीयें यज्ञदत्तने एकांतें कह्युं के मह्हारो पुत्र शिवकुमार रूडो नथी माटें. जेम कुमुदिनीनो सूर्य विनाश करे छे, अने कांठानो जेम नदीनो प्रवाह नाश करे छे, तथा वननो जेम दावानल नाश करे छे, तेम आपणो शिवकुमार विनाश करशे ! तेथी प्रछन्नपणे एने मारी नाखवो जोइयें. ते सांभली यज्ञदत्तें कह्युं के ए वात युक्त नथी केम के तह्हारो पुत्र ते मह्हारो स्वामी छे. एना पसायथी आपणे बेहु सुखीयां छैयें. वली स्वामी द्रोह करवो, ते महापापनो हेतु छें.

ते सांभली धारणी बोली के एमां शेनुं पाप छे ? जो ए जीवतो हशे, तो आपणने सुखनो अंतराय करशे ! इत्यादि वातो सांभली विषयांध यज्ञदत्तें पण शिवदत्तने मारवानी कबूलात आपी. हवे कपटें करी धारणीयें पोताना पुत्रने कह्युं के हे वत्स ! कोइ पण हथीयार धारणकरनार पुरुषनो विश्वास करीश नही. एकदा प्रस्तावें कुमरने कहेवा लागी के गोवालिक लोको आपणा गोकुलनी रक्षा रूडी रीतें करता नथी माटें तमें बेहु जण गायोनी रक्षा करवा जाउ,ते सांभली बेहु जण हाथमां हथीयार लइने जंगलमां गया. बेहुजण आगल पाछल जाय छे, एक बीजानो विश्वास करता नथी. नीचा उतरतां छाहडीमां, यज्ञदत्तें खड्ग काढ्युं

ते पाछलथी. शिवकुमारें जाएयुं तेवारें त्यांथी नाशिने गोकुलमां जतो रह्यो तिहां जइ गोवालीयाने शीखामण आपी समजावी राख्या.

संध्या समयें गायना वाडामां बेहु जण शय्या पाथरीने सूता, एवामां शिवकुमर ऊठीने शय्यायें खड्ग राखी उपरथी ढांकी मूक्युं अने पोतें गायो ना समूहमां छानो जइ बेसी रह्यो. एटलामां यज्ञदत्तें छानो रही खड्ग काढीने शिवकुमारनी शय्या उपर घां कर्यो, ते वखत शिवकुमर गायो मांथी निकली छानो आवी घा करीने यज्ञदत्तने मारी नाख्यो. अने मुखथी चोर! चोर!! एवो कलकलाट शब्द करता गोवालीया अने शिवकुमार कांइक बाहेर जइ पाछा वली आवीने बूम पाडवा लाग्या के यज्ञदत्तने चोरें मारी नाख्यो! ए काम करीने शिवकुमार घरे आव्यो. तेने मातायें पूछ्युं के यज्ञदत्त किहां छे? तारे शिवकुमरें कह्युं के पाछल आवे छे. एम कही मनमां चिंतवणा करे छे, के म्हारी मातानां कर्म तो जूउ. कहेवां छे? जे पुत्रने पण मारवानी तजवीज करी. एम विचारी वली माताने कहेवा लाग्यो जे हुं रात्रें जाग्यो छुं, माटें हमणां निद्रा आवे छे, एम कही सुइ रहे छे. एटलामां तेनी मातायें खड्ग ऊपर कीडियो चडती दीठी, तेवारें खड्ग काहाढी जोयुं तो लोहीयें खरडयुं दीठुं तेथी विचार्युं जे निश्चयथकी यज्ञदत्तने एणेज मार्यो छे. एम चिंतवीने जांखी थइ. पछी तेज खड्गें करी पोताना पुत्रनें मार्यो. ते धाव मातायें दीठो, तेणें मुसलथी धारणीने मारी तिहां मरती धारणीयें चपेटायें करी धावमाताना मर्मस्थाननें हण्यां, तेथी ते पण मरण पांमी. एम निर्दयपणे मांहोमांहे द्रोह करी मरण पाम्यां. ते सर्वजीव ते नवमां पण पापें करी अल्पायुष्यवालां थयां. अने आवते नवें महादुःखी थाशे! माटें जीववध न करवो ॥ दोहो ॥ जीव वधे पापज करे, आणे हिये कुबुद्धि ॥ नारीकर्मा जीव जे, ते किम पामे सिद्धि ॥ १ ॥ ए आठमा प्रश्नना उत्तरमां शिवकुमार यज्ञदत्तनी कथा कही ॥

हवे नवमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ मारेइ जो न जीवे, दयावरो अनयदाण संतुठो ॥ दीहाउ सो पुरिसो, गोयम नणिओ न संदेहो ॥२५॥ नावार्थः—जे पुरुष जीवने न मारे, दयावंत होय, जे अनयदान देइने हैयामांहे संतुष्ट थाय, हर्ष आणे, ते जीव दीर्घायु वालो, आवते नवे घणुं जीवे, संपूर्ण आयुष्यवान् थाय. हे

गौतम ! ए वातमां कांइ पण संदेह नथी ॥ २५ ॥ जेम राजगृही नगरीयें मणिकारशेठनो पुत्र दामनक हतो, ते एकलो घणा वखत मरण संकटथी उगर्यो, महोटी रुद्धिनो धणी थयो, दीर्घायुष्यवालो थयो. अहिं तेनी कथा जाणवी. ते प्रथम बार पर्वोनी कथामां ठपाइ गयेली छे. तथा एक रुषीश्वर वनमांहे तपस्या करता हता. एवामां एक आहेडीयें त्रास पमाडेलां मृगलां तेमनी आगलथी नाशि जतां हतां. पाछलथी आहेडीयें आवी रुषीश्वरने पूछ्युं के मृगलां किहां गयां ? तेवारें रुषियें दयाथी आ प्रमाणें कह्युं के ॥ यत्पश्यति न तद्ब्रूते, या ब्रूते सा न पश्यति ॥ एटले जे चक्कु देखे छे, ते चक्कु कांइ बोलतुं नथी, अने जे जीन्न बोले छे, ते जीन्न कांइ देखती नथी ? ॥दोहो॥ देखे ते बोले नही, बोले ते नवि आंख ॥ आहेडी मृगलां किहां, धनुष बाण सवि नाख ॥ १ ॥ एम कही ते आहेडी जता रह्या. ए दयावान् रुषिनी कथा नवमा प्रश्नना उत्तर उपर कही ॥

हवे दशमी अने अगीयारमी पृछाना उत्तर बेहु गाथायें करी कहे छेः—

॥ गाथा ॥ देइ न निय संसत्तं, दिन्नं हारेइ वारए दित्तं ॥ एएहिं कम्मेहिं, नोगेहिं विवज्जिउ होइ ॥ २६ ॥ सयणासण वछं वा, नत्तं पत्तं चपाणियं वावि ॥ हियएण देइ तुछो, गोयम नोगी नरो होइ ॥ २७ ॥

नावार्थः—जे आपणी पासें छती वस्तु होय तो पण न आपे, तथा दीये तो पछी संताप करे, अनेरो जे आपतो होय तेने देतां वारे. एवे एवे कर्मे करी जीव नोगें विवर्जित एटले नोगरहित थाय. जेम धनसार शेठ ठासठ कोडी ड्रव्यनो धणी छतां अत्यंत कृपण हतो तेथी नोगरहित थयो ॥२६॥

तथा जे पुरुष शयन, पाट, संथारो, आसन, पाटलो, पोंछणुं, कांबलो, वस्त्र, नात, पाणी जे महात्माने देवायोग्य वस्तु ते हैयानी वासनायें करी संतुष्ट थको आपे. हे गौतम ! ते पुरुष, नोगवंत सुखी थाय ॥२७॥ जेम धनसार शेठ सुपात्रने दान आपी नोगसंबंधि सुख पाम्यो ॥दोहो॥ वीनतडी सामी सुणो, तप जप क्रिया न कीध ॥ राग द्वेष पातक कर्यां, गर्वे दानज दीध ॥ १ ॥ पदाद्यक्षरैर्वीतरागनाम श्रेयोर्थं ॥ हवे ते शेठनी कथा कहे छे.

मथुरानगरीयें धनसारशेठ वसे छे, ते ठाशठ कोडी ड्रव्यनो अधिपति छे, परंतु महाकृपण छे. एक दमडी पण धर्मने अर्थे आपे नही. दरवाजा आगल कोइ निक्षाचरने देखे, तो तेनी उपर रोष करे, जो कोइ आवी

मागे, तो तेनी. ऊपर रीश करे, याचकने देखे, के स्थानथकी उठी जाय, धर्मने अर्थें धन आपवानी वातमां पासें पण आवे नही, पोताना घरमां कोइनी देखतां सारी रसोइ पण जमे नही; पूरुं खाय पण नहि. ते नगर नी मांहे कोइ जूख्यो माणस धनसार शेठनुं नाम पण जम्याविना लीये नहीं. ते एवुं विचारे के एनुं नाम लेशुं, तो आजे अन्न पण मलशे नही.

हवे ते धनमांथी त्रीजो जाग बावीश क्रोड द्रव्य धरतीमां दाटी राखे लुं हतुं. एटले. पृथ्वीगत करेलुं हतुं, तेने एक दिवस उघाडी जोतां लीयाला जेवुं दीठुं. ते जोइ शेठने मूर्छा आवी गइ. धरती उपर पडि गयो. थोडी वार पछी सचेत थयो. एटलामां वली कोइकें आवी कह्युं के शेठजी आपना बावीशक्रोडना मालथी जरेलां प्रवहण बूडी गयां. वली त्रीजे कोइ कें आवीने कह्युं के अमुक स्थलें आपणा मालनां गाडां चोरोयें लूंटी ली धां. इत्यादिक द्रव्य नाश पाम्यानी वातो सांजली शेठ शून्य थइ गयो. रा त्रि दिवस जम्या करे, लोको तेनी हांसी कस्या करे.

वली एकदा दश लाख जांम लइ प्रवहण जरी पोतें वहाणमां बेसी देशांतर जणी चाल्यो, त्यां पण कर्मयोगें समुद्रमां गाज, वीज, वर्षाद थयो, तोफानथी प्रवहण जांगी गयुं. पाटीयुं हाथमां आव्युं, तेनी मदतथी कांठे आव्यो तिहांथी रजलतो घेर आवी पहोतो. मनमां चिंतववा लाग्यो जे हुं द्रव्य पाम्यो, परंतु कोइ वारें सुपात्रने दान दीधुं नहिं देताने पण वास्या, माटें महारी लक्ष्मी बाहिर परोपकारादि कोइ पण सुकृतमां काम आवी नहिं. जे माटें शास्त्रमां लक्ष्मीनी त्रण गति कही छे ॥ दानं जोगोनाश, स्ति स्रोगतयोजवंति वित्तस्य ॥ योन ददाति न जुंक्ते तस्य तृतीया गतिर्जवति ॥ १ ॥ ए कहेली दान, जोग अने नाश एवी त्रण गतिमांथी महारी लक्ष्मीनी तो मात्र एक त्रीजी गतिज थइ. एटले नाशपणुंज पामी.

एकदा वनमां केवली जगवान् समोसस्या, तेमने शेठ वांदवा गया. वां दीनें पछी पूछ्युं के हे जगवन् ! हुं कहेवा कर्मना उदयथी कृपण थयो? तथा महारी लक्ष्मी सर्व जती रही तेनुं शुं कारण हशे ? तेवारें गुरु कहेवा लाग्या के हे शेठ ! धातकीखंमना जरतक्षेत्रमां एक गामें बे जाइ महोटी रु द्धिना धणी हता. तेमां महोटो जाइ तो सरलचित्तवालो, उदार, गंजीर हतो, अने बीजो न्हानो जाइ रौद्रपरिणामी कृपण हतो, ते महोटा जाइने पण

दानादिक आपतां थकां वारे, तथापि ते तो दान अवश्य आप्याज करे.

एम करतां महोटा भाइने दिवसें दिवसें लक्ष्मी वृद्धि पामवा लागी, अने न्हानो भाइ जोतो रहे, पण कोइने पाइ पण आपे नहि. तेथी उल टी लक्ष्मी खूटवा लागी. तेवारें ऋद्धि लेवामाटें महोटा भाइ साथें महो टो कलह करवा लाग्यो ते कलहना योगथी एकदा महोटा भाइयें गुरुनी देशना सांभली वैराग्य पामी, दीक्षा लीधी. काल करी पहेले देवलोकें देव तापणे उपनो. अने न्हानो भाइ कृपण छतां निर्द्धन थयो लोकें निंदतों थ को तापसी दीक्षा लइ अज्ञान तप करी असुरकुमार देवोमां जइ उपनो. तिहांथी चवी इहां तुं धनसार नामें शेठ थयो छो. अने हुं महोटो भाइ देव लोकथी चवी तामलिप्ती नगरीयें एक व्यवहारीयाने घेर पुत्र पणे उपनो, अने तिहां दीक्षा लइ कर्मक्षय करी केवलज्ञान उपार्जीने हुं हमणां आं हीं आव्यो छुं. ते सांभली शेठ पोताना पाछला भवनो भाइ जाणीने ह र्षवंत थयो. पछी गुरुयें कह्युं के तें दान न दीधुं, तेथी अंतराय कर्म उ पार्ज्युं तथा दान देतांने वार्यो, तेथी धन सर्व क्षय थइ गयुं. इत्यादि वात सांभली धनसारशेठें एवो नियम लीधो, के हवेथी हुं जेटलुं धन उपार्जन करुं! तेमांथी चोथो भाग धर्मकार्यमां वापरुं! एवी जिहांसुधी जीवुं, त्यां सुधी प्रतिज्ञा करुं छुं. तथा पारका दोष न बोलुं. एम कही श्रावकधर्म अंगी कार कर्यो, अने केवली भगवाननी साथें पाछला भवनो अपराध खमाव्यो.

हवे शेठ, तामलिप्ती नगरीयें जइ व्यापार करवा लाग्यो. तिहां लक्ष्मी उपार्जन करी. तेमांथी घणी लक्ष्मी धर्म अर्थे सात खेत्रें खरचवा लाग्यो, यें पोसह करे, सुपात्रने दान आपे.

एकदा प्रस्तावें शून्यघरमां पोसह लइ काउस्सग्ग ध्यानें रह्यो. तिहां व्यंतरदेवे कोपकरी सर्पनुं रूप करी शेठने डस्यो. एक दिवस पर्यंत शेठ प्रतिमायें रह्या तिहां सुधी व्यंतर देवें अनेक प्रकारना उपसर्ग कर्या, पण शेठ क्षोभ पाम्यो नहिं. एवी शेठनी स्थिरता जोइ, व्यंतर संतुष्ट थई, बोल्यो के जे मागो ते हुं आपुं! परंतु शेठें कांइ मांग्युं नहिं. तो पण व्यं तरें कह्युं के तमें फरी मथुरा नगरीयें जाउ. अने तमारा भंडारें मूकेला बावीश क्रोड सोनैय्या जे लीयाला थइ गया छे, ते तमारा पुण्यने योगें सोनैय्या थशे. पछी शेठें मथुरामां आवी निधान उघाडी जोयो तो पूर्वे

जे लीयालां दीठां हतां, ते न दीठां. अने सोनैय्याज दीठां. तेमज जल मार्गना व्रहाणो पण पाणीनी ताणथी क्यांक खराबे चडेलां हतां, ते प ण फरी कुशलें आव्यां. एम सर्व स्थलेंथी फरी पण बासठ कोटि द्रव्य ए कठुं थयुं. तेमांथी दान देतो थको जोग जोगववा लाग्यो, घणां जिनप्रा साद करात्र्यां. एम साते क्षेत्रें सारी रीतें धन वावरीने रूडी धर्मसंबंधि कीर्त्ति उपार्ज्जन करी अंतें पुत्रने घरनो जार सोंपी अनशन लेइ पहेले देवलोकें अरुणाज विमानें चार पल्योपमने आउखे देवतापणे जइ उपनो. तिहांथी चवी महाविदेहक्षेत्रें मनुष्यपणुं पामी दीक्षा लइ मोक्षें जाशे. ए अगीयारमी पृछाना उत्तरमां धनसार शेठनी कथा कही.

हवे बारमी अने तेरमी पृछाना उत्तर बे गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ गुरु देव य साहूणं, विणयपरो संत दंसणीउ अ ॥ न य ज णइ किंपि कडुअं, सो पुरिसो जायए सुहिउ ॥२८॥ अगुणोवि गविउच्चिय, निंदइ रागी तवस्सिणो धीरो ॥ माणी विडंबउ जो, सो जायइ दूहउपुरिसो २९

जावार्थः—जे पुरुष पोताना गुरु, देव अने साधु महात्मानो विनय क रवामां तत्पर होय अने जेनुं दर्शन शांतमुद्रावालुं होय, एटले शांतमुद्रा होय, अने कोइने कटुक वचन न बोले, एटले कोइनां मर्मयुक्त निंदायुक्त तथा अणगमतां विरुद्ध वचन न बोले, ते पुरुष सौजाग्यवंत होय ॥ २८॥ तथा जे पुरुष निर्गुण होय एटले गुणरहित थको पण गविउ एटले गर्वि त अहंकारी होय, अने गुणवंत धैर्यवान् एवा तपस्वीनी निंदा करे, त था जे मानी एटले जातिमदनो करनार अहंकारी, अने जिनशासन विडं बक होय, ते पुरुष डुर्जागी थाय ॥ २९ ॥ जेम राजदेवनो जाइ जोजदेव एवा पापें करी डुर्जागी थयो. माटें ए बेहु प्रश्नना उत्तर ऊपर राजदेव अने जोजदेव ए बे जाइनी कथा कहीयें छैयें.

अयोध्या नगरीयें सोमचंद्रराजा सौम्यप्रकृतिवालो छे, ते नगरमां देव पाल नामें शेठ रहे छे. तेनी देवनी नामें स्त्री छे, तेने राजदेव अने जोज देव, एवे नामें बे पुत्र थया छे. तेमां महोटो जाइ सर्व कोइने गमतो सु जागी छे आठमे वर्षें सर्व कलाउ शीखी लीधी, अनेक शास्त्र जण्यो, अने यौवनवय आवे थके स्वयंवर कन्या कोइक व्यवहारीयें आणी दीधी तेनुं

पाणिग्रहण कराव्युं,, जिहां जइने कोइपण चीजनो व्यापार करें तिहां अ वश्य लाभ थाय. ते पुत्र राजामें पण मानेतो थयो.

हवे बीजो न्हानो भाइ भोजदेव छे ते धुरथीज दुर्भागी छे. ते जेवारें यौवन पाम्यो, तेवारें तेना पितायें घणां शेठीया पासेंथी कन्यानी माग णी करी, पण एने आपवानी कोइयें वांछा करी नहिं. तेवारें शेठें कोइ एक दरिद्रीने पांचशो सोनैय्या आपीने तेनी कन्या परणवानुं ठेराव्युं. ते क न्याने बापें सोनैय्याना लोभथी कन्या देवानी कही. परंतु कन्या कहेवा लागी के हुं अग्निमां प्रवेश करवानें कबूल करीश पण ए दुर्भागीने पर णीश नहि. एवो हठ लइ बेठी. एम करतां वेश्याने धन आपीने तेने घेर जवा मांड्युं. तिहां पण वेश्या एवुं चिंतववा लागी के जेम तेम करी ए इहांथी उठी जाय, तो सारुं. तेमज जे कोइ वेपार करी आवे तेमां प ण अवश्य नुकशानज थाय पण पूरुं नाणुं थवुं मुशकिल थइ पडे. एवी रीतें जो पण ते बेहु सगा भाइ छे, तो पण आंतरुं घणुं पडी गयुं.

एकदा कोइ ज्ञानी गुरु, वनमांहे समोसर्या तेमने शेठजी बेहु पुत्रने साथें तेडीने वांदवा माटें गया. तेमने वांदी धर्मदेशना सांभळ्यानंतर शेठें पूछ्युं के हे भगवन्! महारा बे पुत्रमां एक महासुभागी अने एक महा दुर्भागी थयो छे, ते कया कया कर्मने योगें थया हशे?

तेवारें गुरु बोल्या के हे देवपाल! संसारमां सर्व जीवो पोतपोताना क रेलां शुभाशुभ कर्मने भोगवे छे. माटें तहारा पुत्रोनुं वृत्तांत कहुं ते सांभळ.

एज नगरमां आ भवथी त्रीजे भवें एक गुणधर अने बीजो मानधर एवे नामें बे वाणीया रहेता हता. तेमां गुणधर तो देव, गुरु, अने सा धुने विषे विनीत तेमज उपशांत चित्तवालो अक्रोधी हतो, कोइने कटु वचन कहे नही. अने बीजो मानधर जे हतो ते माहानिर्गुणी अहंकार करतो थको साधुनी तथा धर्मवंत पुरुषोनी निंदा करतो रहे. महापुरुषोनी हास्य करतां कर्म उपार्जन करतो हतो.

एकदा एक साधुयें वरसालें मासखमण तप कीधुं, ते तपना बलथी आकर्ष्या देवता पण तेनी सेवा करवा लाग्या. तेने देखीने मानधर तेनी निंदा करतो कहेवा लाग्यो के अरे! आ पाखंडी मायावी लोकोने विप्र तारवा ठगवा माटें तपस्या करे छे. महत्त्व पामवाने अर्थें कष्ट करे छे. एम

निंदा करतां तेने एक देवतायें वाख्यो, तो पण निंदा करतो रह्यो नही. तेवारें देवतायें क्रोध आणी चपेटो माख्यो; तेथी मरण पामीने पहेली नरकें गयो. अने महोटो गुणधर नामा वणिक ते मरीने देवता थयो. हवे ते नरकथी निकलीने जोजदेव नामें तमारे घेर पुत्रपणे आवी ऊपनो छे. ते पूर्वकृत कर्मने योगें दुर्जागी थयो छे अने पहेला देवलोकथी चवीने ताहारे घेर राजदेव नामें पुत्र थयो छे. ते सुकृतने योगें सुजागी थयो छे. एवी गुरुनी वाणी सांजली बेहु जाइने जातिस्मरण ज्ञान उपन्युं, तेथी पाछला जव दीठा. तेवारें जोजदेवें पोतानी निंदा करी केटला एक कर्मक्षय कस्या. अने बे जाइ, तथा त्रीजो बाप त्रणे जणे मली केवलीनी पासेंथी श्रावकधर्म अंगीकार कस्यो. अनुक्रमें बेहु पुत्र दीक्षा लइ चारित्र धर्म पाली आयु पूर्ण थये देवलोकें गया. त्रीजे जवें मोक्षें जाशे ॥ दोहो ॥ गुण बोले निंदे नही, ते सोजागी हुंत ॥ अवगुण बोले परतणा, दोहग ते पामंत ॥ १ ॥ इति राजदेव जोजदेव कथा ॥

हवे चौदमी अने पन्नरमी पृछाना उत्तर बे गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ जो पढइ सुणइ चिंतइ, अन्नं पाढेइ देइ उवएसो ॥ सुअ गुरु जत्तिजुत्तो, मरिउं सो होइ मेहावी ॥३०॥ तव नाण गुण समिद्धं, अवमन्नइ किर नयाणइ एसो ॥ सो मरिऊण अहन्नो, डुम्मेहो जायए पुरिसो ३१

जावार्थः—जे पुरुष ज्ञान जणे, ज्ञान सांजले तथा तेना अर्थ मनमां चिंतवे, तथा (अन्नंपाढेइ के०) अनेरा बीजा पुरुषोने ज्ञान जणावे, तेमने धर्मोपदेश दीये अने जे पुरुष सिद्धांतनी तथा सद्गुरुनी जक्तियें करी सहित होय. एटले सिद्धांतनी रूडा गुरुनी जक्ति करे ते पुरुष मरीने मेधावी एटले बुद्धिमान् चतुर माह्यो विचक्षण थाय. जेम मतिसागरनो पुत्र सुबुद्धि प्रधान बुद्धिवालो थयो ॥ ३० ॥ तथा जे तपस्वी ज्ञानवंत गुणवंत पुरुष होय, तेनी जे पुरुष अवगणना करे, मुखथी एम कहे के ए कांइ नही एमां शो माल छे ? ए कांइ पण जाणतो नथी, मूर्ख छे. एम अवगणना करे, ते पुरुष अहन्नो. एटले अधन्य अर्थात् अजाग्यवान् छतां दुष्ट पापिष्ट डुम्मेहो एटले डर्बुद्धि वालो थाय, एटले बुद्धिरहित थाय जेम सुबुद्धि प्रधाननो न्हानो जाइ माठीबुद्धियें करी दुःखीयो थयो ॥ ३१ ॥

हवे बे दृष्टांतनी ऊपर सुबुद्धि कुबुद्धिनी कथा कहें छे.

क्षितिप्रतिष्ठित नगरें चंद्रयशा राजा राज्य करे छे. तेनो मतिसागर नामें प्रधान छे. तेने सुबुद्धि नामें पुत्र थयो, ते न्हानपणमां नण्यो अने प्रज्ञान बलें करी सर्व कलाउ शीख्यो. चार प्रकारनी बुद्धिनो जाण थयो. हवे ते प्रधानने वली बीजो पुत्र थयो, ते नणवा योग्य थयो. तेवारें नीशालें नणवा मोकल्यो तेने नणाववा माटें चारमास पर्यंत पंमितें उद्यम कस्यो पण जेम कर्षणी लोको उखर भूमिमां बीज वावे, ते निःफल थाय. तेम ए गुणवंत बुद्धिवंत न हतो माटें नणावनार पंमितनो उद्यम सर्व निःफल थयो. तेथी लोकें ए पुत्रनुं दुर्बुद्धि एवुं नाम पाड्युं.

एवामां तेज गामनो रहेनार कोइ धन्नो नामें शेठ व्यवहारीयो छे. तेने एक जावड बीजो बहाड, त्रीजो नावड अने चोथो सावड. एवे चार नामें चार पुत्र छे. ते चारेने परणाव्या, एटलामां धन्नो शेठ रोगें पीडाणो तेवारें पोताना चारे पुत्रने तेडी शीखामण देवा लाग्यो के हे पुत्रो! तमें चारे जण मांहोमांहे स्नेह राखीने एकठा मली रहेजो. परंतु पोतानी स्त्रीयोनां वचन सांनली जूदा थाशो नहिं. जेमाटें कह्युं छे के ॥ चोपाई ॥ स्त्रीनेवचनें जाय सनेह, स्त्रीनेवचने जाये देह ॥ स्त्रीने वचनें बांधव नडे, एकठा रहे तो गूअड चडे ॥ १ ॥ एवी वात तमें करशो नहीं. क्यारें पण कलह करी एक बीजाथी जूदा पडशो नहिं. जूदा पडवाथी लोकमांहे हांसी थीय अने एम करतां जो कदापि जूदा थाउ तो? तमो चारेने माटें जूदा जूदा चार निधान आपणा घरनी चारे खूणोमां चारेने नामें थापी मूक्या छे, ते लेजो. एवी वात पिताना मुखथी सांनलीने पुत्रो बोल्या के हे तात! जेम तमें कहो छो, तेमज अमें करीशुं.

पछी पिताने समाधि मरण थयुं तेनुं मृतकार्य करी चारे नाइ स्नेहपूर्वक एकठा रह्या अनुक्रमें चारे नाइयोने संताननी प्राप्ति थइ. तेवारें स्त्रीयो वढवा लागी के, हवे जूदा थाउ. तेवखतें चारे नाइयें मली चारे निधान काढ्या. तेमां पहेला महोटा नाइना निधानमांथी केश निकल्या, बीजाना निधानमांथी माटी निकली अने त्रीजाना निधानमांथी चोपडा तथा कागलीया निकल्या अने चोथाना निधानमांथी सोनुं तथा रत्न निकल्यां तेथी ते नाइ हर्षवंत थयो अने त्रण नाइ उदवाणा थका कहेवा लाग्या

जे पितायें आपणी साथें वैर राख्युं मात्र एक न्हानो पुत्र वल्लन्न हतो माटें तेनेज सर्व. लक्ष्मी आपी दीधी, परंतु रीतसर तो आपणे चारे नाइयो मली ते लक्ष्मी वहेंची लेशुं! तेवारें न्हानो नाइ कहेवा लाग्यो के मुजने जे पितायें निधान आप्युं, तेमांथी हुं कोइने आपीश नहीं. एम मांहोमांहे रात्रि दिवस कलह करता रह्या. कोइनुं वचन कोइ माने नहीं.

पढी त्रणे नाइयें जइ राजाना प्रधान आगल वात कही, परंतु प्रधानथी पण तेनो न्याय थयो नहीं. तेथी अफसोसमां पड्या. एवामां मेतानो पुत्र सुबुद्धि तिहां आव्यो, तेनी आगल ते चारे निधाननो संबंध कही संनलाव्यो सुबुद्धियें कह्युं के राजानो आदेश होय तो हुं तमारो जगडो नांगी नाखुं. राजायें आदेश आप्यो, तेवारें सुबुद्धियें तेमने एकांतमां तेडी वात कही के तमारो पिता घणो चतुर हतो, तेणें चारे नाइने लाख लाख टंका आपवा कह्या ठे. केम के महोटा नाइना निधानमां केश राख्या ठे, माटें घोडा, गाय, नेंश, उंट आदिक जे चोपद रूप धन ठे, ते एने आप्युं ठे. अने बीजाना निधानमां माटी निकली ठे माटें तेने खेत्र, धरती, रूप धन आप्युं ठे तथा त्रीजाना निधानमां कागल चोपडा ठे माटें व्याजें नाणुं आपेलुं खत पत्र सर्व लेहेणुं जे लोको उपर ठे, ते रूप धन तेने आप्युं ठे. अने चोथाने सोनुं तथा रत्न जे घरमां ठे, ते रूप धन आप्युं ठे. ते सांनली चारे जणे मली हिसाब तपासी जोयो तो ते चारेने सरखे हिसे लाख लाख टकानी वहेंचण करी आपेली दीठामां आवी. ते जोइ चारे जणे जइ राजानी आगल कह्युं के हे स्वामी! सुबुद्धियें रूडीबुद्धियें करी अमारा जगडानो निवेडो करी आप्यो ठे, ते सांनली राजा खुशी थयो. अने सुबुद्धि लोकमां प्रसिद्ध थयो तथा बीजो पुत्र तो लोकोमां हासीनुं पात्र थको निंदा पामतो कुबुद्धियो कहेवातो प्रसिद्धिने पाम्यो.

एवामां कोइ ज्ञानी गुरु ते वनना उद्यानमां आव्या. तेमने राजा तथा प्रधान पोताना पुत्रो सहित तेमज अन्यजनो पण वांदवा गया. वांदी धर्मोपदेश सांनल्यानंतर मेहेतायें सुबुद्धि दुर्बुद्धिनामें बेहु पुत्र आश्चर्यी वात पूठवाथी गुरु कहेवा लाग्या के हे प्रधान! एज नगरमां एक विमल अने बीजो अचल, ए बे नामें बे वाणीया हता. परंतु बेहुना स्वनाव जूदा हता. तेमां विमलें दीक्षा लीधी. देव गुरु सिद्धांतनी नक्ति कीधी.

सिद्धांत भण्यो, तेना अर्थ विचार जाण्या, बीजा साधुउने पण भणाव्या, छेवट आचार्यपद पाम्यो; तेवारें घणा जीवोनें धर्मोपदेश देइ पोतानुं आयुष्य पूर्ण करी बीजे देवलोकें देवता थयो.

तथा बीजो अचल वाणीयो तो जे तपस्वी, ज्ञानी अने धर्मवंत होय, तेनी निंदा करे अने कहे ए साधु शुं जाणे छे ? एम सर्व कोइनी अवज्ञा करतो हतो. तेने पापें करी मरीने बीजी नरकें गयो.

हवे विमलनो जीव देवलोकथी चवीने ताहारो सुबुद्धि नामें पुत्र थयो अने अचलनो जीव नरकथी निकली पूर्वे आचरेली निंदाने पापें करी आंहिं तहारो दुर्बुद्धिनामें पुत्र थयो छे. ते हजी पण संसारमांहे घणो रजलशे. इत्यादि पूर्वजवनी वात सांजली सुबुद्धियें श्रावकधर्म अंगीकार कस्यो. वली केटला एक दिवस पढी दीक्षा पण लीधी, सिद्धांत जण्यो, चारित्र पाली पांचमे ब्रह्मदेवलोकें देवतापणे ऊपनो. अनुक्रमें मोक्षें पण जाशे ॥ दोहो ॥ जणे जणावे ज्ञान जे, थाये निर्मल बुद्धि ॥ देव गुरु जक्ति करे, अनुक्रमें पामे सिद्धि ॥ १ ॥ गाथा ॥ जिणपवर सुरतेअं, वीरं नमिऊं विसाल राय तयं ॥ लहिउ बालाबोहो, जणंति निसुणंति सुरक करो ॥ १ ॥ इति सुबुद्धि दुर्बुद्धि कथा समाप्ता ॥

॥ हवे शोलमी अने सत्तरमी प्रश्नाना उत्तर बे गाथायें करी कहे छे ॥

गाथा ॥ जो पुण गुरुजण सेवी, धम्माधम्माइ जाणिऊं मइइ ॥ सुय देव य गुरुजत्तो, मरिउं सो पंमिउ होइ ॥ ३ ॥ मारेइ खाइ पीयइ, किंवा पढिएण किंच धम्मेण ॥ एअंचिय चिंततो,मरिऊं सो काहलो होइ ॥३३॥

जावार्थः—वली जे पुरुष गुरुजन एटले वडेरानी सेवा जक्ति करवामां तत्पर होय, धर्माधर्म एटले पुण्यपापनो विचार जाणवानी वांछा करे, तथा जे श्रुत सिद्धांतनो अने देव गुरुनो जक्त होय ते कुशल पुरुष मरीने पंमित थाय ॥ ३२ ॥ तथा जे पुरुष मारेइ एटले जीवोने मारे हिंसा करे, मद्य मांसादिक खाय, पीये, मोज मजाह करे अने जणवा पढवाथी शुं थाय? तथा धर्म करवाथी पण शुं थवानुं छे ? ए प्रकारनी चिंतवणा करे, ते जीव, मरीने काहलो मूक मूर्ख थाय ॥३३॥ जेम पाछले जवें आंबानो जीव मरीने कुशल थयो अने आंबानो मित्र लींबो हतो, ते मरीने कुशलने घरें कुमार

एवे नामे सेवक थयो. तेनी कथा कहे छे ॥ श्लोक ॥. श्री वीरजिनपं वंदं, गौतमं नवलब्धिकम् ॥ तत्त्वज्ञं सूर्यतेजस्कं, महीश्वरसुरार्चितम् ॥ १ ॥

धारावास नगरें वेसमणशेठ धनवंत वसे छे, तेने कुशल एवे नामें पुत्र थयो, ते नणी गणीने बहोंतेर कलानो जाण थयो, पदानुसारिणी प्रज्ञावलो थयो, हवे ते शेठने घेर एक कर्मकर छे, ते कुरूप दुर्भागी मूक, मूखरोगी छे. तथापि कुशल ते कर्मकरनी उपर स्नेह आणे, कुशल पोतें जिनधर्मनो जाण छे, धर्मकरणी करे छे.

एकदा कुशल क्रीडा करवा माटें वनमां गयो. तिहां एक विद्याधरने उंचो उछली पाछो निचें पडतो दीठो. तेने कुशलें पूछ्युं के तमें उत्तम पुरुष छतां पांख रहित पंखीनी पेरें केम चडो पडो छो? ते सांजली विद्याधर बोल्यो के हुं वैताढ्यनो वासी विचित्रगति नामें विद्याधर छुं. हमणां हुं श्रीपर्वतें गयो हतो, तिहांथी वलतां महारो मित्र विद्याधर मल्यो तेने केटलां एक शस्त्रना घाव लागेला दीठा, तेवारें में पूछ्युं के तुजने आ शुं थयुं? तेणें कह्युं के महारी स्त्रीने एक बीजो विद्याधर लइ जतो हतो, तेनी पछवाडे जइ युद्ध करी महारी स्त्रीने वाली इहां रह्यो छुं. युद्धमा घा लाग्या छे एवुं सांजलीने में व्रणसंरोहणी औषधीयें करी तेने सज्ज कीधो ते विद्याधर स्त्रीने लइ पोतानें स्थानकें गयो, परंतु हे जाइ! मुजने व्याकुलपणाथी आकाशगामिनी विद्यानुं पद वीसरी गयुं, तेथी पडी जाउं छुं. एवी वात सांजलीने कुशलें कह्युं के तमारी विद्यानुं धुरलुं पद याद करी कहो. ते विद्याधरें धुरनुं पद कही संजलाव्युं. तेने अनुसारें कुशलें पदानुसारिणी प्रज्ञाने बलें समस्त पूरे पूरी आकाश गामिनी विद्यानां पद कही संजलाव्यां तेथी विद्याधर हर्षवंत थयो थको विस्मय पाम्यो, अने विचार्युं जे आ पुरुष प्रज्ञायें, बुद्धियें, रूपें अने गुणें करी श्रेयस्कर छे परोपकार करवामां दक्ष छे. एवा पुरुष विरलाज होय. एम चिंतवी कुशलनां माता पितानुं नाम पूछी विद्याधर पोताने स्थानकें गयो.

बीजे दिवसें वेसमण शेठनुं घर पूछतो विद्याधर तिहां आव्यो, तिहां कुशलने देवपूजा करतो देखी विद्याधरें पूछ्युं के तुं आ शुं करे छे? तेणें कह्युं के देवपूजा गुरुजक्ति करतो श्रीजिनधर्मनुं आराधन करुं छुं. ते जोइ विद्याधरें पण जिनधर्म पडिवज्यो, अने कहेवा लाग्यो के एक तो आका

शगामिनी विद्यानुं पद संजारी आप्युं तेनो उपकार अने बीजो श्रीजिनध र्म बताव्यो. ए बे उपकार तें मुऊने कस्या. तेथी हुं तहारो उत्तींगण कोइ रीतें थइ शकुं नहिं. एटलुं कही फरी शेठने कहेवा लाग्यो के महारा पितायें एक निमित्तियाने पूछ्युं हतुं के महारी पुत्रीनो वर कोण थाशे? निमित्तियायें कह्युं हतुं के तहारा पुत्रने विद्या वीसरी जशे तेने जे संजारी आपशे, ते ताहारी पुत्रीनो वर थशे. तेमाटें हे शेठ तमारा पुत्रने महारी साथें वैताढ्य पर्वतें मोकलो तो विवाह करीयें. ते सांजली शेठें पुत्रने वैताढ्य पर्वतें मोकल्यो. तिहां शुनलग्नें विवाह करी पछी विद्याधर तथा कुशल अने कुशलनी स्त्री ए त्रणे जण शाश्वतां चैत्य वांदवाने माटें गयां, सर्व चैत्य वांदीने चैत्यना मंफपें आव्या. तिहां चारणश्रमण मुनिने वांद्या. मुनियें विद्याधरने कह्युं के हे तुं तहारा बनेवीथकी जिनधर्म पाम्यो छो.

तेवारें मुनिने ज्ञानवंत जाणी कुशलें पूछ्युं के हे महाराज! कया शुनकर्मना उदयथी प्रदानुसारिणी प्रज्ञा जे बुद्धि ते अत्यंत निर्मल मुऊने प्राप्त थइ? अने महारो कुमारो मुखरोगी मूर्ख कुरूपवान् थयो, ते कया कर्मथी थयो? वली एनी ऊपर महारे घणो स्नेह शाथी थयो छे? ते मुऊनें कहो.

मुनि बोल्या के आ नवथकी त्रीजे नवें तुं अने कुमारो मली बे जण आंबो अने लींबो एवे नामें कुलपुत्र मित्र हता. तमांरे परस्पर घणो स्नेह हतो, तेमां आंबो निरंतर गुरुनी सेवा करे, पुण्य पाप संबंधि विचार पूछतो रहे. वली गुरुना कहेवा ऊपरथी पांच वर्षने पांच मास पर्यंत ज्ञानपंचमीनुं तप, विधिपूर्वक एकाग्रचित्ते तेणें कीधुं. ज्ञान अने ज्ञानवंतनी घणी नक्ति कीधी. तेना पुण्यथी आंबानो जीव मरीने देवलोकें देवता थयो. तिहांथी चवी तुं वेसमणशेठनो पुत्र थयो छो.

अने लींबानो जीव तो नास्तिकवादी थको जीवहिंसा करे, रूडुं खावुं, रूडुं पीवुं. स्वेछायें फरवुं, नणवाथी शुं थाय? तथा धर्म करवाथी शुं थाय? एनुं फल कांइ नथी? जे धर्म करे ते वधारे दुःखी थाय? एवी चिंतवणा करतो तथा लोकोने पण एवोज उपदेश देतो फरे. यद्यपि बेहु मित्र हता तथापि स्वनावमां एक बीजाने आंतरुं घणुं हतुं जो पण एकज गांठें बांधेला होय, तो पण जे काच ते काचज कहेवाय, अने मणि ते मणिज कहेवाय. तेम बे मित्र हता तो पण आंबो ते धर्म स्थापन करतो अने

लींबो ते धर्म उछापतो निंदा करतो नरकें गयो, तिहांथी निकलीने तमारे घेर कुमारो मूक, मूर्ख, दुर्नागी कुरूपो थयो. जेवुं नाम तेवोज परिणाम थयो अने हे कुशल ! तें ज्ञान पंचमीनुं तप कीधुं, गुरुनी ज्ञानवंतनी नक्ति कीधी, तेथी तुं चोखी बुद्धिवालो थयो बो माटे तुजने धर्मने विषे नावप्रज्ञा बे.

एवी गुरुनी वाणी सांजली कुशलने जातिस्मरण ऊपनुं, पूर्वजव दीठा, ते वारें गुरु पासेंथी श्रावकनां व्रत लई देशविरति थयो थको तिहांथी सुंदरीनामें स्त्री सहित पोताने घेर आव्यो. अने विद्याधर वैताढ्यें पोताने नगर गयो.

घेर आव्या नंतर अनुक्रमें पुत्रप्राप्ति थइ. स्त्री नरतार बेहुयें पंचमीनुं तप कर्युं ते पूर्ण थये तेनुं उजमणुं कीधुं. श्रीसंघनी नक्ति करी. पबी घरनो नार पुत्रनें सोंपी कुशलें पिता सहित दीक्षा लीधी. अगीयार अंग अने चौद पूर्व नणी शुद्ध चारित्र पाली मोक्षनां सुख पाम्यो. अने लींबा नो जीव घणो संसार नम्यो ॥ गाथा ॥ जे नाण पंचमि तवं, उत्तम जीवा कुणंति नावजुआ ॥ उवचुंजिय मणुअ सुहं, पावंति केवलं नाणं ॥ १ ॥ इति आंबा लींबानी कथा ॥ ११ ॥

हवे अढारमी तथा उगणीशमी पृछाना उत्तर बे गाथायें कहे बे.

॥ गाथा ॥ सव्वेसिं जीवाणं, तासं ण करेइ णो करावेइ ॥ परपीड व ऊणाउ, गोयम धीरो नवे पुरिसो ॥ ३४ ॥ कुक्कड तित्तर लावे, सूअर ह रिणे अ विविह जीवे अ ॥ धारेइ निच्चकालं, स सव्वकालं हवंइ नीरू ॥ ३५ ॥

नावार्थः—जे जीव पोतें सर्व प्रकारना जीवो प्रत्यें त्रास करे नहिं, ए टले नय पमाडे नहिं. बीवरावे नही, तेम बीजा पासें त्रास करावे नही. जे परजीवने पीडा करवानुं वर्जे, हे गौतम ! ते पुरुष, धैर्यवंत साहसिक थाय. जेम पृथ्वीतिलक नगरें धर्मसिंह क्षत्रियनो पुत्र अनयसिंह एवे नामें महा धैर्यवान् थयो ॥ ३४ ॥ तथा जे जीव कूकडा, तीतर, लावां, सूअर, हरि ण प्रमुख विविध प्रकारना जीवोने निरंतर बंधन ताडनादिक करे, पांजरा मांहे घाले, ते जीव सदैव बीकण होय उच्चाटमां रहे जेम पहेलां कह्यो जे अनयसिंह तेनो न्हानो नाइ धनसिंह क्षत्री बीहीकण थयो ? ॥ ३५ ॥

हवे ए बेहु उत्तरनी उपर अनयसिंह अने धनसिंह बे नाइउनी कथा कहे बे. पृथ्वीतिलक नगरें पृथ्वीतिलक राजा राज्य करे बे. ते राजानो सेवक धर्मसिंह क्षत्री बे, ते जिनधर्ममां रक्त बे, तेने एक अनयसिंह अने

बीजो धनसिंह ए बे नामें बे पुत्र थया. परंतु तेना पोत पोतांना कर्म जूदां जूदां छे. महोटो भाइ तो वाघ, सिंह, सर्प्प, शस्त्र, भूत, प्रेत इत्यादिक जीवोथी पण बीहे नही आकाशथी वज्र पडे तो पण मरे नहिं. अने बीजो न्हानो भाइ जे धनसिंह छे, ते तो मात्र सींदरी देखे, तो पण तेनें सर्प्प मानीने बीक आवे, कोइक पांदडुं हाले, तेटलामां बीहे.

एक वार ते नगरनी ढूकडो एक सिंह आव्यो जाणीने ते रस्तेथी कोइ पण जाय नहिं. तेवारें प्रधानें राजा आगल आवी विनति करी के हे महाराज! सिंहनी बीकथी मार्गमां कोइ चाली शकतुं नथी. तेवारें राजायें सभामांहे सिंहने मारी लाववानुं बीडुं आपवा मांड्युं. पण कोइयें झाल्युं नही, परंतु अभयसिंहें ते बीडुं झाल्युं अने कह्युं के हे महाराज! तमारो आदेश छे तो हुं एकलोज जइने सिंहनो वध करी आवीश! अने लोकोने सुख करी आपीश! एम कही वनमां गयो तिहां सिंहने बोलावी भालुं मारी तेनो वध करी पाछो आवी राजाने प्रणाम कीधो. राजायें खुशी थइने तेने महोटो सिरपाव आप्यो. घणांक वस्त्राभरण दीधां.

वली एकदा कोइ एक सीमाडीयो राजा छे ते राजानी आण न मानतो थको वाट पाडे, गामोने लूंटे छे, तेनो निग्रह करवा माटें राजायें बीडुं फेरव्युं ते पण अभयसिंहें झाल्युं अने कटक लेइने ते सीमाडीया सामंतना नगरें पहोतो. ते राजानी पासें दूत मोकलीने कहेवराव्युं के अमारा राजानी आण मान्य कर. नहिं तो युद्ध करवानी सज्जाइ कर. तेवारें सामंतें कह्युं के आगल पण घणा वखत राजानुं कटक महारी ऊपर चडाइ करी आव्युं हतुं ते में जीत्युं हतुं. तेने दूतें कह्युं के स्वामी! हमणां तो अभयसिंह सिंह आव्यो छे. ते सांभली सामंत बोल्यो जे मोहाडाथी वखाण करवे शुं थवानुं छे? सिंह छे के शियालीयुं छे? ते तो संग्राममां पाधरुं जणाइ आवशे. ते सांभली दूत पाछो आव्यो अने अभयसिंहने कह्युं के एमां अहंकार घणो छे, माटें युद्ध कस्या विना मानशे नही.

हवे अभयसिंह रात्रिनें वखत निष्टचर्यायें गढ उलंघीने सामंतराजाना महेलमां पेठो. सामंत सूतो हतो तेने जगाड्यो अने कह्युं के ऊठ ऊठ, सिंह आव्यो छे तेनी साहामो आव. ते सांभली सामंत पण ऊठीने साहामो आव्यो. बेहुयें मल्लयुद्ध कर्युं. अभयसिंहने सामंतें भूमियें पाडी बां

थी लीधो. तेवारें तेनी स्त्रीयें पगे लागीने भरतारनी भिक्षा मागी भरता रने मूकाव्यो, ते राजा अहंकार मूकीने अभयसिंहनो सेवक थयो.

हवे प्रभात थयो, तेवारें कटकमां अभयसिंहने कोइयें दीठो नही, तेथी सर्व सेन चिंतातुर थयुं. तेटलामां एक जणे आवीने कह्युं के अभयसिंहें सामंतने जीत्यो छे अने तमो सर्वेने तेणें तेड्या छे. तमें कांइ शंका करशो नही. तेवारें सैन्यनां सर्वलोक गाममां आव्यां तेने सामंतें भोजन करांवी सर्वेने वस्त्रनी पहेरामणी करी खुशी कस्यां.

हवे अभयसिंह सामंतने पोतानी सायें तेडी पृथ्वीतिलक नगरें आव्यो, तिहां सामंत सहित जइ पृथ्वीतिलक राजाने प्रणाम कस्यो. ते जोइ राजा हर्षित थइ विचारवा लाग्यो के आ मनुष्य छे, पण देवशक्ति धारण करे छे. एम चिंतवी अभयसिंहने एक देश बक्षीस आप्यो; अने सामंतने भोजन करांवी वस्त्र पहेरामणी करी विदाय कस्यो ते पण राजाने भेट आपी रजा लइने पोताने देश गयो.

एकदा ते नगरना उद्यानमां चार ज्ञानना धणी श्रुतसागर नामा आचार्य पधास्या, ते सांभली राजा परिवार सहित तेमने वांदवा गया. देशना सांभल्यानंतर धर्मसिंहें पूछ्युं के हे महाराज! आ म्हारा अभयसिंह पुत्रें शुं पुण्य कीधुं छे? के जेथकी ए महा साहासिक थयो छे? अने न्हाना पुत्रें शुं कुकर्म कीधुं छे के जेथकी ते महा बीकण थयो छे?

गुरु कहेता हवा के एज नगरने विषे एक पूरण अने बीजो धरण एवे नामें ए बेहु जण आहिर हता; तेमां पूरण तो घणोज दयालु हतो धर्मात्मा हतो, सर्व जीवनी रक्षा करतो कोइने त्रास देतो न हतो, अने बीजो धरण जे हतो ते तो कूकडा, सूडा, तेतर, मृगलां प्रमुख जीवोने पकडीने बांधी राखे, कोइनो वास्यो रहे नही कोइनुं कह्युं माने नही, तेथी तेने जूदो कस्यो माटें जीवरक्षाने पुण्यें करी पूरणनो जीव ते तहारो अभयसिंह नामें शूरवीर अने भाग्यवंत पुत्र थयो तथा धरणनो जीव घणा जीवोने डुहवी मरीने तहारो धनसिंह नामें लघुपुत्र बीकण थयो छे. एवी पूर्वभव संबंधि वार्त्ता सांभलीने सघलायें श्रावकधर्म पडिवज्ज्यो. धर्माराधन करी पिता तथा बेहु पुत्र मली त्रणे जण देवलोकें पहोता ॥ चोपाई ॥ गोयम आगल, जिणवरें कह्युं, पुण्य पापनुं फल जूजूउं ॥ गौतमपृच्छा

बालावबोध,सुणतां कहेतां होय प्रतिबोध॥ १ ॥इति अजयसिंह धनसिंहकथा॥

हवे वीशमी पृछानो उत्तर एकगाथायें करी कहे छे. .

॥ गाथा ॥ विद्या विन्नाणं वा, मिछा विणएण गिन्हिउं जोउ ॥ अवम न्नइ आयरियं, सा विद्या निष्फला तस्स ॥२६॥ .नावार्थः–जे जीव विद्या अथवा विज्ञान जे कला प्रमुख तेने मिथ्या. एटले कूडा विनयें करी लेवा वांछे अर्थात् जणावनार जे आचार्य तेनुं नाम उलवी नांखे, अवगणी नाखे परनवें ते जीवने नणेली विद्या सफल न थाय निःफल थाय. जेम त्रिदंमीयायें नापितनी पासेंथी विद्या शीखीने ते विद्याने बलें विदेशें जइ त्रिदंमने आकाशने विषे राख्यो अने गुरुनुं नाम उलवी नाख्युं तेणे करी आकाशथकी त्रिदंम पडीगयो विद्या निष्फल थइ. इहां नापितनी कथा. कहे छे.

राजापुर नगरें कोइक विद्यावंत नापित वसे छे. ते विद्याने बलें आकाशने विषे पोतानो छरो निराधारपणे राखे. परंतु तेहने लोक मांने नहीं एवो तेनो प्रनाव देखीने एक त्रिदंमीयो ब्राह्मण ते विद्या लेवानी वांछा करतो ते नापितनो मिथ्यात्वें बाह्यविनय करवा लाग्यो, जाण्युं जे कोइरी तें पण विद्या आपे तो ठीक थाय."अमेध्यादपिकांचनं" एटले अपवित्रथी पण सोनुं लीजें. एम चिंतवी सदैव तेनी सेवा करे, नक्ति करे, पछी विद्या मागवानी प्रार्थना कीधी, तेवारें तेणें पण संतुष्ट थइने विधिपूर्वक विद्या दीधी. ते त्रिदंमीयें पण विधिपूर्वक आराधीने विद्या साधी लीधी. पछी पोतानो जे त्रिदंम हतो, तेने आकाश मंमलें राखीने लोकोने कौतुक देखाडतो फरे. लोक पण तेनी पूजा नक्ति करी प्रशंसा करवा लाग्या. एकदा लोकें पूछ्युं के हे स्वामी! ए विद्या तमें कया गुरुनी पासेंथी पाम्या छो?

तेवारें ते ब्राह्मणें लज्जाथकी नावीनुं नाम कह्युं नहीं अने तेने बदले हिमवंत वासी विद्याधर महारो गुरु छे. तेनी सेवा विनयथकी हुं आ विद्या पाम्यो छुं. ए रीतें गुरुनुं नाम उलवतांज ते ब्राह्मणनो त्रिदंम जे आकाशमां अधर रहेलो हतो, ते खडखडाट करतो आकाशथकी नीचें धरतीयें आवी पड्यो, तेवारें लोको सर्वे हांसी करवा लाग्या अने जेवुं मान महत्त्व वृद्धि पाम्युं हतुं तेथी वली बमणी अवहेलना थइ. लोक जे पूजा नक्ति करता हता, तणें पूजा नक्ति करवी मूकी दीधी. ए रीतें जे पुरुष विनय विना विद्या शीखे,गुरुनुं नाम उलवे, गुरुनी अवगणना करे, तेनी

विद्या निःफल थाय. तेमज आवते नवें तेने ज्ञान प्राप्ति पण दोहेली थाय. ए गुरुनिन्ह्ववण ऊपर नापितनी कथा कही.

हवे एकवीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छेः—

॥ गाथा ॥ बहु मन्नइ आयरियं, विणय समग्गो गुणेहिं संजुत्तो ॥ इय जा गहिया विद्या, सा सफला होइ लोगंमि ॥ २१ ॥ भावार्थः—जे जीव पोताना भणावनार आचार्य प्रत्यें घणुंज माने, जे विनयवंत होय, समग्र गुणें करी सहित होय. एवी रीतें जे विद्या भणी लीधी होय, ते विद्या लोक मांहे सफल थाय ॥ २१ ॥ जेम श्रेणिकराजायें पोताना सिंहासननी ऊपर चंमालनें बेसाडी विनयें करी अवनमन नामनी विद्या लीधी, ते सफल थइ. माटें इहां ते श्रेणिकराजानी कथा कहे छे.

राजगृही नगरें श्रेणिकराजा राज्य करे छे. तेनी चेलणा नामें पट्टराणी छे. एकदा राणीने एकथंभा धवलगृहें वसवानो मोहलो ऊपनो, ते वात राजायें अभयकुमारने कही. अभयकुमारें देव आराध्यो, देवता प्रत्यक्ष आवी ऊभो तेनी पासें एकथंभो आवास कराव्यो. तेने चारे बाजु फरतां चार वन कराव्यां. ते चारे वनमां सर्व ऋतुना फल फूल निरंतर सदैव लाभे, एम करी राणीने एकथंभा आवासें बेसाडी तेनो मोहलो पूर्ण कर्यो.

एवामां एक मातंगनी स्त्रीनें अकालें आंबा खावानो मोहोलो ऊपनो तेना धणी मातंगें अवनमन नामनी विद्याने बलें करी राजानी वाडीमांहेला सर्व ऋतुवनना आंबानी माल नमांवी तेनां फल लेइ स्त्रीनो मोहोलो पूर्ण कर्यो. राजायें अभयकुमारने कह्युं के आंबानां फल रावली वाडीमांहेथी कोणें लीधां ? ते चोरने शोधी काहाडवो जोइयें. अभयकुमारें महोटी कुंआरी कन्यानी कथा कहीने बुद्धिने बलें ते मातंग चोरने प्रगट कीधो, अने पकडी लाव्या. तेने राजायें पूछ्युं के गढनी मांहेली कोरें महारी वाडी छे, तेना फल तें केवी रीतें लीधां ? तेवारें मातंगें बीहीने कह्युं जे में विद्याने बलें लीधां.

श्रेणिकराजायें कह्युं ते विद्या जो मुझने आपे, तो हुं तुझने मूकी आपुं. मातंगें ते वात मान्य करी. तेवारें राजायें पोतें सिंहासन ऊपर बेठां थकांज विद्या भणवा मांमी. तेने घणा वखत मातंगें विद्या कही, पण राजाने आवडी नहीं. तेवारें अभयकुमार मंत्रीयें कह्युं के हे महाराज! विद्या तो विनय करवाथी आवडे, ते सांभली राजायें पोतें सिंहासनथी हेठो

उतरी मातंगने सिंहासन ऊपर बेसाड्यो. पातें मातंगनी आगल बे हाथ जोडी विद्या लेवा बेठो,तेथी एकवारें चंमालें कहेली विद्या राजाने मुखाग्रे थइ गइ, सफल थइ. ए रीतें विनय करीने विद्या लेवाथी कार्य सर्युं ॥ इति विनयें विद्या लेवा आश्रयी श्रेणिकराजानी कथा ॥ २१ ॥

॥ हवे बावीशमी अने त्रेवीशमी प्रश्नाना उत्तरो बे गाथायें करी कहे छे ॥

गाथा ॥ जो दाणं दाऊणं, चिंतइ हा किसमं मए दिन्नं ॥ होऊणवि धण रिद्धी, अचिराविहु नासए तस्स. ॥ ३८ ॥ थोवधणोवि हु सत्तिइ, देई दाणं पयट्टइ परेवि ॥ सो पुरिसो तस्स धणं, गोयम संमिलइ परजम्मे. ३९

. भावार्थः—जे मनुष्य दान देइ करीने पछी हृदयमां एवी चिंतवणा करे के हा इति खेदे अरे में आ दान फोकट शा वास्ते दीधुं ? एवी रीतें दान दइने पछी तेनो पश्चात्ताप करे, तेने घरें धन ऋद्धि होइने एटले लक्ष्मी एकठी थइने पछी पाछी अचिर एटले स्वल्पकालमांज अर्थात् थोडा दिवस रहीने हु इति निश्चें पाछी जती रहे. . जेम दक्षिणमथुरानो वासी धनदत्त शेठनो पुत्र सुधन नामें हतो तेहनी लक्ष्मी निकली पराइ थइ गइ पारके घेर जती रही ॥ ३८ ॥ तथा जे स्वल्प धनवान् छतो पण पोतानी सत्तिइ एटले शक्ति प्रमाणें पोतें सुपात्रने दान आपे, परेवि एटले बीजा पासें (पयट्टइ के०) दान देवरावे एवो जे पुरुष होय, (तस्सधणं के०) ते पुरुषने धन जे लक्ष्मी ते, हे गोयमं ! (परजम्मे के०) परजन्म एटले भवांतरने विषे (संमिलइ के०) सम्यक् प्रकारें मले छे, संपजे छे. जेम उत्तरमथुरा वासी मदनशेठने घेर अकस्मात् घणी ऋद्धि आवी मली ॥ ३९ ॥

॥ ए बेहु बोल ऊपर सुधन अने मदनशेठनी कथा कहे छे ॥

दक्षिणदेशें दक्षिणमथुरा नगरीयें दनदत्त शेठ वसे छे. ते कोटिद्रव्यनो धणी छे. तेने सुधन नामा पुत्र थयो. ते शेठ पांचशें शकट करियाणांनां भरी वाणोतरने परदेश वेचवा मोकले, ते तिहां करियाणां वेचीने वली बीजा नवां करियाणां लइ आवे. तेमज केटलोक माल समुद्र मार्गें वहाणो भरी मोकले, तथा मगावे, तथा केटलुं एक धन व्याजें आपे छे अने केटलुं एक धन तो घरमां भंमारें भरी मूक्युं छे.

हवे उत्तरमथुरामां समुद्रदत्त व्यवहारीयो वसें छे, तेनी सायें ए शेठने घणो स्नेह छे प्रीति छे. मांहोमांहे करियाणां एक बीजानी ऊपर वेचवा

लेवा माटें मोकले बे. तेमां लान्न घणो थाय बे. एम करतां एकदा धनद त्तशेठ दाघज्वरें पीडाणो थको देव शरण थयो, तेवारें सगां संबंधीयें तेना पुत्र सुधनने तेने पाटें थाप्यो. सुधन घरनां कुटुंबनो न्नार निर्वहवा लाग्यो.

हवे ते सुधन एक वार सोनाना बाजोठनी ऊपर स्नान करवा बेठो आगल सोनानी कूंन्नी पाणीथी न्नरीने सेवकोयें मूकी स्नान करी रह्यो के तर तज सोनानी कूंन्नी आकाश मार्गें चाली गइ. अने स्नान करी पाट ऊप रथी नीचें उतस्यो, एटले सोनानो पाट पण आकाशमार्गें चालतो थयो. वली देवपूजा करवा माटें देरासरमां गयो, तिहां देवपूजा करी लीधी, के तरतज देरासर तथा बिंब कलश सर्व पिगांणा. धोतीयानो समुदाय, आ काशें चाल्यो गयो. पबी घरमां आव्यो, त्यां घेर आवतां वहाण बूम्मी ग यानी खबर सांन्नली. पबी जमवा बेठो, आगल सुवर्णना थालमां न्नोजन मूक्युं. तथा सुवर्णमय बत्रीश कचोलां दाल, कढी, शांक प्रमुखनां न्नरी मूक्यां. तथा बत्रीश वाटकी रूपानी मूकी, ते सर्व आकाशें चाली गइ. अने जे व खतें थाल आकाशें जवाने थरहस्यो, ते वखतें सुधनें तेने थरहरतो झाल्यो, तेनो एक कटको तेना हाथमां रही गयो, पण थाल तो चाल्यो गयो. एम देखतां देखतां सघली रुद्धि जती रही. कर्मनी आगल कोइनुं कांइ जोर चाले नही. एवामां एक मागनारें आवी कह्युं के महारुं एक लाख इव्य लहेणुं बे, ते आपो. तेवारें निधान खोली जोयुं, तो इव्य सर्व राख थयेलुं दीठुं. तेथी वली घणोज डुःखी थयो.

पबी मातानी आज्ञा लइ सोनाना थालनो कटको साथें राख्यो, देशांतर न्नणी चाल्यो. मार्गें जातां महाकष्टें कंटालीने एक पर्वत ऊपर चडी ति हांथी ऊंपापात करी मरवा तैयार थयो. तेने ऊंपापात खातो एक साधुयें दीठो. तेणें ज्ञानने बलें तेनुं नाम जाणीने बोलाव्यो के हे सुधनशाह ! तमें साहस म करो. केम के पर्वत ऊपरथी पडी अकाल मरणें व्यंतर थइयें ? ते सांन्नली सुधन पण ते ज्ञानी रुषि पासें आव्यो, रुषिने वांद्या, रुषियें कह्युं के कर्मथी कोइ बूटतो नथी ॥ कर्में करी सुदंसण शेठ, हरिचंद कीधी मातंग वेठ ॥ मेंतारज रुषि काढी दृष्ट, कर्में कीधुं सहु पग हेठ ॥ १ ॥

माटें हे शेठ ! जे लक्ष्मीना डुःखथी तमें मरवा तैयार थया बो, ते ल क्ष्मी असार बे, चपल बे, मलीन बे, अनर्थनुं मूल बे, वीजलीना ऊबकारनी

पेठें हाथमांथी जती रहे, एवी लक्ष्मीने अर्थे कोण मरीने व्यर्थ हीरा जे वा मनुष्यजवने निःफल करे. इत्यादिक उपदेश सांजली शेठ प्रतिबोध पाम्यो मुनिनी पासेंथी दीक्षा लइ सूत्र जणी गीतार्थ थयो, अवधिज्ञान उपनुं. एवो सुधनऋषि विहार करतो उत्तर मथुरायें समुइदत्तशेठने घरे वहोरवा आव्यो.

तेने घरे पोताना सुवर्णपाट, कूंमी, लोटी, कचोली, थाल, देरासर प्र मुख सर्व दीठां अने उलखी लीधां. सोनाना खांमा थालमां समुइदत्त शेठने जमता दीठा. ए रीतें ते ऋषिने पोताना घरमां अरहो परहो फर तो अने वस्तुउने जोतो देखी शेठें पूछ्युं के महाराज ! शुं जुउ ठो ? ते वारें ऋषियें कह्युं के हे शेठ ! आ पाट, कुंमी, कचोलां, थाल प्रमुख तमें करावेलां ठे किंवा तमारा पूर्वजोनां करावेलां ठे? शेठें कह्युं ए प्रथ मथीज महारा घरमां ठे. ऋषियें कह्युं के तमें आवा खांमा थालमां शा मा टें जमो ठो ? शेठें कह्युं के शुं करीयें ए थालमां खंम चहोटतो नथी. एट ले ऋषियें केडमांथी थालनो खंम काहाडी थाल उपाडीने तेनी साथें मे लव्यो. एटले पोतानी मेलें चहोटी गयो. थाल संपूर्ण अखंम थयो, ते जोइने शेठना कुटुंबने कौतुक थयुं. साधुयें चालवा मांम्युं, तेने शेठें वंद ना करी पूछ्युं के महाराज ! ए शी वात ठे ? साधुयें कह्युं के तुं असत्य बो ले ठे, तो तुजने हुं शुं कहुं ! ! शेठें कह्युं के हुं असत्य बोल्यो डुं, परंतु ख री वात तो एज ठे जे ए ऋद्धिने महारे घेर आवे आठ वर्ष थयां ठे.

साधुयें कह्युं के ए ऋद्धि में उलखी ठे. ए सर्व महारा पितानापितानी वारनी ठे, पण महारा पिता मरण पाम्यानंतर हुं तेनो सुधन नामें पुत्र हतो, ते महारा हाथथी गइ, तेथी में वैराग्य पामी दीक्षा लीधी. मनें अ वधिज्ञान उपनुं ठे, तेथी हुं इहां आव्यो डुं. शेठें कह्युं के ए लक्ष्मी सर्व तमारीज ठे. हवे एने ल्यो अने सुख जोगवो. साधु बोल्या के महारा देख तां तो ए जती रही, माटें हुं हवे एने शी रीतें जोगवुं? शेठें पूछ्युं के हे जगवन् ! तमारा हाथथी गइ अने अमारे घेर आवी, तेनुं कारण शुं हशे ?

तेवारें ऋषि बोल्या के पूर्वे श्रीपुर नगरें जिनदत्तशेठ वसे ठे, तेनो एक पद्माकर अने बीजो गुणाकर, एवे बे नामें बे पुत्र हता, ते शेठें मरती व खतें निधान कही समजाव्युं. जे अमुक जगायें इव्य राखेलुं ठे. पछी म होटा जाइयें रात्रियें ठानो जइने निधान मांहेलुं सर्व इव्य कहाढी लीधुं.

पाछलथी न्हाना नाइने कह्युं के चालो निधान काहाढीने आपण बे वहेंची लइयें ! पछी बे नाइयें धरती खोदी तेमांथी कांइ मल्युं नही,तेवारें महोटा नाइना कपटने योगें न्हाना नाइने मूर्च्छा आवी गइ. सचेत थया पछी वली महोटा नाइयें न्हाना नाइने कह्युं के ए धन सर्व तुं काहाढी अनो लइ गयो छो. एम कही तेने धिज करान्युं. ए रीतें में वंचना करी तेथी मरीने हुं सुधन थयो अने न्हानो नाइ मरीने महारो मदन नामें पुत्र थयो. में वंचना कीधी तेथी महारी लक्ष्मी मदनने घेर आवी तथा वली में पूर्वनवें दान आपीने पछी पश्चात्ताप कर्यो, तेथी महारी लक्ष्मी गइ अने ए मदननें जीवें घणा सुपात्रोने दान दीधां, देवराव्यां, तेथी एने घणी लक्ष्मी मली.

ए वात सांनली शेठने वैराग्य उपनो तेथी दीक्षा लीधी, तेवारें सर्व लक्ष्मीनो मालक मदन थयो. श्रावकनो धर्म पाली अंतें देवलोकें देवता थयो, अने सुधन ऋषि मोक्षसुख पाम्या ॥ इति सुधनमदन कथा ॥ २३ ॥

हवे चोवीशमी पृच्छानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ जं जं नियमण इठं, तं तं साहूण देइ सद्धाए ॥ दिन्नेवि नाणु तप्पइ, तस्स थिरा होइ धण रिद्धि ॥ ४० ॥ नावार्थः—जे जे आपणा मनने गमती एवी इष्ट वस्तु आपणी पासें होय, ते ते वस्तु साधुने श्रद्धायें करी एटले पोताना नावें करीने जे दीये, देइने तेनी अनुमोदना करे, पण पश्चात्ताप विषाद करे नहीं ते पुरुषने घणी ऋद्धि स्थिर थइने रहे. जेम शालिनद्र शेठने घेर ऋद्धि स्थिर थइने रही, बत्रीश कन्या परण्या, तेमने नित्य नवनवां वस्त्रानरण मलतां हतां. ॥४०॥ तेनी कथा कहे छे.

मगधदेशमां राजगृही नगरीनी ढूकडुं शालिग्राम नामें गाम हतुं. तिहां धन्यानो पुत्र संगमो एवे नामें गोवालीयो लोकोना वाछरां चारतो पेट नरे. एकदा पर्वने दिवसें मातानी सायें आडो मांमी तेणें खीर मागी, पण घरमां कांइ चीज न हती के जेनी खीर रांधी छोकराने खवरावे, तेथी रडवा बेठी ते देखीने पाडोसणें खीर खांम अने शालिधान्य आणी आप्युं, तेनी उत्तम खीर रांधी संगमाने नाणामां पीरसीने पोतें बाहिर गइ. एवामां पाछलथी तिहां मासखमणने पारणें एक साधु आव्यो, तेने संगमायें महोटा उल्लासथी नाव सहित हर्ष आणीने ते सर्व खीर वहोरावी दीधी, ते पुण्यने योगें राजगृही नगरीमां गोनद्र शेठनी नद्रानामें स्त्रीनी कूखें

ऊपनो, शालिक्षेत्रनुं सुपनुं माताने आव्युं, माटें शालिभद्र एवुं नाम दीधुं, तरुणपणुं पाम्यो, तेवारें बत्रीश कन्या परणावी. गोभद्रशेठ दीक्षा लइ देवता थयो. पुत्र ऊपर घणो स्नेह हतो, तेथी बत्रीश वहूरो तथा शालिभद्र, पुत्रने सारु देवलोकथी नव नवां आभरण वस्त्रादिक नित्य मोकले.

एक दिवस नेपालदेशना व्यापारी लक्षमूल्यना शोल रत्नकंबल वेंचवा लाव्या, ते श्रेणिक राजायें न लीधा; पण भद्रा शेठाणीयें शोले चीर वेचाता लइ तेने फाडीने बत्रीश टूकडा करी बत्रीश वहूरोने एकेको टूकडो वहेंची आप्यो. सांजे सर्व वहूरोयें पग लूइने नाखी दीधा.

हवे श्रेणिकराजानी पट्टराणी चेलणायें एक रत्नकंबल लेवा माटें घणो आग्रह कस्यो, श्रेणिकें व्यापारीने तेडाव्या ते बोल्या भद्राशेठाणीने वेचाता दीधा. राजायें एक रत्नकंबल लेवा माटें भद्रा शेठाणी पासें माणस मोकल्युं, तेंने भद्रायें कह्युं के एतो महारी वहूरोयें पग लूइनें नाखी दीधा छे. जूना टूकडा पड्या छे, ते जोइयें तो लइ जाउ. ते वात सांभली आश्चर्य पामीनें श्रेणिकराजा शालिभद्रने जोवा माटें तेने घेर आव्यो, तेवारें भद्रा शेठाणी सातमी भूमियें बेठेला शालिभद्रने कहेवा गयां के हे वत्स ! आपणे घेर श्रेणिक आव्या छे माटें तमें नीचें चालो.

पुत्रें जाण्युं के श्रेणिक एवे नामें कोइ जातनुं करियाणुं हशे ? माटें माताने कह्युं तमेंज लइ वखारमां भरो. वली लाभ आवे वेहेंची नाखजो. मातायें कह्युं के ए करियाणुं नथी,ए तो आपणो राजा छे. ते वचन सांभली शालिभद्र चिंतववा लाग्यो जे हुं सेवक छुं. ए ठाकुर छे, माटें में पूर्ण पुण्य कस्यां नथी, एम विचारी नीचें आवी राजाने प्रणाम कस्यो. राजायें खोलामां बेसाडी चुंबी आपी. शालिभद्र, राजानी पासें कुमलाइ गयो. तेथी खोलामांथी ऊठी सातमी भूमिकायें गयो. भद्रायें राजाने भोजन करावचा माटें खमाव्यो. श्रेणिक स्नान करवा बेठो, न्हातां पोतानी मुद्रिका वाव्यमांहे पडी गइ. भद्रायें वाव्यनुं पाणी बाहार कढाव्युं, तेमांथी पारविनानां अनेक प्रकारनां फलहलतां आभूषण निकल्यां दीठां, ते आभरण आगल पोतानी मुद्रिका तो लीयाला सरखी दीसवा लागी ते जोइ चमत्कार पामी राजायें दासीने पूछ्युं के आ अमूल्य आभरण वाव्यमां क्यांथी आव्यां ? तेवारें दासीयें कह्युं के अमारो स्वामी तथा तेनी व

त्रीश स्त्रीयो नित्यप्रत्यें नवनवां आजरण पहेरे ढे, आगला दिवसनां पहेरेलां आजरण उतारी वाव्यमां नाखी दीयें ढे. माटें ए अमारा स्वामीनुं निर्माल्य ढे. श्रेणिक महोटो चमत्कार पांमी दान पुण्यनां ए फल ढे, एवुं चिंतवी जोजन करी पोताना महेलमां आव्यो. पाढलथी शालिजड़ें वैराग्य पामी एवो मनमां निर्धार कस्यो के बत्रीश स्त्रीमांथी नित्य प्रत्यें एकेक गंमवी.

हवे एज गाममां धन्नो शेठ रहे ढे. तेने शालिजड्नी बहेन परणी ढे. ते धन्नाने स्नान करावे ढे तेने रोती थकी देखीने धन्नायें पूढ्युं के केम रडे ढे? तेणें कह्युं महारो जाइ नित्य एकेकी स्त्री परहरे ढे अने दीक्षा लेशे. तेने धन्नायें हसीनें कह्युं के तहारो जाइ एवो रांक कां थयो ढे? बत्रीशे स्त्रीनें एकज वारें केम त्यागतो नथी? तेवारें स्त्री बोली के वातो कहेवी तो सुलज ढे, पण करवी अति डुर्लज ढे. तमें केम मूकी शकता नथी? धन्नायें कह्युं के मने एटलुंज वचन तहारा मुखथी कहेरावबुं हतुं. हवे तुं बोलीश नही. जा में महारी आठे स्त्रीने हमणांज मूकी दीधी. ते सांजली स्त्री पगे लागी मनाववा लागी के महाराज! में तो हसतां हसतां तमारी साथें वातो करी, माटें तमारे रोष न करवो. इत्यादि रीतें घणो समजाव्यो, पण धन्ने कह्युं के महारा मुखमांथी वात निकली ते फरे नही. एम कही तिहांथी उठीने पोताना शाला पासें गयो, तेने समजावी साथें तेडीने शालिजड् तथा धन्नो ए बेहु जणें मली श्रीमहावीरपासें जइ दीक्षा लीधी. धन्नानी आठे स्त्रीयें दीक्षा लीधी दीक्षामहोत्सव श्रेणिकराजायें कराव्यो. बेहु साधु ढठ, अठम, दशम, डुवालस मासखमणादि तप करता शरीरें अत्यंत डुर्बल थया.. एकदा श्रीमहावीरनी साथें विहार करतां राजगृही नगरीयें आव्या. पारणा माटें जगवानें कह्युं के आज तमारे माताने हाथें पारणुं थाशे. ते जणी जड्राने घेर गया, पण शरीर डुर्बल थवाथी कोइयें उलख्या नहीं. पाढा वलतां मार्गमां पाढला जवनी माता महियारण मली तेणे रुषिने दीठाथी हर्ष करी तेना स्तनमांथी दूध धारा वहेवा लागी, पोतानी पासें महीनी माटली हती, तेनुं दान दीधुं. साधुयें जगवान् पासें आवी पूढ्युं के अमोने माताने हाथे पारणुं न थयुं जगवाने कह्युं के जेंने हाथे पारणुं थयुं ते शालिजड्नी पूर्वजवनी माता हती. पढी बेहु साधुयें अनशन लीधुं. जड्राने खबर पडी बहु पश्चा

भाप करती बत्रीश वहूरोनी साथें तथा श्रेणिकराजा मली अनशनस्थान कें आव्या, साधुउने वांदी कष्ट खमता देखी आश्चर्य पामी पाछा पोताने घेर आव्या. ते ऋषि सर्वार्थसिद्ध विमानें पहोता एकावतारी थइ मोक्ष पामशें, माटें जे भावथी सुपात्रने दान आपे, तेने लक्ष्मी स्थिर थाय. दिवसें दिवसें नवनवा भोग पामे. ते ऊपर ए शालिभद्रनी कथा कही ॥ श्रीमहीरं जिनाधीशं, गौरवर्णं गुणोत्तमम् ॥ तरुणं करुणाकारं, महिमाश्रित माश्रये ॥ पदाद्याक्षरैः श्रीगौतमनाम ॥ २४ ॥

हवे पच्चीशमी छवीशमी प्रश्नानो उत्तर दोढगाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ पसुपक्खि माणुसाणं, बालेवि हु जो विउअए पावो ॥ सो अणवच्चो जायइ, अह जायइ तो विवज्जिज्जा ॥ ४१ ॥ जों होइ दयापर मो, बहु पुत्तो गोयमा भवे पुरिसो ॥ भावार्थः—जे पापी पुरुष ढोर प्रमुख पशुनां बालको तथा हंसप्रमुख पक्षीउना बालको तेमज मनुष्यंना (बालेवि के०) बालकोनो हु इति निश्चें (विउअए के०) विछोह करे एटले तेमनो मात पिताथी वियोग करे ते पुरुष (अणवच्चो के०) अनपत्यो एटले अपत्य जे छोरु तेणे करी रहित थाय. (अह के०) अथवा कदापि तेने छोरु थाय तो पण (विवज्जिज्जा के०) विवर्जिता एटले जीवे नहि जेम सिद्धिवास नगरें वर्द्धमानशेठनो दद्दो एवे नामें पुत्र हतो ते संतान विना अपार दुःखी थयो ॥ ४१ ॥ तथा जे पुरुष सर्व जीवदयापर होय एटले दयावंत होय. हे गौतम ! ते पुरुषने गुणवान, डाह्या, विवेकी एवा घणां पुत्र थाय. जेम पूर्वोक्त वर्द्धमान शेठनो महोटो पुत्र देसल हतो तेने घणा पुत्र थया ॥ ते देशल तथा दद्दानी कथा कहे छे.

सिद्धिवास नगरें वर्द्धमाननामें वणिक वसे छे, तेने देसल अने दद्दो ए नामें बे पुत्र थया. तेमां देसल महा दयावान् छे, अने दद्दानुं हृदय निर्दय छे. युवावस्थायें देसलने देवीनी अने दद्दाने देमती एवे नामें कन्याउ बापें परणावी. तेमां देसल धर्म करणी पण करे, लक्ष्मी पण उपार्जे, अने सुख पण भोगवे. ए रीतें त्रणे पुरुषार्थ साधे. अने दद्दो तो मात्र लक्ष्मी पेदा करवी अने सुख भोगववुं एटलुंज साधे, पण धर्म न करे. माहालोभी थको धर्मनी वात पण जाणे नही. अनुक्रमें देसलने गुणवंत पुत्रो थया, तेनी माता देवीनी पोताना पुत्रोनुं लालन पालन करे खोले बेसाडे,

मांहोमांहें वढता होय तो वारी राखे, एक घूघरे बांधे, उतावला बाहिर थी आवी पोतानी मातानें मले, एक देखे, एकने मुखें माता चुंबी आपे. एवुं देखी दद्दो अने देमती पोताना हृदयमां चिंतातुर थयां थकां मांहो मांहे वातो करवा लाग्यां के आपणने पुत्र नथी माटे आपणो ए संयोग, ए ऋद्धि, ए स्नेह अने ए जीवितव्य, इत्यादि सर्व शा कामनुं छे ? जे माटे कह्युं छे के॥ श्लोक ॥ अपुत्रस्य गृहं शून्यं, दिशः शून्या अबांधवाः ॥ मूर्ख स्य हृदयं शून्यं, सर्वशून्यं दरिद्रता ॥ १ ॥ एम विचारी पछी घणा देव देहरानी मानतां करतां,इछतां, एक दिवस सत्यवादी यक्षनुं आराधन कर्युं. दद्दो यक्षनी पूजा अने उपवास करी आगल बेठो. अने कह्युं,के जेवारें पुत्र मुने आपशो,तेवारें हुं उठीश ! एम बेसतां तेने अगीयार उपवास थइ गया. तेवारें यक्षदेव प्रत्यक्ष थयो अने कहेवा लाग्यो के हे शेठ ! तुं शामाटें कष्ट करे छे ? कारण के देव, दानव, व्यंतर यक्ष, गमे ते हो परंतु कोइ प ण उपार्जन करेला कर्मने दूर करी शके तेम नथी. हे शेठ ! तें पूर्वे पुत्र पामवा संबंधी अंतराय कर्म बांध्युं छे, तेमां महारुं शुं चाले ? एम यक्षें कह्युं तो पण शेठ तिहांथी उठ्यो नहिं. तेवारें यक्षें कह्युं के कदाचित् जो हुं तुने पुत्र आपुं,तो पण ते पुत्र जीवतो रहेशे नहि. तेवारें पाछो तुं मने उलंनो आपीश ! तो पण शेठें कह्युं के एक वार पुत्र थाय,एवुं करो. पछी जे थनार होय, ते थाउ. यक्ष पण ते वातनी हा कहीने पोतानें स्थानकें गयो.

शेठें घेर आवीने पोतानी स्त्री आगल वात कही. स्त्री तथा शेठ कांइ क हर्ष कांइक विषाद पामतां थकां पारणुं कर्युं. अन्यदा गर्भाधान थयुं. पुत्र जन्म्यो. वधामणी आवी, तेने जीवाडवा माटें तुलायें करी तोल्यो. अने तेनुं नाम पण तोलो पाड्युं. छठी, दशोट्टण प्रमुख करतां स्वजनोने जमण जूठण करावी दान मान दीधां. पछी यक्षने नेटवा माटें बली फूल प्रमुख लइ बालकने तेडी यक्षने नवनें गया. तिहां बारणां बंध करेलां हतां, ते कोइ रीतें उघडे नही. घणा उपाय कर्या, पण कोइ रीतें यक्षें दर्शन आप्यां नहिं. तेवारें सर्व पाछां घेर आव्यां. शेठ बोल्या के यक्षें कह्युं हतुं जे छोकरो जीवशे नही, ते रखे तेमज थइ जाय ? एम विचार कर तां ते दिवस तो गयो. पण रात्रियें अणचिंत्यो एकाकी बालक आजारी पडीने जेम वायराथी दीवो उलवाइ जाय, तेम देखतां देखतां बालक देव

शरण थइ गयो. ते जोइ दद्दो शेठ अने देमती शेठाणी मूर्छा पामी नूमियें पड्यां. थोडी वारें सचेत थया पछी घणुं रुदन तथा आक्रंद करतां, पडतां आखडतां थयां. परंतु हाथमांथी गयेलो पुत्र पाछो आव्यो नही.

पछी महोटा नाइ देसलें कह्युं के तमें स्नान नोजन करो. मद्दारा शोक रां छे, ते तमारांज जाणजो. माटें हवे तमें शोक मूको. एवामां आकाश मार्गें चार ज्ञानना धणी चारण ऋषि चाल्या जता हता, ते तेनुं रुदन सांनलीने त्यां आव्या, तेमने सर्व जनोयें ऊठीने वंदना करी. ऋषियें ध र्मलान दीधो. पछी धर्मोपदेश आपीने वली कहेता हवा के हे शेठ ! तमें शोक म करो. कारण के जे जीवें जेवुं कर्म उपार्जन कर्युं होय, तेवुं फल ते जीवने मले. आपणें कोदरा वाव्या होय तो तेने बदले शाल क्यांथी मले ? लींबोली वावीने रायणनी आशा राखीयें ते क्यांथी मले ?

शेठें पूछ्युं के महाराज ! मद्दारा बेहु पुत्रें पूर्वें कया कया प्रकारनां क र्म कर्यां छे ? जेने योगें एकने संतान घणां छे अने बीजाने संतानज न थी. तेवारें मुनि कहेता हवा के हे शेठ ! एज नगरीमां आ नवथी पाछ ले त्रीजे नवें विल्हण अने तिल्हण ए बे नामें बे कुलपुत्र रहेता हता, तेमां महोटो नाइ तो महोटो धर्मात्मा अने दयावंत हतो, अने न्हानो नाइ तो नित्य वनमां जइने मृगली अने तेना बालकनो वियोग करतो. हंस, सूडा,मोर आदिक पक्षीयोनें तेमनां बालकथी त्रूटां पाडी पकडीने पांजरामां नाखी वेहेचे. तेमज माणसनां बालकोने एक गाममांथी लइ बीजे गामें जइ वेहेचे. ए रीतें धनने लोनें पाप करे, तेने घणा सज्जनोयें वार्यो, तो पण ते दुष्टकर्मथी वल्यो नहिं. दुर्व्यसन्न मूक्युं नही. जेहनो जेहवो स्व नाव होय, ते कोइ पण वखत पोताना स्वनावने मूके नही.

एकदा कोइ क्षत्रियना बालकने वेहेचवा माटे चोरीथी ऊपाड्यो तेना मावतरें दीठो, तरत पकडी बांधीने सारी पेरें मार मार्यो. छेदन नेदन क र्यो, तेनी वेदनाथी रौद्रध्यानें मरण पामी पहेली नरकें गयो. महोटो ना इ विल्हण पोताना नाइनुं मृत्यु सांनली वैराग्य पामी अनशन व्रत लेइ समाधिमरणें सौधर्मदेवलोकें देवता थयो. तिहांथी चवीने तहारो देसल नामें महोटो पुत्र थयो छे. एणें पूर्वला नवें नूख्या तरस्या ऊपर दया की धी छे तेथी एने गुणवंत पुत्र घणा थया छे, अने तिल्हणनो जीव नरक

थी निकलीने तहारो दद्दो नामें न्हानो पुत्र थयो छे, एणे पूर्वले जवें म नुष्य अने तिर्यंचना बालकों विछोह्यां हतां ते माटें एने छोकरां थतां नथी. एवां गुरुनां वचन सांजली बेहु जाइने जातिस्मरण ज्ञान उपनुं, तेथी पूर्वला जव दीगमां आव्या, तेवारें वैराग्य पामी समकेत मूल बार व्रत लीधां. चारणमुनि आकाश मार्गें चालता थया. घणा काल श्रावक धर्म पाली पछी बेहु जाइयें दीक्षा लीधी. समाधिमरणें देवलोकें देवंतापणे ऊपना ॥ दोहा ॥ जीवदया जिनवर कही, जे पाले नर नार ॥ पुत्र होवे शूरा सबल, तेहने रंग मझार ॥ इति देशल अने दद्दानी कथा ॥ २५ ॥ २६ ॥ ॥ हवे सत्त्यावीशमी अठावीशमी पृछानो उत्तर दोढ गाथायें करी कहे छे ॥

गाथा ॥ असुयं जो जणइ सुयं, सो बहिरो होइ परजम्मे ॥ ४२ ॥ अदिठंविय दिठं, जो किर जासिष कह विमूढप्पा ॥ सो जच्चंधो जायइ, गोयम नियकम्म दोसेण ॥ ४३ ॥ जावार्थः—जे पुरुष अश्रुतं एटले आणसांजल्यांने सांजल्युं कहे, एटले तें वात क्यांहीथी सांजली पण न होय, तथापि जे एम कहे के आ वात में सांजली छे ! वली पारका दोषने प्रकाशे, ते जीव, निश्चें जवांतरें बहेरो थाय. एटले कानें सांजले नहिं ॥ ४२ ॥

तथा जे पुरुष, अणदीठी वस्तुने दीठी कहे. एवी रीतें जे मूढात्मा पुरुष, धर्मने उवेखतो थको जाषण करे. हे गौतम ! ते जीव मरीने पोताना कर्मने दोषें करी जवांतरें जात्यंध थाय ॥ ४३ ॥ जेम महेंद्रपुरना रहेवासी गुणदेव शेठनो पुत्र वीरम हतों ते पूर्वकृत पापना उदयथी जन्म पर्यंत बहेरो जात्यंध त्रींद्रिय जेवो थयो, एटले कान अने आंख विना शेष त्रण इंद्रिय वालोज जाणे होय नही ? एवो थयो. इहां ए वीरमनी कथा कहे छेः—

माहेंद्रपुर नगरें गुणदेव नामें शेठ वसे छे, तेने गावत्री नामें स्त्री छे. तेने घणे दिवसें पुत्र थयो, ते पण कर्मने योगें जन्मांध अने बहेरो थयो, तेथी वधामणी आपवी तो दूर रही, परंतु तें छोकरानुं नाम पण पाड्युं नहीं. आंधलो अने बहेरो एवे नामें प्रसिद्ध थयो. तेनी बाल्यावस्था वीती अने यौवनवय प्राप्त थयुं तेवारें तेना मावित्रें मोहना वशथकी जेटला जेटला मंत्र प्रमुखं तंत्र जे कांइ हतां, ते सर्व कर्यां. कोइ बाकी राख्युं नहीं. तेमज निमित्तिया, ज्ञानी, जोशी, चूडामणीयादिक सर्व कोइ सि

पुरुषोने पूछ्युं मंगल मंगाव्यां, दीपावतार, अंगुष्ठावतार, पात्रावतार, जोयां. तथा ग्रहपूजा, शांतिकर्म कराव्यां, पादरदेवतानी मानता करी, ईश्वा करी, यक्ष सेव्या, सुणगइविद्यावंतजाण. जोडीयाने पूछ्यां, पुत्रना मोहथी एवुं कोइ देवस्थान शेष रह्युं नहीं के जे स्थान एना मावित्रे पूछ्या पूज्या विना मूकी दीधुं होय? पण ते सर्व प्रयास जेम ऊखर भूमियें वावेलुं बीज निःफल थाय. तेम निःफल थयुं, वली वैद्यनां उषध पण कर्यां, तथापि ते छोकरो कोइ रीतें साजो थयो नहिं. आंखें कांइ देखे नहिं अने कानें कांइ सांभले नहिं. तेथी भोजन पान करावबुं पडे, ते पण शान करीने करावे. मावित्रे विचार्युं जे अमें पूर्वला भवें शुं जाणीयें केवुं पाप कर्युं हशे के जेथकी आ पुत्ररूपें पण सदैव शल्यज थयुं? एवा पुत्रविना सर्युं. आवा पुत्र करतां पुत्र न होय तेज सारुं. अने ए पुत्र जीव्या पाखें मूवोज रुडो. एवा विचार कर्याज करे.

एकदा ज्ञानी गुरु वनमां पधार्या, तेमने सर्वलोक वांदवा गयां. वांदीने बेठां, तेवारें ज्ञानबलें जाणीने गुरु बोल्या के हे गुणदेव शेठ! तमें तमारा अंधा बहेरा छोकरानुं घणुं दुःख करो छो, ते करशो नहीं. जेमाटें करेला कर्म इंद्रथी पण दूर थइ शके तेम नथी. पोतपोतानुं करेलुं पुण्य पाप सहु कोइ भोगवें छे, एवी गुरुनी वाणी सांभलीने सर्व कोइ कहेता हवा के जुउ आ मुनिमहाराजनुं केहवुं ज्ञान छे? केहवुं परहितचिंतन छे? केहवुं जाणपणुं छे? इत्यादि प्रशंसा करवा लाग्या.

पछी शेठें पूछ्युं हे महाराज! कया पाप कर्मना उदयथी महारा पुत्रने अंधपणुं तथा बधिर पणुं प्राप्त थयुं छे? तेवारें ज्ञानी गुरु बोल्या के एहीज नगरमां वीरम नामें कणबी रहेतो हतो, ते महा अधर्मी, जूठ बोलो, अन्यायी, परना दोष सांभलनार, परदोष प्रकाशक, परनिंदा करनार अने कूडां कलंक चडावनार, इत्यादिक दुष्टकर्म करतो हतो.

एकदा गामना राजा साथें कोइ सीमाडीया राजाने वैर थयुं, तेनो भय राजा राखे छे. एटलामां बे पुरुष मांहोमांहे छानी वात करता देखीने वीरमें कोटवालने जइ कह्युं के अमुक बे जण सीमाडीया राजाने तेडाववानी वातो करता हता. ते वात सांभली कोटवालें ते बेहु जणनें पकडीने राजा आगल ऊभा राख्या. राजाना पूछवाथी ते कहेवा लाग्यो के

महाराज !' अमें अमारा घरसंबंधी कामकाजनी वातो करता हता, अमें सम खाइने कहीयें छेयें, के कोइ दिवसें स्वप्नमां पण अमें अमारा गा कोरनुं मातुं चिंतव्युं नथी. एवी तेमनी वात सांजली राजायें वीरमने तेडावी पूछ्युं, तेवारें धूर्त्त, पापी, दुष्टचित्तवालो वीरम बोल्यो के महा राज ! ए साचे साची वात छे. में म्हारे काने सांजली छे. राजायें पण तेनुं कहेण मानीनें ते बेहु जणने दंमनी शीक्षा करी.

वली एक वार वीरमनो पाडोशी ग्रामांतरें गयो. ते पाछो घेर आवतो हतो तेने मार्गमां वीरम मल्यो तेने पाडोशीयें पोताना घर संबंधि सुखस माधीनी खबर पूछी, तेवारें दुष्ट वीरमें कह्युं के कामदेव नामें वाणीओ तमारे घेर सदैव आवे छे, ते तमारी स्त्री सायें बहु स्नेह राखे छे, रमे छे, ते वात सांजली शेठें कामदेव ऊपर कोप करी राजानी आगल वात करी, राजायें कामदेवने पकडी तेनुं सर्वस्व लूंटी लइ दंम्यो.

वीरम एवां पाप करतो जूठुं बोलतो, परनिंदा करतो, लोकोनें कूडां कलंक चडावतो हतो. एक दिवसें कोइक क्षत्रीयें तेने सारी पठें मार आ प्यो, तेनी पीडाथी घणादिवस दुःख जोगवी मरण पामीने तहारे घरे पु त्रपणे उपनो छे. ए अणसांजल्या अणदीठ जनापवाद बोल्यो छे, तेथी जन्मांध अने बधिर थयो छे, ए जीव घणो संसार रफलशे !. एवी गुरुना मुखथी वात सांजलीने मावित्र धर्म करवामां प्रवर्त्त थयां. आंधलो दुःख सहन करतो मरण पामीने दुर्गतियें पहोतो ॥ दोहो ॥ असमंजस बोले घणुं, परने दिये कलंक ॥ ते मूरख किम छूटशे, पापी हुआ निःशंक ॥ १ ॥ इति वीरम कथा ॥ २८ ॥

॥ हवे उगणत्रीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे ॥

॥ गाथा ॥ उच्छिठ मसुंदरयं, नत्तं तह पाणियं च जो देइ ॥ साहूण जाणमाणो, जुत्तंपि न जिऊए तस्स ॥४४॥ जावार्थः—जे पुरुष उच्छिष्ट, उखराडां, गंध्यां, विटाल्यां, एठां एवां विरुवां जे पोताने कोइ पण काम मां न आवे एवां जात पाणी जाणतो छतो साधु महात्माने दीये, ते पुरु षने जमेलुं खांधेलुं अन्न जरे नही अपचानो रोग थाय ॥४४॥ जेम श्रीवा सुपूज्य स्वामीनो पुत्र जे मघवा तेनी पुत्रिका रोहिणी हती ते पूर्वले जवें

दुर्गंधा एवे नामें प्रसिद्धि पामी. कुष्टादिक रोगें पीडाणी. जेमाटें एणे घणा भव पहेलां जाणी बूजीने साधुने कडवुं तुंबडुं वह्योराव्युं हतुं. तेनी कथा कहे छेः—

॥ श्लोक ॥ श्रीवासुपूज्यस्नानस्य, तथा पुण्यप्रकाशकम् ॥ रोहिण्याश्च कथायुक्तं, रोहिणीव्रतमुच्यते ॥ १ ॥ चंपानंगरीयें श्रीवासुपूज्य स्वामीनो पुत्र मघवा नामें राजा राज्य करे छे. तेने लखमणा नामें राणी सदाचारं अने सुशील वाली छे. तेने आठ पुत्र थया. ऊपर एक रोहिणी नामें पुत्री थइ. मातपिताने अत्यंत वल्लभ छे माटें जन्मी तेवारें राजायें वधामणां, दानं मान दीधां. महोटी थइ. चोशठ कला शीखी. रूप लावण्य सौभाग्य गुणवंती थइ. तेने यौवनावस्थायें पहोंचली जोइनें राजायें चिंतव्युं जे एने योग्य वर मले तो सारुं, माटें स्वयंवर मंडप मंडावीयें. ए मनगमंतो वर वरे, तो पछी पश्चात्ताप न थाय. एम विचारी स्वयंवर मंडप रचाव्यो. कुरु, कौशल, लाट, कर्णाट, गोड, वैराट, मेदपाट, नागपुर, गौड, चोड, द्राविडं, मगध, मालव, सिंधु, नेपाल, डाहल, कोंकण, सौराष्ट्र, गुर्जर, जालंधर, आदिक चारे दिशियोना राजकुमारो तेडाव्या. सर्वराजा स्वयंवरें आवी बेठा. ए वामां रोहिणीराणी पण स्नान विलेपन करी, क्षीरोदक श्वेतवस्त्र पहेरी हीरा मोती माणकना आभरणें अलंकृतथकी जाणे देवलोकथी उतरीने ज आवी होय नही? एवी अप्सरा सरखी शोभती पालखीयें बेठी, सखी योना वृंदें परवरी थकी तिहां आवी. तिहां प्रतिहारी दासीयें राजकुमरोनां नाम, गोत्र, गुण, बल, देश, गाम, सीम, जूदां जूदा वर्णव करी कही दे खाड्या, समजाव्या. एम करतां नागपुरनो वीतशोकराजानो अशोकनामें कुमर तेने कंठमां वरमाला पहेरावी योग्यवर वरवाथी सहुको हर्ष पाम्यां. पितायें विवाह कर्यो. बीजा सर्वराजाने हाथी, घोडा, वस्त्र, भोजन, तंबोल आपी सर्वने सन्मान्या. सहु पोतपोताने स्थानकें गयां.

तथा अशोककुमरने पण सुवर्ण मोतीना आभरण प्रमुखनां दान, मान देइ रोहिणी सहित नागपुरें पहोंचाड्यो. तिहां वीतशोकराजायें पण नगरमां प्रवेश करवानो शुभदिवसें महोत्सव कीधो.

केटलाएक दिवस पछी अशोककुमरने राज्यपाटें थापी वीतशोकराजायें दीक्षा लीधी. हवे अशोकराजाने राज्य संपदा तथा राणीसाथें सुख भोगवतां गजेंद्रसरिखा आठ पुत्र थया. अने वली चार पुत्री थइ.

एकदा राजा राणी बेहु सातमी भूमियें गोखें लोकपाल पुत्र खोलामां लेइ बेठा छे. एवामां कोइ एक स्त्री हैयुं पीटती, विलाप करती, रोती पुत्रना गुण बोलती दैवने उलंनो देती जाय छे. तेने देखी रोहिणीयें राजाने पूछ्युं के स्वामी! ए कहेवा प्रकारनुं नाटक करे छे? राजायें कह्युं हे राणी! तुं धन यौवन राज्य मंदिर भरतार प्रासाद अने पुत्रें पूरणथकी अहंकार म कर. यद्वा तद्वा म बोल. राणी बोली स्वामी रीश म करो. मने अहंकार कांइ नथी मुंतो मात्र एवुं नाटक क्यारें पण दीठुं न हतुं तेथी तमोने पूछ्युं छे. राजायें कह्युं ए कांइ नाटक नथी पण एनो पुत्र मरण पाम्यो. तेथी ए रुदन करे छे. राणीयें कह्युं. ए रुदन करवानी कला क्यांथी शीखी हशे? राजायें कह्युं जो तुजने पण हुं रुदन करवुं शीखावुं छुं. एम कही राणीना खोलामांथी बाल कने लइ बेहु हाथें करी गोख बाहेर हींमोलता हाथ थकी नीचें नाखी दीधो. ते जोइ सर्व लोक कोलाहल करवा लाग्यां. परंतु रोहिणीना मनमां कांइ पण दुःख थयुं नही. पुत्रने पडतां थकां नगरदेवतायें पकडीने सिंहासन ऊपर बेसाड्यो. ते देखी सर्वलोक हर्षवंत थयां अने राजा कहेवा लाग्यो के हे रोहिणि! तुं धन्य कृतपुण्य छो. जेथी तुं दुःखनी वात पण जाणती नथी.

एकदा श्रीवासुपूज्य स्वामीना शिष्य सुवर्णकुंभ अने रूपकुंभ एवे नामें बे साधु चारज्ञानना धणी, छठ अठम तप करता, तिहां आव्या. राजा राणी पुत्र प्रमुख सर्व परिवार वांदवा गया. गुरुयें धर्मलाभ देइ धर्मदेशना दीधी. पछी राजायें पूछ्युं. हे भगवन्! म्हारी रोहिणी राणीयें शुं तप कर्युं छे? के जेणें करी ए दुःखनी वात पण जाणती नथी. तथा वली म्हारो पण एनी ऊपर घणो स्नेह छे तेनुं शुं कारण छे? तेमज एने पुत्र पण घणा गुणवंत थया छे, तेनो हेतु शुं छे? ते कहो.

गुरु कहेता हवा हे राजन्! एज नगरें धनमित्र शेठनी धनमित्रा स्त्री हती तेने कुरूपिणी दुर्भागिणी एवी दुर्गंधा नामें पुत्री थइ. ते जेवारें यौवना वस्था पामी तेवारें पितायें तेनो विवाह करवा माटे एक कोटिद्रव्य आपवा ठेराव कर्यो तथापि कोइ रांक जेवायें पण परणवाने मन कर्युं नहीं. एवामां एक श्रीषेणनामे चोरने मारवा माटें लइ जतां शेठें तेने मरतो मूकावी घरे राखी पुत्री परणावी दीधी. ते पण दुर्गंधाना शरीरनो दुर्गंध सहन न थवाथी रात्रियें नाशी

गयो. तेवारें शेठ विषवाद करतो कहेवा लाग्यो के कर्मना दोष आगल कोइनुं चाले नहीं. पुत्रीने कह्युं तुं घर रही थकी दान पुण्य कर. ते पुत्री दान धर्म करवा वांछे पण तेना हाथनुं दान पण कोइ लीये नहीं.

एकदा ज्ञानी मुनिने दुर्गंधा संबंधी वात पूछवाथी तेमणें कह्युं के गिरनार पर्वत पासें गिरिनगरीयें पृथ्वीपाल राजा छे तेनी सिद्धिमती राणी छे. कोइ अवसरें राजा राणी बेहु वनमां क्रीडा करवा गयां. एवामां कोइक गुणसागर मुनि मासखमणनुं पारणुं करवा माटें नगरमां जता हता. तेने देखी राजायें तेमने वांदी नमस्कार करी पछी राणीने पराणे पाछी वालीने कह्युं के ए जंगमतीर्थ छे एने फासु आहार पाणी देजो. पण राणीयें विचार्युं जे आ मूंमायें आवीने महारी क्रीडामां अंतराय पाड्यो, तेथी क्रोधित थकी एक कडवुं तुंबडुं साधुने वहोराव्युं साधुयें विचार्युं जे आ आहार जिहां परठवाय. तिहां अनेक जीव मरे ए माटें पोतेंज आहार कर्यो एटले कडवा तुंबडाना विषप्रयोगें शुभध्यानें मरण पामी देवता थयो.

पाछलथी राजाने तें वातनी खबर पडी राजायें राणीने घरथी बाहेर काहाढी मूकी. राणीने जंगलमां रखडतां सातमे दिवसें कोढ रोग निकल्यो तेने दुःखें पीडाती मरीने छठे नरकें गइ. तिहांथी मरी तिर्यंचमां ऊपनी. वली नरकमां गइ. एम सातें नरकमां क्रमें क्रमें दुःख भोगवीने सापणी, ऊंटणी, कूकडी, सीयालणी, सूयरी, घिरोली, ऊंदरी, जलो, कागडी, चंमालिणी, रासभी प्रमुखना अवतार पामी. एकदा गायना अवतारमां मरती वेलायें नवकार सांभली शेठने घेर दुर्गंधापुत्री पणे ऊपनी. तिहां निकाचितकर्म थाकतां स्वल्प रह्यां, तेथी ज्ञानीनी देशना सांभली जातिस्मरण ज्ञान ऊपनुं पूर्वला भव दीठा. तेवारें दुर्गंधायें हाथ जोडी पूछ्युं के महाराज ! ए दुःखनो निस्तार थाय तेवो उपाय कहो. गुरुयें कह्युं के आर्तिनुं भांजणहार एवुं रोहिणी तप करो. ते तपनो विधि हुं कहुं छुं ते सांभलो. सात वर्षने सात मास पर्यंत रोहिणीनक्षत्रना दिवसें उपवास करवो. श्री वासुपूज्यजीनी पूजा करवी, तप तपता शुभध्यान ध्यावुं. तेना प्रभावथी रूडुं थाशे. आवता भवें अशोक राजानी राणी थाइश. तिहां सुख भोगवी श्रीवासुपूज्यने तीर्थें मोक्ष पामीश. वली तप पूर्ण थयें उजमणुं क

रीयें, श्रीजिन प्रासाद करावववा, श्रीवासुपूज्यजीनी रत्नमय प्रतिमा करा ववी. तेने सोना मोतीना आनरण करावी चढावववां. तथा स्नान विलेपन कुंकम कपूर सुगंध इव्यें पूंजा करवी. श्रीसंघनी नक्ति करवी, अमारी प्रव र्त्ताववी, दीनजनोने दुःखथी मूकाववा, साहामीवात्सल्य, संघपूजा करवी, सिद्धांत लखाववां, ए तप करवाथी सुगंधराजानी पेरें सर्व दुःख टली जा शे, तेवारें दुर्गंधायें पूछ्युं के सुगंधराजा ते कोण थयो छे? तेनु वृत्तांत कहो.

गुरुयें कह्युंः-सिंहपुर नगरमां सिंहसेन राजा राज्य करे छे तेनी कनकप्रन्ना राणी छे, तेमने एक पुत्र थयो ते अतिशय दुर्गंध हतो, तेथी ते सर्वने अप्रिय थयो. एक वखतें ते नगरीमां पद्मप्रनस्वामी समोसख्या. त्यां कुटुंब परिवा र सहित जइ राजायें कर अंजलि बांधी वांदीने पूछ्युं. हे नगवन्! मारो पु त्र दुर्गंध थयो, तेनुं कारण शुं हशे? एणें पूर्वला नवमां शुं कर्म कर्युं हशे? त्यारें नगवान् कहेवा लाग्या. नागपुरथी बार योजन छेटे नीलपर्वतें एक शिलानी ऊपर मासोपवासी साधु धर्मध्यान करता हता. तिहां ते साधुना प्रनावथी आहेडीने सिकार मले नही तेथी आहेडीयें साधुनी ऊपर रोष करीने तेने उपद्रव करवा माटे ज्यारें मासखमण पूरण थयुं त्यारें साधु गाममां एषणार्थें गया. पाछलथी व्याधें आवी, ते शिलानी नीचें काष्ट ना खीनें अग्नि सलगाव्यो, साधु पण गोचरी करी फरी त्यां शिला ऊपर आवी बेठा तेमने नीचेंथी ताप आववा लाग्यो ते जेम जेम ताप थाय, तेम तेम शुनध्यान आणे. एम ऊष्ण परिसह सहन करी केवलज्ञान पामी मोक्षें गयो. ते व्याध दुष्ट कर्मथी कुष्ठी थयो. मरीने सातमी नरकें गयो. पछी सर्प थइने पांचमे नरकें गयो. पछी सिंह थइने चोथें नरकें गयो. पछी चि त्रक थइने त्रीजे नरकें गयो. पछी मार्जार थइने बीजे नरकें गयो. पछी उ लूक थइने पेहले नरकें गयो. एवा नव नमीने एकदा दारिद्री गोवालीयो थयो. पशुपालनो धंधो करतो नाघोरी श्रावक पासेंथी नवकार शीख्यो. एक वखतें वनमां सूतो हतो, एवामां दावाग्नि बलतो एना ऊपर आवी पड्यो. तेथी बली मरण पाम्यो. तिहां नवकार समर्यो तेने प्रनावें तहारो पुत्र थयो. थाकता कर्मना दोषथी दुर्गंधीशरीर थयुं छे. एवा पूर्व नव सांनलतां ज ते दुर्गंधकुमरने जातिस्मरण ज्ञान ऊपनुं. दुःख संनारी नय पाम्यो. तेवा रें नगवंतने पगे लागीने, पूछवा लाग्यो के, हुं ए दोषथी केम छूटीश? तेनो उ

पाय कहो. त्यारें जिनेश्वरें कह्युं. रोहिणीनुं तप कर. तेथी सर्व निराबाध थशे. पछी ते राजपुत्रें रोहिणीनुं तप कर्युं. तेथी तेनुं शरीर सुगंधमय थयुं. माटें हे डुर्गधा! तुं पण ए तप कर. एना प्रनावथी सुगंधकुमारनी पेरें तारां सर्व डुःख नाश पामशे. एवुं सांजलीने ते डुर्गधायें रोहिणी तप अंगीकार कर्युं. विधिपूर्वक शुनध्यानथी तपस्या करतां आत्मानी निंदा करतां डुर्गधाने जातिस्मरण ज्ञान उपन्युं. तेना योगें पूर्वलो जव सांजरी आव्यो, तेथी वली विशेषें तप करवा मांम्युं. आयु पूर्ण थयाथी शुनध्यानें मरण पामीने देवलोकने विषे देवता पणे उपनी. त्यांथी च्यवीने अहीं चंपानगरीने विषे मघवा राजानी पुत्री थइ. तेनुं रोहिणी नाम पड्युं. तेने तमें परण्या बो. एणें घणुं दान आप्युं बे. तेथी तमारी पट्टराणी थइ बे. एणें पूर्वे रोहिणी तप कर्युं बे. तेना प्रनावथी डुःख ते वली शी चीज़ बे! एवुं पण ए जाणती नथी. वली ऊजमणुं कर्युं तेना प्रनावथी ए रुद्धि पामी बे! वली हे राजा! ते सिंहसेन राजायें पोताना सुगंध कुमरने राज्य पाटें आपी पोतें दीक्षा लीधी. सुगंधराजा राज्य पालतो. धर्मकृत्य करतो जैनधर्म पालतो मरण पामी देवलोकें गयो. तिहांथी च्यवीने पुष्कलावती विजयें पुंमरगिणी नगरीमां विमल कीर्त्ति राजाने घरे अर्ककीर्त्ति नामा राजा चक्रवर्त्तीपणे उपन्यो. त्यां राज्य पाली जितशत्रु साधु पासेंथी दीक्षा लइ बारमे देवलोकें अच्युतेंइ थयो. त्यांथी च्यवीनें अहीं तुं अशोक नामें राजा थयो बो. तहारी राणीयें अने तें बेहु जणें मली पूर्वे एकमना थइने एज रोहिणी तप एक सरखुं कर्युं बे, ते माटें तहारो स्नेह एनी ऊपर घणो बे. वली राजायें पूछ्युं के हे स्वामी! म्हारी स्त्रीने आठ पुत्र अने चार पुत्रीयो थइ. ते तेमना कया पुण्योदयथी थई? तेवारें गुरु बोल्या के, हे माहानाग्य! एमांथी सात पुत्र तो पूर्वला नवें मथुरा नगरीयें एक अग्निशर्मा ब्राह्मण निखारी रहेतो हतो. तेने घेर साते पुत्र पणे उपन्या हता. ते दरिड्री कुलमां उपन्या तेथी साते निख मागवा जाय, पण तेने कोइ उटले बेसवा आपे नहीं. ज्यां जाय त्यां धक्को मारी बाहेर कान्हाडी मूके. एम ते पुत्र गामो गाम फरतां निख मागता मागता एकदा पाम्लीपुरें गया. तिहां तेणें एक वाडीमां राजाना पुत्र तथा प्रधानना पुत्रने घणा हीरा मोतीना अमुल्य आनरण पहेरीने खेलता थका दीठा. तेथी मनमां आश्चर्य पाम्या. तेवारें म

होटा नाइयें कह्युं के जूउ विधातायें कहेवो अंतर कर्यो छे? जेमाटें ए वांछित सुख नोगवे छे अनें आपणे निक्षा मागता घर घर नटकीयें छैयें. ते सांजली न्हानो नाइ बोल्यो के. ए उलंजो आपणे कहेने आपीयें? जो एणें पूर्वे पुण्य कर्यां छे,तो तेनां फल ए नोगवे छे, अने आपणें पुण्यहीन छैयें,तो घर घर नीख मागताफरीयें छैयें. त्यांथी फरतां फरतां वनमां गया. तिहां एक साधु मुनिराज काउस्सग्ग ध्यानें रह्या हता. तेमनी पासें जइ ऊना. साधुयें पण काउस्सग्ग पारी. दया आणीने तेमने धर्मदेशना दीधी, ते सांजली सांते नाइ वैराग पामी, दीक्षा लेइ, चारित्र पाली, देवलोकें गया. तिहांथी च्यवीने आहीं तहारे घेर आवी पुत्रपणें उपन्या छे. तथा आठमो पुत्र तो वैताढ्य पर्वत उपर एक नक्षक नामें विद्याधर हतो ते नंदी श्वरद्वीपें शाश्वत जिन प्रतिमानी पूजा करतो यात्रा करतो, धर्म सेवतो वि चरतो हतो, ते मरण पामी सौधर्म देवलोकें देव थयो. त्यांथी च्यवी तारो लोकपाल नामें आठमो पुत्र थयो छे. जेने खोलामांथी पडतां देवतायें सा न्निध्य कर्युं. अने जे तहारी चार पुत्रीयो छे, ते पूर्वले नवें वैताढ्य पर्वतें विद्याधर राजानी पुत्रीयो हती. अनुक्रमें यौवनावस्था पामी. एकदा प्रस्ता वें बागमां रमवा गइ, तिहां साधुने ऊनेला दीठा. साधुयें तेमने कह्युं. हे कु मरीयो! तमें धर्म करो, त्यारें तेमणें कह्युं. अमाराथी धर्म करणी न थाय. वली साधुयें कह्युं. तमारुं आयुष्य स्वल्प रह्युं छे, माटें धर्मकरणीमां प्रमा द करशो नहीं. ते सांजली ते पुत्रीयोयें पूछ्युं के, अमारुं आयु केटलुं बा की रह्युं छे? साधुयें कह्युं, आठ पहोर शेष रह्युं छे. पुत्रीयो केहवा लागी अ टला स्वल्प कालमां शुं पुण्य करियें? मुनियें कह्युं आजेज अजुवाली पां चम छे माटें ज्ञानपांचमनुं तप करो. एटला तपथीज सुखी थशो. जेमाटें कह्युं छे केः—जे नाणपंचमिवयं, उत्तमजीवा कुणंति नावजुया॥ उवजुंज अणुवमसुहं, पावंति केवलं नाणं॥ एवो उपदेश सांजली ते पुत्रीयोयें घेर आवी मावतर आगल वात करी आज्ञा लइ गुरुना दर्शनथी आजनो दिवस सफल मानी देवपूजा करी पुण्यनी अनुमोदना करी पच्चरकाण लीधुं. पोताना आत्माने कृतार्थ मान्यो. एक स्थानकें चारे जणीयो बेठी. एट लामां विद्युत्पात थयो, तेथी चारे पुत्रीयो मरण पामी देवता थइ. तिहांथी च्यवीने तहारी पुत्रीयो थइ छे. मात्र एकज दिवस ज्ञान पंचमी तप करवा

नुं ए फल थयुं. ए वात सांभलतांज राजा तथा राणी अने पुत्र पुत्रीयो सर्वने जातिस्मरण ज्ञान उपन्युं. पूर्वला भव सांभख्या, तेथी वैराग्य पाम्यां थकां श्रावकधर्म अंगीकार करी पोताने घरे आव्यां. वली एकदा श्रीवासु पूज्य भगवान् आवी समोसख्या. तेमने राजा तथा रोहिणी राणी प्रमुख परिवार सहित वांदवा गया. तिहां प्रभुनी देशना सांभली घरे आवी पुत्र ने राज्यपाटें थापी सात क्षेत्रें धन वावरी, चारित्र अंगीकार करी, बेहु जण मोक्षें गयां ॥ उक्तं च ॥ रोहिणी पंचमी तपतणो, गिरुवां ए फल जाण ॥ दुःख न होय सुख होय सदा, बोले केवलि वाण ॥ १ ॥ इति रोहिणी अशोककथा ॥ श्लोक ॥ श्रीमद्वरवीरपदौ, श्रीजिनमतंगतजनैः सदावंद्यौ ॥ श्रीपतिनिकरा राध्यौ, श्रीदौ प्रणमामि चंगगती ॥१॥ स्वस्तिकः श्री वीतरागः नाम गुप्तम् ॥

॥ हवे त्रीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे ॥

॥ गाथा ॥ महुघाय अग्गिदाहं, अंकं वा जो करेइ पाणीणं ॥ बाला रामविणासी, सो कुठी जायए पुरिसो ॥ ४५ ॥ भावार्थः—(जो के०) जे पुरुष (महुघाय के०) मध पाडे मधपुडा पाडे महुआलनो आरंभ करे, तथा अग्निदाह एटले दावानल दीये वा एटले तथा (पाणीणं के०) प्रा णीयोने आंके लांछन करे, ढोरने डांभ दीए. तथा (बालारामविणासी के०) सूक्ष्म वनस्पतिकायनो विनाश करे, कुमलि वनस्पतिने छेदे, भेदे, त्रोडे, मोडे, खूंटे, चूंटे (सो के०) ते पुरुष भवांतरें कोढीयो थाय जेम गोविंद पुत्र गोसलीयो मधवगेरे पाडवानां पाप करीने पद्मशेठनो पुत्र गोरो एवे नामे वणिक महा कुष्टी थयो ॥ ४५ ॥ ते गोसलनी कथा कहे छे.

पेठाणपुर नगरें गोविंद नामें गृहस्थ वसे छे, तेनी गौरी नामें स्त्री छे, तेने गोसलनामें पुत्र महा दुर्व्यसनी छे. एकलो वनमांहे जइने लाकडीयें महुयाल पाडे, निर्दय पणे जालमांहे शशलादिक जीव होय तिहां दावा नल दीये, अग्नि सलगावे, बलद, गाय, घोडाने आंके, कूमला नवा ऊगता रोपा कूंपलने छेदी नाखे, उन्मूलन करी नाखे, एवुं कृत्य करता देखी लो कें तेना बापने उलंभो दीधो, तेवारें बापें तेने शीखामण दीधी, पण ते स र्व राखमांहे होम्यानी पेठें निःफल थइ. ते पुत्र मावतरने पण उच्चाटनो करावनारो थयो. धर्मनी तो वात पण ते न जाणे.

एवामां तेना मावतर देवशरण थयां. पछी तो वली ते गोसल निरंकु

श हाथीनी पेरें.उछृंखल थयो थको फरे एकदिवसें नगरनी वाडीयोमां ज इ नारिंगादिकना वृक्ष उन्मूली.नाख्यां तेने कोटवालें दीठो, बांधीने राजा नी पासें आण्यो राजायें तेहुं सर्व धन लइने मूकी दीधुं.

वली एक दिवस छानो राजानी वाडीमां जइने कूमली अनेक जातिनी वनस्पति छेदी नाखी. एटलामां वनपालकें दीठो. तेवारें मार मारी बांधी, कूटी, राजा आगल आणीने बनपालकें विनव्यो के महाराज! एणें तमा री वाडीनो विनाश कीधो छे! राजायें तेना बेहु हाथ छेदी नखाव्या, तेथी मोहाडुःखी थयो. पछी तेणें घणोज पश्चात्ताप कीधो ॥ दोहो॥ माय बाप म होटा तणी, शीख न माने जेह ॥ कर्मवशें पडीया थकां, पछी पस्तावे ते ह ॥ १ ॥ पछी ते गोसल पोतानी निंदा करतो मरण पामीने तेहीज नग रें पद्मशेठने घेर गोरो एवे नामें पुत्र थयो. ते जन्मथीज रोगीयो गलत को ढीयो थयो, नख अने नाक बेसी गयेलां, भ्रकुटीना केश सडी गया, दांत पडी गया,निरंतर माखीयो बणबणाट करती शरीर ऊपर वींटी रहे, डुर्गंध तो एटली निकले,के कोइथी सहेवाय नही. बापें घणा घणा औषध कस्थां पण ते सर्व व्यर्थ गयां. कष्ट व्याधि टल्यो नहीं.

एकदा दमसार नामा ज्ञानीमुनि ते नगरना वनमां पधास्था, तेमने वां दवा माटे नगरना लोकोने जता देखी पद्मशेठ पण तेमने वांदवा गयो. तिहां साधु मुनिराजें धर्म देशनामां कह्युं के जीव जे छे, ते कीधाकर्मने वशें डुःखीयो थाय छे. जेम आ नगरमां पद्मशेठनो पुत्र डुःखी थयो छे: ते सां जली पद्मशेठें पूछ्युं के हे जगवन्! महारे पुत्रें शुं पाप कस्युं छे? गुरुयें तेने पूर्वोक्त गोविंदना पुत्र गोसलनुं सर्व वृत्तांत संजलावीने कह्युं के ते गोसल मरीने ताहारो पुत्र थयो छे. पद्मशेठें घेर आवी पोताना पुत्रने कह्युं तें पा छला जवें घणा पाप कस्यां छे, ते सांजलतांज तेने जातिस्मरण ज्ञान ऊप नुं. पछी मुनिराज पासें आव्यो,तेमने वंदना करी पापनी निंदा गर्हा करी अनशन लइ मरण पामी पहेले देवलोकें देवता थयो ॥ इति गोसल कथा ॥

हवे एकत्रीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ गोमहिस खरं करहं, अइजारारोवणेण पीडेइ ॥ एएण पा व कम्मे, ए गोयमा सो जवे खुज्जो ॥४६॥ जावार्थः—बलद, जेंश, अने उंटादिकनी ऊपर लोजें करी अतिजार आरोपण करे एटले एमनी ऊपर

घणो भार भरीने जे पुरुष त्रसजीवोने पीडा करे, ते निःकेवल एज पापकर्में करी निश्चयथी हे गौतम ! ते जीव खुज्जो एटले कुब्जो अर्थात् कुबडो थाय. जेम धनावहशेठनो पुत्र धनदत्त पाछले भवें घणा जीवोनी उपर भार वहे वरावीने कुबडो थयो ॥ ४६ ॥ इहां धनदत्त अने धन श्रीनी कथा कहे छे.

भूमिमंडन नगरें शत्रुदमन नामें राजा राज्य करे छे. तिहां धन्नो नामें शेठ रहे छे. तेनी धीरू नामें स्त्री छे, भाडानो धंधो करी आंजीविका चला वे छे. तेणे पोताने घरे पोठीया, उंट, रासभ, अने महिष ते पाडानो संग्र ह कीधो छे. ते शेठ लोभें वाह्यो थको अवाचक जीवोनी उपर तेमनी श क्तियी उपरांत घणो भार भरे अने घणुं भाडुं लइ निर्वाह करे छे.

एकदा कोइ साधु वहोरवा सारु तेने घेर आव्या, तेमने स्त्री भरतारें बे हुयें भली भावथी दान आप्युं. तेने योगें शुभकर्म उपार्जी तेज नगरेंधना वह शेठने धनदत्तनामें पुत्रपणे जइ उपनो. ते वणिज कला सर्व जांणे पण पूर्वला भवमां जीवोनी उपर घणो भार भरतो हतो, तेने योगें कुबडो थयो.

हवे तेहीज नगरमां धनशेठ वसे छे, तेने घेर धीरूनो जीव मरीने पुत्री पणे उपनो तेनुं धनश्री एवुं नाम पाड्युं. ते घणी रूपवंत गुणवंत छे, ते यौ वनवय पामी थकी पूर्वभवने स्नेहें धनदत्त कुबडाने परणवा वांछे छे. वली एज धन्नाशेठने एक बीजी पुत्री थइ छे पण कर्मने योगें ते कूबडी छे. एकदा तेना बापनी आगल कोइ निमित्तियायें कह्युं के जे कोइ ताहारी पुत्री धन श्रीने परणशे, ते महोटो व्यवहारी थाशे ! एवी वात सांभलीने कोइ धन पाल नामें शेठीयायें धनश्रीनी मागणी करी धनश्रीना पितायें ते वात क बूल करी तथा बीजी जे कुबडी बेटी हती ते धनदत्तने दीधी. अने बेहु कु मरीने परणाववानुं मुहूर्त्त एकज दिवसें एकज लग्नें लीधुं.

हवे धनश्रीयें पूर्वभवना स्नेहने लीधे धनदत्त कुबडाने परणवानी वां छायें त्यां मनोरथ पूरक एवे नामे कोइ यक्ष छे, तेने आराध्यो. यक्ष संतुष्ट थइने माग, माग, एवुं त्रण वखत कह्युं धनश्रीयें कह्युं. के जेम म्हारो भर तार धनदत्त थाय तेम तमें करो. तेवारें यक्षें कह्युं के तहारे पितायें बेहु पुत्रीने एकज दिवसें एकज लग्नें बेहु वरने पाणिग्रहण करावबा वांछ्युं छे, ते वखत हुं दृष्टिबंधन करीश, तुं धनदत्तने परणजे. पछी जेवारें तुफने परणी घेर लइ जाशे, तेवारें मोह जशे. एम कही यक्ष अदृष्ट थइ गयो.

हवे लग्नने दिवसें बेहु वर साथेंज परणवा आव्या. यक्षें सर्वलोकने मोह पाड्यो बेहु परणीने पोतपोताने घेर आव्यां तेवारें धनदत्त तो धन श्रीने घणीज स्वरूपवान् देखीने हर्ष पाम्यो अने धनपाल पोतानी परणेली स्त्रीने कूबडी देखी फांखो थयो थको मनमां विचारवा लाग्यो के आ ते वली इंद्रजाल कहेवो थयो ! मतिविभ्रम केम थइ गइ ! ! ! ते वात राजायें सांजली अने गामनां लोकोयें पण जाणी लोकना टोलें टोलां मली वातो करवा लाग्यां, पछी मांहोमांहे बन्ने जण स्त्रीने अर्थे कलह करता राजानी आगल गया. राजायें तेमने पाछा घेर मोकलीने धनश्रीने तेडावी एकांतें पूछ्युं के धनदत्त जातें कुबडो छे, ते तने मनगमतो थाय नहीं, माटें साचे साचुं कहे जे तुं कया वरने वरी छो ? ते सांजली धनश्रीयें राजानी आगल खरेखरी वात कही दीधी के में मोहने वशे अवश्य ए धन्नावहना पुत्रनी साथें परणवा माटेंज यक्षनुं आराधन कर्युं हतुं, ते संतुष्ट थयो तेना सांनिध्यथी हुं धनदत्तने परणी छुं अने म्हारी कूबडी बहेन ने यक्षें धनपालनी साथें परणावी छे. हवे जेम युक्त होय, तेम करो. जे देवतायें कीधुं ते अन्यथा शी रीतें थाय ? माटें म्हारे ए कूबडोज जरतार हो. पछी राजायें सज्जनोने तेडी सर्व वात कही समजावी ते पण सर्व समजीने घेर गया.

एकदा ते नगरना वनमां कोइ धर्मरुचिनामा आचार्य चारज्ञानना धणी आवी समोसर्या, तेमने वांदवा माटें सर्व लोक गयां, तेनी साथें धनदत्त पण पोतानी स्त्री सहित गयो.. मुनिने वांदी धनदत्तें पूछ्युं के हे जगवन् ! कये कर्मे करीने हुं कूबडो थयो ? अने कया कर्मे म्हारी स्त्री धनश्रीनो म्हारी उपर घणो स्नेह छे ? तथा कया शुनकर्म करी हुं घणी लक्ष्मी सुख सौजाग्य पाम्यो छुं, ते म्हारी उपर कृपा करीने कहो.

गुरु बोल्या के हे धनदत्त ! तुं पूर्वले जवें धन्नो हतो, अने धनश्रीनो जीव धीरू एवे नामे तहारी स्त्री हती, तिहां पोठीया रासजादिक उपर घणो जार जरवाथी तुं कूबडो थयो, अने जावथकी साधुने दान दीधुं, तेने योगें लक्ष्मीनो योग अखंम रह्यो. तेमज पाछले जवें बेहु स्त्री जरतार हतां, तेथी तमारो स्नेह पण अखंम रह्यो छे. एवी वात सांजली बेहुने जातिस्मरण ज्ञान उपनुं. पूर्वला जव दीठा. पछी समकितमूल बारव्रत पडिवज्जी मुनिने वांदी घरे पहोता. अनुक्रमें धर्मपालता सुपात्रने दान

देतां आयु पूरण थये देवलोकें देवता थया ॥ इति धनदत्तधनश्रीकथा ॥

॥ हवे बत्रीशमी पृछानो उत्तर एकगाथायें करी कहे छे. ॥

गाथा ॥ जाइमउ मत्तमणो, जीवे विक्किणइ जो कयग्घो य ॥ सो इंदभूइ मरिउं, दासत्तं वच्चए पुरिसो ॥ ४१ ॥ भावार्थः—जे जीव जातिमद करे, अहंकार करे एटले जातिकुलादिकना मदें करी मदोन्मत्त उन्मत्त थाय तथा जे मनुष्यादिक जीवोने (विक्किणइ के०) वेचे विक्रय करे अने कृतघ्न थाय एटले परनो करेलो उपकार वीसरी जाय, पारकी निंदा करे, पोतानी आत्मप्रशंसा करे अन्यकोइ प्रशंसा करवा योग्य होय छतां तेना गुणने ढांके पोतें कोइ गुणवाननी प्रशंसा न करे पारका अछता दोष कहेवे करी नीचगोत्र कर्म उपार्जन करे. हे इंद्रभूति ! हे गौतम ! (सो के०) ते पुरुष मरीने दासपणुं पामे. जेम हस्तिनापुरें सोमदत्त पुरोहित पदभ्रष्ट थइ मरीने डुंबपुत्र थयो ॥ ४१ ॥ तेनी कथा कहे छेः—

॥ कुरुदेशें हस्तिनागपुरें सोमदत्त नामें पुरोहित रहे छे. तेने घणा मनोरथें एक बलभद्र नामें पुत्र थयो. ते ब्राह्मणजातिना मदें करी बीजा लोकोने तृण समान गणे. नगरमांहे मार्गमां आभोखुं नाखी चाले राजपुत्र आभडे तो स्नान करे, अने जो कोइ मातंग दृष्टियें पडे, त्यारें तो वली वस्त्रसहित स्नान करे, प्रायश्चित्त लीये, एवी रीतें ब्राह्मण विनानी बीजी जाति ऊपर द्वेष धरतो तेमनी निंदा करतो पोतानी जातिने प्रशंसतो रहे. तेनी ऊपर लोक हांसी करे, ए प्रमाणें वृत्तन करी ते पुत्र पोताना मावित्रोने अत्यंत उच्चाट करवानुं कारण थइ पड्यो.

तेना पितायें तेने कह्युं के हे वत्स ! लोकव्यवहारज रूडो छे जीव कर्में करी ब्राह्मण पण हीनजाति थाय माटें जाति शाश्वती कोइने न होय. तेमाटें मद करवो नहीं. एटलो करवो के जेणे करी लोक हासी न करे. इत्यादिक तेनो पिता शिखामण आपे पण ते माने नही. उन्मत्तहाथीनी पेठें खुमारीमां जातिअभिमान धरतो रहे. एम करतां तेनो पिता देवशरण थयो. तेवारें राजायें पुरोहितनो पुत्र अहंकारी हतो माटें अयोग्य जाणीने तेना पिताने पाटें थाप्यो नहिं. बीजाने पुरोहित पदवी आपी दीधी. एवी रीतें मदें करी इहांज पदभ्रष्ट थयो लोकमां हांसी थइ लोकोयें तेनुं ब्रह्मदत्त नाम पाड्युं. पदवी गयाथी निर्धनपणाने प्राप्त थयो. कृतघ्न थयो. पछी

गाय, बलद वेहेंची पेट नराइ करवा लाग्यो. लोको सर्व निंदा करवा लाग्या. एकदा गाम्रोने चारो नाखतां कोइयें कह्युं के हे ब्रह्मदत्त! आ तृण जे तुं तहारे हाथे उपाडे छे ते सर्व तृणने मातंगीयें पगें करी चाप्यां छे. तेथी तुने आनडछेट नथी लागती? एवी अनेक ठेकडी लोको करे, तेथी क्रोधें नराइने ते गाम छोडी जतो रह्यो. जतां जतां मार्गमां चूलो पड्यो. तिहां कुंबीने देखी आक्रोश करी हणवा लाग्यो, तेवारें कुंबें कोप करी ब्रह्मदत्तने पेटें छरी मारी तेथी त्यां मरण पामीने कुंबीने घेर पुत्रपणे जइ उपन्यो. ते पण कांणो खोडो, कुरूपडो, कालो, दुर्भागी थयो. राजालोकोनुं दासपणुं करे. मा णसने शूली प्रमुख चडाववानो वध करवानो धंधो करे. तिहांथी मरण पामी पांचमी नरकें नारकी थयो. तिहांथी मरीने मत्स्य थयो. तिहांथी वली नरकें गयो. एम अनेक नवभ्रमण करी जेवारें मनुष्यमां उपजे. तेवारें हीनकुलमां ऊपजे अने दासपणुं करे. एकदा अज्ञानतपनां बलें करी ज्योतिषी देवोमां ऊपन्यो. तिहांथी च्यवीने पद्मखेड नगरें कुंददत्ता गणिकाने तिहां पुत्रपणे ऊपन्यो. तेनुं नाम मयण पाड्युं. तिहां बहोंतेर कला शीख्यो, परोपकारी, दक्ष, दयालु, लज्जालु, गंभीर, सरल, प्रियवादी, सत्यवादी थयो. जेहवा तेमां उत्तम गुणो छे, तेवा गर्वनुं ममत्व नथी. जेवारें लोको तेने गणिकानो पुत्र कही बोलावे, तेवारें दुःखीयो थको चिंतवे जे में कोइ पूर्व नवें पाप कीधां छे, तेथी विधातायें मने गणिकाने घेर जन्म दीधो! जेथी हुं आटला गुणने धरतो छतो पण जातिहीन थयो छुं. अथवा अमृतमय चंद्रमा छे पण कलंकित छे तथा रत्नाकर जे समुद्र ते रत्नोथी नरेलो छे ते छतां तेमनुं पाणी खारुं छे, तेम जिहां गुण तिहां दोष पण होय!

एकदा ते नगरें केवली नगवान् पधाख्या. तेमने वांदवा माटें मयण गयो. वांदीने पूछ्युं के हे नगवन्! माहारामां केटलाएक उत्तम गुणो छतां हुं कया कर्मना उदयथी हीनजातिमां ऊपन्यो छुं? नगवानें पाछला नवनुं स्वरूप कही संनलाव्युं अने तें जातिकुलनो मद कीधो. तथा परनिंदा कीधी. तेना पापें करी गणिकाने घेर ऊपनो छो, तेवारें मयणें कह्युं के हे नगवन्! जो महारामां योग्यता होय, तो दीक्षा आपो. केवलज्ञानीयें तेने योग्य जाणी दीक्षा दीधी, साधुसमाचारी शीखवी, पछी दुष्कर तप करी अनशन लेइ देवता थयो. अनुक्रमें कर्मक्षय करी मोक्षसुख पाम्यो॥ इति ब्रह्मदत्त ब्राह्मण कथा.

हवे तेत्रीशमी प्रश्ननो उत्तर, एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ विणयविहीणो चारि, त्त वज्जिउं दाणगुण विउत्तो.य ॥ मण सा य दंम जुत्तो, पुरिसो दारिद्दियो होइ ॥ ४८ ॥

भावार्थः—जे पुरुष विनयें करी हीण होय एटले विनयरहित होय तथा चारित्र वर्जित होय एटले चारित्र जे विरतिपणुं तेथकी रहित होय तथा दानगुणथकी वियुक्त होय एटले दानगुणथी रहित होय, तथा मनोदंम, वचनदंम अने कायदंम, ए त्रण दंमें करी युक्त होय. एटले मनें करी आर्तध्यान रौद्रध्यान चिंतवे अने वचनें करी डुर्वचन बोले, लोकोनें कुबुद्धि आपे, कायायें करी कुचेष्टा करे. एवो पुरुष मरीने दरिद्री थाय ॥४८॥ जेम हस्तिनापुरें सुबंधुशेठनो पुत्र मनोरथनामें हतो, ते अविनीत, अविरति थको मरीने दरिद्री थयो. तेनुं निष्पुण्य एवुं नाम पड्युं. तेनी कथा कहे छे.

हस्तिनागर नगरें अरिमर्दन नामें राजा राज्य करे छे. ते गाममां सुबंधु नामा शेठ वसे छे. तेने बंधुमती भार्या छे, तेनी घणे मनोरथें एक पुत्र थयो. माटें तेनुं मनोरथ एवुं नाम दीधुं. ते महोटो थयो, तेवारें तेनो पिता देवगुरुने नमस्कार करवा कहे, पण ए स्तब्ध थइ रहे प्रणाम न करे. तेमज निशालें भणवा मोकल्यो, तो पण तेवोज कोरे कोरो रह्यो, पण एक अक्षर शीख्यो नही. पितायें महोटानो विनय करवा शीखव्यो, तो पण कोइनो विनय करे नही. जेमाटें जेहनो जेहवो स्वभाव होय, ते कोइ रीतें मटे नही.

एकदा तेनो पिता एने गुरुनी पासें तेडी गयो. गुरुने कह्युं के एने प्रतिबोध आपो. गुरुयें मनोरथने पूछ्युं हे वत्स ! व्रतपच्चरकाण नियम पालवाथी बहु फल थाय, माटें तहारी इछा प्रमाणें कांइ नियम ले. मनोरथें कह्युं के महाराथी नियम पले नहिं. गुरुयें कह्युं त्यारें दान आपवानुं व्यसन राख्य, मनोरथें कह्युं हुं दान आपी शकतो नथी. एम करतां तेनो पिता मरण पाम्यो. पोतें महा कृपण हतो तेथी घरमां कोइ भिखारी पण मागवा आवे नही.

एकदा एकलो ग्रामांतरें जातो हतो तेने मार्गमां चोर लोकोयें मारी नाख्यो, पासें जे कांइ धन हतुं, ते सर्व चोरो लइ गया. मरीने दरिद्रीना कुलमां जइ पुत्रपणे ऊपनो. तिहां निष्पुण्यक एवुं नाम दीधुं. महोटो थयो, त्यारें लोकोनां ढोर चारे, हल खेडे, लोकोनी सेवा करे, दास थइ रहे. वहीत्रुं करे, माथे भार ऊपाडे, तो पण पेट भरवुं दोहेलुं थाय.

एकदा धन कमावा सारु देशांतरें चाल्यो, तिहां लक्ष्मी मेलववाना घणा उपाय कस्या, परंतु कर्मयोगें दरिद्रीज रह्यो. हवे तिहां एक षण्मुख नामें देव छे, तेनो साचो परतो छे, तेनी आगल धन मेलववा माटें उपवास करी बेठो. सातमे दिवसें देव प्रत्यक्ष थइ बोल्यो के तुं शा माटें लांघण करे छे ? तेवारें दरिद्रीयें कह्युं के लक्ष्मीने अर्थे करुं छुं. देवतायें कह्युं लक्ष्मी मलवी तहारा कर्ममां लखी नथी. दरिद्री बोल्यो के तो महारुं इहांज मरण थाउं. एवो तेनो हठ जाणीने देवतायें कह्युं प्रजातें इहां सोनानो मोर नाचशे, ते एक पिछ सोनानुं मूकशे, ते तुं लेजे. एम कही देव अदृश्य थयो.

प्रजातें सोनानुं पिछ मल्युं, एम नित्यप्रत्यें एक पिछ लेतां लेतां वली दरिद्रीने कुबुद्धि उपनी अने विचार्युं जे आ जंगलमांहे केटला दिवस रहीयें ? माटें आ मोरने पकडी एक वखतेंज एनां सर्व पीछां लइ लहीयें. एम चिंतवी मोरने पकड्यो, के तरत मोर फीटीने कागडो थइ गयो. अने देवतायें आवी दरिद्रीने पादप्रहारें मास्यो, तेथी पडि गयो. प्रथमथी जेटलां मोरनां पीछां लीधां हतां, तेटलां सर्व कागडानां पीछां थइ गयां. जे माटें कह्युं छे के "बुद्धिःकर्मानुसारिणी ॥ दोहा ॥ उतावल कीजें नही, कीधे काज विणास ॥ मोर सोनानो कागडो, करी हुउ घरदास ॥ १ ॥

पछी पोतेंज पोताने निंदतो थको ऊंपापात खावा माटें पर्वत उपर चड्यो, तिहां एक साधुने दीठा, तेवारें मनमां विचार्युं जे. एमने धन मेलववानो हुं उपाय पूछुं ! एम चिंतवीने तेमने वांद्या, तेवारें ऋषियें कह्युं के तें देवनुं आराधन कर्युं, तिहां मोरनो काग थयो. तेथी हमणां इहां ऊंपापात करवा आव्यो छो. ते सांजली आश्चर्य पामी विचार्युं जे जूउ आ ऋषिनुं केहेवुं ज्ञान छे ! पछी साधुने कहेवा लाग्यो के महाराज ! मने धन मेलववानो उपाय कहो. ज्ञानीयें कह्युं के तें पूर्वला जवमां कोइ नियम पाल्यो नथी, विनय कीधो नथी अने कोइने दान पण दीधुं नथी, तेनें योगें दरिद्री थयो छो. एवी वात सांजलतां जातिस्मरण ज्ञान उपन्युं; तेथी पूर्वला जव सर्वे दीठा. तेवारें वैराग्य पामी दीक्षा लीधी. तेने सारी रीतें आराधीने देवलोकें देवता थयो. ए दरिद्रीपणा उपर निष्पुण्यनी कथा कही॥

हवे चोत्रीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ जो पुण धाइ विण, य जूउ चारित्त गुणसया इन्नो ॥ सो जण

सय विरकाउं, महड्डिउं होइ लोगंमि ॥ ४ए ॥ नावार्थः—जे पुरुष वली चाइ एटले त्यागी होय, दातार होय, विनय सहित होय, चारित्रना गुण संबंधि जे सेंकडां तेणें करी आइन्नो आकीर्ण एटले व्याप्त होय अर्थात् चारित्र जे विरति आदिक गुणोना सेंकडा तेणें करी व्याप्त होय. ते पुरुष (जण के०) सज्जन लोकना (सय के०) सेंकडा तेमांहे (विरकाउं के०) विख्यात होय. एटले शेंकडा गमे महर्द्धिकमां प्रसिद्ध होय, जेम सांकेतपुर पाटणमांहे स्वल्परुद्धिनो धणी धनमित्र शेठनो पुण्यसार नामें पुत्र थयो, तेणें पूर्वपुण्यने योगें घरमां चार निधान दीठा. ते राजायें लइ लीधा अने वली पण तेने आप्या, तेनी कथा कहे छे ॥ ४ए ॥

सांकेतपुरें नानुमित्र राजा राज्य करे छे. तिहां धनमित्र नामें शेठ वसे छे. तेने धनमित्रानामें नार्या छे, तेणें सहित ते सुखीयो छे. एकदा धनमित्रा स्त्रीयें रात्रें सूतां स्वप्नमांहे सोनानो पूर्ण कलश रत्नें नरेलो मुखमां पेसतो दीठो. पछी जागीने नरतार आगल वात कही. नरतारें विचारीने कह्युं के तुजने कोइ माहानाग्यशाली पुत्र थशे, ते सांनली स्त्री अत्यंत हर्ष पामी अनुक्रमें पूर्ण मासें पुत्र प्रसव्यो. वधामणीयाने वधामणी दीधी. तेनुं पुण्यसार एवुं नाम दीधुं. ते पुत्र अनुक्रमें रूप अने गुणें करी वृद्धि पाम्यो सर्व कला शीख्यो, यौवनवयें एक व्यवहारीयानी धन्या नामें कन्या परण्यो.

एकदा ते पुण्यसार, रात्रियें सुखें निडामां पोढयो छे, ते वखतें लक्ष्मी देवतायें आवी कह्युं के हे पुण्यसार ! हुं तहारे घेर आवीश! पछी सुविहाणमां घरने चारे खूणे चार रत्नें नर्या सोनांना कलश रूपनिधान दीठा. तेवारें पुण्यसारें जाण्युं जे देवीयें कह्युं ते सत्य थयुं. परंतु जो कोइ डुर्जनना वचनें राजा जाणशे. तो अनर्थ ऊपजशे, माटे प्रथमथीज राजाने जाण करुं! एवुं चिंतवीने राजानी आगल निधाननुं स्वरूप कह्युं, ते जोवामाटें राजा पोतें पुण्यसारने घेर आव्यो. नंमार देखी विस्मय पाम्यो, तिहांथी ऊपाडी पोताना नंमारमां मूकाव्या. वली बीजे दिवसें पण तेमज प्रनातसमयें पुण्यसारें चार नंमार दीठा, अने राजानी आगल कह्युं. ते पण राजायें पुण्यसारना घेरथी मगावी पोताने नंमारें थाप्या. वली त्रीजे दिवसें पण पुण्यसारें तेमज चार नंमार दीठा अने राजा आगल कह्या, महाराज ! महारे घेर तेवीज रीतें वली पण चार नंमार आव्या छे. ते पण राजायें पोताने

भंमारें मूकंवानो हुकम कयो. तेवारें प्रधान बोल्यो के महाराज ! तमें जे प्रथम बे दिवस निधान लावी भंमारें मूक्या बे, ते आहीं मगावो. राजायें भंमारो ऊघडाव्यो, तेमां जोया तो निधान दीठा नहीं, तेवारें राजायें कह्युं के एतो जेना पुण्यने योगें निधान आव्या बे, तिहांज रहेशे. महारी पासें रहेवाना नथी. में जे लोजाधीन थइने निधान आण्या, ते महारो प्रयास व्यर्थ बे.

पबी राजायें ते भंमारगत द्रव्य सर्वपुण्यसारने आपी नगरशेठनी पदवी देइ वस्त्र, मुद्रिका पहेरावी वाजित्र वाजते गाजते परिवार सहित ते पुण्यसारने घरे पहोंचाड्यो. पबी पुण्यसारनुं दिवसें दिवसें महत्त्व वृद्धि पाम्युं. पोतानी लक्ष्मीथी पुण्यकार्य साधतो रहे बे. परंतु गांठ बांधे नहि.

एकदा ते नगरने उद्याने सुनंदनामें केवली जगवान् समोसस्या. तेमने राजा पोताना परिवार सहित तथा पुण्यसार शेठ पण पोताना माता पिता स्त्री सहित अन्यंजनोनी साथें वांदवा गयां. वांदीने बेठा. केवलीयें धर्मोपदेश दीधो. पबी धनमित्रशेठें पूछ्युं हे जगवन् ! महारा पुत्रें पूर्वजवें शुं पुण्य कर्युं बे, के जेनाथी ए लक्ष्मी,राज्यमान, सौजाग्य,महत्त्वने पाम्यो ? तेवारें गुरुयें कह्युं के पूर्वें एहज नगरमां धनकुमर शेठ हतो, तेणें गुरुनीपासेंथी बावीश अजक्ष्य,अने बत्रीश अनंतकायना नियम लीधा,सुपात्रोने दान दीधां, देव गुरु अने वडेरानी जक्ति विनय करतो, श्रावकधर्म पालतो, वृद्धावस्थायें दीक्षा लीधी,सिद्धांत जण्यो,तपस्या करी,क्षमा उपशमादिक अनेक गुण पोताने विषे आण्या, प्रांते अनशन लइ आउखुं पूर्ण करी त्रीजे देवलोकें इंद्र सामानिक देवता थयो. तिहां देवसंबंधी जोग जोगवी च्यवीने शेष थाकते पुण्यें तहारो पुत्र थयो बे. पूर्वपुण्यने योगें ए लक्ष्मी महत्त्वादिक पाम्यो बे. ए वात सांजली पुण्यसारने जातिस्मरण ज्ञान ऊपनुं, पूर्वला जव दीठा. पबी कुटुंब सहित श्रावक धर्म आदरी पोताने घेर आव्यो. देवपूजा करे, नवकार गुणे, गुरुने वांदे, दान आपे, पबी पोताना पुत्रने योग्य जाणी तेने घरनो जार सोंपी पोतानी शेठ पदवीयें थापी पुण्यसारें पोतें सुनंदनामें गुरुनी पासें दीक्षा लीधी. तेने निरतिचारपणे पाली देवता थयो. तिहांथी च्यवी वली मनुष्य जन्म पामी मोक्षसुख पामशे ॥

॥ दोहा ॥ जिण पूजे वंदे सुगुरु, जावें दान दियंत ॥ पुण्यसार जिम तसु घरि, ऋद्धि अचिंती हूंत ॥ १ ॥ इति महर्द्धिकत्वोपरि पुण्यसार कथा ॥२४॥

॥ हवे पांत्रीश तथा बत्रीशमी प्रश्नाना उत्तर बे गाथायें करी कहे ने ॥

गाथा ॥ वीसब्ब घायकारी, सम्ममणालोइक ण पश्चित्ते ॥ जो मरइ अन्न जम्मे, सो रोगी जायए पुरिसो ॥५०॥ वीसब्ब रस्कणपरो, आलोइअ सयलपाव ठाणो य ॥ जो मरइ अन्न जम्मे, सो रोगविवज्जिउ होइ ॥५१॥

नावार्थः—जे मनुष्य विश्वासघात करे, अने सम्यक् मने एटले सूधा मनें करी शुद्ध आलोयणा न लीये, ते पुरुष मरीने अन्यजन्में एटले नवांतरने विषे रोगीयो थाय ॥५०॥ तथा जे पुरुष, विश्वासीनी रक्षा करवामां अग्रेसर होय अने पोताना करेलां जे पापस्थानक होय, तें सर्वने साचें मनें आलोचे. एवी रीतें जे पुरुष करें, ते नवांतरने विषे रोगविवर्ज्जित होय. नीरोगी होय ॥ ५१ ॥ ए बेहु ऊपर अट्टणमल्लनी कथा कहे ने:—

उज्जयणी नगरीयें जितशत्रुराजा राज्य करे ने. तेनें अट्टणमल्ल नामें महामल्ल ने. हवे सोपारा नगरें सिंहगिरि राजा ने. ते वर्षोवर्ष मल्लयुद्ध करावे ने, मल्लमहोत्सव करावे जे कोइ जीते, तेने घणुं धन आपे, तिहां अट्टणमल्ल जइने बीजा मल्लोने जीती सरपावमां धन लइ घेर आवे. एकदा सिंहगिरि राजायें विचार्युं जे उज्जयणीनो मल्ल आवी वर्षोवर्ष जींती जाय ते रुडुं नहीं. माटें आपण एनो उपाय करीयें, पनी एक बलवान् मन्नीने देखी राजायें तेने पोतापासें राखी मल्लयुद्ध शीखव्युं. मलीदा खवरावी पीवरावी पुष्ट कर्यो. पनी मल्लमहोत्सवना दिवसें अट्टणमल्लें आवी युद्ध कर्युं तेने तरुण एवा मानीयें जीत्यो. राजायें मानीने द्रव्य आप्युं. अट्टण पानो वल्यो तेणे सोरठदेशमां एक मोहोटा जोरावर फलिहनामें कोली दीठो, तेनी साथें नाणुं परठवीने तेने उज्जयणीयें लइ गयो. तिहां तेने मल्लविद्या शीखावी. पनी सोपारा नगरमां परीक्षानी वेलायें तेडी आव्यो, तिहां सनामां मल्ल महोत्सव संबंधि वाजित्र वाजते, शंख पूराते, बंदिजन जय जय बोलते, फलिहमल्ल अने मानी मल्ल ए बे मांहोमांहे जूफता, नाचता, माचता, हसता, एक बीजाने मुष्टिप्रहार देता, पडता, चडता, मांहोमांहे पोतपोताने स्थानकें गया. तिहां अट्टणमल्लें फलिहमल्लने पूठ्युं के तुजने युद्ध करतां थकां क्यांय अग दुःखतां होय, तो कहे. तेणे पण साचे साचुं कह्युं, के अमुक अमुक अंग दुःखे ने. तेवारें अट्टणमल्लें फलिहमल्लने अभ्यंग स्नान करावी तेनुं शरीर ताजुं कराव्युं.

हवे राजायें माछीमल्लने पूछ्युं के तह्मारा अंग क्यां दुःखे छे ? पण मा छीयें लाजने लीधे दुःखवानुं कांइ कह्युं नही, अने बीजे दिवसें सनामांहे सर्वलोक समक्ष बेहु मल्लयुद्ध करवा लाग्या, तिहां माछीमल्ल थाक्यो. अने फलिहमल्लें तेनी ग्रीवा मरडी मारी नाख्यो. तेथी फलिहमल्लनो यश विस्तार पाम्यो. अने बक्षीस पण मली. एम अट्टणमल्लनी आगल ते यथास्थित स्वरूप कही सुखीयो थयो, अने माछीमल्लें यथास्थित स्वरूप न कह्युं. तेथी दुःखी थयो. ए दृष्टांतें जे कोइ गुरुनी आगल साचुं कही. आलोयणा लीये, ते अट्टणमल्ल फलिहमल्लनी पेठें सुखी थाय. नीरोगी थाय. अने जे कोइ गुरुनी आगल आलोवतां लाजथी साचुं न कहे, ते माछी मल्लनी पेठें रोगी थको दुःखी थाय ॥ उक्तं च ॥ पाप आलोवे आपणुं, गुरु आगल निःशंक ॥ नीरोगी सुखिया हुवे, निर्मल जेहवो शंख ॥ १ ॥ ए आलोयण ऊपर अट्टणमल्ल अने फलिहमल्लनी कथा कही ॥ ३६ ॥

॥ हवे साडत्रीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे ॥

॥ गाथा ॥ लहु हत्थयाइ धुत्तो, कूडतुला कूडमाण नंमेहिं ॥ ववहरइ नियडि बहुलो, सो हीणंगो नवे पुरिसो ॥ ५१ ॥ नावार्थः—जे धूर्त्त, लघुलाघवी कलायें एटले हस्तादिलाघवें करी कूडा तोलें कूडा मापें करीने तथा कूंकम कपूर मजीठ नेलसेल करी कूडाकरियाणें करी (ववहरइ के०) व्यवसाय एटले व्यापार करे (नियडिबहुलो के०) निकृतिबहुल एटले मयावी थको घणुं पाप करे, ते पुरुष नवांतरने विषे जो मनुष्य थाय. तो पण हीणअंग वालो थाय. जेम ईश्वरशेठनो पुत्र दत्त एवे नामें हतो ते पूर्वें कूडां तोल, कूडां माप अने कूडां करियाणांदिक करवाना पापने परिमाणें हस्तादिक अवयवथी हीन थयो ॥५१॥ तेनी कथा कहे छे.

आशापूरणकल्पद्रो, दिनेश्वरवरद्युते ॥ देहि त्वं गौतम स्वामिन्, वंदितः सुखसंपदम् ॥ १ ॥ क्षितिप्रतिष्ठित नामा नगरें आदिदेव ईश्वरनामें शेठ वसे छे, तेनी प्रेमला नामें स्त्री छे, तेने चार पुत्र थया, ते चारेने नणाव्या, परणाव्या, शेठ पोतें वृद्ध थयो तेना घरमां घणुं द्रव्य छतां पण लोनने लीधे अनेक प्रकारना व्यापार करे, परंतु लक्ष्मी कोइने आपे नहिं कोइने दान देवानुं तो मनज न थाय ?

एकदिवस शेठ जमीने गोखें बेठो छे एवामां चोथा पुत्रनी स्त्री बहु

गुणवंती ले तेनी सुपात्रनें दानदेवानी मति ले चतुर ले; जाण ले, ते स्त्री वासण धोवा मांजवा माटें घरथी बाहिर आंगणामां बेठी ले, .एटलामां कोइक नवदीक्षित शिष्य आठ वर्षनी उमरनो हतो, ते ईर्यासमिति शोधतो वहोरवा माटें शेठना घरने बारणें आव्यो, तेने देखी स्त्रीयें कह्युं ॥ दोहोशोरठी ॥ चेला खरी सवार, धामणी वार न जाणीयें ॥ तुमें क्यो अनथि आहार, अम्ह घर वासी जीमियें ॥ १ ॥ चेलायें कह्युं तो हुं अन्यत्र जिक्षा माटे जाउं? वहूयें कह्युं जेम मेल आवे तेम करो. पठी चेलो पण ते कृपणनुं घर मूकी अनेरे घर आहार लेवा गयो.

गोंखमां बेठेला शेठजीयें ते सर्व वात सांजलीने विचार्युं जे ए बेहुनां वचन मलतां नथी, तेवारें वहूनें बोलावीने पूछ्युं जे बे पहोर थया ठतां, तमें चेलाने एम केम कह्युं के सवार ले, वली चेलायें कह्युं अमें बीहियें ठैयें. तेवारें तें कह्युं अमारें घरें वासी जीमीयें ठैयें पण आपणे घरें तो सदा नवीज रसवती नीपजे ले, अने सर्व कुटुंब सहित ताजी रसवती खाइयें ठैयें. परंतु टाढाढी रसोइ तो कोइ जमतुं नथी. तेम ठतां तें चेलाने आम कह्युं, तेनुं कारण शुं? ते सांजली वहु घूंघट करी लज्जा आणती थकी कहेवा लागी के हे तातजी! सांजलो. में चेलाने कह्युं के तमें सवारी एटले वहेली न्हानपणमां दीक्षा केम लीधी? तेवारें चेले कह्युं जे धामणी वार न जाणीयें ते हुं बीहुं ठुं. कारण के संसार असार ले आयु अथिर ले, तेनी बीक लागे ले माटें धामणि वार न जाणीयें, एटले वेला केम गमावीयें? जेमाटें जीवितव्य वीजलीना ऊबकारा सरखुं ले. वली में कह्युं जे अमारे घेर वासी जमीयें ठैयें. तेनो अर्थ आम ले के अमें पाछले जवें दान पुण्य कीधां ले तेने योगें ऋद्धि मली ले, परंतु आ जवमां दान पुण्य कांइ करता नथी माटे नवी उपार्जन कांइ थती नथी, तेथी वासी जोजन करीयें ठैयें.

ए वचन सांजली शेठें वहूने माहाबुद्धिमान् जाणी हर्ष पाम्यो थको कहेवा लाग्यो के महारी आ वहू, सहु वहूरोथी न्हानी ले परंतु बुद्धियें करी सर्वमां अग्रेसर ले माटें एनें हुं महारा कुटुंबमां महोटी करी थापुं ठुं. तो हवे महारा सर्व कुटुंबीजनोयें एने पूठीने कामकाज करवुं, एवी आज्ञा करुं ठुं. वली शेठने ते दिवसथी दान देवानी बुद्धि पण थइ.

केटलो एक काल वीत्या पठी वली शेठने पांचमो पुत्र थयो. तेनुं दत्त एवुं

नाम पाड्युं.परंतु तेने हाथ पग नथी हीणंगो छे,ते जेवारें यौवनवयं प्राप्त थयुं, तेवारें लोक तेनी हांसी करे,वैद्यें तेलमर्द्दनादि अनेक उपचार कस्या,पण जेम दुर्जनने उपगार करीयें,ते गुण न करे,तेम एने पण कांइ गुण थयो नही. शेठें अनेक उपचारो करी घणुं द्रव्य खरच्युं, पणं पुत्र जेवो हतो,तेवोज रह्यो.

एकदा बे मुनीश्वर निक्षयें आव्या, तेमने वांदीने शेठें पूछ्युं के महाराज !.महारो पुत्र सारो.थाय, तेवुं औषध कहो. गुरुयें कह्युं जीवने रोग बे. प्रकारना थाय छे; एक द्रव्यरोग अने बीजो नावरोग. तेमां पहेला द्रव्य रोगनो प्रतिकार.तो वैद्य जाणे छे, अने बीजा नावरोगनो प्रतिकार अमारा गुरु जाणे छे, ते हाल आ गामनी बाहेर वनमां आव्या छे, तेमने पूछो. ते वात्त सांनली शेठ पण वनमां गयो. तिहां गुरुने वांदी पूछवा लाग्यो के महाराज ! महारो दत्तपुत्र अंगहीण छे, ते कोइ रीतें सारो थतो नथी. तेनुं शुं कारण छे ? तथा द्रव्यरोग अने नावरोग ते कोने कहीयें ? ते वारें गुरु बोल्या जे राग द्वेषें करी मागं कर्म उपार्ज्जन करीयें ते नावरोग कहीयें, अने ते कर्म उदय आव्याथी,जे विपाकें नोगवीयें ते द्रव्यरोग जाणवो. तिहां नावरोग मटी गयाथी द्रव्यरोग.पण जाय.तप,संयम,दया काउस्सग्गादिक क्रियायें करी नावरोग जाय,नावरोग गयो,तो द्रव्यरोग पण जाय.

आ तहारा पुत्रें पूर्वनवें हाटें बेठां लोनें करी लोकोने वंच्यां छे, कूडे तोलें कूडे मापें करी व्यापार कीधो छे, सरस नीरस वस्तुने नेल संनेल करी वेहेची छे. एम घणां पाप कीधां छे,परंतु एक वार साधुने दान दीधुं छे, ते पुण्यने योगें करी तहारे घेर पुत्रपणे ऊपनो छे. एणे हाथें करी कूड कपट छलनेद करी मुग्ध लोकोने वंच्यां छे, तेणें करी हाथ रहित थयो छे. एवी वात गुरुना मुखथी सांनली शेठें तथा दत्तें बेहु जणे मलीने श्रावकधर्म अंगीकार कस्यो. दत्तें नियम लइ माया मूकी नवकारमंत्र स्मरण कस्युं, ते स्मरण करी देवलोकें गयो, माटें अहो लोको ! म वंचो, म वंचो. एक पुण्यज संचो. संचो ॥ इति हीनांगें दत्तकथा समाप्त॥ ३१ ॥

हवे आडत्रीशमी अने उंगणचालीशमी पृछाना उत्तर एक गाथायें कहे छे.

॥ गाथा ॥ संजम जुआण गुणवं,तयाण साहूणसील कलिआणं ॥ मूढ अवस्स वाए, ण टुंटउ पलिहघाएण ॥ ५३ ॥ नावार्थः—जे जीव, संयम युक्त क्षमादि गुणवंत,शीलें कलित एटले शीलें करी युक्त एवा जे साधु

महात्मा तेमना (अवसुवाए के०) अवर्णवादने बोले,एटले अणछता दोष बोले, निंदा करे; ते जीव नवांतरें (मूत्र के०) मूक ते बोबडो थाय. तथा जे जीव पगना प्रहारें करी साधुने (घांएणं के०) घा करे एटले पाटु मारे, ते जीव नवांतरें टूंटो थाय ॥५३॥ जेम वडोदावासी देवशर्माना पुत्र अग्निशर्मायें महात्मानी निंदा कीधी,तेणें करी ते मूक थयो अने साधुने ढींका पाटुना प्रहार कस्या तेथी तेहीज नवें तेने देवतायें शिक्षा दीधी. त्यांथी मरी नरकें गयो. नवांतरें हीनकुलमां पम्सड नामें टूंटो थयो. तेनी कथा कहे ठेः—

विटप नगरें देवशर्मा नामें ब्राह्मण चौद विद्यानो निधान ठे, तेने अग्निशर्मा नामें पुत्र थयो, ते घणां शास्त्र नएयो, ज्योतिष शास्त्रमां निपुण थयो, तेथी पोताना मनमां घणो अहंकार आएो. धर्मवंतनी, गुणवंतनी चारित्रयानी निंदा करे, तेमना दोष बोले, तेने बापें शीखामण दीधी, के हे वत्स ! जातिकुलनो मद न करीयें. डाह्यो मनुष्य गर्व करे नही, कोइनी निंदा न करे. इत्यादि समजाव्यो पण. जेम कागडाने दूधथी धोतां ऊज्ज्वल न थाय, तेम ए पण पोतानो स्वनाव मूके नही.

एकदा घणा साधुना परिवारें परवस्या थका एवा ज्ञानी गुरु तिहां आवी समोसस्या तेमने नगरनां लोक सर्व वांदवां गयां, ते गुरुनो महिमा देखीने अग्निशर्मा खीज्यो थको लोकोने कहेवा लाग्यो के ए पाखंमी महात्मानी पूजा नक्ति करवाथी शुं थाय ! ए वेदत्रयीथी बाहार ठे.

एक वार ते ब्राह्मण, घणा ब्राह्मणलोकोने देखतां थकां गुरुनी साथें वाद करवा माटें आव्यो अने कहेवा लाग्यो के तमें कुड अपवित्र अने निर्गुण ठो, तेम ठतां लोको पासें पूजा करावो ठो,ते शा माटें करावो ठो ? जे माटें वेदना जाए एवा पवित्र ब्राह्मणने दान आपे,तेनी पूजा करे तो जीव स्वर्गें जाय. अमें यज्ञ करीने ठाग जेवा जनावरोने पण स्वर्गमां मोकली आपीयें ठैयें ! एवी रीतें बोलवा लाग्यो, तेने एक शिष्यें कह्युं के तुं प्रथम म्हारी साथेंज वाद कर. हुंज तहारा प्रश्नोनुं उत्तर आपुं ठुं, ते सांनल.

प्रथम तुं कहे ठे के तमें कुड ठो, अमेंज ब्राह्मण ठैयें, ते तहारुं बोलवुं अयुक्त ठे, जे माटें कह्युं ठे के ॥ श्लोक ॥ ब्राह्मणो ब्रह्मचर्येण, यथा शिल्पेन शिल्पकः ॥ अन्यथा नाममात्रं स्या, दिंड्गोपककीटवत् ॥ १ ॥ ए वचनथी एम कीधुं जे ब्रह्मचर्य पाले, ते ब्राह्मण कहेवाय. केनी पेरें ? तो

के शिल्पीना गुणें करी जेम शिल्पक कहेवाय. जो तेम ब्रह्मचर्य न होय तो ईंड् गोपकीट समान ते व्यर्थ ब्राह्मण जाणवो.

वली तुं कहे छे के तमें अशौच छो. ते पण असत्य कहे छे. जेमाटे स्नान करी पाणी ढोली अप्कायं जीवोने विराधवाथी कांइ शौचपणुं थ तुं नथी, जो स्नान कीधाथी शौचता थाती होय तो पाणीमां रहेलां माछ लां सर्व सदैव स्नानज करे छे; ते सर्व तहारा कहेवा प्रमाणें पवित्र थवां जोइयें. परंतु मनःशुद्धिविना शौचपणुं थतुं नथी मननी शुद्धियेंज शौचता कही छे ॥ यदुक्तं पुराणे ॥ श्लोक ॥ चित्तमंतर्गतं दुष्टं,तीर्थस्नानेर्न शुध्यति,॥ शतशोथ जलैर्धौतं, सुराजांममिवाशुचि ॥१॥ किं च॥ सत्यं शौचं तपःशौचं,शौचमिंद्रियनिग्रहः ॥ सर्वभूतदयाशौचं,जलशौचं च पंचमम् ॥२॥ चित्तं रागादिभिः क्लिष्ट,मलीकवचनैर्मुखं ॥ जीवहिंसादिभिःकायो;गंगा तस्यपराङ्मुखी॥३॥

भावार्थः—जेनुं अंतःकरण दुष्ट छे, तेवो पुरुष,स्नानथी शुद्ध थतो नथी. केनी पेठें तो के जेम हजार वखत जलथी धोयेलुं मदिरानुं पात्र शुद्ध थातुं नथी. वली प्रथम सत्यरूप शौच, बीजुं तपरूप शौच, त्रीजुं इंद्रियना निग्रहरूप, चोथुं सर्व भूतपर दयारूप शौच अने जलशौच तो छेवटनुं पांचमुं शौच छे. तथा जेनुं चित्त रागादिकें करी क्लिष्ट छे, खोटुं बोलवाथी जेनुं मुख अपवित्र छे, तथा जीवहिंसादिकथी काया जेनी अपवित्र छे, तेवा पुरुषने गंगा पण पवित्र करती नथी. अर्थात् गंगा पण तेमनाथी पराङ्मुखी छे. वली कह्युं छे के ॥ श्लोक ॥ आत्मा नदी संयमपुण्यतोया,सत्यावहा शीलदयातटोर्मी ॥ तत्राभिषेकं कुरु पांडुपुत्र,न वारिणा शुध्यति चांतरात्मा ॥१॥ भावार्थः— श्रीकृष्ण कहे छे, के हे पांडुराजाना पुत्र अर्जुन! संयम अने पुण्य ते रूप जलें करी युक्त, अने सत्यरूप जेनो प्रवाह छे. तथा शील अने दया ते रूप जेनां बे तट छे, एवी आत्मारूप नदी छे तेने विषे तुं अभिषेक कर, अर्थात् तेमां स्नान कर. परंतु जलें करी अंतरात्मा कोइ दिवस पण शुद्ध थातो नथी.

वली तें कह्युं के तमें निर्गुण छो, ते पण तहारुं बोलवुं अयुक्त छे. जे माटें क्षमा, दया अने क्रिया प्रमुख अनेक गुणो पण प्रत्यक्ष अमारामां देखाय छे; तोनिर्गुणी केम कहेवाइयें? ॥ उक्तं च ॥ चित्तं समादिभिः शुद्धं, वदनं सत्यभाषणैः ॥ ब्रह्मचर्यादिभिः काया, शुद्धा गंगांजसा विना ॥१॥ भावार्थः—समादिकें करी चित्त शुद्ध थाय छे, सत्यभाषणें करी वदन शुद्ध थाय

छे. ब्रह्मचर्यादिकें करी काया शुद्ध थाय छे एम गंगाना जल विनाज ते पूर्वोक्त सर्वशुद्ध थाय छे. परंतु गंगाजलथी ते कांइ शुद्ध थातुं नथी.

वली तुं कहे छे के तमें लोको पासें पूजा करावो छो. ते पण तें सत्य कह्युं नथी. जे माटें कह्युं छे के.॥ श्लोक ॥ पूजां ह्येते जनाः स्वस्य,कारयंति न जातुचित् ॥ स्वयमेव जनः किंतु, गुणरक्तः करोति तत् ॥ जावार्थः–लोको जे अमोने पूजे छे, ते स्वयमेव एटले पोतानी मेलेंज अमारामां गुणो जोइने पूजे छे. कारण के जन छे, ते गुणरत्नयुक्त छे. अर्थात् सर्व माणस जो गुण जोए छे तो पूजे. पण एमां कांइ नवाइ नथी.

तथा तें कह्युं के ब्राह्मणनी पूजा करनारो स्वर्गे जाय छे, ते पण असत्य छे. केम के ब्राह्मण तो अपवित्र, अब्रह्म सेवनारा, खेती करनारा, घरमां गाय जेंशादिक पशुउ तथा छोरु वाछरुने राखी तेनुं पालन करनारा छे, तेमज रीशाल अने निर्दयी होय छे, माटें तेने पूजवाथी स्वर्ग प्राप्त न थाय ?

वली तें कह्युं के अमें यज्ञमां छागनो वध करी स्वर्गे मोकलीयें छैयें, एवा पुण्यात्मा छैयें ! तें पण तहारुं बोलवुं असत्य छे. जे माटें तहाराज शास्त्रमां कह्युं छे के ॥श्लोक॥ यूपं छित्वा पशून् हत्वा,कृत्वा रुधिरकर्दमम् ॥ यद्येवं गम्यते स्वर्गे, नरके केन गम्यते ॥ १ ॥ जावार्थः–यूपने छेदीने, पशुने मारीने जयंकर हिंसाथी लोहीनो कचरो करीने ज्यारें स्वर्गमां जाय, त्यारें पछी नरकमां कोण जाय ? अर्थात् कोइ जायज नहिं.

एवी युक्तियें सर्व नगरनां लोक देखतां थकां शिष्यें अग्निशर्मा ब्राह्मणने हराव्यो, तेथी ब्राह्मण रोषें जर्यो थको पोताने घेर जतो रह्यो. पछी रात्रियें एकलो वनमांहे आवी सर्व साधुउ निद्रामां हता, तेमने पादु प्रहार दीधा, मुष्टियोना प्रहार दीधा, तेने वनदेवतायें हांक्यो पकड्यो. पछी तेना बेहु पग शक्तियें करी छेद्या. तेनी पीडाथी टलवलतो प्रजातें लोकोयें दीठो,तेनुं स्वरूप सर्व लोकोने जाणवामां आव्युं. तेवारें सर्व तेनी निंदा करवा लाग्या. एवी रीतें साधुउनी अवज्ञा करी, ते पापीष्ट मरीने पहेली नरकें जइ नारकीपणे ऊपनो. तिहांथी निकली कोइ दरिद्रीने घेर पासड एवे नामें पुत्र थयो. तिहां पूर्वकृत कर्मने दोषें करी मूक थयो. टूंटो थयो. जन्मतांज माता मरी गइ, अने जेवारें आठ वर्षनो थयो, तेवारें तेनो पिता देवशरण थयो. लोकोनुं दासपणुं करी पेट जरवा लाग्यो. सर्व जनोने अणगम

तो थयो थकों व्रती पण संसारमांहे घणो रझल्यो ॥ इति अग्निशर्माकथा ॥

हवे चालीशमी पृछानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ जो वाहइ निस्संसो, छिन्नवायंपि डुखियं जीअं ॥ सीयंतगत्त संधिं, गोयम सो पंगुलो होइ ॥ ५४ ॥

नावार्थः—जे पुरुष निःशंकपणे अथवा निःस्तृंश एटले निर्दय छतो वृषन्नादिक जीवनी उपर नार नाखीने खेडे (वाहइ के०) नार वहावे तेथी छांत एटले जेमनां अंग त्रूटी गयां छे, उद्घात एटले जेमनो संचोज श्वास छे अने शरीरनी संधियो जेनी डुःखित छे एवा डुःखिया वृषन्न कर्मकरादिक जीवोने जे डुःखी करे. हे गौतम! ते जीव मरीने पांगलो थाय. जेम सुग्रामवासी हालुकर्षणीनो पुत्र कर्मण नामें हतो, तेणें पूर्वला नवमां बलद अने हालीने घणा नूख्या तरस्या राख्या तेथी पांगलो थयो. तेनी कथा कहे छे.

सुग्रामग्रामें हालुकर्षणी छे, ते दयावंत संतोषी छे. चारा पाणीनो वखत थाय एटले हल खेडनार हालीने तथा बदलने छोडी चारो पाणी आपे, कदा कालें चारो पाणी हाजर न होय तो पोतें पण जमे नही, एवो नियम करेलो छे. तेनी हेमी नामें स्त्री छे, ते सरलचित्तवाली छे तेने कर्मण नामें पुत्र थयो, ते पूर्वकृत कर्में करी रोगियो पांगलो थयो छे. ते ज्यारें महोटो थयो, त्यारें खेत्रनी चिंता करवा माटें बलद उपर बेसीने खेत्रमां जाय, जातें घणो लोनी छे माटें तेना बाप करतां त्रिगुणी नूमि खेडावे, हाली तथा बलदोने खावानो वखत थाय तो पण तेने छूटा करे नही. चारा पाणीनी चिंता राखे नही. तेणे वर्षोवर्ष कर्षण करतां जे जे पाछले वर्षे धान्य नीपजतुं हतुं; तेथी आगले आगले वर्षे धान्य उछुं उछुं नीपजवा लाग्युं तेथी अनुक्रमें निर्धन थइ गयो. तो पण ते पापकर्म करतो रहे नही.

एकदा ज्ञानी गुरु आव्या तेमने वांदवा माटें गामना लोकोनी साथें ए पिता पुत्र पण गया. गुरुने पितायें पूछ्युं के महाराज! कया कर्मने योगें आ महारो पुत्र रोगीयो, पांगुलो अने निर्धन थयो छे? तेवारें गुरुयें कह्युं के एणें पूर्वले नवें कर्षण करतां नूख्या तरश्यां बलदोने वाह्या छे. तेमनी संधिनें घा दीधा छे, मार्या छे, अंतें पश्चात्ताप कीधो, तेथी मनुष्यपणुं पामी तहारो पुत्र थयो छे, एवी गुरुनी वाणी सांनली हलखेत्रना पाप आलोइ बापें दीक्षा लीधी अने कर्मणें श्रावकधर्म आदर्यो, आयु पूरण करी

बेहु देवलोकनां सुख पाम्या. ए निर्दयता ऊपर कर्मणहालीनी कथा कही ॥

हवे एकतालीशमी तथा बेहेंतालीशमी प्रश्नाना उत्तर, बे गाथायें करी कहे छेः—

॥ गाथा ॥ सरल सहावो धम्मि, व माणसो जीव रक्कण परोय ॥ देव गुरुसंघनत्तो, गोयमरूवस्सियो होइ ॥ ५५ ॥ कुडिलसहावो पाव, प्पिउ अजीवाण हिंसण परोअ ॥ गुरु देवय पडिणीउ, अच्चंत कुरूवउ होइ ॥ ५६ ॥

नावार्थः—जे पुरुष छत्रदंमनी पेठें सरलस्वनावी होय अने धर्मने विषे जेनुं चित्त होय तथा जे मनुष्य जीवनी रक्षा करवामां तत्पर होय तथा जे देव, गुरु अने संघनी नक्ति करवामां तत्पर होय, हे गौतम! ते जीव रूपवान् थाय ॥५५॥ तथा जे जीव स्वनावें कुटिल होय एटले कुटिलस्वनावी होय अने पापप्रिय होय, एटले तेने पाप करवुंज गमे, अने जीवनी हिंसा करवामां तत्पर होय, तथा देव अने गुरुनी ऊपर द्वेष वहे, देवगुरुनो प्रत्यनीक होय ते पुरुष मरीने अत्यंत कुरूपवंत थाय ॥ ५६ ॥ जेम पाटणनगरमां देवसिंहशेठनो पुत्र जगसुंदर सर्वलोकोने मनं गमतो रूपवंत थयो. अने तेनोज बीजो नाइ असुंदर हतो. ते कालो कूंबडो डुर्नागी डुःस्वर लंबकंठो, महोटा पेटवालो, कुरूपो थयो. ए बेहुनाइनी कथा कहे छेः—

पाटण नगरें देवसिंहशेठ धनवंत वसे छे. तेने देवश्रीनामें स्त्री छे, ते सरल अने स्नेहाली छे. तेणे एकदा पाछली रात्रे एक आंबानो वृक्ष शाखा माल फूलें नरेलो आकाशथी ऊतरतो पोताना मुखमांहे संचरतो स्वप्नामां दीठो. एटलामां जाग्रत थइने पोतांना नरतारने ते सुपनानी हकीगत कही. नरतारें सांनलीने स्त्रीने कह्युं के तुऊने फलवंत गुणवंत आंबानी पेठें अनेक जीवोनुं आधारनूत एवुं पुत्ररत्न थाशे. ते सांनली स्त्रीयें हर्षवंत थइ. अनुक्रमें पूर्णदिवसें लक्षणवंत रूपवंत पुत्र जन्म्यो. तेना पितायें वधामणां कीधां कुटुंब जमाडी. दीधां वस्त्रने साडी. हरख्यां बापने माडी. एनुं जगसुंदर नाम यथागुणे दीधुं. शेठनुं वंछित काम सीधुं. नीसालें नण्यो. कलाउ शीख्यो, नाग्य, सौनाग्य, विनय, विवेक, चातुर्य, औदार्य, गांनीर्य, धैर्यादिक गुणवंत थयो. ते यौवनवय पाम्यो तेवारें तेणें अनेक कन्या सार्थे पाणिग्रहण कीधुं, देव गुरु संघनी नक्ति करे, जिनधर्म आदरे, दान देइ पुण्यनंमार नरे, दीन डुःखीनो उद्धार करें, एवो गुणवंत ते कुमार थयो.

हवे वली एकदा देवश्रीयें शेषरात्रियें दवदग्धवृक्ष मुखमां पेसतो सुप नामां दीठो, मातुं सुपनुं जाणी नरतार आगल कह्युं नही. अनुक्रमें कालो, चीपडो, दंतालो, तुच्छकान वालो, जेनुं हैयुं, पेट, स्थूल, बाहु जेनी टूंकडी, जांघ लांबी, शरीरें घणां रोम, दुर्नागी, दुःस्वर, एवो पुत्र प्रसव्यो. लोकोयें तेनुं रूप देखी असुंदर एवुं नाम आप्युं. ते पुत्र मूर्ख धर्महीन थयो. पापें कूडो, कोइ न कहे रूडो, एवो दुर्नामी थयो. तेथी तेने कोइ कन्या आपे नही. द्रव्य आपवा मांड्युं तो पण कोइकन्या आपवा कबूल थयो नही.

तेवारें पितायें कह्युं के हे वत्स! तें पूर्वले नवें पुण्य कीधुं नथी, तेथी आवो कुरूप थयो छो. अने वांछित पामतो नथी माटें हमणां धर्मकरणी कर. एवी शीखामण दीधी, तो पण तेने धर्म करवानी इच्छा थइ नही.

एकदा ते नगरें चार ज्ञानना धणी एवा सुव्रतनामा आचार्य आवी समोसर्या तेमने देवसिंहें पुत्रो सहित जइ वंदना करी. गुरुयें धर्मोपदेश दीधो, ते सांनली जेम मेघगर्जारिव सांनली मोर हर्ष पामे, तेम सर्व हर्ष पाम्या. देशनानंतर शेठें पूछ्युं के हे नगवन्! महारा बे पुत्रो छे, तेमां एक महोटो पुत्र गुणवंत सोनागी पुण्यवंत थयो अने बीजो लघुपुत्र दुष्ट दुर्नागी पापरुचि माठो थयो. माटे तेणें शुं पुण्य पाप कर्यां हशे? ते कहो.

गुरु कहेवा लाग्या के हे शेठ! एहीज नगरें आ नवथी पाछले त्रीजे नवें एक जिनदत्त एवे नामें वणिक रहेतो हतो, ते सरलस्वनावी जीवरक्षा करवामां सर्वत्र प्रसिद्धि पाम्यो. वली देव गुरु अने श्रीसंघनी नक्ति करवामां पण अग्रेसर हतो. तेथी सर्वलोको तेनां वखाण करवा लाग्यां. वली तेहीज नगरमां एक शिवदेव नामें वणिक महामिथ्यात्वी रहेतो हतो, ते देव गुरु अने संघ उपर द्वेष राखी तेमनी हांसी करे मनमां कूड कपट राखे ते यद्यपि जिनदत्तनो मित्र हतो. तथापि जीवहिंसा करतो रहे.

तेमिथ्यात्वी मरीनें पहेली नरकें गयो अने जिनदत्त श्रावक मरीने पहेले देवलोकें देवता थयो. तिहां देवतानां सुख नोगवी आयु पूरुं करीने तहारो जगसुंदर नामा महोटो पुत्र थयो अने शिवदेवनो जीव नरकथी निकली तहारो असुंदर नामें न्हानो पुत्र थयो छे. एने देवगुरु उपर द्वेष हतो निर्दयी हतो, तेथी कुरूपो थयो छे. हजी पण धर्मद्वेषी छे, माटें घणो संसारभ्रमण करशे. एवी गुरुना मुखथी पूर्वनव संबंधी वात सांनलतां जगसुंदरनें

जातिस्मरण ज्ञान ऊपनुं,तेथी हर्ष पाम्यो. घणो काल श्रावकधर्म आराधी अंतें दीक्षा लइ मोक्षसुख पाम्यो ॥ इति देवगुरु अने श्रीसंघनीभक्ति ऊपर जगसुंदर अने असुंदरनी कथा ॥ ४२ ॥

हवे त्रेंतालीशमी प्रश्नानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥गाथा॥ जो जंत दंभ कस रज्जु,खग्ग कुंतेहिं कुणइ वियणाउ ॥ सो पावो निक्करुणो, जायइ बहु वेयणो पुरिसो ॥ ५७ ॥ भावार्थः—जे पुरुष यंत्र, लाकडी,दंभ,परोणा,काश,रज्जु ते नाडी,दोरी.खड्ग, ते खांमा;कुंतणा,अने भा लां, इत्यादिक हथीयारें करी अनेरा जीवोने वेदना करे, ते पापी निर्दयी पुरुष जन्मांतरें घणी वेदना पामे ॥ ५७ ॥ जेम मृगगामें विजयराजानी मृगाराणीनो पुत्र लोढो एवे नामे हतो, तेणें पाछले भवें घणागाम ऊपर अधिकारी होवाथी घणालोकोने अत्यंत दुःखी कर्या. तेथी तेहीज भवमां तेने जलोदर कोढ प्रमुख शोल माहारोग ऊपना. मरीने पहेली नरकें गयो. तिहांथी लोढाने भवें नपुंसक थयो. पांचे इंद्रियोथी रहित अत्यंतवेदना ख मतो महा दुःखी थयो, तेनी कथा कहे छेः—

एहीज भरतक्षेत्रें मृगगामें विजयराजा हतो. तेनी मृगावती राणी छे. तेमने संसार सुख भोगवतां घणो काल वीत्यो.

एकदा श्रीमहावीर तीर्थंकर विहार करता भव्यजीवोने प्रतिबोध देता श्रीगौतमस्वामी प्रमुख अनेक साधुउना परिवारें परवस्थायका तिहां समो सर्या. देवतायें त्रण गढनी रचना करी आगल फूलपगर भर्या. बार पर्षदा मली परमेश्वरनी वाणी सांभलवा बेठी. एवा अवसरें एक जात्यंध पुरुष जातें कोढीयो छे, तथा हाथ पग नाक आंगली, सर्व गली गयां छे, दुःस्वर दुर्भग एवो छे ते लोकें निंदातो थको तिहां समोसरणमां आव्यो. तेनें देखी गौतमस्वामीयें परमेश्वर प्रत्यें पूछ्युं के हे भगवन्! ए जीव कया अशुभ कर्मने योगें महादुःखी थयो छे? भगवानें कह्युं एणें पूर्वभवें घणां पाप कर्म कर्यां छे,तेथी दुःखीयो थयो छे. वली गौतमस्वामीयें पूछ्युं के महारा ज! ए जीवथी पण हजी अधिक दुःखीयो जीव कोइ हशे? के जेने देखी लोक दुगंछा सूग करे, निंदे,काहाढी मूके! भगवान् बोल्या के हे गौतम! एज गामना राजानो पुत्र जगतमां अत्यंत दुःखीयो छे, जे माटें ते बहेरो पांगलो नपुंसक छे. हाथ,पग,आंख,कान,नाक,भ्रकुटी,मुख,एमांनां अंग तो

तेने कांइ बेज नहीं. जेनी आठ नाडी, मांहि वहे बे अने आठ नाडी, बाहिर वहे बे. आठ नाडी लोहीनी अने आठ परूनी वहे बे. महादुर्गंधित बे, शरीर लोढो बे, सदैव लोमें करी आहार लिये बे. ते इहांज नरकनां दुःख जोगवे बे.
ते सांजली गौतमस्वामीने कौतुक ऊपन्युं, तेवारें तेने जोवा माटें कहेवा लाग्या के हे स्वामी! तमें आज्ञा आपो, तो हुं तेने जोइ आवुं. परमेश्वरे आज्ञा आपी गौतमस्वामी राजाने घेर आव्या. राजा राणी बेहु हर्ष पाम्यां. राणी बोली माहाराज! आज अमारा ऊपर अनुग्रह कीधो. श्री गौतमजी मृगावती प्रत्यें बोल्या के तमारो पुत्र महारे जोवो बे. तेवारें राणीयें पोताना चार पुत्र जे गुणवंत हता, तेने तेडीने गौतमस्वामीने वंदाव्या, श्री गौतमें धर्मलाज दीधो. वली राणीयें कह्युं के आज अनुग्रह कीधो. तेवारें श्री गौतमें मृगावतीने कह्युं तमारो जे शिलासरिखो पुत्र बे, ते हुं जोवा आव्यो बुं. राणी बोली के हे जगवन्! ते पुत्र तो कोइ न जाणे तेवी रीतें अमें जोंयरामांहे बानो राख्यो बे, ते तमें शी रीतें जाण्युं? श्रीगौतम बोल्या अमारो स्वामी श्रीमाहावीर बे, ते सर्वज्ञ बे, तेमना कहेवाथी जाण्युं. त्यारें राणीयें कह्युं के हे जगवन्! क्षणेक पडखो, तो जोजन वेलायें वस्त्राजरण मूकी गाडलीयें आहार घाली जोंयरे जइशुं, त्यारें तमने तेडी जइ देखाडशुं. पढी राणी गाडी लइ श्रीगौतमस्वामीने तेडी जोंयरामां गइ. तिहां गौतमप्रत्यें कह्युं के हे जगवन्! इहां उग्रदुर्गंध बे, माटें मुहपत्तियें मुख नाक बांधीने अंदर आवो. तिहां जइ जोंयरानुं कमाड ऊघाडयुं. त्यारें तिहां खाधेलुं अन्न पण पाबुं वले, एवो दुर्गंध आववा मांम्यो. राणीयें सादरी पाथरी तेनी ऊपर आहार मूकी लोढाने ऊपर लइ आवी. तेणें आहारसंज्ञाथी रोमें करी आहार लेवा मांम्यो, तेवोज ते आहार परु थइने निकलवा लाग्यो. एवुं दुःख जोइ राणीने वंदावी. श्रीगौतमस्वामी महावीर पासें पाबा आवी कहेवा लाग्या के जेहवुं दुःख तमें कह्युं, तेवुंज में दीठुं, माटें हवे कहो के एणें शुं महोटुं पाप कर्युं हशे, के जेथी ए एवो दुःखी थयो बे?
प्रजु कहेता हवा हे गौतम! कृतद्वारी नगरें धनपतिराजाने विजयवर्द्धन गोकुल बे, तेने पांचशें गाम आव्यां, तेनी संजाल माटें एक राठोड अधिकारी करी मोकल्यो, ते राठोड रौद्रपरिणामी कुड्बुद्धि महापापकर्मी बे, पांचशें गामनी चिंता करे, अधिका कर लीये, नवा कर बेसाडे, लो

कोने कूडां आल आपी अन्याय थापी दंम करी निर्द्रव्य कीधां, अधिकी उंडी वात करी लोकोनें ताडणे करी ताडबा करे,बांधीने मार आपे, ऊक लंबे, डुहवे. एवी रीतनां वली वली पाप करतो रह्यो. तेथी तेज जवमां तेने कास, श्वास, ज्वर, दाह, कुखशूल, जगंदर, हरस, अजीर्ण, आंखवेदना, कानवेदना, पूंठशूल, खस,कोढ,जलोदर,वेग अने वायु, ए शोल महारोग ऊ पन्या,तेणें करी अति उपद्रव पाम्यो थको आर्त्तरौद्रध्यान धरी मरण पामी पहेली नरकें गयो. तिहां छेदन, नेदन, ताप, ताडनादि अनेक कष्ट, सहन करी तिहांथी निकली विजयराजानो पुत्र थयो छे. नपुंसक,डुःखीयो घणी वेदनायें पीड्यो थको छे. एणे एक जवने पापें करी घणां डुःख दीठां ॥ इति अकृत्य करवा ऊपर मृगापुत्रनी कथा ॥ ४३ ॥

हवे चुम्मालीशमी पृछानो उत्तर, एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ जे सत्ते विअणत्ते,मोआवइ बंधणाउ मरणाउ ॥ कारुस्स पुस्स हियउ, णो असुहा वेयणा तस्स ॥ ५८ ॥

जावार्थः—जे पुरुष पीडायुक्त एवा (सत्ते के०) जीवोने (बंधणाउ के०) सांकल बंधनरूप (वियणत्ते के०) वेदनाथकी तथा (मरणाउ के०) मरण थकी (मोआवइ के०) मूकावे छे, (कारुस्सपुस्सहियउ के०) दयायेंकरी पूर्ण एवुं छे हृदय जेनुं एवां जे होय (तस्स के०) ते जीवने जवांतरें कोइ पण (असुहा के०) असुहामणी एवी (वेयणा के०) वेदना न होय ॥५८॥

जेम सुप्रतिष्ठित नगरें चंदननामें शेठ मिथ्यात्वी हतो, पछी दृढ प्रतीति वालो श्रावक थयो, तेनो पुत्र जिनदत्त हतो, ते सर्वेकोइने अजीष्ट वल्लन थयो. अत्यंत सुख पाम्यो, ते चंदनशेठ अने जिनदत्तनी कथा कहे छेः—

सुप्रतिष्ठित नगरें चंदननामें व्यवहारीयो वसे छे. ते मिथ्यात्वी छे, परंतु परिणामें जड्क छे, तेनी वाहिणी नामें स्त्री छे. एकदा शांत, दांत, गुणने धरता धर्मवंत क्रियावंत,एवा बे साधु तेने घेर आव्या. तिहां प्राशुक उपाश्रय जाणी शेठनी आज्ञा लइ तेमां रह्या, ते साधुनां संसर्गें शेठ तथा तेनी स्त्रीयें जिनधर्म पामीने व्रत पच्चरकाण नियम लीधा. तथा साधुउना संसर्गथकी शेठनी गोत्रदेवी पण सम्यक्दृष्टिवाली थइ.

हवे ते साधु, अन्यत्र विहार करी गया, शेठ पोतानी स्त्री सहित पहेलुं व्रत आराधवा लाग्यो. परंतु गृहस्थरूप वृक्षनुं फल जे पुत्र, ते शेठने

नथी तेणें करी शेठ शेठाणी बेहु चिंतातुर रहे छे. पछी पुत्रने अर्थें कुलदेवीनी आराधना करवा माटें कंकू, कपूर, सुखड अने फूलें करी कुलदेवीने पूजे, नूमियें शयन करे, तपस्या करे. एम करतां कुलदेवी प्रसन्न थइ, प्रत्यक्ष आवीने कहेवा लागी के हे शेठ ! जे तुं माग, ते तुजने हुं आपुं. तेवारें शेठें पुत्र माग्यो. गोत्रदेवीयें चिंतव्युं जे प्रथम तो ए शेठें जे साधुपासेंथी पहेलुं व्रत लीधुं छे, ते साचुं पाले छे के नथी पालतो ? धर्ममां दृढ छे, के नथी ? तेनी परीक्षा करुं. एम मनमां विचारीने देवी कहेवा लागी के हे शेठ ! तुं जो जीववानी वांछा करतो हो, तो एक जीव मारीने तेनुं बलिदान मुजने आप. तो हुं तुजने पुत्र आपीश ! अने जो तेम नहिं करीश तो तम्मने स्त्री नरतार बेहुने कुशल नथी. ते सांजली शेठें कह्युं के तुं एम कां बोले छे ? जेमाटें नलो पुरुष जे होय, ते कांइ लीधेलो नियम नंग करे नही, अने में तो प्राणातिपातनो नियम लीधो छे, माटें पुत्र विना सखुं. पण नियमनुं खंमन हुं करीश नही. ते सांजली देवी कोप करती शेठनी स्त्रीने चोटले पकडी तरवारें करी मारवा लागी. स्त्री पण रडती थकी कहेवा लागी जे अरे देवि ! मारी रक्षा करो ! रक्षा करो ! ! तो पण देवीयें ते स्त्रीनुं मस्तक छेदी नाख्युं. वली शेठने कहेवा लागी जे तुजने पण एवीज रीतें मारी नाखीश ! वली कह्युं के अरे दुष्ट ! दुर्बुद्धि ! आपणा कुलक्रमागत जीवघात करवी, बलि आपवानो जे चाल चालतोज आवे छे, तेनो तें नियम शा वास्ते लीधो ? माटें हवे पुत्रनी वात तो लांबी रही, पण तहारे पोताने जीववानो पण संदेह छे, माटें हठ कदाग्रह मूकीने मुजने बलिदान आप. एवां देवीनां कटुक वचन सांजल्यां, तो पण शेठ क्षोन पाम्यो नही. अने देवीप्रत्यें कहेवा लाग्यो के मरवुं तो एकवार छेज माटें पछी मरीश, ते करतां हमणांज नलें महारी नाख. पण हुं निर्दयी थइने जीवघातपणुं अंगीकार करीश नही ! एवी शेठनी दृढता जोइ देवी हर्ष पामी शेठनें स्त्री जीवती देखाडीने कहेवा लागी के हे शेठजी ! तुं धन्य छो ! तुं माहासाहसिक अने पुण्यवंत छो. तहारुं पहेलुं व्रत शुद्ध छे, के नथी. तेनी में परीक्षा करी. ते संबंधि महारो अपराध तुं क्षमा करजे. तुं महारो साचो साधर्मी नाइ छो, माटें हुं तुजने उपकार करीश. तुं श्रीजिनेश्वरनी नक्ति कर. जेथी तुजने योग्य पुत्र थशे. तेनुं जिनदत्त नाम राखजे. एम कही

गोत्रदेवी अदृश्य थइ गइ. केटला एक दिवस पछी शेठनी स्त्रीयें पुत्र प्रसव्यो तेनी वधामणी आवी. तेथी शेठें महोटो महोत्सव करी तेनुं जिनदत्त एवुं नाम पाड्युं. निशालें पोसालें नण्यो. सर्व कलाउ शीख्यो. धर्मनो जाण थयो. यौवन वयें महोटा कुलनी योग्य कन्या परणावी. ते जिनदत्त पिताने वल्लन छे, नीरोगी छे, नित्यप्रत्यें देवपूजा करे छे.

एकदा वनमांहे ज्ञानी गुरु पधास्या, तेमने शेठें पुत्र सहित जइ वांद्या. धर्मोपदेश सांनल्यानंतर चंदनशेठें पूछ्युं के हे नगवन्! महारो जिनदत्तपुत्र नीरोगी महासुखी सर्वने स्नेहालु, कये कर्मे करी थयो छे? ते कहो. ते वारें गुरु बोल्या के हुं जे कहुं छुं, ते सावधान थइने सांनलो. एज नगरमां धरणो वाणीयो रहेतो हतो, तेने जिनदत्तनो जीव साधारण एवे नामें पुत्र हतो. ते पिता पुत्र बेहु दयावंत हता, तेमां साधारण तो निष्पाप व्यवसाय करतो. मृगलां, छागं, तित्तर, चीडां, बांधेलां मूकावतो. बंधीखाने पडेलां मनुष्योने पोतें घरनुं द्रव्य आपी मूकावतो. मरता प्राणीने छोडावतो. देवगुरु धर्मने संसर्गें धर्मरंगें रंगायो रहेतो, श्रीशत्रुंजयतीर्थें तेणें यात्रा कीधी. आयु पूर्ण करी देवलोकें ते देवता थयो. तेमां धरणानो जीव तमें छो अने साधारणनो जीव तमारे घेर जिनदत्त पुत्र थयो छे. महाधनवंत नीरोगी सुखीयो थयो, ते सर्व पूर्वपुण्यने प्रनावें जाणवो. एवी गुरुना मुखनी वाणी सांनली बेहु जणने जातिस्मरणज्ञान ऊपनुं. पूर्वला नव दीठा. वैराग्य ऊपनो, तेधारें दीक्षा लेवा तत्पर थया. गुरुयें कह्युं के हजी तमारुं आयुष्य घणुं छे. अने नोगावली कर्म पण घणां छे, तेमाटें तमें सविशेष श्रावकधर्म करो. ते सांनली पिता पुत्र बेहु गुरुने वांदीने घेर आव्या. अनेक प्रकारनां पुण्य कीधां. सुकृत कीधां, दान दीधां, व्रत लइ बेहु जण देवलोकें देवता थया. तिहांथी चवी मनुष्य जन्म पामी मोक्ष पामशे. इति जिनदत्त कथा ॥

हवे पीस्तालीशमी प्रश्नानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छे.

॥ गाथा ॥ जया मोहोदउ तिव्वो, अन्नाणं खु महप्नयं ॥ पेलवं वेयणिज्जं च, तया एगिंदियत्तणं ॥ ४९ ॥ नावार्थः–(जया के०) जे वारें जीवनें (तिव्वो के०) तीव्रगाढ (मोहोदउ के०) मोहनो उदय तथा (अन्नाणं के०) अज्ञान ते सम्यक्ज्ञाननो अनाव होय, (तया के०) तेंवारें ते पंचेंद्रिय जीव होय, तो पण तेने (महप्नयं के०) मोहोटुं छे नय जेमां एवुं त

था (पेलवं के०) तुच्छ, असार अने (वेयणिज्जं के०) वेदनीय रूप एवुं (एगिंदियत्तणं के०) एकेंद्रियपणुं प्राप्त थाय छे., ए (खु के०) निश्चें जाणवुं ॥

जेम मही सार नगरें मोहकनामें धनवंत हतो, पण अत्यंत कृपण थको लक्ष्मी कुटुंबनी घणी मूर्छा करी मरण पामिने एकेंद्रियमां जइ कृपनो. घणो काल संसारमां नमशे. इहां मोहक गृहस्थनी कथा कहे छे ॥ देवकोटि समायुक्तं,वसुधाधिपसेवितम् ॥ पुण्यातिशयसश्रीकं,रक्तवर्णं जिनं स्तुवे ॥१॥

महीसार नगरें मोहकनामें कोइ गृहस्थ वसे छे. तेने मोहिनी नामें स्त्री छे. तेना पितानी ऊपार्जित लक्ष्मी घणी छे. लक्ष्मीनो मोह अपार छे. रात्रिदिवस सावधान पणे रहे, रखे ने कोइ महारुं धन लइ जाय? एवी चिंता करतो छानो नोंयरामां निधान राखे. वली तिहांथी ऊपाडी बीजे स्थानकें संचय करे, एम लक्ष्मीने राखवाना अनेक उपाय करे, रात्रियें सूवे नही. अति कृपण पणे कदापि जमे नहीं तो नलें, पण आखो दिवस धन साचववानी पछवाडे नम्या करे. जाडां, मेलां, कपडां पहेरे. कोइने दान न आपे,कोइने माग्युं उछीनुं पण न आपे. लोजने लीधे सगा, गुणवंतने पण न उलखे ॥ चोपाई ॥ किस्युं करो रे कृपण वखाण, नहिं उलखे आव्या घर जाण ॥ एह तिलें तेल नहिं लगार, एहथी वांछे तेह गमार ॥ १ ॥

हवे शेठनी स्त्री मोहिनीने पुत्र थयो. तेनुं लक्षण एवुं नाम दीधुं ॥ चोपाइ ॥ मोहिनीने पुत्रनो मोह घणो, हाथथी न मूके बालक परो ॥ वहेलो नण्यो विवेकी बुद्धिमंत, सुलक्षण कलायें हुउ बलवंत ॥ १ ॥ हवे ते पुत्र बापथकी विपरीत गुणवालो थयो. जगतमां कहेवत छे के जेवो बाप तेवो बेटो थाय. ए वात जूठी छे,जे माटें एनो बाप तो निर्विवेकी कृपण छे अने पुत्र तो विवेकी उदार थयो. साते क्षेत्रें धन वावरे, ते जोइ तेनो पिता घणो डुहवाय अने कहे के हे वत्स! धन कांइ फोकट आवतुं नथी. ए तो महा डुःखें उपार्जन करेलुं छे, ते सांनली पुत्र कहे हे पिताजी! धन घणुंए छे,तमें चिंता करशो नही. तेवारें पितायें कह्युं के हे वत्स! पाणीथी नरेलुं सरोवर पण ढोरें पी जातां सूकाइ जाय. तेवारें पुत्रें कह्युं के ज्यां लगण आपणुं पुण्य प्रबल छे, त्यां लगण कदापि खूटे नही ॥ उक्तं च ॥ जइ सुपुत्त तो धन कां संचे,जो कुपुत्त तो धन कां संचे ॥ अचलरिद्धि तो धन कां संचे, जो चलरिद्धि तो कां धन संचे ॥१॥ लक्षी

सहाव चवला, तह चवलं च रायसम्माणं ॥ जीवोवि तह चवलो, उवयार विलंबणा कीस ॥ १ ॥ माटें जेम कूवानां पाणी, वाडीनां फूल, गायनां दूध, लेतां थकां घणां होय, तेम दान देतां थकां लक्ष्मी पण वृद्धि पामे. इत्यादि पुत्रें समजाव्यो, तो पण शेठ धननो मोह मूके नही. मनमां विचारे जे आ महारो पुत्र कांइ जाणतो नथी.

एकदा घरडामां चोर लोको खात्र पाडी धन लइ गया. ते सांजली शेठने मूर्छा आवी गइ, रोवा बेठो. जमवा बेसे नही. तेने पुत्रें कह्युं के ए लक्ष्मी असार अने चपल छे, माटें तमें जमो. एम घणुं समजावी जमाड्यो, बीजें वर्षे शेठनी स्त्री मोहिनी मरण पामी. तेवारें शेठ, स्त्रीना मोहें करी वज्रें हणायेलो जेम दुःखी थयो होय, तेम दुःखी थयो तेनां गुण संजारी संजारीने रुदन कस्या करे, जमे नहीं. तेने दुःखें शेठ मरण पाम्यो. पण पुत्र सुजाण छे, संसारनुं स्वरूप जाणी शोक न करे. विचारे जे महारो बाप मोहें करी मरण पाम्यो माटें ए मोह छे, ते जीवते विष विना मरण छे. ए मोह त्रिदोष विना सन्निपात छे, ए मोह न होय, तो जीव सदैव सुखीयोज होय. वली विवेक जे छे, ते सूर्यविना पण अजवालुं छे, दीपकविना प्रकाश छे, रत्नविना कांति छे, फूलविना फल छे, माटें विवेक महोटी वात छे. एवी समजण राखतो विवेकी थको धर्म कस्या करे.

एकदा ते नगरें श्रुतकेवली पधास्या, तेमने लक्ष्मणें वांदीने पूछ्युं के महाराज! महारो पिता मरी क्यां गयो हशे? गुरु बोल्या हे वत्स! तहारो पिता धन कुटुंबनो मोह करी अज्ञानने वशें एकेंद्रिय पृथ्वीकायमां जइ उपन्यो छे. वली अप्काय, तेउकाय, वाउकाय अने वनस्पतिकायमांहे घणुं संसार चक्रमां भ्रमण करशे. ते वात सांजली वैराग्य पामीने लक्ष्मणें दीक्षा लीधी. तेने रूडी रीतें आराधीने स्वर्गादिकनां सुख पाम्यो ॥ इति मोहक कथा ॥ ४६ ॥

॥ हवे छेंतालीशमी अने सुडतालीशमी पृच्छाना उत्तर कहे छेः—

गाथा ॥ नय धम्मो नय जीवो, नय पर लोगुत्ति नेय कोय रिसी ॥ इय जो मन्नइ मूढो, तस्स थिरो होइ संसारो ॥ ६० ॥ धम्मोवि अत्थि लोए, अत्थि अहम्मोवि अत्थि सवन्नू ॥ रिसिणोवि अत्थि लोए, जो मन्नइ सो न संसारी ॥ ६१ ॥ जावार्थः— धर्म नथी, जीव नथी, परलोक नथी, कोइ रुषीश्वर नथी, एवी रीतें जे नास्तिक पुरुष माने, तेने संसार घणो

स्थिर होय. मोक्ष ढूकडो न होय ॥ ६० ॥ तथा लोकमांहे धर्म छे, अ धर्म पण छे, सर्वज्ञ पण छे, अने लोकमांहे ऋषि पण छे. जे जीव, एवुं माने ते जीव, संसारी न होय, अल्पसंसारी थको तरत मोक्षे जाय ॥ ६१ ॥

जेम राजगृही नगरीयें एक पंडितनी पासें एक शूर अने बीजो वीर ए बे शिष्य भण्या. तेमां शूर तो धर्ममार्ग उत्थापवाथी तिहां पण दुःखीयो थयो अने वली घणो संसारमां भमशे. कुसंगतिने लीधे नास्तिकवादी थयो. अने वीर तो सद्गुरुनी संगतिथी जाणकार थयो धर्ममार्ग स्थापतो तिहांज महत्त्व पामीने स्वल्पकालमां मोक्ष पामशे. तेनी कथा कहे छेः—

राजगृहीनगरीयें एक शूर अने बीजो वीर, ए बे गृहस्थो छे, ते बेहु जण न्हानपणमां एकज गुरुनी पासें भण्या. परंतु पाछलथी शूरने नास्तिक लोकोनी सोबत थइ तेथी "सरिसा सरिसेन रचंतिः" एटले मनुष्य, पोतानी समानसंगति वालो मलवाथी आनंद पामे छे. तेथी दुःसंगें कुग्रंहकदाग्रही थयो. उद्धतपणे धर्म उत्थापे, पोताना डाहापण आगल बीजाने तृण समान गणतो रहे, लोको सुखना अर्थनी वात कहे, तो तेमनुं कह्युं माने नही.

एकदा तिहां कोइ सुदत्तनामा गुरु चार ज्ञानना धणी पधार्या, तेमने धर्मार्थी लोक तथा वीर, ए सर्व वांदवा गया. अने शूर तो महाअहंकारी थको गुरुनुं माहात्म्य सांभली मनमां ईर्ष्या आणतो तिहां आव्यो. गुरुने कहेवा लाग्यो के तमें लोकोने शा माटें विप्रतारो छो ? जो तमारामां शक्ति होय, तो महारी साथें वाद करो. ते सांभली गुरुजीनो एक शिष्य तेने कहेवा लाग्यो के अरे मूर्खा ! सर्वज्ञसमान एवा आ महारा गुरुनी साथें तुं शुं वाद करीश ? हुंज तहारो अहंकार मूकावीश, अने तुजने उत्तर देइश. परंतु सभ्य, सभापति, वादी अने प्रतिवादी, ए चारें करी युक्त चतुरंग वाद कहेलो छे, माटे ते चतुरंग जो वाद थाय, तो करुं ! शूरें पण कबुल कर्युं. पछी बीजे दिवसें सवारमां चतुरंगनुं स्थापन थवाथी वाद करवा मांड्यो.

तिहां शूरें कह्युं शरीरमां बीजो अनेरो कोइ जीव नथी, अने ते जीव नथी तो धर्म पण नथी जो धर्म नथी, तो परलोक पण नथी. जेम गाम विना सीम न होय, जेम स्त्रीविना पुत्र न होय, तेम जाणी लेवुं. माटें पृथ्वी, पाणी, अग्नि, अने वायु ए पांच माहाभूतना संयोगें आत्मा थाय छे. जेम धावडी महुडां मीठुं गोल अने पाणीथी मदशक्ति होय छे तेम जाणी लेवुं. बीजुं आकाशना

फूलनी पेरें कांइज नथी. तो जीव क्यां छे? के जेने सुख पामवांनी वांछा करीयें? छतुं सुख छांमीनें संदेहयुक्त आगला अर्थने क्यां जोवा जाइयें?

तथा सुख दुःख सर्व कर्मे करी होय छे,ए वार्त्त पण अणमलती छे. जेमाटें एक पाषाण नित्य सुखड अने फूलें करी पूजाय छे अने एक पाषाणनी ऊपर नित्य विष्टा नाखीयें तो हवे ए पाषाणें शुं सारुं मातुं कर्म आचर्युं छे? तेंम प्राणीमात्रने पण सुखदुःखनुं कारण कांइज नथी. तप जप कष्टक्रिया जे कांइ करीयें,ते सर्व क्लेशरूप फोकट जाणवी. एटली वात,शूर बोल्यो.

हवे शिष्य ए वातनो उत्तर आपे ले: हे शूर! तुं जे कहे छे, के जीव नथी तो हुं सुखी छुं, हुं दुःखी छुं, ए वातनो जाणनार कोण छे? जेम सुखड लगाडवाथी हर्ष पामीयें, कांटो लागे दुहवाइये छैयें, तेनो जाणनार तो जीवज छे.एतो प्रत्यक्ष देखाय छे.जो तह्मारा कहेवा प्रमाणें जीवज नथी तो पिता प्रमुख वडेरांना नाम पण तह्मारे कहेवां न जोइयें. तथा कोप, प्रसाद, शोक, भूख, तृषा, तृप्तो,पीड्यो. ए वात अनुमानें जीवजाणे छे, माटें जीव छे. तथा तें कह्युं जे पांच माहाभूत छे तेज आत्मा छे,ते पण असत्य छे केम के? पांचभूततो जड ले माटें जे जड,ते चैतन्य केम होय? जो वेलु घणी पीलीयें, तो पण तेमांथीतेल नीकले नही.

तथा तें जे शुभ अशुभ कर्म कांइज नथी, ए वात ऊपर पाषाणनो दृष्टांत कह्यो, ते पण अयुक्त छे जे माटें एक सुखी एक दुःखी.एक ठाकर,एक चाकर.इत्यादि सारा माठा जे छे, ते सर्व पोतपोताना कर्मे करी छे.तेमाटें जो तप संयमरूप धर्म करीयें,तो सफल थाय. धर्मना फल इहांज देखाय छे तेमाटें धर्म पण छे, परलोक पण छे अने सर्वज्ञ पण छे, तेना कहेला शास्त्रने योगें चंद्र सूर्य ग्रहण प्रमुख जाणीयें छैयें. माटें तुं कदाग्रह मूक. इत्यादि अनेक उत्तर प्रत्युत्तर आपीने शूरने निरुत्तर कस्यो. तेवारें राजायें शिष्यनी प्रशंसा करी अने शूरने राजायें कह्युं के हे पापी! तुं बापने नथी मानतो, सर्वने उछापे छे, तेथी सर्व कोइ अन्याय चोरी करशे अने राजा कोइने दंमशे नही? तेवारें सदाचारनी वात तो रहेशेज नही? एम कही राजायें रोष आणीने शूरने पकड्यो. तेने शिष्यें छोडाव्यो. तेवारें राजा फरी बोल्यो के जूउ आ शिष्यमां दयानो गुण केहवो छे? ए निरीह छे, साचो सदाचार कहे छे. एम कही पछी शूरने पोताना नगरमांथी काहाढी मूक्यो

अने बीजो वीर तो सन्मार्गें चालतो,धर्मनी स्थापना करतो तथा पुण्य छे, पाप छे, वीतराग देव छे, सुसाधु गुरु छे, इत्यादि कहेतो हतो. तेने राजायें मान्यो ते मरीने देवता थशे. अंतें मोक्षसुख पामशे. अने शूर नास्तिक वादी थको घणो संसार रझलशे ॥ इति धर्मस्थापने शूर अने धीरनी कथा ॥

हवे अडतालीशमी पृच्छानो उत्तर एक गाथायें करी कहे छेः—

॥ गाथा ॥ जो निम्मलनाणचरि, त्त दंसणेहिं विजूसिअ सरीरो ॥ सो संसारं तरिउं, सिद्धिपुरं पावए पुरिसो ॥ ६२ ॥

जावार्थः—जे पुरुष निर्मल ज्ञान चारित्र अने दर्शनें करी विजूषित शरीरवालो होय ते पुरुष संसार समुद्र तरीने मोक्षनगर प्रत्यें पामशे ॥ ६२ ॥ जेम अजयकुमार ज्ञानादिक आराधि मोक्ष पामशे. तेनी कथा कहे छे:—

मगधदेशें श्रेणिकराजा राज्य करे छे,तेनो पुत्र अने प्रधान अजयकुमार छे. ते चारबुद्धिनो निधान छे पोतामा बापना राज्यने वृद्धिवंत करे छे. तेने राजायें राज्य आपवा मांड्युं. परंतु ते पापना जयथी बीहितो थको लीये नही.

एकदा श्रीवीरप्रजु आवी समोसर्या. तेमने अजयकुमारें वांदीने पूछ्युं के हे स्वामी! छेहेलो साधु कोण थाशे! प्रजुयें कह्युं उदायिनराजा थाशे.

हवे पोतानो पिता श्रेणिक,राज्य मूकी दीक्षा लेतो नथी. तेवारें अजयकुमारें चिंतव्युं के जो हुं म्हारा पिताना आग्रहथी राज्य लइश,तो म्हाराथी पण दीक्षा लेवाशे नहिं माटें म्हारे राज्यथी काम नथी पण म्हारा बापें एवुं वचन म्हारी पासेंथी लीधेलुं छे जे मांहारी आज्ञाविना तहारे किहां पण जावुं नही, तेनो शो उपाय करवो? तेनी शोध करे छे.

एवामां माघ महिनाने दिवसें संध्यासमयें चेलणा राणीयें सरोवरनी पाल ऊपर एक साधुने काउस्सग्ग ध्यामें रह्यो दीठो,तेवारें राणीयें चिंतव्युं जे ए ऋषि रात्रियें टाहाड केवी रीतें सहन करशे? एवा विचारमां घेर आवी रात्रियें शय्यायें पोढी.तिहां पोतानो हाथ सोडनी बाहार रही गयो. अने जागीने जोयुं तो हाथ टाहाढो लागो, ते वखत साधु सांजरी आव्यो.

हवे श्रेणिक राजायें चिंतव्युं जे म्हारो अंतेउर सघलो विरुद्ध छे. पाछली रात्रियें अजयकुमारें आवी जुहार कीधो तेने श्रेणिकें कह्युं अंतेउरने प्रजाली नाखो. एम कही पोतें वीर जगवानने पूछवा गयो. पाछलथी अजयकुमारें चिंतव्युं जे अंतेउरमां तो चेलणादिक महासतीयो छे माटें आग

न देवाय !, एम विचारी एक जूनी हस्तिनी शाला हती तेनें आग लगाडी पोतें श्रीवीरना समोसरण भणी चाल्यो. तिहां श्रेणिकें श्रीवीरने पूछ्युं के हे भगवन्! महारी स्त्री चेलणा सती छे, किंवा असती छे? प्रभुयें कह्युं चेला महाराजानी पुत्रीयो साते सतीयो छे. ते सांभली श्रेणिक पाछो वळ्यो. गाम मां आग बलती दीठी. मार्गमां अभयकुमार मळ्यो तेने राजायें पूछ्युं के अंतेउरने आग लगाडी? अभयें कह्युं के, हां स्वामी! आग लगाडी तेवारें श्रेणिकें रोष आणीने कह्युं के तुं केम न बळ्यो? माटे तुं महारा थी दूर जा. तेवारें अभयकुमारें कह्युं के मने आपनो आदेश जोतो हतो सळी आगमांहे पेसी कार्यसाधन करशुं? एम कही समोसरणें जइ श्रीवीर नें हाथें दीक्षा लीधी, राजा श्रेणिक पण फरी समोसरण भणी चाल्यो. ते जेट लामां राजा श्रेणिक आव्यो, एटलामां तो अभयकुमार दीक्षा लइनें साधुना समुदायमां जइ बेठा. तेमने राजायें आवीने वांद्यो, अपराध खमाव्यो. अ भयकुमार, ज्ञान, दर्शन, चारित्र पाळी सर्वार्थ सिद्धविमानें पहोता. ते एका वतारी थइ मोक्षें जाशे, इति अभयकुमार कथा ॥ मह्हिारं वीररत्नं, श्रीदं गौ रतनुं मतम् ॥ जितैनसं सूर्यरम्यं, प्रणामामि मुहुर्मुहुः ॥१॥ एकाक्षरांतरितं नामत्रयं ॥ एम अडतालीश प्रश्नाना उत्तरो परमेश्वरें कह्या ॥

॥ गाथा ॥ जं गोयमेण पुठं, तं कहियं जिणवरेण वीरेण ॥ भवाभावेह सया, धम्माधम्मं फलं पयडं ॥ ६३ ॥ अडयालीसा पएह, त्तरेहिं गाहाए होइ चउसहि ॥ संखेवेणं भणिया, गोयम प्रश्ना महभावि ॥ ६४ ॥

भावार्थः—जे कांइ पुण्यपापनां फळ श्रीगौतमस्वामीयें पूछ्यां, ते सर्व जिनवर श्रीमहावीरस्वामीयें कह्यां.ते भो भव्यलोको ! तमें भावें करी सदैव धर्म अधर्मना फळने प्रगट विचारो धर्म आदरो ॥ ६३ ॥ हवे ए शास्त्रमां प्रश्नोत्तरनी गाथानी संख्या कहे छे. अडतालीश प्रश्नोत्तरें करी चोशठ गाथा थइ. एवो श्रीगौतमप्रश्ना रूपजे शास्त्र ते जो पण महाअर्थरूप छे तोपण आहीं संक्षेपथी कह्यो ॥६४॥ इतिबालाबोधसहितं गौतमप्रश्नाशास्त्रं संपूर्णम्॥

॥ अथ हरीयाली ॥

॥ सेवक आगल सांहेब नाचे, वहे गंगाजल खारे ॥ गर्दभ
सांटे गयवर वेच्या, ए अचरिज मोहे नारे ॥ १ ॥ चतुरनर
बूझो ए हरियाली ॥ जेम उत्तराधु देहि संभाली ॥ ए आंकणी ॥

अर्थः—कर्मरूपीया सेवकनी आगल जीवरूपीउ राजा नाचे छे तथा गंगा नदीना मीठा जल समान जे जैनवाणी छे तेना खारा जलसमान खोटा अर्थ केटलाएक मतवादीयो करे छे तथा प्रमादरूप गर्दभनी आगल संयमरूप हाथी वेचाय छे; अर्थात् केटलाएक संयमधारको प्रमादने वश पडी चोखुं चारित्र पाली शक्ता नथी माटे ए मुझने महोटुं आश्चर्य थाय छे ॥ १ ॥ हे चतुर जनो ए हरीयाली तमें समजो अने एनो उत्तर संभाली आपो.

॥ मांकडनें वश जोगी नाच्यो, माख्यो सिंह शियाले ॥ एक
चींटीयें पर्वत ढायो, अचरिज इण कलिकाले ॥ च० ॥ २ ॥

अर्थः—मनरूपी मांकडाने वश पड्या थका असंयति योगीजनो नाचे छे तथा शीलरूपी सिंहने कामरूपी शीयालीये माख्यो तथा एक तृष्णारूपी कीटिकायें संतोषरूपी पर्वतने पाडी नाख्यो. ए अचरिज कलिकालमांहे देखाय छे॥२॥

॥ सुरतरु शाखायें कागज बेठो, विषधर गरुड विमारे ॥
कस्तूरी परनाळें वाहे, लसण जखुं भंभारें ॥ ३ ॥ च० ॥

अर्थः—जिनशासनरूपीया कल्पवृक्षनी ऊपर कुगुरु रूपीउ कागडो बेठो तथा क्रोधरूपी सर्प ते ज्ञानरूपी गरुडने विमारे छे तथा समतारूप कस्तूरी छे तेने असत्य वचनरूप परनालिकामांहे वहावी दीधी अने ममता दुर्गंधरूप लसणनो संचय करी भंभारमां भर्यो छे ॥ ३ ॥

आंबो अकफल एक तरु लागा, हंस काग एक माले ॥
मेंढे नाहर लातें माख्यो, नासीगयो पाताळें ॥ ४ ॥ च० ॥

अर्थः—जीवरूपी एक वृक्ष तेने विषे आंबाना फल समान सुख लागां अने आकडाना फलसमान दुःख लागां एम बे जातनां फल एक जीवरूप वृक्षनेविषे लागां. तथा एकज जीवरूपी मालो तेनी उपर पुण्यरूप हंसपक्षी अने पापरूप काकपक्षी आवी बेठा तथा अज्ञानरूप मेंढें, विवेकरूपी नाहर एटले सिंह तेने लातें माख्यो परहो टाल्यो ॥ ४ ॥

॥ मंजारक मुख मयगल गलिया, राजा घरघर हिंडे ॥ ए
कज थंचे पण गज बांध्या, रानहोइ कण खंडे ॥ ५ ॥ च० ॥

अर्थः—आ कलिकालना जीव स्वल्पपुण्यवान छे, माटे मंजारसमान जाणवा ते मंजार समान मिथ्यात्वी जीवें ते मयगल समान महोटा जिनधर्मने गलि जाय छे तथा जीवरूप राजा ते कर्मनें वश रह्यो थंको चोराशी लक्ष जीवा योनिरूप घरघरनेविषे हिंडे छे भ्रमण करे छे तथा एक जीवना एकज शरीर रूपीयां थांभानें विषे पांच इंद्रियरूपीया पांच हाथी बांध्या छे ते मदोन्मत्त थका सांकलोना बंधने तोडी रह्या छे तथा अव्रतरूपी रानः रण तें व्रतरूपी धान्यनाकणनी खंडना करे छे ॥ ५ ॥

॥ आठनारी मलि एक सुत जायो बेटे बाप वधार्यो ॥ चो
र वस्या मंदिरमां आवी, घरथी साह कढायो ॥ ६ ॥ च० ॥

अर्थ—कर्मनी मूलप्रकृति आठ छे तेज आठ नारी जाणवी. तेणे संसाररूपी एक पुत्र पेदा कीधो छे तथा कपटरूपीया बेटायें मोहरूपी पितानें वधारी छे एटले महोटो कर्यो छे तथा विषयरूपी चोर ते कायारूप मंदिरमां आवी वस्या छे, तेणे शीलसाहसिकरूपी महोटा शाहुकार तेने घर मांथी काढी मूक्या छे ॥ ६ ॥

॥ एक अग्नि सघलो जल शोपे, वेश्या घूंघट काढे ॥ कुलवं
ती कुल लाज त्यजी करी, घर घर बाहिर हिंडे ॥ ७ ॥ च० ॥

अर्थः—एक तृष्णारूपी अग्नियें संतोषरूपी सर्वजल पीधुं छे तथा माया कपटरूपिणी वेश्या ते मीठा वचनरूपीयां घूंघट काहाडे छे तथा सर्व विरतिरूप कुलवंत स्त्रीयें पोतानी लाजनो त्याग करीनें असंयमरूपीया अनेक थानक छे तेज अनेक घर जाणवां. तद्रूप घरघरने विषे बाहार फरति हिंडे छे.

॥ ए परमारथ ज्ञान सुनी करी, आतम ध्यान सुध्यावो ॥
विनयसागर मुनि इम उपदेशे, धर्ममति मन लावो ॥ ८ ॥ च० ॥

अर्थः—ए वातनो ज्ञानमय परमार्थ जे श्रीवीतरागनां वचन, तेने सांभलीने आत्मध्यान ध्यावाने प्रवर्त्तो, विनयसागरजी मुनि एवी रीतें उपदेश करे छे के, धर्मनी बुद्धि तमारा मननेविषे आणो, के जेथकी जन्म, जरा अने मरणना दुःखथी विमुक्त थइ मुक्तिनां सुख पामो ॥ ८ ॥ इति ॥